लेश्या-कोश

CYCLOPÆDIA OF LEŚYĀ

जै० द० व० सं० ०४०४

सम्पादक
मोहनलाल बाँठिया
श्रीचन्द चोरड़िया



प्रकाशक
मोहनलाल बाँठिया
१६-सी, डोवर लेन, कलकत्ता-२६
१९६६

संकलन—सम्पादन में प्रयुक्त ग्रंथों की संकेत-सूची

अणुत्त०	अणुत्तरोववाइयदसाओ
अणुओ०	अणुओगदारसुत्तं
अंगु०	अंगुत्तरनिकाय
अंत०	अंतगडदसाओ
अभिधा०	अभिधान राजेन्द्र कोश
आया०	आयारांग
आव०	आवस्सय सुत्तं
उत्त०	उत्तरज्झयण
उवा०	उवासगदसाओ
ओव०	ओववाइयसुत्तं
कप्पव०	कप्पवंडसियाओ
कप्पसु०	कप्पसुत्त
कप्पि०	कप्पिया
कर्म०	कर्मग्रन्थ
गोक०	गोम्मटसार कर्मकांड
गोजी०	गोम्मटसार जीवकांड
चंद०	चंदपण्णत्ति
जंबु०	जंबुदीवपण्णत्ति
जीवा०	जीवाजीवाभिगमे
ठाण०	ठाणांग
तत्त्व०	तत्त्वार्थसूत्र
तत्त्वराज०	तत्त्वार्थ राजवार्तिक
तत्त्वश्लो०	तत्त्वार्थश्लोकवार्तिकालंकार
तत्त्वसर्व०	तत्त्वार्थ सर्वार्थसिद्धि
तत्त्वसिद्ध०	तत्त्वार्थ सिद्धसेन टीका
दसवे०	दशवेआलियं सुत्तं
दसासु०	दसासुयक्खंधो
नंदी०	नंदीसुत्त
नाया०	नायाधम्मकहाओ
निरि०	निरियावलिया
निसी०	निसीहसुत्तं
पण्ण०	पण्णवणासुत्तं
पण्हा०	पण्हावागराण
पाइअ०	पाइअसद्दमहण्णवो
पायो०	पातंजल योग
पुचू०	पुप्फ चूलियाओ
पुप्फि०	पुप्फियाओ
विह०	विहकप्पसुत्तं
भग०	भगवई
महा०	महाभारत
राय०	रायपसेणइयं
वव०	ववहारो
वण्हि०	वण्हिदसाओ
विवा०	विवागसुत्त
सम०	समवायांग
सूय०	सूयगडांग
सूरि०	सूरियपण्णत्ति

प्रस्तावना

जैन दर्शन सूक्ष्म और गहन है तथा मूल सिद्धान्त ग्रन्थो मे इसका क्रमबद्ध विषयानुक्रम विवेचन नही होने के कारण इसके अध्ययन मे तथा इसे समझने मे कठिनाई होती है। अनेक विषयो के विवचन अपूर्ण—अधूरे हैं। अतः अनेक स्थल इस कारण से भी समझ मे नही आते हैं। अर्थ वोध की इस दुर्गमता के कारण जैन-अजैन दोनो प्रकार के विद्वान् जैन दर्शन के अध्ययन मे सकुचाते हैं। क्रमबद्ध तथा विषयानुक्रम विवेचन का अभाव जैन दर्शन के अध्ययन में सबसे बडी बाधा उपस्थित करता है—ऐसा हमारा अनुभव है।

कुछ वर्ष पहले इलाहाबाद विश्वविद्यालय के एक अजैन प्राध्यापक मिले। उन्होंने बतलाया कि वे विश्वविद्यालय के अन्तर्गत 'नरक' विषय पर एक शोध महानिबध लिख रहे हैं। विभिन्न धर्मों और दर्शनो मे नरक और नरकवासी जीवो के सम्बन्ध मे क्या वर्णन है, इसकी वे खोज कर रहे हैं तथा जैन दर्शन मे इसके सम्बन्ध मे क्या विवेचन किया गया है, इसकी जानकारी के लिए आये हैं। उन्होंने पूछा कि किस ग्रथ में इस विषय का वर्णन प्राप्त होगा। हमे सखेद कहना पड़ा कि किसी एक ग्रथ मे एक स्थान पर पूरा वर्णन मिलना कठिन हैं। हमने उनको पण्णवणा, भगवई तथा जीवाजीवाभिगम—इन तीन ग्रथो के नाम बताए तथा कहा कि इन ग्रथों मे नरक और नरकवासियो के सबध मे यथेष्ट सामग्री मिल जायगी लेकिन क्रमबद्ध विवेचन तथा विस्तृत विषय सूची के अभाव मे—इन तीनों ग्रथो का आद्योपान्त अवलोकन करना आवश्यक है।

इसी तरह एक विदेशी प्राध्यापक पूना विश्वविद्यालय मे जैन दर्शन के 'लेश्या' विषय पर शोध करने के लिए आये थे। उनके सामने भी यही समस्या थी। उन्हें भी ऐसी कोई एक पुस्तक नही मिली जिसमें लेश्या पर क्रमबद्ध और विस्तृत विवेचन हो। उनको भी अनेक आगम और सिद्धात ग्रन्थो को टटोलना पड़ा यद्यपि पण्णवण्णा तथा उत्तरज्झयण मे लेश्या पर अलग अध्ययन है।

जब हमने 'पुद्गल' का अध्ययन प्रारभ किया तो हमारे सामने भी यही समस्या आयी। आगम और सिद्धात ग्रन्थों से पाठो का सकलन करके इस समस्या का हमने आशिक समाधान किया। इस प्रकार जब-जब हमने जैन दर्शन के अन्यान्य विषयो का अध्ययन प्रारभ किया तब-तब हमें सभी आगम तथा अनेक सिद्धात ग्रन्थो को सम्पूर्ण पढकर पाठ-सकलन करने पड़े। पुराने प्रकाशनों मे विषयसूची तथा शब्दसूची नही होने के कारण पूरे ग्रन्थों को

बार-बार पढ़कर नोध करनी पडी। इसी तरह जिस विषय का भी अध्ययन किया हमें सभी ग्रन्थो का आद्योपात अवलोकन करना पड़ा। इससे हमें अनुमान हुआ कि विद्वत् वर्ग जैन दर्शन के गभीर अध्ययन से क्यो सकुचाते हैं।

ग्रन्थो को बार-बार आद्योपांत पढ़ने की समस्या को हल करने के लिये हमने यह ठीक किया कि आगम ग्रन्थों से जैन दर्शन के महत्त्वपूर्ण विषयों का विषयानुसार पाठ-संकलन एक साथ ही कर लिया जाय। इससे जैनदर्शन के विशिष्ट विषयों का अध्ययन करने मे सुविधा रहेगी। ऐसा संकलन निज के अध्ययन के काम तो आयेगा ही शोधकर्ता तथा अन्य जिज्ञासु विद्वद्वर्ग के भी काम आ सकता है।

किन ग्रन्थों से पाठ संकलन किया जाय इस विषय पर विचार कर हमने निर्णय किया कि एक सीमा करनी आवश्यक है अन्यथा आगम व सिद्धांत ग्रन्थों की बहुलता के कारण यह कार्य असम्भव सा हो जायेगा। सर्वप्रथम हमने पाठ-सकलन को ३२ श्वेताम्बर आगमों तथा तत्त्वार्थसूत्र मे सीमाबद्ध रखना उचित समझा। ऐसा हमने किसी साम्प्रदायिक भावना से नही बल्कि आगम व सिद्धात ग्रन्थों की बहुलता तथा कार्य की विशालता के कारण ही किया है। श्वेताम्बर आगम ग्रन्थों से सकलन कर लेने के पश्चात् दिगम्बर सिद्धांत ग्रन्थों से भी सकलन करने का हमारा विचार है।

अपनी अस्वस्थता तथा कार्य की विशालता को देखते हुए इस पाठ-सकलन के कार्य मे हमने बंधु श्री श्रीचन्द चोरडिया का सहयोग चाहा। इसके लिये वे राजी हो गये।

सर्व प्रथम हमने विशिष्ट पारिभाषिक, दार्शनिक तथा आध्यात्मिक विषयों की सूची बनाई। विषय संख्या १००० से भी अधिक हो गई। इन विषयो के सुष्ठु वर्गीकरण के लिए हमने आधुनिक सार्वभौमिक दशमलव वर्गीकरण का अध्ययन किया। तत्पश्चात् बहुत कुछ इसी पद्धति का अनुसरण करते हुए हमने सम्पूर्ण जैन वाङ्मय को १०० वर्गों में विभक्त कर के मूल विषयों के वर्गीकरण की एक रूपरेखा (देखें पृ० 14) तैयार की। यह रूपरेखा कोई अंतिम नहीं है। परिवर्तन, परिवर्द्धन तथा सशोधन की अपेक्षा भी इसमे रह सकती है। मूल विषयों में से भी अनेकों के उपविषयों की सूची भी हमने तैयार की है। उनमें से जीव-परिणाम (विषयांकन ०४) की उपविषय सूची पृ० 17 पर दी गई है। जीव परिणाम की यह उपसूची भी परिवर्तन, परिवर्द्धन व संशोधन की अपेक्षा रख सकती है। विद्वद्वर्ग से निवेदन है कि वे इन विषय-सूचियों का गहरा अध्ययन करें तथा इनमें परिवर्तन, परिवर्द्धन व संशोधन सम्बन्धी अथवा अपने अन्य बहुमूल्य सुझाव भेज कर हमें अनुगृहीत करें।

पाठ-सकलन का कार्य पहले विभिन्न ग्रन्थों से लिख-लिखकर प्रारंभ किया गया।

वाद मे हमे ऐसा अनुभव हुआ कि इतने ग्रन्थों से इतने अधिक विषयोपविषयो के पाठ लिख-लिख कर सकलन करना श्रम व समय साध्य नही होगा। अतः हमने 'कतरन' पद्धति का अवलवन किया। कतरन के लिए हमने प्रत्येक ग्रन्थ की दो-दो प्रकाशित प्रतियाँ सग्रह की। एक प्रति से सामने के पृष्ठ के पाठो का तथा दूसरी प्रति से उसी पृष्ठ की पीठ पर छपे हुए पाठों का कतरन कर सकलन किया। प्रत्येक विषय-उपविषय के लिये हमने अलग-अलग फाइलें वनाई। कतरन के साथ-साथ विषयानुसार फाइल करने का कार्य भी होता रहा। इस पद्धति को अपनाने से पाठ-सकलन मे यथेष्ट गति आ गई और कार्य आशा के विपरीत वहुत कम समय में ही सम्पन्न हो गया।

कतरन व फाइल करनेका कार्य पूरा होने के वाद हमने सकलित विषयों में से किसी एक विषय के पाठों का सम्पादन करने का विचार किया।

सम्पादन का पहला विषय हमने 'नारकी जीव' चुना था क्योंकि जीव दण्डक मे इसका प्रथम स्थान है। सम्पादन का काम वहुत-कुछ आगे वढ चुका था तथा 'साप्ताहिक जैन भारती' मे क्रमशः प्रकाशित भी हो रहा था लेकिन वंधुओ का उपालम्भ आया कि प्रथम कार्य का विषय अच्छा नही चुना गया। उनका सुझाव रहा कि 'नारकी जीव' को छोड कर कोई दूसरा विषय लो। अतः इस विषय को अधूरा छोडकर हमने किसी दूसरे विशिष्ट दार्शनिक व पारिभाषिक महत्त्व के विषय का चयन करने का विचार किया। इस चयन में हमारी दृष्टि 'लेश्या' पर केन्द्रित हुई क्योंकि यह जैन दर्शन का एक रहस्यमय विषय है तथा जिसकी व्याख्या कोई भी प्राचीन आचार्य भलीभाँति असदिग्ध रूप में नही कर सके हैं। इसीलिए हमने सम्पादन के लिए 'लेश्या' विषय को ग्रहण किया।

सम्पादन मे निम्नलिखित तीन वातो को हमने आधार माना है :—

१ पाठों का मिलान,

२ विषय के उपविषयों का वर्गीकरण तथा

३ हिन्दी अनुवाद।

३२ आगमों से संकलित पाठों के मिलान के लिए हमने तीन मुद्रित प्रतियों की सहायता ली है जिनमें एक 'सुत्तागमे' को लिया तथा वाकी दो अन्य प्रतियाँ ली। इन दोनों प्रतियों मे से एक को हमने मुख्य माना। इन तीनो प्रतियों में यदि कही कोई पाठान्तर मिला तो साधारणत. हमने मुख्य प्रति को प्रधानता दी है। यह मुख्य प्रति सकलन-सम्पादन अनुसधान मे प्रयुक्त ग्रन्थों की सूची में प्रति 'क' के रूप में उल्लिखित है। यदि कोई विशिष्ट पाठान्तर मिला तो उसे शब्द के वाद ही कोष्ठक मे दे दिया है।

सदर्भ सव प्रति 'क' से दिये गये हैं तथा पृष्ठ सख्या 'सुत्तागमे' से दी गयी है।

जहाँ लेश्या सम्बन्धी पाठ स्वतंत्र रूप मे मिल गया है वहाँ हमने उसे उसी रूप मे ले लिया है लेकिन जहाँ लेश्या के पाठ अन्य विषयो के साथ सम्मिश्रित हैं वहाँ हमने निम्न-लिखित दो पद्धतियाँ अपनाई हैं :—

१. पहली पद्धतिमे हमने सम्मिश्रित पाठो से लेश्या सम्बंधी पाठ अलग निकाल लिया है तथा जिस सदर्भ में वह पाठ आया है उस संदर्भ को प्रारम्भ मे कोष्ठक में देते हुए उसके वाद लेश्या सम्बंधी पाठ दे दिया है, यथा—भग० श ११ । उ १ का पाठ। इसमें उत्पल वनस्पतिकाय के सम्बंध मे विभिन्न विषयों को लेकर पाठ है। हमने यहाँ लेश्या सम्बन्धी पाठ लिया है तथा उत्पल सम्बन्धी पाठ को पाठ के प्रारम्भ में कोष्ठक में दे दिया है—

(उप्पले णं एगपत्तए) ते णं भंते । जीवा किं कण्हलेसा नीललेसा काऊलेसा तेऊलेसा ? गोयमा । कण्हलेसे वा जाव तेऊलेसे वा कण्हलेस्सा वा नीललेस्सा वा काऊलेस्सा वा तेऊलेस्सा वा अहवा कण्हलेसे य नीललेसे य एवं एए दुयासंजोगतियया-संजोगचउक्कसंजोगेणं असीइ भंगा भवंति—विषयांकन '५३ १५ ६ । पृ० ६६ ।

२ दूसरी पद्धति में हमने सम्मिश्रित विषयो के पाठों मे से जो पाठ लेश्या से सम्बन्धित नही हैं उनको वाद देते हुए लेश्या सम्बंधी पाठ ग्रहण किया है तथा वाद दिए हुए अंशो को तीन क्रॉस (×××) चिह्नों द्वारा निर्देशित किया है, यथा—भग० श २४ । उ १ । प्र ७, १२—**पज्जता (त्त) असन्नि पंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते । जे भविए रयणप्पभाए पुढवीए नेरइएसु उववज्जित्तए ××× तेसि ण भंते जीवाण कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! तिन्नि लेस्साओ पन्नत्ताओ । तं जहा कण्हलेस्सा, नील-लेस्सा, काऊलेस्सा**—विषयाकन '५८'१ १ । गमक १ । पृ० १०० । इस उदाहरण में हमने प्रश्न ७ से प्रारम्भिक पाठ लेकर अवशेष पाठ को वाद दे दिया है तथा उसे क्रॉस चिह्नो द्वारा निर्देशित कर दिया है। प्रश्न ८, ६, १० तथा ११ को भी हमने वाद दे कर प्रश्न १२ जो कि लेश्या सम्बन्धी है ग्रहण कर लिया है। कई जगहों पर इन पद्धतियो में अपनाने मे असुविधा होनेके कारण हमने पूरा का पूरा पाठ ही दे दिया है।

मूल पाठों में सक्षेपीकरण होने के कारण अर्थ को प्रकट करने के लिए हमने कई स्थलो पर स्वनिर्मित पूरक पाठ कोष्ठक में दिए है, यथा—**कडजुम्मकडजुम्म सन्निपंचिंदिया णं भंते! ×××(कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ) ? कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा । ××× एवं सोलससु वि जुम्मेसु भाणियव्वं**—विषयाकन '८६ ६। पृ० १२०। यहाँ '**कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ**' पाठ जो कोष्टक में है सूत्र संक्षेपीकरण में वाद पड गया था उसे हमने अर्थ की स्पष्टता के लिए पूरक रूप में दे दिया है।

कतिपय उपविषयों में हमने मूल पाठों को अलग-अलग विभाजित करके भी दिया

है यथा—'एवं सक्करप्पभाएऽवि'—विषयांकन '५३ ३ । पृ० ६३ । कहीं-कहीं समूचे मूल पाठ को एक वर्गीकृत उपविषय में देकर उस पाठ मे निर्दिष्ट अन्य वर्गीकृत उपविषयों मे उक्त मूल पाठ को बार-बार उद्धृत न करके केवल इंगित कर दिया है, यथा— ५८ ३१ १ मे ५८ ३० १ के पाठ को इंगित किया गया है।

प्रत्येक विषय के संकलित पाठों तथा अनुसंधित पाठो का वर्गीकरण करने के लिए हमने प्रत्येक विषय को १०० वर्गों में विभाजित किया है तथा आवश्यकतानुसार इन सौ वर्गों को दस या दस से कम मूल वर्गों मे भी विभाजित करने का हमारा विचार है।

सामान्यत' सभी विषयों के कोशो मे निम्नलिखित वर्ग अवश्य रहेंगे—

० शब्द विवेचन (मूल वर्ग),

०१ शब्द की व्युत्पत्ति—प्राकृत, संस्कृत तथा पाली भाषाओं में,

·०२ पर्यायवाची शब्द—विपरीतार्थक शब्द,

०३ शब्द के विभिन्न अर्थ,

०४ सविशेषण—ससमास शब्द,

०५ परिभाषा के उपयोगी पाठ,

०६ प्राचीन आचार्यों द्वारा की गई परिभाषा,

०७ भेद-उपभेद,

०८ शब्द सम्बन्धी साधारण विवेचन,

९ विविध (मूल वर्ग),

९९ विषय सम्बन्धी फुटकर पाठ तथा विवेचन।

अन्य सब मूल वर्ग या उपवर्ग संकलित पाठों के आधार पर बनाए जायगे।

लेश्या-कोश में हमने निम्नलिखित मूल वर्ग रखे हैं—

० शब्द-विवेचन

१ द्रव्यलेश्या (प्रायोगिक)

३ द्रव्यलेश्या (विस्रसा)

४ भावलेश्या

५ लेश्या और जीव

६ सलेशी जीव

९ विविध

इन ९ मूलवर्गों मे से शब्द-विवेचन ८ उपवर्गों मे, द्रव्य लेश्या (प्रायोगिक) १९ उपवर्गों में, द्रव्यलेश्या (विस्रसा) ५ उपवर्गों मे, भावलेश्या ९ उपवर्गों मे, लेश्या और

जीव ६ उपवर्गों मे, सलेशी जीव २६ उपवर्गों में तथा विविध ६ उपवर्गों में विभाजित किए गए हैं।

यथासम्भव वर्गीकरण की सब भूमिकाओं में एकरूपता रखी जायगी।

लेश्या का विषयांकन हमने ०४०४ किया है। इसका आधार यह है कि सम्पूर्ण जैन वाङ्मय को १०० भागों में विभाजित किया गया है (देखें मूलवर्गीकरण सूची पृ० 14) इसके अनुसार जीव-परिणाम का विपयांकन ०४ है। जीव परिणाम भी सौ भागों में विभक्त किया गया है (देखें जीव-परिणाम वर्गीकरण सूची पृ० 17)। इसके अनुसार लेश्या का विषयाकन ०४ होता है। अतः लेश्या का विपयाङ्कन हमने ०४०४ किया है। लेश्या के अन्तर्गत आनेवाले विषयों के आगे दशमलव का चिह्न हैं, जैसे ५८ तथा '५८ के उपवर्ग के आगे फिर दशमलव का चिह्न है, जैसे '५८'२ तथा '५८ २ के विषय का उपविभाजन होने से इसके बाद आने वाली संख्या के आगे भी दशमलव विन्दु रहेगा (देखें चार्ट पृ० 18, 19)।

सामान्यतः अनुवाद हमने शाब्दिक अर्थ रूप ही किया है लेकिन जहाँ विषय की गम्भीरता या जटिलता देखी है वहाँ अर्थ को स्पष्ट करने के लिए विवेचनात्मक अर्थ भी किया है। विवेचनात्मक अर्थ करने के किये हमने सभी प्रकार की टीकाओं तथा अन्य सिद्धान्त ग्रंथो का उपयोग किया है। छद्मस्थता के कारण यदि अनुवाद में या विवेचन करने में कहीं कोई भूल, भ्रांति व त्रुटि रह गई हो तो पाठकवर्ग सुधार लें।

वर्गीकरण के अनुसार—जहाँ मूल पाठ नहो मिला है अथवा जहाँ मूल पाठ में विषय स्पष्ट रहा है वहाँ मूल पाठ के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए हमने टीकाकारों के स्पष्टीकरण को भी अपनाया है तथा स्थान-स्थान पर टीका का पाठ भी उद्धृत किया है।

यद्यपि हमने संकलन का काम आगम ग्रन्थों तक ही सीमित रखा है तथापि सम्पादन, वर्गीकरण तथा अनुवाद के काम में निर्युक्ति, चूर्णि, वृत्ति, भाष्य आदि टीकाओं का तथा अन्य सिद्धान्त ग्रन्थों का भी आवश्यकतानुसार उपयोग करने का हमारा विचार है।

हमें खेद है कि हमारी छद्मस्थता के कारण तथा प्रूफरीडिंग की दक्षता के अभाव में तथा मुद्रक के कर्मचारियों के प्रमादवश अनेक अशुद्धियाँ रह गई हैं। हमने अशुद्धियों को तीन भागों मे विभक्त किया है—१—मूलपाठ की अशुद्धि, २—संदर्भ की अशुद्धि तथा ३—अनुवाद की अशुद्धि। आशा है पाठकगण अशुद्धियो की अधिकता के लिए हमें क्षमा करेंगे तथा आवश्यकतानुसार सशोधन कर लेंगे। शुद्धि-पत्र पुस्तक के शेष में दिए गये हैं। भविष्य में इस वार के प्राप्त अनुभव से अशुद्धियाँ नहो रहेंगी ऐसी आशा है।

लेश्या-कोश हमारी कोश परिकल्पना का परीक्षण (ट्रायल) है। अतः इसमे प्रथमानुभव की अनेक त्रुटियाँ हों तो कोई आश्चर्य की वात नहो है। लेकिन इस प्रकाशन से हमारी

परिकल्पना मे पुष्टता तथा हमारे अनुभव मे यथेष्ट समृद्धि हुई है इस में कोई सन्देह नही है। पाठक वर्ग से सभी प्रकार के सुझाव अभिनन्दनीय हैं चाहे वे सम्पादन, वर्गीकरण, अनुवाद या अन्य किसी प्रकार मे हो। आशा है इस विषय में विद्वद्वर्ग का हमें पूरा सहयोग प्राप्त होगा।

दिगम्बर ग्रन्थो से लेश्या सम्बन्धी पाठ सकलन अधिकांशतः हमने कर लिया है। इसमे श्वेताम्बर पाठों से समानता, भिन्नता, विविधता तथा विशेषता देखी है तथा कितनी ही ही बातें जो श्वेताम्बर ग्रन्थो मे हैं दिगम्बर ग्रन्थों मे नही भी हैं। हमारे विचार मे दिगम्बर लेश्या-कोश को भी प्रकाशित करना आवश्यक है। लेकिन इसको प्रकाशित करने का निर्णय हम इस लेश्या-कोश पर विद्वानों की प्रतिक्रियाओं को जानकर ही करेंगे। इसमें पाठों का वर्गीकरण इस पुस्तक की पद्धति के अनुसार ही होगा लेकिन दिगम्बरीय भिन्नता, विविधता तथा विशेषता को वर्गीकरण में यथोपयुक्त स्थान दिया जायगा। वर्गीकरण के अनुसार पाठो को सजाना हम शीघ्र ही प्रारम्भ कर रहे हैं।

क्रियाकोश की हमारी तैयारी प्राय सम्पूर्ण हो चुकी है।

यद्यपि हमने इस पुस्तक का मूल्य १०.०० रुपया रखा है लेकिन वह विषयानुरूप ही है क्योंकि इस सस्करण की सर्व प्रतियाँ हम निर्मूल्य वितरित कर रहे हैं। वितरण भारतीय तथा विदेशी विश्वविद्यालयो मे, भारतीय विद्या सस्थानों मे तथा विदेशी प्राच्य सस्थानों मे, श्वेताम्बर-दिगम्बर जैन विद्वानों में, अजैन दार्शनिक विद्वानों मे, विशिष्ट विदेशी प्राच्य विद्वानों में, विशिष्ट भारतीय भंडारों तथा देशी व विदेशी विशिष्ट पुस्तकालयों मे अधिकाशतः सीमित रहेगा।

श्री जैन श्वेताम्बर तेरापथी महासभा के पुस्तकाध्यक्षों तथा श्रीमती हीराकुमारी बोथरा व्याकरण-साख्य-वेदान्ततीर्थ के हम बडे आभारी हैं जिन्होंने हमारे सपादन के कार्य मे प्रयुक्त अधिकांश पुस्तकें हमें देकर पूर्ण सहयोग दिया। श्री अगर चन्द नाहटा, श्री मोहन लाल बैद, डा० सत्यरजन बनर्जी तथा दिवगत आत्मा मदन चन्द गोठी के भी हम कम आभारी नहीं हैं जो हमें इस कार्य के लिए सतत प्रेरणा तथा उत्साह देते रहे। श्री दामोदर शास्त्री एम० ए० जिन्होंने रूपकी तरफ प्रूफ शुद्धि में हमे सहायता की उन्हें भी हम हार्दिक धन्यवाद देते हैं। सुराना प्रिंटिंग वर्क्स तथा उसके कर्मचारी भी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने इस पुस्तक का सुदर मुद्रण किया है।

आषाढ शुक्ला दशमी,
वीर सवत् २४९३

मोहनलाल बाँठिया
श्रीचन्द चोरडिया

जैन वाङ्मय का दशमलव वर्गीकरण

मूल विभागों की रूपरेखा

जै० द० व० सं०	यू० डी० सी० संख्या
०—**जैन दार्शनिक पृष्ठभूमि**	+
०१—लोकालोक	५२३·१
०२—द्रव्य—उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य	+
०३—जीव	१२८ तुलना ५७७
०४—जीव-परिणाम	+
०५—अजीव-अरूपी	११४
०६—अजीव-रूपी—पुद्गल	११७ तुलना ५३६
०७—पुद्गल परिणाम	+
०८—समय—व्यवहार-समय	११५ तुलना ५२६
०९—विशिष्ट सिद्धान्त	+
१—**जैन दर्शन**	१
११—आत्मवाद	१२
१२—कर्मवाद—आस्रव-बध-पाप-पुण्य	+
१३—क्रियावाद—संवर-निर्जरा-मोक्ष	+
१४—जैनेतरवाद	१४
१५—मनोविज्ञान	१५
१६—न्याय-प्रमाण	१६
१७—आचार-संहिता	१७
१८—स्याद्वाद-नयवाद-अनेकान्तादि	+
१९—विविध दार्शनिक सिद्धान्त	+
२—**धर्म**	२
२१—जैन धर्म की प्रकृति	२१
२२—जैन धर्म के ग्रन्थ	२२
२३—आध्यात्मिक मतवाद	२३
२४—धार्मिक जीवन	२४
२५—साधु-साध्वी-यति-भट्टारक-क्षुल्लकादि	२५
२६—चतुर्विध सघ	२६
२७—जैन का साम्प्रदायिक इतिहास	२७
२८—सम्प्रदाय	२८
२९—जैनेतर धर्म : तुलनात्मक धर्म	२९
३—**समाज विज्ञान**	३
३१—सामाजिक सस्थान	+

जे० द० व० सं०	यू० डी० सी० सख्या
३२—राजनीति	३२
३३—अर्थ शास्त्र	३३
३४—नियम-विधि-कानून-न्याय	३४
३५—शासन	३५
३६—सामाजिक उन्नयन	३६
३७—शिक्षा	३७
३८—व्यापार-व्यवसाय-यातायात	३८
३९—रीति-रिवाज—लोक-कथा	३९
४—भाषा विज्ञान—भाषा	**४**
४१—साधारण तथ्य	४१
४२—प्राकृत भाषा	४९१ ३
४३—सस्कृत भाषा	४९१ २
४४—अपभ्रंश भाषा	४९१ ३
४५—दक्षिणी भाषाएँ	४९४ ८
४६—हिन्दी	४९१ ४३
४७—गुजराती-राजस्थानी	४९१ ४
४८—महाराष्ट्री	४९१ ४६
४९—अन्यदेशी—विदेशी भाषाएँ	४९१
५—विज्ञान	**५**
५१—गणित	५१
५२—खगोल	५२
५३—भौतिकी-यान्त्रिकी	५३
५४—रसायन	५४
५५—भूगर्भ विज्ञान	५५
५६—पुराजीव विज्ञान	५६
५७—जीव विज्ञान	५७
५८—वनस्पति विज्ञान	५८
५९—पशु विज्ञान	५९
६—प्रयुक्त विज्ञान	**६**
६१—चिकित्सा	६१
६२—यान्त्रिक शिल्प	६२
६३—कृषि-विज्ञान	६३
६४—गृह विज्ञान	६४
६५— +	+

जै० द० व० सं०	यू० डी० सी० संख्या
६६—रसायन शिल्प	६६
६७—हस्त शिल्प वा अन्यथा	६७
६८—विशिष्ट शिल्प	६८
६९—वास्तु शिल्प	६९
७—कला-मनोरंजन-क्रीड़ा	७
७१—नगरादि निर्माण कला	७१
७२—स्थापत्य कला	७२
७३—मूर्तिकला	७३
७४—रेखाकन	७४
७५—चित्रकारी	७५
७६—उत्कीर्णन	७६
७७—प्रतिलिपि--लेखन-कला	७७
७८—संगीत	७८
७९—मनोरंजन के साधन	७९
८—साहित्य	८
८१—छंद-अलंकार-रस	८१
८२—प्राकृत साहित्य	+
८३—संस्कृत जैन साहित्य	+
८४—अपभ्रंश जैन साहित्य	+
८५—दक्षिणी भाषा मे जैन साहित्य	+
८६—हिन्दी भाषा में जैन साहित्य	+
८७—गुजराती-राजस्थानी भाषा में जैन साहित्य	+
८८—महाराष्ट्री भाषा में जैन साहित्य	+
८९—अन्य भाषाओं मे जैन साहित्य	+
९—भूगोल-जीवनी-इतिहास	९
९१—भूगोल	९१
९२—जीवनी	९२
९३—इतिहास	९३
९४—मध्य भारत का जैन इतिहास	+
९५—दक्षिण भारत का जैन इतिहास	+
९६—उत्तर तथा पूर्व भारत का जैन इतिहास	+
९७—गुजरात-राजस्थान का जैन इतिहास	+
९८—महाराष्ट्र का जैन इतिहास	+
९९—अन्य क्षेत्र व वैदेशिक जैन इतिहास	+

०४ जीव परिणाम का वर्गीकरण

०४०० सामान्य विवेचन

०४०१ गति
०४०२ इन्द्रिय
०४०३ कषाय
०४०४ लेश्या
०४०५ योग
०४०६ उपयोग
०४०७ ज्ञान
०४०८ दर्शन
०४०९ चारित्र
०४१० व्रत

०४११ शरीर
०४१२ अवगाहना
०४१३ पर्याप्ति
०४१४ प्राण
०४१५ आहार
०४१६ योनि
०४१७ गर्भ
०४१८ जन्म-उत्पत्ति-उत्पाद
०४१९ स्थिति
०४२० मरण-च्यवन उद्वर्तन

०४२१ वीर्य
०४२२ लब्धि
०४२३ करण
०४२४ भाव
०४२५ अध्यवसाय
०४२६ परिणाम
०४२७ ध्यान
०४२८ संज्ञा
०४२९ मिथ्यात्व
०४३० सम्यक्त्व

०४३१ वेदना
०४३२ सुख
०४३३ दुःख
०४३४ अधिकरण
०४३५ प्रमाद
०४३६ ऋद्धि
०४३७ अगुरुलघु
०४३८ प्रतिघातित्व
०४३९ पर्याय
०४४० रूपत्व-अरूपत्व

०४४१ उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य
०४४२ अस्ति-नित्य-अवस्थितत्व
०४४३ शाश्वतत्व
०४४४ परिस्पंदन
०४४५ संसार संस्थान काल
०४४६ संसारस्थत्व-असिद्धत्व
०४४७ भव्याभव्यत्व
०४४८ परित्त्वापरित्त्व
०४४९ प्रथमाप्रथम
०४५० चरमाचरम

०४५१ पाक्षिक
०४५२ आराधना-विराधना

० जैन दार्शनिक पृष्ठभूमि →	०० सामान्य विवेचन	०० सामान्य विवेचन	० शब्द-विवेचन
		०१ गति	'१ } द्रव्यलेश्या
		०२ इन्द्रिय	२ } (प्रायोगिक)
१ जैन दर्शन	०१ लोकालोक	०३ कषाय	
		०४ लेश्या →	'३ द्रव्यलेश्या
		०५ योग	(विस्रसा)
२ धर्म	०२ द्रव्य	०६ उपयोग	
		०७ ज्ञान-अज्ञान	४ भावलेश्या
		०८ दर्शन	
३ समाज विज्ञान	०३ जीव	०९ चारित्र	
		१० वेद	'५ लेश्या और जीव→
		११ शरीर	
४ भाषा विज्ञान	०४ जीव-परिणाम →	१२ अवगाहना	
		१३ पर्याप्ति	६ }
		१४ प्राण	'७ } सलेशी जीव
५ विज्ञान	०५ अजीव-अरूपी	१५ आहार	'८ }
		१६ योनि	
		१७ गर्भ	
६ प्रयुक्त विज्ञान	०६ अजीव-रूपी पुद्गल	१८ जन्म उत्पत्ति-उत्पाद	९ विविध
		१९ स्थिति	
		२० मरण-च्यवन-उद्वर्तन	
७ कला-मनोरंजन-क्रीडा	०७ पुद्गल-परिणाम	२१ वीर्य	
		२२ लब्धि	
		२३ करण	
८ साहित्य	०८ समय, व्यवहार-समय	२४ भाव	
		२५ अध्यवसाय	
		२६ परिणाम	
९ भूगोल-जीवनी-इतिहास	०९ विशिष्ट सिद्धान्त	२७ ध्यान	
		२८ संज्ञा	
		आदि	

उपविभाजन का उदाहरण

५१ लेश्या की अपेक्षा जीव के भेद

५२ लेश्या की अपेक्षा जीव की वर्गणा

५३ विभिन्न जीवों मे कितनी लेश्या

५४ विभिन्न जीव और लेश्या-स्थिति

५५ लेश्या और गर्भ-उत्पत्ति

५६ जीव और लेश्या-समपद

५७ लेश्या और जीव का उत्पत्ति मरण

५८ किसी एक योनि से स्व/पर योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो में कितनी लेश्या →

५९ जीव समूहों में कितनी लेश्या

५८ १ रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे
५८ २ शर्कराप्रभा०
५८ ३ वालुकाप्रभा०
५८ ४ पकप्रभा०
५८ ५ धूमप्रभा०
५८ ६ तमप्रभा०
५८ ७ तमतमाप्रभा०
५८ ८ असुरकुमार०
५८ ९ नागकुमार यावत् स्तनितकुमार०
५८ १० पृथ्वीकायिक० →
५८ ११ अप्कायिक०
५८ १२ अग्निकायिक०
५८ १३ वायुकायिक०
५८ १४ वनस्पतिकायिक०
५८ १५ द्वीन्द्रिय०
५८ १६ त्रीन्द्रिय०
५८ १७ चतुरिन्द्रिय०
५८ १८ पचेन्द्रिय तिर्यंच यानि०
५८ १९ मनुष्य योनि०
५८ २० वानव्यतर देव०
५८ २१ ज्योतिपी देव०
५८ २२ सौधर्म देव०
५८ २३ ईशान देव०
आदि

५८ १० १ स्वयोनि से
५८ १० २ अप्कायिक योनि से
५८ १० ३ अग्निकायिक योनि से
५८ १० ४ वायुकायिक योनि से
५८ १० ५ वनस्पतिकायिक योनि से
५८ १० ६ द्वीन्द्रिय से
५८ १० ७ त्रीन्द्रिय से
५८ १० ८ चतुरिन्द्रिय से
५८ १० ९ असज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से
५८ १० १० सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से
५८ १० ११ असज्ञी मनुष्य से
५८ १० १२ सज्ञी मनुष्य से
५८ १० १३ असुरकुमार देवो से
५८ १० १४ नागकुमार यावत् स्तनितकुमार देवो से
५८ १० १५ वानव्यतर देवों से
५८ १० १६ ज्योतिपी देवो से
५८ १० १७ सौधर्म देवो से
५८ १० १८ ईशान देवों स

FOREWORD

It gives me immense pleasure to introduce to the world of orientalists this valuable reference book, entitled *Leśyā-kośa*, compiled by Mr Mohan Lal Banthia and his assistant Mr Shrichand Choraria who is a student at our Institute It is a specimen volume of a larger project prepared by Mr Banthia to compile a series of such volumes on various subjects of Jainism, enlisted in a comprehensive and exhaustive catalogue that is under preparation by him. The compilers do not claim that the volume is an exhaustive and complete reference book on the subject as contained in the literature that is extant and available in print and manuscripts, accepted by the Digambara and the Śvetāmbara sects of Jainism In fact, Mr Banthia has proposed to publish another volume on the subject, containing the references to the subject embodied in the Digambara literature The *Leśyā-kośa* will inspire the scholars of Jainism for a critical study of the subject, leading to a clear formulation and evaluation of the doctrine and its bearing on the metaphysical speculations of ancient India

The concept of *leśyā* is a vital part of the Jaina doctrine of karman Every activity of the soul is accompanied by a corresponding change in the material organism, subtle or gross. The leśyā of a soul has also such double aspect—one affecting the soul and the other its physical attachment The former is called bhāva-leśyā, and the latter is known as dravya-leśyā A detailed account of the mental and moral changes in the soul[1] and also an elaborate description of the material properties of various leśyās[2] are recorded in the Jaina scripture and its commentaries

In the Ājīvika, the Buddhist and the Brāhmanical thought also, ideas similar to the Jaina concept of leśyā are found recorded The leśyā *qua* matter is the 'colour-matter' accompanying the various gross

---

1 Pp 251-3 (of the text)

2 Pp 20ff

and subtle physical attachments of the soul.[3] This is the dravya-leśyā. The corresponding state of the soul of which the dravya-leśyā is the outward expression is bhāva-leśyā [4] The dravya-leśyā, being composed of matter, has all the material properties *viz.* colour, taste, smell and touch But its nomenclature as kṛsna (black), nīla (dark blue), kāpota (grey, black red[5]), tejas (fiery, red[6]), padma (lotus-coloured, yellow[7]) and śukla (white), is framed after its colour which appears to be its salient feature The use of colour-names to indicate spiritual development was popular among the Ājīvikas and the leśyā concept of the Jainas seems to have had a similar origin The Buddhists appear to have given a spiritual interpretation to the Ājīvika theory of six abhijātis and the Brāhmanical thinkers linked the colours to the various states of sattva, rajas and tamas [8]

Although it is difficult to determine the chronology of these ideas in these religions, there should be no doubt that the concept of leśyā was an integral part of Jaina metaphysics in its most ancient version The later Jaina thinkers made attempts at knitting up the doctrine of karman, placing the concept of leśyā at its proper place in the texture

As regards the etymology of the word leśyā (Prakrit, lessā, lesā), I would like to suggest its derivation from √śliṣ 'to burn'[9], with its meaning extended to the sense—'shining in some colour'. This connotation and others allied to it appear to explain satisfactorily the senses of scriptural phrases containing the word lessā, collected on pages 4 and 5 of the leśyā-kośa Dr Jacobi's derivation of the term from kleśa[10] does not appear plausible, as the kaṣāya (the Jaina equivalent of kleśa) has no necessary connection with the leśyā, and the various

---

3 P 10 (line 5), also p 13 (line 11).

4 P 9 (lines 21ff)

5. P. 45 (line 13)

6 P 45 (line 13)

7 P. 45 (line 14)

8. Pp 254-7, also Glasenapp · The Doctrine of Karman in Jaina Philosophy, p 47, fn 2, Pandit Sukhlalji : Jain Cultural Research Society (Varanasi) Patrikā No 15, pp 25-6

9 Śriṣu-śliṣu-pruṣu-pluṣu dāhe—Pāninīya-Dhātupātha, 701-4

10. Glasenapp · op cit, p 47, fn 1.

usages of the word (leśyā) found in the Jaina scripture do not imply such connotation

Three alternative theories have been proposed by commentators to explain the nature of leśyā In the first theory, it is regarded as a product of passions (kaṣāya-nisyanda), and consequently as arising on account of the rise of the kaṣāya-mohanīya karman In the second, it is considered as the transformation due to activity (yoga-pariṇāma), and as such originating from the rise of karmans which produce three kinds of activity (physical, vocal and mental) In the third alternative, the leśyā is conceived as a product of the eight categories of karman (jñānāvaraṇīya, etc), and as such accounted as arising on account of the rise of the eight categories of karman In all these theories, the leśyā is accepted as a state of the soul, accompanying the realization (audayika-bhāva) of the effect of karman [11]

Of these theories, the second theory appears plausible The leśyā, in this theory, is a transformation (pariṇati) of the śarīra-nāmakarman (body-making karman),[12] effected by the activity of the soul through its various gross and subtle bodies—the physical organism (kāya), speech-organ (vāk), or the mind-organ (manas) functioning as the instrument of such activity [13] The material aggregates involved in the activity constitute the leśyā The material particles attracted and transformed into various *karmic* categories (jñānāvaraṇīya, etc) do not make up the leśyā There is presence of leśyā even in the absence of the categories of ghāti-karman in the sayogi-kevalin stage of spiritual development, which proves that such categories do not constitute leśyā Similarly, the categories of aghāti-karman also do not form the leśyā as there is absence of leśyā even in the presence of such categories in the ayogi-kevalin stage of spiritual development [14] The leśyā-matter involved in the activity aggravates the kaṣāyas if they are there [15] It is also responsible for the anubhāga (intensity) of *karmic* bondage [16]

---

11 For the refutation of the theory propounding leśyā as karma-nisyanda, vide pp 11-2

12 P 10 (line 10)

13 P 10 (lines 13-21)

14 P 11 (lines 3-8)

15 P 11 (lines 8-9)

16 P 11 (lines 15-7) , also the Tīkā on Karmagrantha, IV, 1.

Leśyā is also conceived by the commentators as having the aspect of viscosity.[17]

The compilers of the Leśyā-kośa have taken great pains to make the work as systematic and exhaustive as possible. Assistance of a trained scholar and proof-reader could, however, be requisitioned for better editing and correct printing. The scholars of Indian philosophy, particularly those working in the field of Jainism, will derive good help from such reference books. Although primarily a veteran business man, Mr. Banthia has shown keen understanding of ontological problems in systematically arranging the references and clinching crucial issues as is evident from the occasional remarks in his notes. Scholars will take off their hats to him in appreciation of his Herculean labour in defiance of the extremely precarious health that he has been enjoying for the last several years. We wish success to him in his larger scheme which is bound to be of great benefit to scholars devoted to the study of Jainism, and assure him of our full co-operation in the execution of the project.

NATHMAL TATIA
Director,
Research Institute of Prakrit
Jainology & Ahimsa, Vaishali

July 3, 1966

17. P. 12 (line 11) ; p. 13 (line 13).

आमुख

विषय-कोश परिकल्पना बड़ी महत्त्वपूर्ण है। यदि सब विषयों पर कोश नहीं भी तैयार हो सकें तो दस-बीस प्रधान विषयों पर भी कोश के प्रकाशन से जैन दर्शन के अध्येताओं को बहुत ही सुविधा रहेगी। इस सम्बन्ध में सम्पादकों को मेरा सुझाव है कि वे पण्णवणा सूत्र के ३६ पदों में विवेचित विषयों के कोश तो अवश्य ही प्रकाशित कर दें।

यद्यपि यह कोश परिकल्पना सीमित संकलन है फिर भी इन संकलनों से विषय को समझने व ग्रहण करने में मेरे विचार में कोई विशेष कठिनाई नहीं होगी। पाठकों को श्वेताम्बर-दिगम्बर दोनों दृष्टिकोण उपलब्ध हो सकें इसलिए संपादकों से मेरा निवेदन है कि आगे के विषय कोशों में तत्त्वार्थसूत्र तथा उसकी महत्त्वपूर्ण दिगम्बरीय टीकाओं से भी पाठ संकलन करें। इससे उनकी सीमा में बहुत अधिक वृद्धि नहीं होगी।

सम्पादकों ने सम्पूर्ण जैन वाङ्मय को सार्वभौमिक दशमलव वर्गीकरण पद्धति के अनुसार सौ वर्गों में विभाजित किया है। जैनदर्शन की आवश्यकता के अनुसार उन्होंने इसमें यत्र-तत्र परिवर्तन भी किया है, अन्यथा उसे ही अपनाया है। इस वर्गीकरण के अध्ययन से यह अनुभव होता है कि यह दूरस्पर्शी (far-reaching) है तथा जैन दर्शन और धर्म में ऐसा कोई विरला ही विषय होगा जो इस वर्गीकरण से अछूता रह जाय या इसके अन्तर्गत नहीं आ सके।

पर्याय की अपेक्षा जीव अनन्त परिणामी है, फिर भी आगमों में जीव के दस ही परिणामों का उल्लेख है। जीव परिणाम के वर्गीकरण को देखने से पता चलता है कि सम्पादकों ने इन दस परिणामों को प्राथमिकता देकर ग्रहण किया है लेकिन साथ ही कर्मों के उदय से वा अन्यथा होनेवाले अन्य अनेक प्रमुख परिणामों को भी वर्गीकरण में स्थान दिया है। इनमें से उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य आदि कई विषय तो अन्य-अन्य कोशों में भी समाविष्ट होने योग्य हैं।

पृष्ठ 18-19 पर दिए गए वर्गीकरण के उदाहरण से वर्गीकरण और परस्पर उपवर्गीकरणों की पद्धति का चित्र बहुत कुछ स्पष्टतर हो जाता है। सार्वभौमिक दशमलव वर्गीकरण (U D C) की तरह जैन वाङ्मय के वर्गीकरण का एक संक्षिप्त या विस्तृत संस्करण सम्पादकगण निकाल सकें तो अति उत्तम हो। तभी उनकी पूरी कल्पना का चित्र परिस्फुटित होकर विद्वानों के समक्ष आ सकेगा।

परिभाषाओं में अनेक विशिष्ट टीकाकारों द्वारा की गयी लेश्या की परिभाषाएँ नहीं दी गयी हैं। परिभाषाएँ अधिक से अधिक विद्वानों की दी जानी चाहिए थीं। उत्तराध्ययन के, जिसमें लेश्या पर एक अलग ही अध्ययन है, टीकाकार की परिभाषा का अभाव खटकता है। दी गयी परिभाषाओं का हिन्दी अनुवाद भी नहीं दिया गया है, यह भी एक कमी है। सम्पादकों ने परिभाषा सम्बन्धी अपना कोई मतामत भी नहीं दिया है।

जिस प्रकार योग, ध्यान आदि के साथ लेश्या के तुलनात्मक विवेचन दिए गये हैं, उसी प्रकार द्रव्य लेश्या के साथ द्रव्यमन, द्रव्यवचन, द्रव्यकषाय आदि पर तुलनात्मक मूल पाठ या टीकाकारों के कथन नहीं दिए गए हैं जो दिए जाने चाहिए थे।

विविध शीर्षक के अन्तर्गत विषय अनुक्रम से या वर्गीकरण की शैली मे नही दिए गए है।

लेश्या-कोश एक पठनीय-मननीय ग्रन्थ हुआ है। लेश्याओं को समझने के लिए इसमे यथेष्ट मसाला है तथा शोधकर्त्ताओ के लिए यह अमूल्य ग्रन्थ होगा। रेफरेन्स पुस्तक के हिसाब से यह सभी श्रेणी के पाठको के लिए उपयोगी होगा। वर्गीकरण की शैली विषय को सहजगम्य बना देती है। सम्पादकगण तथा प्रकाशक इसके प्रकाशन के लिए धन्यवाद के पात्र हैं।

लेश्या शाश्वत भाव है। जैसे लोक-अलोक-लोकान्त-अलोकान्त-दृष्टि ज्ञान-कर्म आदि शाश्वत भाव हैं वैसे ही लेश्या भी शाश्वत भाव है।

लोक आगे भी है, पीछे भी है ; लेश्या आगे भी है, पीछे भी है — दोनो अनानुपूर्वी हैं। इनमें आगे-पीछे का क्रम नही है। इसी प्रकार अन्य सभी शाश्वत भावो के साथ लेश्या का आगे-पीछे का क्रम नही है। सब शाश्वत भाव अनादि काल से हैं, अनन्त काल तक रहेंगे (देखें '६४)।

सिद्ध जीव अलेशी होते हैं तथा चतुर्दश गुणस्थान के जीव को छोड़ कर अवशेष ससारी जीव सब सलेशी हैं। सलेशी जीव अनादि है। अतः यह कहा जा सकता है कि लेश्या और जीव का सम्बन्ध अनादि काल से है।

ससारी जीव भी अनादि काल से है। लेश्या भी अनादि काल से है। इनका सम्बन्ध भी अनादि काल से है (देखें ६४)।

प्राचीन आचार्यों ने 'लेश्या' क्या है इस पर बहुत ऊहापोह किया है लेकिन वे कोई निश्चित परिभाषा नहीं बना सके। सब से सरल परिभाषा है — **लिश्यते-श्लिष्यते आत्मा कर्मणा सहानयेति लेश्या**—आत्मा जिसके सहयोग से कर्मों से लिप्त होती है वह लेश्या है (देखें ०५३ २ (ख))।

एक दूसरी परिभाषा जो प्राचीन आचार्यों में बहुलता से प्रचलित थी वह है—

कृष्णादि द्रव्य साचिव्यात्, परिणामो य आत्मनः।
स्फटिकस्येव तत्रायं, लेश्या शब्द प्रयुज्यते॥

जिस प्रकार स्फटिक मणि विभिन्न वर्णों के सूत्र का सान्निध्य प्राप्त कर उन वर्णों में प्रतिभासित होता है उसी प्रकार कृष्णादि द्रव्यों का सान्निध्य पाकर आत्मा के परिणाम उसी रूप मे परिणत होते हैं, और आत्मा की इस परिणति के लिये लेश्या शब्द का प्रयोग किया जाता है।

यहाँ जिन कृष्णादि द्रव्यों की ओर इंगित किया गया है वे द्रव्यलेश्या कहलाते हैं तथा आत्मा की जो परिणति है वह भावलेश्या कहलाती है। अभयदेवसूरि ने कहा भी है— **कृष्णादि द्रव्य साचिव्य जनिताऽऽत्मपरिणामरूपा भावलेश्याम्।**

प्राचीन आचार्यों ने लेश्या के विवेचन में निम्नलिखित परिभाषाओं पर विचार किया है :—

१. लेश्या योगपरिणाम है—**योगपरिणामो लेश्या।**
२ लेश्या कर्मनिस्यद रूप है—**कर्मनिस्यन्दो लेश्या।**

३ लेश्या कषायोदय से अनुरंजित योगप्रवृत्ति है—**कषायोदयरंजिता योगप्रवृत्ति-लेश्या।**

४ जिस प्रकार अष्टकर्मों के उदय से समारम्भत्व तथा असिद्धत्व होता है उसी प्रकार अष्टकर्मों के उदय से जीव लेश्यत्व को प्राप्त होता है।

लेश्यत्व जीवोदयनिष्पन्न भाव है। अतः कर्मों के उदय से जीव के छः भावलेश्याएँ होती हैं।

द्रव्यलेश्या पौद्गलिक है, अतः अजीवोदयनिष्पन्न होनी चाहिए—**पओगपरिणामए वण्णे, गंधे, रसे, फासे, सेत्तं अजीवोदयनिष्फन्ने** (देखें ०५१ १८)।

द्रव्यलेश्या क्या है ?

१—द्रव्यलेश्या अजीव पदार्थ है।
२—यह अनंत प्रदेशी अष्टस्पर्शी पुद्गल है (देखें १८ व ८५)।
३—इसकी अनंत वर्गणा होती है (१७)।
४—इसके द्रव्यार्थिक स्थान असंख्यात हैं (२१)।
५—इसके प्रदेशार्थिक स्थान अनंत हैं (२६)।
६—छः लेश्या में पाँच ही वर्ण होते हैं (२७)
७—यह असंख्यात प्रदेश अवगाह करती है (१६)।
८—यह परस्पर में परिणामी भी है, अपरिणामी भी है (१६ व २०)।
९—यह आत्मा के सिवाय अन्यत्र परिणत नहीं होती है (२० ७)।
१०—यह अजीवोदयनिष्पन्न है (०५१ १४)।
११—यह गुरु-लघु है (१८)।
१२—यह भावितात्मा अनगार के द्वारा अगोचर—अज्ञेय है (०५१ १३)।
१३—यह जीवग्राही है (०५१ १०)।
१४—प्रथम की तीन द्रव्यलेश्या दुर्गन्धवाली हैं तथा पश्चात् की तीन द्रव्यलेश्या सुगन्धवाली है (पृ० १५)।
१५—प्रथम की तीन द्रव्यलेश्या अमनोज्ञ रसवाली हैं तथा पश्चात् की तीन द्रव्यलेश्या मनोज्ञ रसवाली हैं (पृ० १६)।
१६—प्रथम की तीन द्रव्यलेश्या शीतरूक्ष स्पर्शवाली है तथा पश्चात् की तीन द्रव्यलेश्या उष्णस्निग्ध स्पर्शवाली हैं (पृ० १६)।
१७—प्रथम की तीन द्रव्यलेश्या वर्ण की अपेक्षा अविशुद्ध वर्णवाली हैं तथा पश्चात् की तीन द्रव्यलेश्या विशुद्ध वर्णवाली हैं (पृ० १६)।
१८—यह कर्म पुद्गल से स्थूल है।
१९—यह द्रव्यकषाय से स्थूल है।
२०—यह द्रव्य मन के पुद्गलों से स्थूल है।
२१—यह द्रव्य भाषा के पुद्गलों से स्थूल है।
२२—यह औदारिक शरीर पुद्गलों से सूक्ष्म है।
२३—यह शब्द पुद्गलों से सूक्ष्म है।

२४—इसे तैजस शरीर पुद्गलो से सूक्ष्म होना चाहिये।
२५—इसे वैक्रिय शरीर पुद्गलो से सूक्ष्म होना चाहिये।
२६—यह इन्द्रियों द्वारा अग्राह्य है।
२७—यह योगात्मा के साथ समकालीन है।
२८—यह बिना योग के ग्रहण नही हो सकती हैं।
२९—यह नोकर्म पुद्गल है, कर्म पुद्गल नही है।
३०—यह पुण्य नही है, पाप नही हे, बंध नही है।
३१—यह आत्मप्रयोग से परिणत हे ; अतः प्रायोगिक पुद्गल है।
३२—यह कषाय के अन्तर्गत पुद्गल नही है , क्योंकि अकषायी के भी लेश्या होती है लेकिन यह सकषायी जीव के कषाय से संभवतः अनुरंजित होती है।
३३—यह पारिणामिक भाव है।
३४—इसका संस्थान अज्ञात है।
३५—देश-बंध—सर्व बध का लेश्या संबधी पाठ नही है।

भावलेश्या क्या है ?

१—भावलेश्या जीवपरिणाम है (देखें विषयांकन ४१)।
२—भावलेश्या अरूपी है। यह अवर्णी, अगंधी, अरसी तथा अस्पर्शी है ('४२)।
३—भावलेश्या अगुरुलघु है ('४३)।
४—विशुद्धता-अविशुद्धता के तारतम्य की अपेक्षा से इसके असंख्यात स्थान हैं ('४४)।
५—यह जीवोदयनिष्पन्न भाव है (४६'१)।
६—आचार्यों के कथनानुसार भावलेश्या क्षय-क्षयोपशम, उपशम भाव भी हैं ('४६'२)।
७—प्रथम की तीन अधर्मलेश्या कही गई हैं तथा पीछे की तीन धर्मलेश्या कही गई हैं (पृ० १६)।
८—प्रथम की तीन भावलेश्या दुर्गति की हेतु कही गई हैं तथा पश्चात् की तीन भावलेश्या सुगति की हेतु कही गई हैं (पृ० १७)।
९—प्रथम की तीन भावलेश्या अप्रशस्त हैं तथा पश्चात् की तीन भावलेश्या प्रशस्त हैं (पृ० १६)।
१०—प्रथम की तीन भावलेश्या संक्लिष्ट हैं तथा पश्चात् की तीन भावलेश्या असंक्लिष्ट हैं (पृ० १७)।
११—परिणाम की अपेक्षा प्रथम की तीन भावलेश्या अविशुद्ध हैं तथा पश्चात् की तीन भावलेश्या विशुद्ध हैं (पृ० १७)
१२—नव पदार्थ मे भावलेश्या—जीव, आस्रव, निर्जरा है।
१३—आस्रव मे योग आस्रव है।
१४—निर्जरा में कौन-सी निर्जरा होनी चाहिए ?
१५—शुभ योग के समय में शुभलेश्या होनी चाहिये या विशुद्धमान लेश्या होनी चाहिए।
१६—अशुभ योग के समय मे अशुभलेश्या होनी चाहिये या संक्लिष्टमान लेश्या होनी चाहिए।
१७—जो जीव सयोगी है वह नियमतः सलेशी है तथा जो जीव सलेशी है वह नियमतः सयोगी है।

प्रतीत होता है कि परिणाम, अध्यवसाय व लेश्या में बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। जहाँ परिणाम शुभ होते हैं, अध्यवसाय प्रशस्त होते हैं वहाँ लेश्या विशुद्धमान होती है। कर्मों की निर्जरा के समय में परिणामों का शुभ होना, अध्यवसायों का प्रशस्त होना तथा लेश्या का विशुद्धमान होना आवश्यक है (देखें ६६ २)। जब वैराग्य भाव प्रकट होता है तब इन तीनों में क्रमशः शुभता, प्रशस्तता तथा विशुद्धता होती है (देखें ६६ २३)। यहाँ परिणाम शब्द से जीव के मूल दस परिणामों में से किस परिणाम की ओर इंगित किया गया है यह विवेचनीय है। लेश्या और अध्यवसाय का कैसा सम्बन्ध है यह भी विचारणीय विषय है, क्योंकि अच्छी-बुरी दोनों प्रकार की लेश्याओं में अध्यवसाय प्रशस्त-अप्रशस्त दोनों होते हैं (देखें ६६·१६)। इसके विपरीत जब परिणाम अशुभ होते हैं, अध्यवसाय अप्रशस्त होते हैं तब लेश्या अविशुद्ध—संक्लिष्ट होनी चाहिए। जब गर्भस्थ जीव नरक गति के योग्य कर्मों का बन्धन करता है तब उसका चित्त, उसका मन, उसकी लेश्या तथा उसका अध्यवसाय तदुपयुक्त होता है। उसी प्रकार जब गर्भस्थ जीव देव गति के योग्य कर्मों का बन्धन करता है तब उसका चित्त, उसका मन, उसकी लेश्या तथा उसका अध्यवसाय तदुपयुक्त होता है। इससे भी प्रतीत होता है कि इन तीनों का—मन व चित्त के परिणामों का, लेश्या और अध्यवसाय का सम्मिलित रूप से कर्म बन्धन में पूरा योगदान है (देखें ६६ ६)। इसी प्रकार कर्म की निर्जरा में भी इन तीनों का पूरा योगदान होना चाहिये।

जीव लेश्या द्रव्यों को ग्रहण करता है तथा पूर्व में गृहीत लेश्या द्रव्यों को नव गृहीत लेश्या द्रव्यों के द्वारा परिणत करता है, कभी पूर्ण रूप से तथा कभी आकार-भाव मात्र—प्रतिबिम्बभाव मात्र से परिणत करता है। जीव द्वारा लेश्या द्रव्यों का ग्रहण किस कर्म के उदय से होता है यह विवेचनीय विषय है। इस विषय पर किसी भी टीकाकार का कोई विशेष विवेचन नहीं है। केवल एक स्थल पर लेश्यत्व को असंसारस्थत्व-असिद्धत्व की तरह अष्ट कर्मों का उदय जन्य माना है। लेकिन इससे द्रव्यलेश्या के ग्रहण की प्रक्रिया समझ में नहीं आती है।

आचार्य मलयगिरि का कथन है कि शास्त्रों में आठों कर्मों के विपाकों का वर्णन मिलता है लेकिन किसी भी कर्म के विपाक में लेश्या रूप विपाक उपदर्शित नहीं है। सामान्यतः सोचा जाय तो लेश्या द्रव्यों का ग्रहण किसी नामकर्म के उदय से होना चाहिए। नामकर्म में भी शरीर नामकर्म के उदय से ही ग्रहण होना चाहिए। यदि लेश्या को योग के अन्तर्गत माना जाय तो द्रव्यलेश्या के पुद्गलों का ग्रहण शरीर नामकर्म के उदय से होना चाहिये, क्योंकि योग शरीर नामकर्म की परिणति विशेष है (देखो पृ० १०)। शुभ नामकर्म के उदय से शुभ लेश्याओं का ग्रहण होना चाहिए तथा अशुभ नामकर्म से अशुभ लेश्या का ग्रहण होना चाहिए। लेकिन तेरापंथ के चतुर्थ आचार्य—जयाचार्य का कहना है कि अशुभ लेश्याओं से पापकर्म का बन्धन होता है तथा पापकर्म का बन्धन केवल मोहनीय कर्म से होता है। अतः अशुभ द्रव्य लेश्याओं का ग्रहण मोहनीय कर्म के उदय के समय होना चाहिये।

अन्यत्र ठाणांग के टीकाकार कहते हैं कि योग वीर्य-अन्तराय के क्षय-क्षयोपशम से होता है।

जब जीव एक योनि से मरण, च्यवन, उद्वर्तन करके अन्य योनि में जाता है तब जाने के पथ में जितने समय लगते हैं उतने समय में वह सलेशी होता है। मरण के समय जीव द्रव्यलेश्या के जिन पुद्गलो को ग्रहण करता है उसी लेश्या मे जाकर जन्म-उत्पाद करता है और तदनुरूप ही उसकी भावलेश्या होती है। इस अंतराल गति मे सम्भवतः वह द्रव्य-लेश्या के नये पुद्गलो को ग्रहण नही करता है लेकिन मरण—च्यवन के समय द्रव्यलेश्या के जिन पुद्गलों का ग्रहण किया था, वे अवश्य ही उसके साथ में रहते हैं।

एक समय दर्शन चर्चा का था जब पथ, घाट गोष्ठी आदि में सर्वत्र दर्शन चर्चा होती थी जैसे कि आज राजनीति और देश चर्चा होती है। उस समय जीव के अच्छे-बुरे विचारों और परिणामों को वर्णों में वर्णित किया जाता था। कलुष विचारों के लिये कालिमामय वर्ण जैसे कृष्ण-नील-कापोतादि का उपयोग किया जाता था तथा प्रशस्त विचारो के लिए शुभ वर्ण जैसे रक्त-पद्म-शुक्लादि वर्ण का उपयोग किया जाता था। विभिन्न दर्शनों में इस वर्णवाद का किस प्रकार विवेचन किया गया है उसके लिये विषयाकन ·९८ देखें। आधुनिक विज्ञान में भी जीव के शरीर से किस वर्ण की आभा निकलती है इसका अनु-संधान हो रहा है यथा उसके तत्कालीन विचारो के साथ वर्णों का तुलनात्मक अध्ययन भी किया जा रहा है।

लेश्याओं का नामकरण वर्णों के आधार पर हुआ है। इस पर यह कल्पना की जा सकती है कि द्रव्यलेश्या के पुद्गल स्कधो में वर्ण गुण की प्रधानता है। यद्यपि आगमों मे द्रव्यलेश्या के गंध-रस-स्पर्श गुणों का भी थोडा-बहुत वर्णन है। लेकिन इन तीन गुणों से वर्ण गुण का प्राधान्य अधिक है। जिस प्रकार वस्त्र आदि रंगनेवाले पदार्थों में वर्ण गुण की प्रधानता होती है उसी प्रकार अपने सान्निध्य मात्र से आत्मपरिणामो को प्रभावित करनेवाले द्रव्लेश्या के पुद्गलों मे वर्ण गुण की प्रमुखता होती है। जिस प्रकार स्फटिक मणि पिरोये हुए सूत्र के वर्ण को प्रतिभासित करता है उसी प्रकार द्रव्यलेश्या अपने वर्ण के अनुसार आत्म परिणामों को प्रभावित करती है।

प्राचीन आचार्यों की यह धारणा रही है कि देह-वर्ण ही द्रव्यलेश्या है। विशेष करके नारकी और देवताओं की द्रव्यलेश्या—उनके शरीर का वर्ण रूप ही है। दिगम्बर जैनाचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती लेश्या की परिभाषा शरीर के वर्ण के आधार पर ही करते हैं।

'वण्णोदयसंपादितसरीरवण्णो दु दव्वदो लेस्सा।'

अर्थात् वर्ण नाम कर्म के उदय से जो शरीर का वर्ण (रग) होता है उसको द्रव्यलेश्या कहते हैं। यह परिभाषा ठीक नही है। मनुष्यों में गोरी चमडी का जीव भी हिटलर की तरह अशुभलेशी हो सकता है। अतः शरीर के वर्ण से लेश्या का कोई सम्बन्ध नही होना चाहिये। आगमो में नारकी और देवताओं के शरीर और लेश्या का वर्ण अलग-अलग प्रतिपादित है तथा उनके शरीर के वर्ण और लेश्या के वर्ण में किंचित् अतर भी है। अतः नारकी और देवताओं के शरीर के वर्ण को ही उनकी लेश्या नही कहनी चाहिये।

विषयाकन ९९·१२ तथा ·९९·१३ में क्रमशः वैमानिक देवो तथा नारकियों के शरीर के वर्ण का तथा उनकी लेश्याओं का वर्णन है जिसका चार्ट भी दिया गया है।

इसको देखने से पता चलता है कि रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी के शरीर का वर्ण काला या कालावभास तथा परम कृष्ण होता है लेकिन लेश्या कापोत नाम की कापोत वर्णवाली ही होती है। इस विषय में और भी अनुसंधान करने की आवश्यकता है।

भावलेश्या जीव परिणामों के दस भेदों में से एक भेद है। अतः जीव की एक परिणति विशेष है। टीकाकारों के अनुसार जीव की लेश्यत्व रूप परिणति आत्म प्रदेशों के साथ कृष्णादि द्रव्यों के साचिव्य—सान्निध्य से होती है। यह साचिव्य या सान्निध्य किस कर्म या कर्मों से होता है—यह विवेचनीय है।

लेश्यत्व जीवोदयनिष्पन्न भाव है। अतः कर्म या कर्मों के उदय से जीव के आत्म-प्रदेशों से कृष्णादि द्रव्यों का सान्निध्य होता है तथा तज्जन्य जीव के छः भावलेश्यायें होती हैं। अतः लेश्या को उदयनिष्पन्न भाव कहा गया है। निर्युक्तिकार भी कहते हैं—

भावे उदओ भणिओ, छण्हं लेसाण जीवेसु।

जीवों में—उदयभाव से छः लेश्यायें होती हैं। निर्युक्तिकार के अनुसार विशुद्ध भाव लेश्या—कषायों के उपशम तथा क्षय से भी होती है। अतः औपशमिक तथा क्षायिक भाव भी हैं। निर्युक्ति की इस गाथा पर टीकाकार का कथन है कि विशुद्ध लेश्या को जो औप-शमिक तथा क्षायिक भाव कहा गया है वह एकान्त विशुद्धि की अपेक्षा से कहा गया है अन्यथा क्षायोपशमिक भाव में भी तीनों विशुद्ध लेश्यायें होती हैं।

गोम्मटसार के कर्ता भी मोहनीय कर्म के उदय, उपशम, क्षय, क्षयोपशम से जीव के प्रदेशों की जो चंचलता होती है उसमें भावलेश्या मानते हैं।

'लेश्या' के कर्मलेश्या (कम्मलेस्सा) तथा सकर्म लेश्या (सकम्मलेस्सा) दो पर्यायवाची शब्द हैं। कर्मलेश्या शब्द आत्मप्रदेशों को कर्मों से लिश्य—लिप्त करनेवाली प्रायोगिक द्रव्य-लेश्या का द्योतक है। इसको भावितात्मा अनगार पौद्गलिक सूक्ष्मता के कारण न जान सकता है, न देख सकता है। दूसरा पर्यायवाची शब्द सकर्मलेश्या—चन्द्र, सूर्य आदि से निर्गत ज्योति, प्रभा आदि विस्रसा द्रव्यलेश्याओं का द्योतक है (देखें ०२)।

सविशेषण—समास लेश्या शब्दों में कितने ही शब्द प्रायोगिक द्रव्य और भाव-लेश्या से संबंधित हैं। शब्द नं० १४-१५-१६ तेजोलब्धि जन्य लेश्या से संबंधित हैं। 'अवहिल्लेस्से' जैसे शब्द भावितात्मा अनगार की लेश्या के द्योतक हैं (देखो ०४)।

द्रव्यलेश्या विस्रसा यद्यपि जीवपरिणाम से संबंधित नहीं है तो भी सम्पादकों ने द्रव्यलेश्या विस्रसा संबंधी कतिपय पाठ इस पुस्तक में उद्धृत किये हैं। ऐसा उन्होंने द्रव्य-लेश्या प्रायोगिक के साथ तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से ही किया होगा। द्रव्यलेश्या प्रायोगिक तथा द्रव्यलेश्या विस्रसा के पुद्गलों में परस्पर क्या समानता अथवा भिन्नता है इस सम्बन्ध में सम्पादकों ने कोई पाठ नहीं दिया है (देखें ३)।

विशिष्ट तपस्या करने से बाल तपस्वी, अनगार तपस्वी आदि को तेजोलेश्या रूप तेजोलब्धि की प्राप्ति होती है। देवताओं में भी तेजोलेश्यालब्धि होती है। यह तेजोलेश्या प्रायोगिक द्रव्यलेश्या के तेजोलेश्या भेद से भिन्न प्रतीत होती है। यह तेजोलेश्या दो प्रकार की होती है—(१) शीतोष्ण तेजोलेश्या तथा (२) शीतल तेजोलेश्या। शीतोष्ण तेजोलेश्या ज्वाला—दाह पैदा करती है, भस्म करती है। आजकल के अणुबम की तरह

इसमे अंग, बंग इत्यादि १६ जनपदो को घात, वध, उच्छेद तथा भस्म करने की शक्ति होती है।

शीतल तेजोलेश्या में शीतोष्ण तेजोलेश्या से उत्पन्न ज्वाला—दाह को प्रशान्त करने की शक्ति होती है। वेश्यायण बाल तपस्वी ने गोशालक को भस्म करने के लिए शीतोष्ण तेजोलेश्या निक्षिप्त की थी। भगवान महावीर ने शीतल तेजोलेश्या छोड़कर उसका प्रतिघात किया था। निक्षेप की हुई तेजोलेश्या का प्रत्याहार भी किया जा सकता है।

तेजोलेश्या जब अपने से लब्धि में अधिक बलशाली पुरुष पर निक्षेप की जाती है तब वह वापस आकर निक्षेप करने वाले के भी ज्वाला-दाह उत्पन्न कर सकती है तथा उसको भस्म भी कर सकती है।

यह तेजोलेश्या जब निक्षेप की जाती है तब तैजस शरीर का समुद्घात करना होता है तथा इस तेजोलेश्या के निर्गमन काल मे तैजस शरीर नामकर्म का परिशात (क्षय) होता है। निक्षिप्त की हुई तेजोलेश्या के पुद्गल अचित्त होते हैं (देखें '२५, '६६'८, '६६'१४, ६६ १५)।

और एक प्रकार की तेजोलेश्या का वर्णन मिलता है। उसे टीकाकार सुखासीकाम अर्थात् आत्मिक सुख कहते हैं। देवता पुण्यशाली होते हैं तथा अनुपम सुख का अनुभव करते हैं फिर भी पाप से निवृत्त आर्य अनगार को प्रव्रज्या ग्रहण करने से जो आत्मिक सुख का अनुभव होता है—वह देवताओ के सुख को अतिक्रम करता है अर्थात् उनके सुख से श्रेष्ठ होता है यथा पाप से निवृत्त पाँच मास की दीक्षा की पर्यायवाला आर्य श्रमण निर्ग्रन्थ चन्द्र और सूर्य देवताओ के सुख से भी अधिक उत्तम सुख का अनुभव करता है। (देखें '२५ ५)

यह निश्चित नियम है कि जीव जिस लेश्या के द्रव्यों को ग्रहण करके मरण को प्राप्त होता है उसी लेश्या में जाकर उत्पन्न होता है। इसे इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि जीव जैसी भावलेश्या के परिणामो को लेकर मरता है वैसी ही भावलेश्या के परिणामों के साथ परभव में जाकर उत्पन्न होता है (देखें ५७)।

अब यह प्रश्न उठता है कि कृष्णलेशी जीव परभव में जाकर जिस जीव के गर्भ में उत्पन्न होता है वह जीव क्या कृष्णलेशी ही होना चाहिये? ऐसा नियम नही है। कृष्णलेशी जीव छओ लेश्याओ मे से किसी भी लेश्या वाले जीव के गर्भ मे उत्पन्न हो सकता है। इसी प्रकार अन्य लेश्याओ के विषय में भी समझना चाहिये (५५)।

मरण के समय लेश्या परिणाम तीन प्रकार के होते हैं (१) स्थित परिणाम (२) सक्लिष्ट परिणाम तथा (३) पर्यवजात परिणाम अर्थात् विशुद्धमान परिणाम। बालमरणवाले जीवो के तीनों प्रकार के लेश्या परिणाम हो सकते हैं। बालपडित मरणवाले जीव के यद्यपि मूल पाठ में तीन प्रकार के परिणामों का वर्णन है फिर भी टीकाकार कहते हैं कि उस जीव के केवल स्थित लेश्या परिणाम होने चाहिये। इसी प्रकार पडित मरणवाले जीव के भी मूल पाठ मे तीन प्रकार के परिणाम बतलाये गए हैं लेकिन टीकाकार ने कहा है कि उस जीव के केवल पर्यवजात अर्थात् विशुद्धमान लेश्या के परिणाम होने चाहिये (देखें '६६)।

देवता और नारकी को छोड़ कर सामान्यतः अन्य जीवों के लेश्या परिणाम एक लेश्या से दूसरी लेश्या के परिणाम मे अन्तर्मुहूर्त मे परिणमित होते रहते हैं। प्रश्न उठता है कि एक लेश्या से जब अन्य लेश्या मे परिणमन होता है तो वह क्रमबद्ध होता है अथवा क्रम व्यतिक्रम करके भी हो सकता है।

विषयांकन १६ के पाठों से अनुभूत होता है कि क्रमबद्ध परिणमन हो ऐसा एकान्त नियम नही है। कृष्णलेश्या नीललेश्या के पुद्‌गलों को प्राप्त होकर नीललेश्या मे परिणमन करती है तथा कापोत, तेजो, पद्म और शुक्ल लेश्या पुद्‌गलों को प्राप्त होकर उस उस लेश्या के वर्ण-गंध-रस-स्पर्श रूप मे परिणत हो जाती है। ऐसा कोई एकान्त नियम नही मालूम पडता है कि कृष्णलेश्या को शुक्ल लेश्या मे परिणमन करने के लिये पहिले नील मे, फिर कापोत में, फिर क्रम से शुक्ललेश्या मे परिणत होना होगा। कृष्णलेश्या शुक्ललेश्या के पुद्‌गलो को प्राप्त होकर सीधे शुक्ललेश्या मे परिणत हो सकती है।

लेश्या आत्मा--आत्मप्रदेशों मे ही परिणमन करती है, अन्यत्र नही करती है। इससे पता चलता है कि ससारी आत्मा का लेश्या के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है और वह अनादि काल से चला आ रहा है। जीव जब तक अन्तक्रिया नही करता है तब तक यह सम्बन्ध चलता रहता है और आत्मा मे लेश्याओं का परिणमन होता रहता है (देखें २० ७)।

कृष्ण यावत् शुक्ल लेश्या में 'वट्टमान'—वर्तता हुआ जीव और जीवात्मा एक हैं, अभिन्न हैं, दो नही है। जब जीवात्मा (पर्यायात्मा) लेश्या परिणामो में वर्तता है तब वह जीव यानि द्रव्यात्मा से भिन्न नही है, एक है। अर्थात् वही जीव है, वही जीवात्मा है (देखें ६६·१०)।

रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी सब कापोतलेशी होते हैं। उनकी एक वर्गणा कही गई है (देखें ५२)। लेकिन वे सब समलेशी नही हैं, अर्थात् उनकी लेश्या के स्थान समान नही हैं। जो पूर्वोपपन्नक हैं उनकी लेश्या जो पश्चादुपपन्नक हैं उनसे विशुद्धतर है क्योंकि पूर्व मे उत्पन्न हुए नारकी ने बहुत से अप्रशस्त लेश्या द्रव्यो का अनुभव किया है तथा अनुभव करके क्षीण किया है। इसलिए वे विशुद्धतर लेश्या वाले हैं तथा पश्चात् उत्पन्न हुए नारकी इसके विपरीत अविशुद्ध लेश्या वाले होते हैं। यह पाठ समान स्थिति वाले नारकी की अपेक्षा से ही समझना चाहिए। (देखें ५६, ६१)।

पूर्वोपपन्नक नारकी की यह लेश्या-विशुद्धि किसी कर्म के क्षय से होती है अथवा जैसा कि टीकाकर कहते हैं कि लेश्या पुद्‌गलों का अनुभव कर करके लेश्या पुद्‌गलो का क्षय करने से होती है? यदि टीकाकार की बात ठीक मानी जाय तो लेश्या के परिणमन तथा उसके ग्रहण और क्षय के साथ कर्मों का सम्बन्ध नही बैठता है। यह विषय सूक्ष्मता के साथ विवेचन करने योग्य है।

लेश्या और योग का अविनाभावी सम्बन्ध है। जहाँ लेश्या है वहाँ योग है, जहाँ योग है वहाँ लेश्या है। फिर भी दोनो भिन्न-भिन्न तत्त्व हैं। भावत. लेश्या परिणाम तथा योगपरिणाम जीव परिणामों मे अलग-अलग बतलाये गये हैं। अत भिन्न हैं। द्रव्यत. मनोयोग तथा वाक्‌योग के पुद्‌गल चतु स्पर्शी हैं तथा काययोग के पुद्‌गल अष्टस्पर्शी स्थूल हैं। लेश्या के पुद्‌गल अष्टस्पर्शी तो हैं लेकिन सूक्ष्म हैं, क्योंकि लेश्या के पुद्‌गलों को भावितात्मा

अनगार न जान सकता है, न देख सकता है। अतः द्रव्यतः भी योग और लेश्या भिन्न-भिन्न हैं।

लेश्यापरिणाम जीवोदयनिष्पन्न है ('४६'१) तथा योग वीर्यान्तराय कर्म के क्षय-क्षयोपशम जनित है (देखें ठाण० स्था ३। सू० १२४ की टीका)। कहा भी है—योग वीर्य से प्रवाहित होता है (देखें भग० श १ । उ ३ । प्र० १३०)।

जीव परिणामों का विवेचन करते हुए ठाणांग के टीकाकार लेश्या परिणाम के वाद योगपरिणाम क्यो आता है, इसका कारण बतलाते हुए कहते हैं कि योग परिणाम होने से लेश्या परिणाम होते हैं तथा समुच्छिन्न क्रिया-ध्यान अलेशी को होता है। अतः परिणाम के अनंतर योग परिणाम का वर्णन किया गया है। जिस प्रकार द्रव्य मन और द्रव्य वचन के पुद्गल काय योग से ग्रहीत होते हैं उसी प्रकार लेश्या-पुद्गल भी काययोग के द्वारा ग्रहण होने चाहिए। तेरहवें गुणस्थान के शेष के अंतर्मुहूर्त मे मनोयोग तथा वचनयोग का सम्पूर्ण निरोध हो जाता है तथा काययोग का अर्ध निरोध हो जाता है तब लेश्या परिणाम तो होता है लेकिन काययोग की अर्धता-क्षीणता के कारण द्रव्यलेश्या के पुद्गलो का ग्रहण रुक जाना चाहिए। १४वें गुणस्थान के प्रारंभ में जब योग का पूर्ण निरोध हो जाता है तब लेश्या का परिणमन भी सर्वथा रुक जाता है। अतः तब जीव अयोगी—अलेशी हो जाता है।

योग और लेश्या में भिन्नता प्रदर्शित करनेवाला एक विषय और है। वह है वेदनीय कर्म का वधन। सयोगी जीव के प्रथम दो भंग से अर्थात् (१) बाधा है, बाधता है, बाधेगा, (२) बाधा है, बांधता है, बाधेगा नही—से वेदनीय कर्म का बध होता है। लेकिन सलेशी के प्रथम, द्वितीय तथा चतुर्थ भंग—(४) बाधा है, न बाधता है, न बाधेगा से वेदनीय कर्म का बंध होता है (देखें '६६'२४)। सलेशी के (शुक्ललेशी सलेशी के) चतुर्थ भग से वेदनीय कर्म का बधन समझ के बाहर की बात है। फिर भी मूल पाठ में यह बात है तथा टीकाकार भी इसका कोई विवेकपूर्ण एक्स्प्लेनेसन नही दे सके हैं। टीकाकार ने घंटा-लाला न्याय की दोहाई देकर अवशेष बहुश्रुत गम्य करके छोड दिया है।

लेश्या एक रहस्यमय विषय है तथा इसके रहस्य की गुत्थी इस कलिकाल में खुलनी कठिन है। फिर भी यह बडा रोचक विषय है। सम्पादकों ने इसका वर्गीकरण बड़े सुन्दर ढग से किया है जो इसको समझने में अति सहायक होता है। सम्पादकों से निवेदन है कि वे दिगम्बर संकलन को शीघ्र ही प्रकाशित कर दें जिससे पाठकों को इसकी अनसुलझी गुत्थियाँ सुलझाने मे सम्भवतः कुछ सहायता मिल सके। इत्यलम्।

कलकत्ता-२६,
आषाढ शुक्ला दशमी,
वि० सवत् २०२३

हीराकुमारी बोथरा
(व्याकरण—साख्य—वेदान्त तीर्थ)

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

विषय		पृष्ठ

'० शब्द-विवेचन

'०१ व्युत्पत्ति

'०१।१ प्राकृत शब्द 'लेश्या' की व्युत्पत्ति

रूप=लेसा, लेस्सा।

लिंग=स्त्रिलिंग।

धातु—लिस् (स्वप) सोना, शयन करना।

लिस् (श्लिष्) आलिंगन करना।

लिस्स (देखो लिस्) (श्लिष्) लिस्सति।

पाइ० पृष्ठ ६०२

इसमें लेस्सा पारिभाषिक शब्द के मूल धातु का संकेत नहीं है। श्लिष् भाव लिया जाय तो 'लिस्स' धातु से लिस्सा तथा ल की इ का विकार से ए—लेस्सा शब्द बन सकता है। टीकाकारों ने "लिश्यते—श्लिष्यते कर्मणा सह आत्मा अनयेति लेश्या" ऐसा अर्थ ग्रहण किया है। अतः लिस्स को ही 'लेस्सा' का मूल धातु रूप मानना चाहिये।

यदि संस्कृत शब्द लेश्या का प्राकृत रूप 'लेस्सा' बना ऐसा माना जाय तो लेश्या शब्द के 'श' का दंती 'स' में विकार, य का लोप तथा स का द्वित्व, इस प्रकार लेस्सा शब्द बन सकता है, यथा—वेश्या से वेस्सा।

यदि लेश्या का पारिभाषिक अर्थ से भिन्न अर्थ तेज, ज्योति, आदि लिया जाय तो 'लस' धातु से लेस्सा शब्द की व्युत्पत्ति उपयुक्त होगी। 'लस' का अर्थ पाइ० में चमकना अर्थ भी दिया है अत• तेज ज्योति अर्थ वाला लेस्सा शब्द इससे (लस धातु से) व्युत्पन्न किया जा सकता है।

'०१।२ संस्कृत 'लेश्या' शब्द की व्युत्पत्ति

लिश् धातु से यत्+टाप् प्रत्ययों से लेश्या शब्द की व्युत्पत्ति बनती है।

(क) लिश् धातु से दो रूप बनते हैं—(१) लिशति, (२) लिश्यति।

लिशति=जाना, सरकना।

लिश्यति=छोटा होना, कमना।

लेकिन लेश्या शब्द का ज्योति अर्थ भी मिलता है लेकिन वह दोनो धातु अर्थों से मेल नही खाता।

देखो आप्टे संस्कृति अंग्रेजी छात्र कोष पृ० ४८३

(ख) लिश्=फाड़ना, तोड़ना ; विलिशा=टूटा हुआ।

देखो संस्कृत अंग्रेजी कोष—सम्पादक, आर्थर अन्थोनी मैक्डोनल्ड, प्रकाशक—ओक्स्फोर्ड विश्वविद्यालय, सन् १६२४। इस कोश में लेश्या शब्द नही है।

(ग) लिश् (रिश् का पिछला रूप) लिश्यते=छोटा होना, कमना।

लिशति=जाना, सरकना।

लेश=कण।

देखो संस्कृति-अंग्रेजी कोष—सर मोनियर मोनियर विलियम्—प्रकाशक मोतीलाल बनारसीदास सन् १६६३।

इस कोष में भी लेश्या शब्द नही है।

.०१।३ पाली में लेश्या शब्द

पाली कोषों में लेसा या लेस्सा शब्द नही मिलता है। लेस शब्द मिलता है।

लेस—(१) कण।

(२) नकली, बहाना, चालाकी।

दूसरे अर्थ में Vin : III : 169 मे 'लेस' के दश भेद बताये हैं, यथा—

जाति, नाम, गोत्र, लिंग, आपत्ति, पत्र, चीवर, उपाध्याय, आचार्य, सेनासन।

(देखो पाली अंग्रेजी कोश—सम्पादक रिसडेभिडस्—यकार खण्ड—पन्ना ४४—प्रकाशक पाली टेक्स्ट सोसाइटी)

(देखो कन्साइज पाली अंग्रेजी कोश—बुद्धदत्त महाथेरा—प्रकाशक—यु·चन्द्रदास डी सिल्भा सन् १६४६—कोलम्वो)

लेस शब्द का अर्थ लेस्सा शब्द से नही मिलता है।

.०२ लेश्या शब्द के पर्यायवाची शब्द

१ कम्मलेस्सा

(क) छण्हंपि कम्मलेसाणं।

उ० अ० ३४। गा० १। तृतीय चरण। पृ० १०४५।

(ख) अणगारेणं भंते ! भावियप्पा। अप्पणो कम्मलेस्स ण जाणइ ण पासइ।

भग० श० १४ | उ० ६ | प्र० १ | पृ० ७०६ |

२ सकम्मलेस्सा

(क) तं (भावियप्पा अगणारं) पुण जीव सरूवीं सकम्मलेस्सं जाणइ पासइ।

भग० श० १४ | उ० ६ | प्र० १ | पृ० ७०६ |

(ख) कयरे णं भंते ! सरूवीं सकम्मलेस्सा पोग्गला ओभासंति जाव पभासेंति ? गोयमा ! जाओ इमाओ चंदिम-सूरियाणं देवाणं विमाणेहिंतो लेस्साओ × × × जाव पभासेंति।

——भग० श० १४ | उ० ६ | प्र० ३ | पृ० ७०६ |

·०३ लेश्या शब्द के अर्थ

१ आत्मा का परिणाम विशेष—पाइ० ६०५ |

२ आत्म-परिणाम निमित्त भूत कृष्णादि द्रव्य विशेष—पाइ० ६०५ |

३ अध्यवसाय—अभिधा० ६७४ |

आया० श्रु० १ | अ० ६ | उ० ५ सू० ५ पृ० २२ |

४ अन्तकरण वृत्ति—अभिधा० ६७४ | आया १।८।५ |

(आयारग का पाठ खोजकर उपरोक्त सन्दर्भ में नही मिला) |

५ तेज—पाइ० ६०५ |

६ दिप्ति—पाइ० ६०५ | विवा० (चोकसी मोदी) शब्दकोप पृ० ११० |

७ ज्योति—आप्तेकोष० पृ० ४८३ |

प्रकाश-उजियाला=सस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ पृ० ६६७ |

८ किरण—पाइ० ६०५ (सुज्ज० १६)

६ मण्डल विम्व—पाइ० ६०५ | सम० १५ | पृ० ३२८ |

१० देह सौन्दर्य—पाइ० ६०५ | राज० ॥

११ ज्वाला—पाइ० द्वि० स० ७२६ |

१२ सुख—भग० श० १४ उ० ६ प्र० १२ | पृ० ७०७ |

१३ वर्ण—भग० श० १४ उ० ६ प्र० १०-११ | पृ० ७०७ |

·०४–सविशेषण–ससमास लेश्या-शब्द

१ दव्वलेस्सं—भग० श १२ । उ ५ । प्र० १६ (पृ० ६६४)
२ भावलेस्सं— ,, ,,
३ कण्हलेस्सा—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १२ (पृ० ४३७)
४ नीललेस्सा— ,, ,,
५ काऊलेस्सा — ,, ,,
६ तेऊलेस्सा— ,, ,,
७ पम्हलेस्सा— ,, ,,
८ सुक्कलेस्सा— ,, ,,
९ सलेस्सा—पण्ण० प १८ । सू० ९ । द्वा ८ (पृ० ४५६)
१० अलेस्सा— ,, ,,
११ लेस्सागइ—पण्ण० प १६ । सू० १४ (पृ० ४३३)
१२ लेस्साणुवायगइ— ,, ,,
१३ लेस्साभिताव—भग० श ८ । उ ८ । प्र ३८ (पृ० ५६०)
१४ संखित्तविउलतेऊलेस्से—भग० श २ । उ ५ । प्र ३६ (पृ० ४३०)
१५ सिओसिणतेऊलेस्सं—भग० श० १५ । पद ६ (पृ० ७१४)
१६ सियलीयंतेऊलेस्सं— ,, ,,
१७ चन्दलेस्सं—सम० ३ (पृ० ३१८)
१८ किट्ठिलेस्सं—सम० ४ (पृ० ३१९)
१९ सूरलेस्सं—सम० ५ (पृ० ३२०)
२० वीर लेस्सं—सम० ६ (पृ० ३२०)
२१ पम्हलेस्सं—सम० ९ (पृ० ३२३)
२२ सुज्जलेस्सं— ,,
२३ रुइल्ललेस्सं— ,,
२४ वंभलेस्सं—सम० ११ (पृ० ३२५)
२५ लोगलेस्सं—सम० १३ (पृ० ३२७)
२६ वजलेस्सं—सम० १३ (पृ० ३२७)
२७ वइरलेस्सं— ,,
२८ असिलेस्सा—सम० १५ (पृ० ३२८)
२९ नन्दलेस्सा—सम० १५ (पृ० ३२९)

३० पुप्फलेस्सं—सम० ३० (पृ० ३३३)

३१ सुहलेस्सा—चन्द० प्रा १६ (पृ० ७४५)

३२ मन्दलेस्सा— ,,

३३ चित्तंतरलेस्सा—चन्द० प्रा० १६ (पृ० ७४५)

३४ चरिमलेस्संतर—चन्द० प्रा ५ (पृ० ६६४)

३५ छिन्नलेस्साओ—चन्द० प्रा० ६ (पृ० ७८०)

३६ मन्दायवलेस्सा—चन्द० प्रा १६ (पृ० ७४६)

३७ लेस्सा अणुवद्ध चारिणो—चन्द० प्रा० २० (पृ० ७४८)

३८ समलेस्सा—भग० श १ । उ २ । प्र० ७५-७६ (पृ० ३६१)

३९ विसुद्धलेस्सतरागा— ,,

४० अविशुद्धलेस्सतरागा— ,,

४१ चक्खुलोयणलेस्सं—राय० सू० २८ (पृ० ४६)

४२ अवहिल्लेस्से—आया० श्र १ । अ ६ । उ ५ । सू १६२ (पृ० २२)

—भग० श २ । उ १ । प्र १८ (पृ० ४२२)

—पण्हा श्रु २ अ ५ । सू २६ (पृ० १२३६)

४३ दिव्वाए लेस्साए—पण्ण० प २ । सू २८ (पृ० २६६)

४४ सीयलेस्सा——जीवा० प्रति ३ उ २ । सू १७६ (पृ० ३२०)

४५ परम कण्हलेस्से—पण्ण० प २३ । उ २ । सूत्र ३६ । (पृ० ४६६)

४६ परम सुक्कलेस्साए—भग० श २५ । उ ६ । प्र० ६० । पृ० ८८२

·०५ परिभाषा के उपयोगी पाठ

·०५१ द्रव्यलेश्या की परिभाषा के उपयोगी पाठ

१ वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श।

कण्हलेस्सा ण भन्ते । कइ वण्णा, कइ रसा, कइ गन्धा, कइ फासा पन्नत्ता ? गोयमा ! दव्व लेस्सं पडुच्च पंच वण्णा, जाव अट्ठफासा पन्नत्ता × × × एवं जाव सुक्कलेस्सा ।

—भग० श १२ । उ ५ । प्र १६ (पृ० ६६४)

२ छ लेश्या और पाँच वर्ण।

एयाओ णं भन्ते ! छल्लेस्साओ कईसु वण्णेसु साहिज्जंति ? गोयमा ! पंचसु वण्णेसु साहिज्जंति, तजहा—कण्हलेस्सा कालेण्णं वण्णेणं साहिज्जइ, नीललेस्सा

नीलवण्णेणं साहिज्जई, काऊलेस्सा काललोहिएणं वण्णेणं साहिज्जइ, तेऊलेस्सा लोहियेणं वण्णेणं साहिज्जइ, पह्मलेस्सा हालिद्दएणं वण्णेणं साहिज्जइ, सुक्कलेस्सा सुक्किल्लएणं वण्णेणं साहिज्जइ।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ४० (पृ० ४४७)

·३ पुद्गल भी वर्ण, गंध, रस, स्पर्शी है अतः द्रव्यलेश्या पुद्गल है।

पोग्गलत्थिकाएणं भन्ते! कइ वण्णे, कइ गन्धे, कइ रसे, कइ फासे पन्नते? गोयमा। पंच वण्णे, पंच रसे, दुगंधे, अट्ठफासे।

—भग० श २। उ० १०। प्र ५७ (पृ० ४३४)

·४ द्रव्यलेश्या पुद्गल है अतः पुद्गल के गुण भी द्रव्यलेश्या में है।

पोग्गलत्थिकाए रूवी, अजीवे, सासए, अवट्ठिए, लोग दव्वे, से समासओ पंचविहे पन्नत्ते—तंजहा—दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ।

१—दव्वओ णं पोग्गलत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं,

२—खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते,

३—कालओ न कयाइ, न आसी, जाव णिच्चे,

४—भावओ वण्णमंते, गंध-रस-फासमन्ते।

५—गुणओ गहण गुणे।

—भग० श २। उ १०। प्र ५७ (पृ० ४३४)

·५ द्रव्यलेश्या अनन्त प्रदेशी है।

कण्हलेस्साणं भन्ते। कइ पएसिया पन्नत्ता? गोयमा! अणंत पएसिया पन्नत्ता, एवं जाव सुक्कलेस्सा।

पण्ण० प १७। उ० ४। सू ४६ (पृ० ४४६)

·६ द्रव्यलेश्या असंख्यात् प्रदेशी क्षेत्र-अवगाह करती है।

कण्हलेस्साणं भन्ते! कइ पएसोगाढा पन्नत्ता? गोयमा! असंखेज्जपएसोगाढा पन्नत्ता।

पण्ण० प १७। उ ४। सू ४६ (पृ० ४४६)

·७ द्रव्यलेश्या की अनन्त वर्गणा होती है।

कण्हलेस्साएणं भन्ते! केवइयाओ वग्गणाओ पन्नत्ताओ? गोयमा! अणंताओ वग्गणाओ पन्नत्ताओ एवं जाव सुक्कलेस्साए।

पण्ण० प १७। उ ४। सू ४६ (पृ० ४४६)

·८ द्रव्यलेश्या के असंख्यात् स्थान है।

केवइया णं भन्ते ! कण्हलेस्सा ठाणा पन्नत्ता ? गोयमा ! असंखेज्जा कण्ह-लेस्सा ठाणा पन्नत्ता, एव जाव सुक्कलेस्सा।

पण्ण० प १७ | उ ४ | सू ५० (पृ० ४४६)

·६ द्रव्यलेश्या गुरूलघु है।

कण्हलेस्साणं भन्ते ! किं गुरूया, जाव अगुरूलहुया ? गोयमा ! णो गुरूया, णो लहुया, गुरूयलहुयावि, अगुरूलहुयावि। से केणट्ठेणं ? गोयमा ! दव्वलेस्सं पडुच्च ततियपएणं, भावलेस्सं पडुच्च चउत्थपएणं, एवं जाव सुक्कलेस्सा।

भग० श १ | उ ६ | प्र० २८६-६० (पृ० ४११)

·१० द्रव्यलेश्या जीवग्राह्य है।

जल्लेसाइं दव्वाइं परिआइत्ता कालं करेइ (जीव) तल्लेस्सेसु उववज्जइ।

भग० श ३ | उ ४ | प्र १७ पृ० ४५६

११ द्रव्यलेश्या परस्पर परिणामी है।

से नूणं भन्ते ! कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प ता रूवत्ताए, ता वण्णत्ताए, ता गंधत्ताए ता रसत्ताए ता फासत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ।

पण्ण० प १७ | उ ५ | प्र ५४ (पृ० ४५०)

·१२ द्रव्यलेश्या परस्पर कदाचित् अपरिणामी भी है।

से नूणं भन्ते ! कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प णो ता रूवत्ताए जाव णो ता फास-त्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ ? हंता गोयमा ! कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प णो ता रूवत्ताए, णो ता वन्नत्ताए, णो ता गंधत्ताए, णो ता रसत्ताए, णो ता फासत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ। से केणट्ठेणं भन्ते ! एवं वुच्चइ ? गोयमा ! आगारभाव-मायाए वा से सिया, पलिभागभावमायाए वा से सिया।

पण्ण० प १७ | उ ५ | प्र ५५ (पृ० ४५०)

१३ द्रव्यलेश्या (सूक्ष्मत्व के कारण) छद्मस्थ अगोचर—अज्ञेय है।

अणगारे णं भन्ते ! भावियप्पा अप्पणो कम्मलेस्सं न जाणइ पासइ तं पुण जीवं सरूविं सकम्मलेस्सं जाणइ पासइ ? गोयमा ! अणगारेणं भावियप्पा अप्पणो जाव पासइ।

भग० श १८ | उ ६ | प्र १ (पृ० ७०६)

.१४ द्रव्यलेश्या अजीवउदयनिष्पन्न भाव है क्योंकि जीव द्वारा ग्रहण होने के बाद द्रव्य लेश्या का प्रायोगिक परिणमन होता है।

सेकिंतं अजीवोदयनिप्फन्ने ? अजीवोदयनिप्फन्ने अणेगविहे पन्नत्ते, तंजहा—उरालियं वा सरीरं, उरालियसरीरपओगपरिणामियं वा दव्वं, वेउव्वियं वा सरीरं, वेउव्वियसरीरपओगपरिणामियं वा दव्वं, एवं आहारगं सरीरं, तेयगं सरीरं, कम्मगसरीरं च भाणियव्वं। पओगपरिणामए वण्णे, गंधे, रसे, फासे, सेत्तं अजीवोदयनिप्फन्ने।

अणुओ सू० १२६। पृ० ११११

.०५२ भावलेश्या की परिभाषा के उपयोगी पाठ

.१ भावलेश्या जीव परिणाम है।

जीवे परिणामे णं भंते! कइविहे ? गोयमा! दसविहे पन्नत्ते, तंजहा—गइपरिणामे, इन्दियपरिणामे, कसायपरिणामे, लेस्सापरिणामे, जोगपरिणामे, उवओगपरिणामे, णाणपरिणामे, दंसणपरिणामे, चरित्तपरिणामे, वेयपरिणामे।

पण्ण० प० १३। सू० १। पृ० ४०६

.२ भावलेश्या अवर्णी, अगंधी, अरसी, अस्पर्शी है।

(कण्हलेस्सा) भावलेस्सं पडुच्च अवण्णा, अरसा, अगंधा, अफासा, एवं जाव सुक्कलेस्सा।

भग० श० १२। उ० ५। प्र० १६। पृ० ६६४

.३ भावलेश्या अवर्णी, अगंधी, अरसी, अस्पर्शी तथा जीव परिणाम है अतः जीव है।

जीवत्थिकाए णं भंते! कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइ फासे ? गोयमा! अवण्णे, जाव अरूवी, जीवे, सासए, अवट्ठिए, लोगदव्वे × × × ।

भग० श० २। उ० १०। प्र० ५७। पृ० ४३४

.४ भावलेश्या अगुरुलघु है।

कण्हलेस्साणं भंते! किं गुरुया जाव अगुरुलहुया ? णो गुरुया, णो लहुआ, गुरुलहुआ वि, अगुरुलहुया वि। से केणट्ठेणं ? गोयमा! दव्वलेस्सं पडुच्च ततियपएणं, भावलेस्सं पडुच्च चउत्थ पएणं, एवं जाव सुक्कलेस्सा।

भग० श० १। उ० ६। प्र० २८६-६०। पृ० ४४१

५ भावलेश्या उदय निष्पन्न भाव है।

से किं तं जीवोदयनिप्फन्ने ? अणेगविहे पन्नते, तं जहा—णेरइए × × पुढविकाइए जाव तसकाइए, कोहकसाई जाव लोहकसाई × × × कण्हलेस्से जाव सुक्कलेस्से × × × संसारत्थे असिद्धे, से तं जीवोदयनिप्फन्ने।

—अणुओ० सू १२६ । पृ० ११११

६ भावलेश्या परस्पर में परिणमन करती है।

गोयमा ! (कण्हलेस्से जाव सुक्कलेस्से भवित्ता) लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु २, कण्हलेस्सं परिणमइ कण्हलेस्सं परिणमइत्ता कण्हलेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति।

गोयमा ! (कण्हलेस्से जाव सुक्कलेस्से भवित्ता) लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु वा विसुज्झमाणेसु नीललेस्सं परिणमइ नीललेस्सं परिणमइत्ता नीललेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति।

—भग० श १३ । उ १ । प्र १९-२० । पृ० ६७९

७ भावलेश्या सुगति-दुर्गति की हेतु है। अतः कर्म वन्धन मे भी किमी प्रकार का हेतु है।

तओ दुग्गइगामियाओ (कण्ह, नील, काऊलेस्साओ) तओ सुग्गइगामियाओ (तेऊ, पम्ह, सुक्कलेस्साओ)।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४७ । पृ० ४४६

---

०५३ प्राचीन आचार्यों द्वारा की गई लेश्या की परिभाषा :—

१ अभयदेवसूरि :—

(क) कृष्णादि द्रव्य सान्निध्य जनितो जीव परिणामो—लेश्या।

यदाह .- कृष्णादि द्रव्य साचिव्यात्, परिणामो य आत्मनः।
स्फटिकस्येव तत्रायं, लेश्या शब्द प्रयुज्यते॥

—भग० श १ । उ १ । प्र ५३ की टीका।

[नोट—उपरोक्त पद अनेक प्राचीन आचार्यों ने उद्धृत किया है। 'प्रयुज्यते' की जगह 'प्रवर्तते' शब्द का प्रयोग भी मिलता है।]

(ख) कृष्णादि द्रव्य साचिव्य जनिताऽऽत्मपरिणामरूपा भावलेश्या।

—भग० श १ । उ २ । प्र ९७ की टीका।

(ग) आत्मनि कर्मपुद्गलानाम् लेश्नात्—संश्लेपणात् लेश्या, योगपरिणामश्चैताः, योग निरोधे लेश्यानामभावात् , योगश्च शरीरनामकर्मपरिणति विशेषः।

—भग० श १। उ २। प्र ९८ की टीका।

(घ) द्रव्यतः कृष्णलेश्या औदारिकादि शरीर वर्णः।

—भग० श १। उ ९। प्र २९० की टीका।

(ङ) आत्मनः सम्बन्धनीं कर्मणोयोग्य लेश्या कृष्णादिका कर्म्मणो वा लेश्या 'श्लिश श्लेषणे' इति वचनात् सम्बन्धः कर्मलेश्या।

—भग० श १४। उ ९। प्र १ की टीका।

(च) इयं (लेश्या) च शरीरनाम कर्म्मपरिणतिरूपा योगपरिणतिरूपत्वात् , योगस्य च शरीरनामकर्म्मपरिणति विशेषत्वात् , यत उक्तं प्रज्ञापना वृत्तिकृता—

"योगपरिणामोलेश्या, कथं पुनर्योग परिणामो लेश्या, यस्मात् सयोगिकेवली शुक्ललेश्यापरिणामेन विहृत्यान्तर्मुहूर्त्ते शेषे योगनिरोधं करोति ततोऽयोगित्वमलेश्यत्वं च प्राप्नोति अतोऽवगम्यते 'योगपरिणामोलेश्ये' ति, स पुनर्योगः शरीरनाम कर्म्मपरिणतिविशेषः, यस्मादुक्तम्—'कर्म्म हि कार्मणस्य कारणमन्येषां च शरीराणा' मिति" तस्मादौदारिकादि शरीरयुक्तस्यात्मनो वीर्यपरिणतिविशेषः काययोगः १, तथौदारिकवैक्रियाहारकशरीरव्यापाराहृतवाग्द्रव्यसमूहसाचिव्यात् जीव-व्यापारो यः स वाग्योग' २, तथौदारिकादि शरीरव्यापाराहृतमनोद्रव्यसमूह साचिव्यात् जीवव्यापारो यः स मनोयोग इति ३, ततो यथैव कायादिकरण युक्तस्यात्मनो वीर्य परिणतिर्योग उच्यते तथैवलेश्यापीति, अन्ये तु व्याचक्षते—'कर्म्मनिस्यन्दो लेश्ये'ति सा च द्रव्यभावभेदात् द्विधा, तत्र द्रव्यलेश्या कृष्णादिद्रव्याण्येव, भावलेश्या तु तज्जन्यो जीवपरिणाम इति।"

(छ) लिश्यते प्राणी कर्मणा यया सा लेश्या।

(ज) यदाह "श्लेष इव वर्णबंधस्य कर्मबंधस्थिति तिविधात्र्यः"।

उपरोक्त तीनो—ठाण० स्था १। सू ५१ पर टीका।

·२ मलयगिरि :

(क) इह योगे सति लेश्या भवति, योगाभावे च न भवति ततो योगेन सहान्वयव्यतिरेकदर्शनात् योगनिमित्ता लेश्येति निश्चीयते, सर्वत्रापि तन्निमित्तत्व-

निश्चयस्यान्वयव्यतिरेक दर्शनामूलत्वात्, योगनिमित्ततायामपि विकल्पद्वयमवतरति—

किं योगान्तरगतद्रव्यरूपा योगनिमित्तकर्मद्रव्यरूपा वा? तत्र न तावद्योगनिमित्तकर्म्मद्रव्यरूपा, विकल्प द्वयानतिक्रमात्, तथाहि—योगनिमित्त कर्म्मद्रव्यरूपा सती घातिकर्मद्रव्यरूपा अघातिकर्म्मद्रव्यरूपा वा? न तावद् घातिकर्म्मद्रव्यरूपा, तेषामभावेऽपि सयोगिकेवलिनि लेश्यायाः सद्भावात्, नापि अघातिकर्म्मरूपा, तत्सद्भावेऽपि अयोगिकेवलिनि लेश्याया अभावात्, तत पारिशेष्यात् योगान्तर्गत द्रव्यरूपा प्रत्येया। तानि च योगान्तर्गतानि द्रव्याणि यावत्कषायास्तावत्तेषामप्युदयोपबृंहकाणि भवन्ति, दृष्टं च योगान्तरगताना द्रव्याणा कषायोदयोपबृंहणसामर्थ्यम्। यथा पित्त द्रव्यस्य—तथाहि—

पित्तप्रकोपविशेषादुपलक्ष्यते महान् प्रवर्द्धमानः कोप, अन्यच्च-बाह्यान्यपि द्रव्याणि कर्मणामुदयक्षयोपशमादिहेतवः उपलभ्यन्ते, यथा ब्राह्मयोपधिर्ज्ञानावरणक्षयोपशमस्य, सुरापानं ज्ञानावरणोदयस्य, कथमन्यथा युक्तायुक्त विवेकविकलतोपजायते, दधिभोजनं निद्रारूप दर्शनावरणोदयस्य, तत्किं योगद्रव्याणि न भवन्ति? तेन य. स्थितिपाकविशेषो लेश्यावशादुपगीयते शास्त्रान्तरे स सम्यगुपपन्नः, यत स्थितिपाकोनामानुभाग उच्यते, तस्य निमित्तं कषायोदयान्तर्गत कृष्णादिलेश्यापरिणामाः, ते च परमार्थत कषायस्वरूपा एव, तदन्तर्गतत्वात्, केवलं योगान्तर्गत द्रव्य सहकारिकारण भेदवैचित्र्याभ्या ते कृष्णादिभेदैर्भिन्नाः तारतम्यभेदेन विचित्राश्चोपजायन्ते, तेन यद् भगवता कर्मप्रकृतिः कृता शिवशर्माचार्येण शतकाख्ये ग्रन्थेऽभिहितम्—'ठिइ अणुभागं कसायओ कुणइ' इति तदपि समीचीनमेव, कृष्णादिलेश्या-परिणामानामपि कषायोदयान्तर्गताना कषायरूपत्वात्। तेन यदुच्यते कैश्चिद्योगपरिणामत्वे लेश्यानाम् "जोगा पयडिपएसं ठिइअणुभागं कसायओ कुणइ" इति वचनात् प्रकृतिप्रदेशबन्धहेतुत्वमेव स्यान्न कर्म्मस्थिति हेतुत्वमिति, तदपि न समीचीनम्, यथोक्तभावार्थापरिज्ञानात्? अपि च न लेश्या स्थितिहेतव.,

किन्तु कषाया., लेश्यास्तु कषायोदयान्तर्गता अनुभागहेतव, अतएव च—'स्थितिपाकविशेषस्तस्य भवति लेश्याविशेषेण' इत्यत्रानुभागप्रतिपत्त्यर्थं पाकग्रहणम्। एतच्च सुनिश्चितं कर्म्मप्रकृतिटीकादिषु, तत सिद्धान्तपरिज्ञानमपि न सम्यक् तेषामस्ति। यदप्युक्तम—'कर्म्मनिष्यन्दोलेश्या, निष्यन्दरूपत्वे हि यावत् कषायोदय तावन्निष्यन्दस्यापि सद्भावात्, कर्म्मस्थितिहेतुत्वमपि युज्यते एवेत्यादि, तदप्य-

श्लीलम् , लेश्यानामनुभागबन्धहेतुतया स्थितिबंधहेतुत्वायोगात्। अन्यच्च—कर्म्म-निष्यन्दः किं कर्म्मकल्क उत कर्म्मसारः ? न तावत्कर्म्मकल्कः तस्यासारतयोत्कृष्टानुभागबन्ध हेतुत्वानुपपत्तिप्रसक्तेः, कल्को हि असारो भवति, असारश्च कथमुत्कृष्टानुभागबन्धहेतुः ? अथ चोत्कृष्टानुभागबन्धहेतवोऽपि लेश्या भवन्ति, अथ कर्म्मसार इति पक्षस्तर्हि कस्य कर्म्मणः सार इति वाच्यम् ? यथायोगमष्टानामपीतिचेत् अष्टानामपि कर्म्मणां शास्त्रे विपाका वर्ण्यन्ते, न च कस्यापि कर्म्मणो लेश्यारूपो विपाक उपदर्शितः, ततः कथं कर्म्मसारपक्षमङ्गीकुर्म्महे ? तस्मात् पूर्वोक्त एव पक्षः श्रेयानित्यंगीकर्त्तव्यः। तस्य हरिभद्रसूरि प्रभृतिभिरपि तत्र तत्र प्रदेशे अंगीकृतत्वादिति।

—पण्ण० प १७। प्रारम्भ में टीका

(ख) उच्यते, लिष्यते—श्लिष्यते आत्मा कर्मणा सहानयेति लेश्या।

—पण्ण० प १७। प्रारम्भ में टीका

·३ उमास्वाति या उमास्वामी :

'तत्वार्थाधिगम' में कोई परिभाषा नहीं दी गयी है।

स्वोपज्ञभाष्य। इसमें भी लेश्या की कोई परिभाषा नहीं है।

·४ पूज्यपादाचार्य :

(क) भावलेश्या कषायोदयरंजिता योगप्रवृत्तिरिति कृत्वा औदयिकीत्युच्यते।

—सर्व० अ २। सू ६।

इसको अकलंक ने उद्धृत किया है।

—राज० अ २। सू ६। पृ० १०६। ला २४

·५ अकलंक देव :

(क) कषायोदयरंजिता योगप्रवृत्तिर्लेश्या।

—राज० अ २। सू ६। पृ० १०६। ला २१

(ख) द्रव्यलेश्या पुद्गलविपाकिकर्मोदयापादितेति सा नेह परिगृह्यत आत्मनोभावप्रकरणात्।

—राज० अ २। सू ६। पृ० १०६। ला २३

(ग) तस्यात्मपरिणामस्याऽशुद्धिप्रकर्षाप्रकर्षापेक्षया कृष्णादि शब्दोपचारः क्रियते।

—राज० अ २। सू ६। पृ० १०६। ला २८

(घ) कषायश्लेषप्रकर्षाप्रकर्षयुक्ता योगवृत्तिर्लेश्या।

—राज० अ ६। सू ७। पृ० ६०४। ला १३

६ विद्यानन्दि :

कषायोदयतो योगप्रवृत्तिरूपदर्शिता।
लेश्याजीवस्य कृष्णादि' षड्भेदा भावतोनघैः॥

—श्लो० अ २। सू ६। श्लो ११। पृ ३१६।

७ सिद्धसेन गणि :

लिश्यन्ते इति लेश्याः, मनोयोगावष्टम्भजनितपरिणामः, आत्मना सह लिश्यते एकीभवतीत्यर्थः।

- सिद्ध० अ २। सू ६। पृ० १४७

द्रव्यलेश्याः कृष्णादिवर्णमात्रम्।

भावलेश्यास्तु कृष्णादि वर्णद्रव्यावष्टम्भजनिता परिणाम कर्मबन्धनस्थितेर्विधातार', श्लेषद्रव्यवद् वर्णकस्य चित्राद्यर्पितस्येति, तत्राविशुद्धोत्पन्नमेव कृष्णवर्णस्तत्सम्बद्ध द्रव्यावष्टम्भादविशुद्ध परिणाम उपजायमान कृष्णलेश्येति व्यपदिश्यते।

आगमश्चायं—

* 'जल्लेसाइं दव्वाइं आदिअन्ति तल्लेस्से परिणाम भवति (प्रज्ञा० लेश्यापदे)

—सिद्ध० अ २। सू ६। पृ० १४७ टीका

८ विनय विजय गणि :

इन्होंने 'लेश्या' का विवेचन प्रज्ञापना लेश्यापद की वृत्ति को अनुसृत्य किया है निज का कोई विशेष विवेचन नहीं किया है शेष में वृत्ति की भोलावण भी दी है।

लोद्र० स ३। गा २८४

९ नेमिचन्द्राचार्य चक्रवर्ती :

लिंपइ अप्पीकीरइ एदीए णियअपुण्णपुण्णं च।
जीवोत्ति होदि लेस्सा लेस्सागुणजाणयक्खादा ॥४८८॥
जोगपउत्ती लेस्सा कसायउदयाणुरंजिया होइ।
तत्तो दोण्णं कज्जं बंधचउक्कं समुद्दिट्ठं ॥४८९॥

* यह पद प्रज्ञापना लेश्यापद में नहीं मिला है।

अहवा जोगपउत्ती मुक्खोत्ति तहिं हवे लेस्सा ॥५३२॥
वण्णोदयसंपादितसरीरवण्णो दु दव्वदो लेस्सा।
मोहुदयखओवसमोवसमखयजजीवफंदणं भावो ॥५३५॥

—गोजी० गाथा।

·१० हेमचन्द्र सूरि द्वारा उद्धृत :

अपरस्त्वाह—ननु कर्मोदय जनितानां नारकत्वादीनां भवत्विहोपन्यासो लेश्यास्तु कस्यचित् कर्मण उदये भवन्तीत्यन्येतन्न प्रसिद्धं तत्किमितीह तदुपन्यासः? सत्यं किन्तु योगपरिणामो लेश्याः, योगस्तु त्रिविधोऽपि कर्मोदयजन्य एव ततो लेश्यानामपि तदुभयजन्यत्वं न विहन्यते, अन्येतु मन्यन्ते—कर्माष्टकोदयात् संसारस्थत्वासिद्धत्ववल्लेश्या वत्त्वमपि भावनीयमित्यलम्।

—अणुओ० सू० १२६ पर हेमचन्द्र सूरि वृत्ति।

·११ अज्ञाताचार्याह :

(क) श्लेष इव वर्णबन्धस्य कर्मबन्धस्थितिविधाऽयः।

—अभयदेव सूरि द्वारा उद्धृत।

(ख) कृष्णादिद्रव्य साचिव्यात्, परिणामो य आत्मनः।
स्फटिकस्येव तत्रार्यं, लेश्यशब्दः प्रयुज्यते॥

—अभयदेवसूरि आदि अनेक विद्वानों द्वारा उद्धृत।

(ग) लिश्यते—शिलष्यते कर्मणो सहऽऽत्माऽनयेति लेश्या।

—अनेक विद्वानो द्वारा उद्धृत।

·०६ लेश्या के भेद :

·०६१ मूलतः-सामान्यतः भेद·

(क) दो भेद·

कण्हलेस्साणं भन्ते! कइ वण्णा (जाव कइ फासा) पन्नत्ता? गोयमा! दव्वलेस्सं पडुच्च पंच वण्णा जाव अट्ठफासा पन्नत्ता, भावलेस्सं पडुच्च अवण्णा (जाव अफासा) पन्नत्ता, एवं जाव सुक्कलेस्सा।

—भग० श १२। उ ५। प्र १६। पृ० ६६४

लेश्या के दो भेद—द्रव्य तथा भाव।

(ख) छ भेद

(१) कइ णं भन्ते ! लेस्साओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! छल्लेस्साओ पन्नत्ताओ, तं जहा—कण्हलेस्सा, नीललेस्सा, काऊलेस्सा, तेऊलेस्सा, पम्हलेस्सा, सुक्कलेस्सा ।

—सम० लेश्या विचार । पृ० ३७५
—सम० ६ । प ३२० (उत्तर केवल)
—भग० श १ । उ २ । प्र ६८ । पृ० ३२०
—भग० श १६ । उ २ । प्र १ । पृ० ७८१
—भग० श २५ । उ १ । प्र १ । पृ० ८५१
—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १५ । पृ० ४३७

(२) कइ णं भन्ते ! लेस्साओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! छल्लेस्साओ पन्नत्ताओ, तं जहा—कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा ।

—भग० श १६ । उ १ । प्र १ । पृ० ७८१
—ठाण० स्था ६ । सू ५०४ । पृ० २७२
—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ३१ । पृ० ४४५
—पण्ण० प १७ । उ ५ । सू ५४ । पृ० ४५०

(३) कइ णं भंते ! लेस्सा पन्नत्ता ? गोयमा ! छ लेस्सा पन्नत्ता, त जहा—कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा ।

—पण्ण० प १७ । उ ६ । सू ५६ । पृ० ४५१

(४) छण्णंपि कम्मलेसाणं, अणुभावे सुणेह मे ॥ १ ॥
कण्हानीला य काऊ य, तेऊ पम्हा तहेव य ।
सुक्कलेसा य छट्ठा य, नामाइं तु जहक्कमं ॥ ३ ॥

—उत्त० अ ३४ । गा १, ३ । पृ० १०४५, ४६

लेश्या के छह भेद=कृष्ण, नील, कापोत, तेजो, पद्म और शुक्ल ।

०६२ दलगत भेद .

(क) द्रव्यलेश्या के—

(१) दुर्गन्धवाली—सुगन्धवाली

कइ णं भन्ते ! लेस्साओ दुब्भिगंधाओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! तओ लेस्साओ दुब्भिगंधाओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा, नीललेस्सा, काऊलेस्सा । कइ णं

भन्ते ! लेस्साओ सुब्भिगंधाओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! तओ लेस्साओ सुब्भिगंधाओ पन्नत्ताओ, तंजहा—तेऊलेस्सा, पम्हलेस्सा, सुक्कलेस्सा।

—ठाण० स्था ३। उ ४। सू २२१। (उत्तर केवल) पृ० २२०

— पण्ण० प १७। उ ४। सू ४७। पृ० ४४८

प्रथम तीन लेश्या दुर्गन्धवाली तथा पश्चात् की तीन लेश्या सुगन्धवाली हैं।

(२) मनोज्ञ—अमनोज्ञ.

(तओ) अमणुन्नाओ, (तओ) मनुणुन्नाओ।

—ठाण० स्था ३। उ ४। सू २२१। पृ० २२०

प्रथम तीन लेश्या (रस की अपेक्षा) अमनोज्ञ तथा पश्चात् की तीन मनोज्ञ हैं।

(३) शीतरूक्ष—उष्णस्निग्ध.

(तओ) सीयलुक्खाओ, (तओ) निद्धुण्हाओ।

—ठाण० स्था ३। उ ४। सू २२१। पृ० २२०

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ४७। पृ० ६४६

प्रथम तीन लेश्या (स्पर्श की अपेक्षा) शीतरूक्ष तथा पश्चात् की तीन उष्णस्निग्ध हैं।

(४) विशुद्ध—अविशुद्ध.

एवं तओ अविशुद्धाओ, तओ विशुद्धाओ।

—ठाण० स्था ३। उ ४। सू २२१। पृ० २२०

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ४७। पृ० ४४६

प्रथम तीन लेश्या (वर्ण की अपेक्षा) अविशुद्ध, पश्चात् की तीन लेश्या विशुद्ध वर्णवाली हैं।

(ख) भावलेश्या के—

(१) धर्म—अधर्म.

कण्हा नीला काऊ, तिण्णि वि एयाओ अहम्मलेस्साओ।
तेऊ पम्हा सुक्का, तिण्णि वि एयाओ धम्मलेसाओ।

—उत्त० अ ३४। गा ५६, ५७ पूर्वार्ध। पृ० १०४८

प्रथम तीन अधर्म लेश्या हैं तथा पश्चात् की तीन धर्म लेश्या हैं।

(२) प्रशस्त—अप्रशस्त.

तओ अप्पसत्थाओ, तओ पसत्थाओ।

—ठाण० स्था ३। उ ४। सू २२१। पृ० २२०

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ४७ पृ० ४४६

प्रथम तीन लेश्या अप्रशस्त तथा पश्चात् की तीन प्रशस्त हैं।

(३) संक्लिष्ट—असंक्लिष्ट

तओ संकिलिट्ठाओ, तओ असंकिलिट्ठाओ।

ठाण० स्था ३ । उ ४ । सू २२० । पृ० २२० (तओ बाद)

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४७ । पृ० ४४६

प्रथम तीन संक्लिष्ट परिणामवाली तथा पश्चात् की तीन लेश्या असंक्लिष्ट परिणाम-वाली हैं।

(४) दुर्गतिगमी—सुगतिगामी

तओ दुग्गइगामियाओ, तओ सुगइगामियाओ।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४७ । पृ० ४४६

(तओ) एवं दुग्गइगामिणीओ, सुगइगामिणीओ।

—ठाण० स्था ३ । उ ४ । सू २२१ । पृ० २२०

प्रथम तीन लेश्या दुर्गति ले जानेवाली है तथा पश्चात् की तीन सुगति ले जाने-वाली हैं।

(५) विशुद्ध—अविशुद्ध

एवं तओ अविसुद्धाओ, तओ विसुद्धाओ।

—ठाण० स्था० ३ । उ ४ । सू २२० । पृ० २२० (एव व तओ बाद)

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४७ । पृ० ४४६

प्रथम तीन लेश्या (परिणाम की अपेक्षा) अविशुद्ध है तथा पश्चात् की तीन विशुद्ध हैं।

.०७ लेश्या पर विवेचन गाथा

आगमों में लेश्या पर विवेचन विभिन्न अपेक्षाओं से किया गया है। तीन आगमों मे यथा—भगवई, पन्नवणा तथा उत्तराज्झयण मे लेश्या पर विशेष विवेचन किया गया है। विवेचन के प्रारम्भ में किन-किन अपेक्षाओं से विवेचन किया गया है इसकी एक गाथा दी गई है। भगवई तथा पन्नवण्णा मे एक समान गाथा है तथा उत्तराज्झयण मे भिन्न गाथा है

(क) परिणाम-वन्न-रस-गन्ध-सुद्ध - अपसत्थ-सकिलिट्ठुण्हा।
गइ-परिणाम - पएसो - गाह - वग्गणा - ट्ठाणमप्पबहु॥

—भग० श ४ । उ १० । गा० १ । पृ० ४६८

—पण्ण० प १७ । उ ४ । गा० १ । पृ० ४४५

भन्ते ! लेस्साओ सुब्भिगंधाओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! तओ लेस्साओ सुब्भिगंधाओ पन्नत्ताओ, तंजहा—तेऊलेस्सा, पम्हलेस्सा, सुक्कलेस्सा ।

—ठाण० स्था ३ । उ ४ । सू २२१ । (उत्तर केवल) पृ० २२०

— पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४७ । पृ० ४४८

प्रथम तीन लेश्या दुर्गन्धवाली तथा पश्चात् की तीन लेश्या सुगन्धवाली हैं ।

(२) मनोज्ञ—अमनोज्ञ.

(तओ) अमणुन्नाओ, (तओ) मनुणुन्नाओ ।

—ठाण० स्था ३ । उ ४ । सू २२१ । पृ० २२०

प्रथम तीन लेश्या (रस की अपेक्षा) अमनोज्ञ तथा पश्चात् की तीन मनोज्ञ हैं ।

(३) शीतरूक्ष—उष्णस्निग्ध.

(तओ) सीयलुक्खाओ, (तओ) निद्धुण्हाओ ।

—ठाण० स्था ३ । उ ४ । सू २२१ । पृ० २२०

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४७ । पृ० ६४६

प्रथम तीन लेश्या (स्पर्श की अपेक्षा) शीतरूक्ष तथा पश्चात् की तीन उष्णस्निग्ध हैं ।

(४) विशुद्ध—अविशुद्ध.

एवं तओ अविशुद्धाओ, तओ विशुद्धाओ ।

—ठाण० स्था ३ । उ ४ । सू २२१ । पृ० २२०

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४७ । पृ० ४४६

प्रथम तीन लेश्या (वर्ण की अपेक्षा) अविशुद्ध, पश्चात् की तीन लेश्या विशुद्ध वर्णवाली हैं ।

(ख) भावलेश्या के—

(१) धर्म—अधर्म.

कण्हा नीला काऊ, तिण्णि वि एयावो अहम्मलेस्साओ ।
तेऊ पम्हा सुक्का, तिण्णि वि एयावो धम्मलेसाओ ।

—उत्त० अ ३४ । गा ५६, ५७ पूर्वार्ध । पृ० १०४८

प्रथम तीन अधर्म लेश्या हैं तथा पश्चात् की तीन धर्म लेश्या हैं ।

(२) प्रशस्त—अप्रशस्त.

तओ अप्पसत्थाओ, तओ पसत्थाओ ।

—ठाण० स्था ३ । उ ४ । सू २२१ । पृ० २२०

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४७ पृ० ४४६

प्रथम तीन लेश्या अप्रशस्त तथा पश्चात् की तीन प्रशस्त हैं।

(३) संक्लिष्ट—असंक्लिष्ट

तओ संकिलिट्ठाओ, तओ असंकिलिट्ठाओ।

ठाण० स्था ३। उ ४। सू २२०। पृ० २२० (तओ बाद)

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ४७। पृ० ४४६

प्रथम तीन संक्लिष्ट परिणामवाली तथा पश्चात् की तीन लेश्या असंक्लिष्ट परिणामवाली हैं।

(४) दुर्गतिगमी—सुगतिगामी

तओ दुग्गइगामियाओ, तओ सुगइगामियाओ।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ४७। पृ० ४४६

(तओ) एवं दुग्गइगामिणीओ, सुगइगामिणीओ।

—ठाण० स्था ३। उ ४। सू २२१। पृ० २२०

प्रथम तीन लेश्या दुर्गति ले जानेवाली है तथा पश्चात् की तीन सुगति ले जानेवाली हैं।

(५) विशुद्ध—अविशुद्ध

एवं तओ अविसुद्धाओ, तओ विसुद्धाओ।

—ठाण० स्था० ३। उ ४। सू २२०। पृ० २२० (एव व तओ बाद)

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ४७। पृ० ४४६

प्रथम तीन लेश्या (परिणाम की अपेक्षा) अविशुद्ध है तथा पश्चात् की तीन विशुद्ध हैं।

.०७ लेश्या पर विवेचन गाथा

आगमो में लेश्या पर विवेचन विभिन्न अपेक्षाओ से किया गया है। तीन आगमो मे यथा—भगवई, पन्नवणा तथा उत्तराज्झयण मे लेश्या पर विशेष विवेचन किया गया है। विवेचन के प्रारम्भ में किन-किन अपेक्षाओं से विवेचन किया गया है इसकी एक गाथा दी गई है। भगवई तथा पन्नवण्णा में एक समान गाथा है तथा उत्तराज्झयण मे भिन्न गाथा है

(क) परिणाम-वन्न-रस-गन्ध-सुद्ध - अपसत्थ-सक्लिट्ठुण्हा।
गइ-परिणाम - पएसो - गाह - वग्गणा - ट्ठाणमप्पबहु॥

—भग० श ४। उ १०। गा० १। पृ० ४६८

—पण्ण० प १७। उ ४। गा० १। पृ० ४४५

(१) परिणाम, (२) वर्ण, (३) रस, (४) गन्ध, (५) शुद्ध, (६) अप्रशस्त, (७) संक्लिष्ट, (८) उष्ण, (६) गति, (१०) परिणाम (संक्रमण), (११) प्रदेश, (१२) अवगाहना, (१३) वर्गणा, (१४) स्थान, (१५) अल्पबहुत्व इन १५ प्रकार से लेश्या का विवेचन किया गया है।

(ख) नामाइं वन्न रस गन्ध, फास परिणाम लक्खणं।
ठाणं ठिइं गइं चाउं, लेसाणं तु सुणेह मे॥

—उत्त० उ ३४। गा० २। पृ० १०४६

(१) नाम, (२) वर्ण, (३) रस, (४) गन्ध, (५) स्पर्श, (६) परिणाम, (७) लक्षण, (८) स्थान, (६) स्थिति, (१०) गति, (११) आयु इन ११ अपेक्षाओं से लेश्या का वर्णन सुनो।

दोनों पाठ मिलाकर निम्नलिखित अपेक्षाओ से लेश्याओ का विवेचन बनता है।

१ द्रव्यलेश्या—नाम, वर्ण, रस, गन्ध, स्पर्श, परिणाम, प्रदेश, अवगाहना, स्थिति, स्थान, अल्पबहुत्व।

२ भावलेश्या—नाम, शुद्धत्व, प्रशस्तत्व, संक्लिष्ठत्व, परिणाम, स्थान, गति, लक्षण, अल्पबहुत्व।

(३) विविध—वर्गणा।

इनके सिवाय भी अन्य अपेक्षाओ से लेश्या का विवेचन मिलता है।
(देखो विषय सूची)

·०८ लेश्या का निक्षेपों की अपेक्षा विवेचन

आगम नोआगतो, नोआगमतो य सो तिविहो।
लेसाणं निक्खेवो, चउक्कओ दुविह होइ नायव्वो॥५३४॥
जाणगभवियसरीरा, तव्वइरित्ता य सा पुणो दुविहा।
कम्मा नोकम्मे या, नोकम्मे हुंति दुविहा उ॥५३५॥
जीवाणमजीवाण य, दुविहा जीवाण होइ नायव्वा।
भवमभवसिद्धिआणं, दुविहाणवि होइ सत्तविहा॥५३६॥
अजीवकम्मनोदव्व-लेसा, सा दसविहा उ नायव्वा।
चन्दाण य सुराण य, गहगणनक्खत्ततारागं॥५३७॥
आभरणच्छायणा-दंसगाण, मणिकागिणीणजा लेसा।
अजीवदव्वलेसा, नायव्वा दसविहा एसा॥५३८॥
जा दव्वकम्मलेसा, सा नियमा छव्विहा उ नायव्वा।
किण्हा नीला काऊ, तेऊ पम्हा य सुक्का य॥५३६॥

दुविहा उ भावलेस्सा, विसुद्धलेस्सा तहेव अविसुद्धा।
दुविहा विसुद्धलेसा, उवसमखइआ कसायाणं ॥५४०॥
अविसुद्धभावलेसा, सा दुविहा नियमसो उ नायव्वा।
पिज्जंमि अ दोसम्मि अ, अहिगारो कम्मलेस्साए ॥५४१॥
नो-कम्मदव्वलेसा, पओगसा वीससाउ नायव्वा।
भावे उदओ भणिओ, छण्हं लेसाण जीवेसु ॥५४२॥
अज्झयेण निक्खेवो, चउक्कओ दुविह होइ दव्वम्मि।
आगम नोआगतो, नो आगमतो यं तं तिविहं ॥५४३॥
जाणगभवियसरीरं, तव्वइरित्तं च पोत्थगइसु।
अज्झप्पस्साणयणं, नायव्वं भावमज्झयणं ॥५४४॥

—उत्त० अ ३४। निर्युक्तिगाथा

लेश्या के दो विवेचन—आगम से, नोआगम से।

नोआगम विवेचन तीन प्रकार का होता है।

लेश्या शब्द का विवेचन निक्षेपों की अपेक्षा चार प्रकार का है, यथा—नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव।

लेश्या दो प्रकार की है—जाणगभविय शरीरी तथा तद्व्यतिरिक्त।

तद्व्यतिरिक्त के दो भेद हैं—कार्मण तथा नोकार्मण।

नो कार्मण के दो भेद हैं—जीव लेश्या तथा अजीव लेश्या।

जीव लेश्या के दो भेद हैं—भवसिद्धिक तथा अभवसिद्धिक।

औदारिक, औदारिकमिश्र आदि की अपेक्षा लेश्या के सात भेद हैं। या कृष्णादि ६ तथा सयोगजा सात भेद हो सकते हैं।

अजीव नोकर्म द्रव्यलेश्या के दश भेद हैं, यथा—चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र तथा तारा लेश्या, आभरण, छाया, दर्पण, मणि, कांकणी लेश्या।

द्रव्य कर्म लेश्या के छ भेद हैं, यथा—कृष्ण, नील, कापोत, तेजो, पद्म, तथा शुक्ल।

भाव लेश्या के दो भेद हैं—विशुद्ध तथा अविशुद्ध।

विशुद्ध लेश्या के दो भेद हैं—उपशम कषाय लेश्या तथा क्षायिक कषाय लेश्या।

अविशुद्ध लेश्या के दो भेद हैं—रागविषय कषाय लेश्या तथा द्वेष विषय कषाय लेश्या।

नोकर्म द्रव्य लेश्या के दो भेद भी होते हैं—प्रायोगिक तथा विस्रसा।

भाव की अपेक्षा जीव के उदय भाव मे छहों लेश्या होती हैं।

११·२ द्रव्यलेश्या (प्रायोगिक)

·११ द्रव्यलेश्या के वर्ण

कण्हलेस्साणं भंते कइ वण्णा × × × पन्नता ? गोयमा ! दव्वलेस्सं पडुच्च पंचवण्णा × × × एवं जाव सुक्कलेस्सा।

—भग० श १२। उ ५। प्र १६। पृ ६६४

द्रव्य लेश्या के छहो भेद पांच वर्ण वाले हैं।

११ १ कृष्ण लेश्या के वर्ण।

(क) कण्हलेस्सा णं भंते। वन्नेणं केरिसिया पन्नत्ता ? गोगमा ! से जहानामए जीमूए इ वा अंजणे इ वा खंजणे इ वा कज्जले इ वा गवले इ व गवलवलए इ वा जंबूफले इ वा अद्दारिट्ठपुप्फे इ वा परपुट्ठे इ वा भमरे इ वा भमरावली इ वा गयकलभे इ वा किण्हकेसरे इ वा आगासथिग्गले इ वा कण्हासोए इ वा कण्हकंण-वीरए वा कण्हबंधुजीवए इ वा, भवे एयारूवे ? गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, कण्हलेस्सा णं इत्तो अणिट्ठतरिया चेव अकंतरिया चेव अप्पियतरिया चेव अमणुन्नतरिया चेव अमणामतरिया चेव वन्नेणं पन्नत्ता।

—पण्ण० प १७ उ ४। सू ३४। पृ० ४४६

(ख) जीमूयनिद्धसंकासा, गवलरिट्ठगसन्निभा।
खंजणनयणनिभा, किण्हलेस्सा उ वण्णओ।।

—उत्त० अ ३४। गा ४। पृ० १०४६

(ग) कण्हलेस्सा कालएणं साहिज्जइ।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ४०। पृ० ४४७

घने मेघ, अंजन, खंजन, काजल, बकरे के सींग, वलयाकार सींग, जामुन, अरीठे के फूल, कोयल, भ्रमर, भ्रमर की पंक्ति, गज शावक, काली केसर, मेघाच्छादित घटाटोप आकाश, कृष्ण अशोक, काली कनेर, काला बंधुजीव, आँख की पुतली, आदि के वर्ण की कृष्णता से अधिक के अंकतकर, अनिष्टकर, अप्रीतकर, अमनोज्ञ तथा अनभावने वर्ण वाली कृष्णलेश्या होती है।

कृष्ण लेश्या पंचवर्ण में काले वर्णवाली होती है।

११·२ नील लेश्या के वर्ण।

(क) नीललेस्सा णं भन्ते ! केरिसिया वन्नेणं पन्नत्ता ? गोयमा ! से जहानामए भिंगए इ वा भिंगपत्ते इ वा चासे इ वा चासपिच्छए इ वा सुए इ वा सुयपिच्छे इ

वा वणराई इ वा उच्चंतए इ वा पारेवयगीवा इ वा मोरगीवा इ वा हलहरवसणे इ वा अयसिकुसुमे इ वा वणकुसुमे इ वा अंजणकेसियाकुसुमे इ वा नीलुप्पले इ वा नीलाऽसोए इ वा नीलकणवीरए इ वा नीलवन्धुजीवे इ वा, भवेयारूवे ? गोयमा। णो इणट्ठे समट्ठे। एत्तो जाव अमणामतरिया चेव वन्नेणं पन्नत्ता।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ३५ । पृ ४४६

(ख) नीलाऽसोगसंकासा, चासपिच्छसमप्पभा।
वेरुलियनिद्धसंकासा, नीललेसा उ वण्णओ॥

—उत्त० अ ३४ । गा ५ । पृ० १०४६

(ग) नीललेस्सा नीलवन्नेण साहिज्जइ।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४० । पृ० ४४७

भृंग, भृंग की पंख, चाम, चामपिच्छ, शुक, शुक के पंख, श्यामा, वनराजि, उच्चतक, कबूतर की ग्रीवा, मोरकी की ग्रीवा, बलदेव के वस्त्र, अलसीपुष्प, वनफूल, अजन के शिकर पुष्प, नीलोत्पल, नीलाशोक, नीलकणवीर, नीलवधुजीव, स्निग्ध नीलमणि आदि के वर्ण की नीलता से अधिक अनिष्टकर, अकतर, अप्रीतकर, अमनोज्ञ, अनभावने नील वर्ण वाली नील लेश्या होती है।

नील लेश्या पचवर्ण मे नील वर्णवाली होती है।

---

११ ३ कापोत लेश्या के वर्ण।

(क) काऊलेस्सा ण भन्ते ! केरिसिया वन्नेणं पन्नत्ता ? गोयमा ! से जहानामए खइरसारए इ वा कइरसारए इ वा धमासमसारे इ वा तंबे इ वा तंबकरोडे इ वा तंबच्छिवाडियाए इ वा वाइंगणिकुसुमे इ वा कोइलच्छदकुसुमे इ वा जवासाकुसुमे इ वा, भवेयारूवे ? गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे। काऊलेस्सा णं एत्तो अणिट्ठतरिया जाव अमणामतरिया चेव वन्नेणं पन्नत्ता।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ३६ । पृ ४४६

(ख) अयसीपुप्फसंकासा, कोइलच्छदसन्निभा।
पारेवयगीवनिभा, काऊलेसा उ वण्णओ॥

—उत्त० अ ३४ । गा ६ । पृ १०४६

(ग काऊलेस्सा काललोहिएणं वन्नेणं साहिज्जइ।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू पृ ४४७

खेरसार, करीरसार, धमासार, ताम्र, ताम्रकरोटक, ताम्र की कटोरी, बैंगनी पुष्प, कोकिलच्छद (तेल कटक) पुष्प, जवासा कुसुम, अलसी के फूल, कोयल के पंख, कबुतर की ग्रीवा आदि के वर्ण के कापोतीत्व से अधिक अनिष्टकर, अकंतकर, अप्रीतकर, अमनोज्ञ तथा अनभावने कापोत वर्ण वाली कापोत लेश्या होती है।

कापोत लेश्या पंचवर्ण में काल-लोहित वर्णवाली होती है।

११.४ तेजोलेश्या के वर्ण।

(क) तेऊलेस्सा णं भंते ! केरिसिया वन्नेणं पन्नत्ता ? गोयमा ! से जहानामए ससरुहिरए इ वा उरब्भरुहिरे इ वा वराहरुहिरे इ वा संबररुहिरे इ वा मणुस्सरुहिरे इ वा इंदगोपे इ वा बालेंदगोपे इ वा बालदिवायरे इ वा संझारागे इ वा गुंजद्धरागे इ वा जाइहिंगुले इ वा पवालंकुरे इ वा लक्खारसे इ वा लोहिअक्खमणी इ वा किमिरागकंबले इ वा गयतालुए इ वा चिणपिट्ठरासी इ वा पारिजायकुसुमे इ वा जासुमणकुसुमे इ वा किंसुयपुप्फरासी इ वा रत्तुप्पले इ वा रत्तासोगे इ वा रत्तकणवीरए इ वा रत्तबंधुयजीवए इ वा, भवेयारूवे ? गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे। तेऊलेस्सा णं एत्तो इट्ठतरिया चेव जाव मणामतरिया चेव वन्नेणं पन्नत्ता।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ३७। पृ० ४४७

(ख) हिंगुलधाउसंकासा, तरुणाइच्चसंनिभा।
सुयतुंडपईवनिभा, तेऊलेसा उ वण्णओ॥

—उत्त० अ ३४। गा ७ पृ० १०४६

(ग) तेऊलेस्सा लोहिएणं वन्नेणं साहिज्जइ।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ४०। पृ० ४४७

शशक का रुधिर, मेष का रुधिर, वराह का रुधिर, सावर का रुधिर, मनुष्य का रुधिर, इन्द्रगोप, नवीन इन्द्रगोप, बालसूर्य या संध्या का रंग, जाति हिंगुल, प्रवालांकुर, लाक्षारस, लोहिताक्षमणि, किरमिची रग की कम्बल, गज का तालु, दाल की पिष्ट राशि, पारिजात कुसुम, जपाके सुमन, केसु पुष्पराशि, रक्तोत्पल, रक्ताशोक, रक्त कनेर, रक्तवन्धुजीव, तोते की चोंच, दीपशिखा आदि के रक्त वर्ण से अधिक इष्टकर, कतकर, प्रीतकर, मनोज्ञ तथा मनभावने लाल वर्णवाली तेजो लेश्या होती है।

पंचवर्ण में तेजोलेश्या रक्त वर्ण की होती है।

---

११५ पद्मलेश्या के वर्ण।

(क) पम्हलेस्सा णं भंते! केरिसिया वन्नेणं पन्नत्ता? गोयमा! से जहानामए चम्पे इ वा चंपयछल्ली इ वा चंपयभेये इ वा हालिद्दा इ वा हालिद्दगुलिया इ वा हालिद्दभेये इ वा हरियाले इ वा हरियालगुलिया इ वा हरियालभेये इ वा चिउरे इ वा चिउररागे इ वा सुवन्नसिप्पी इ वा वरकणगणिहसे इ वा वरपुरिसवसणे इ वा अल्लइकुसुमे इ वा चंपयकुसुमे इ वा कण्णियारकुसुमे इ वा कुहंडयकुसुमे इ वा सुवण्णजूहिया इ वा सुहिरन्नियाकुसुमे इ वा कोरिंटमल्लदामे इ वा पीतासोगे इ वा पीतकणवीरे इ वा पीतबंधुजीवए इ वा, भवेयारूवे? गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे। पम्हलेस्सा णं एत्तो इट्ठतरिया जाव मणामतरिया चेव वन्नेणं पन्नत्ता।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ३८। पृ० ४४७

(ख) हरियालभेयसंकासा, हलिद्दाभेयसमप्पभा।
सणासणकुसुमनिभा, पम्हलेसा उ वण्णओ॥

—उत्त० अ ३४। गा ८। पृ० १०४६

(ग) पम्हलेस्सा हालिद्दएणं वन्नेणं साहिज्जइ।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ४०। पृ० ४४७

चम्पा, चम्पा की छाल, चम्पा का खण्ड, हल्दी, हल्दी की गोली, हल्दी का टुकड़ा, हड़ताल, हड़ताल गुटिका, हड़ताल खण्ड, चिकुर, चिकुरराग, सोने की छीप, श्रेष्ठ सुवर्ण, वासुदेव का वस्त्र, अल्लकी पुष्प, चम्पक पुष्प, कर्णिकार पुष्प, (कनेर का फूल) कुष्माण्ड कुसुम, सुवर्ण जूही, सुहिरिण्यक, कोरटक की माला, पीला अशोक, पीत कनेर, पीत बन्धुजीव, सन के फूल, असन के फूल आदि के वर्ण की पीतता से अधिक इष्टकर, कतकर, प्रीतकर, मनोज्ञ, मनभावने वर्णवाली पद्मलेश्या होती है।

पद्मलेश्या पचवर्ण में पीले वर्ण की है।

---

११६ शुक्ललेश्या के वर्ण।

(क) सुक्कलेस्साणं भंते! किरिसिया वन्नेण पन्नत्ता? गोयमा! से जहानामए अंके इ वा संखे इ वा चन्दे। इ वा कुंदे इ वा दगे इ वा दगरए इ वा दहि इ वा दहिघणे इ वा खीरे इ वा खीरपूरए इ वा सुक्कच्छिवाडिया इ वा पेहुणभिंजिया इ वा घंतधोयरुप्पपट्टे इ वा सारदवलाहए इ वा कुमुददले इ वा पोंडरीयदले इ वा सालिपिट्ठरासी इ वा कुडगपुप्फरासी इ वा सिंदुवारमल्लदामे इ वा सेयासोए इ वा सेय-

कणवीरे इ वा सेयबंधुजीवए इ वा, भवेयारूवे ? गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे । सुक्कलेसा णं एत्तो इट्ठतरिया चेव मणुण्णतरिया चेव (मणामतरिया चेव) वन्नेणं पन्नत्ता ।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ३६ । पृ० ४४७

(ख) संखंककुंदसंकासा, खीरपूरसमप्पभा ।
रययहारसंकासा, सुक्कलेसा उ वण्णओ ॥

—उत्त० अ ३४ । गा ८ । पृ० १०४६

(ग) सुक्कलेस्सा सुक्किल्लएणं वन्नेणं साहिज्जइ ।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४० । पृ० ४४७

अकरत्न, शख, चन्द्र, कुद-मोगरा, पानी, पानी की बूँद, दही, दहीपिण्ड, क्षीर दूध, खीर, शुष्क फली विशेष, मयुर पिच्छ का मध्यभाग, अग्नि में तपा कर शुद्ध किया हुआ रजतपट्ट, शरतकाल का मेघ, कुमुददल, पुडरीक दल, शालिपिष्टराजी, कुटज पुष्प राशी, सिंदुवार पुष्प की माला, श्वेत अशोक, श्वेत केनर, श्वेत बन्धुजीव, मुचकन्द के फूल, दूध की धारा, रजतहार आदि के वर्ण की श्वेतता से अधिक इष्टकर, कंतकर, प्रीतकर, मनोज्ञ, मनभावने श्वेतवर्णवाली शुक्ललेश्या होती है ।

पचवर्ण में शुक्ललेश्या श्वेत शुक्ल वर्णवाली है ।

---

१२ द्रव्यलेश्या की गन्ध

कण्हलेस्सा णं भन्ते ! कइ × × × गन्धा × × × पन्नत्ता ? गोयमा ! दव्वलेस्स पडुच्च × × × दुगन्धा × × × एवं जाव सुक्कलेस्सा ।

—भग० श १२ । उ ५ । प्र १६ । पृ० ६६४

द्रव्यलेश्या के छहों भेद दो गन्धवाले हैं ।

१२.१—प्रथम तीन लेश्या दुर्गन्धवाली हैं ।

(क) कइ णं भंते ! लेस्साओ दुब्भिगंधाओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! तओ लेस्साओ दुब्भिगंधाओ पन्नत्ताओ, तजहा—कण्हलेस्सा, नीललेस्सा, काऊलेस्सा ।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४७ । पृ० ४४७

—ठाण० स्था ३ । उ ४ । सू २२१ । पृ० २२० (उत्तर केवल)

(ख) जह गोमडस्स गंधो, सुणगमडस्स व जहा अहिमडस्स ।
एत्तो वि अणतगुणो, लेसाणं अप्पसत्थाणं ॥

—उत्त० अ ३४ । गा १६ । पृ० १०४२

कृष्ण लेश्या, नील लेश्या, कापोत लेश्या, दुर्गन्धित द्रव्यवाली हैं। मृत गाय, मृत श्वान तथा मृत सर्प की जैसी दुर्गन्ध होती है उससे अनन्तगुणी दुर्गन्ध इन तीन अप्रशस्त लेश्याओं की होती है।

१२ २ पश्चात् की तीन लेश्या सुगन्धवाली है।

(क) कइ णं भंते। लेस्साओ सुब्भिगंधाओ पन्नत्ताओ? गोयमा। तओ लेस्साओ सुब्भिगंधाओ पन्नत्ताओ, तंजहा—तेऊलेस्सा, पम्हलेस्सा, सुक्कलेस्सा।

— पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४७ । पृ० ४४८,६

— ठाण० स्था ३ । उ ४ । सू २२१ । पृ० २२० (उत्तर केवल)

(ख) जह सुरभिकुसुमगंधो, गंधवासाण पिस्समाणाणं।
एत्तो वि अणंतगुणो, पसत्थलेसाण तिण्हं पि॥

—उत्त० अ ३४ । गा १७ । पृ० १०४६

तेजो लेश्या, पद्मलेश्या तथा शुक्ललेश्या सुगन्धित द्रव्यवाली हैं तथा इनकी सुगन्ध सुरभित पुष्पों तथा घिसे हुए सुगन्धित द्रव्यों से अनन्तगुणी सुगन्धवाली हैं।

---

१३ द्रव्यलेश्या के रस :—

कण्हलेस्साणं भन्ते कइ × × रसा × × पन्नत्ता? गोयमा। दव्वलेस्सं पडुच्च × × पंच रसा × × एवं जाव सुक्कलेस्सा।

—भग० श १२ । उ ५ । प्र १६ । पृ० ६६४

द्रव्यलेश्या के छहों भेद पाँचरसवाले हैं।

१३ १ कृष्णलेश्या के रस

(क) कण्हलेस्सा ण भंते। केरिसिया आसाएणं पन्नत्ता? गोयमा। से जहा-नामए निंबे इ वा निंबसारे इ वा निंबछल्ली इ वा निंबफाणिए इ वा कुडए इ वा कुडगफलए इ वा कुडगछल्ली इ वा कुडगफाणिए इ वा कडुगतुंबी इ वा कडुगतुंबिफले इ वा खारतउसी इ वा खारतउसीफले इ वा देवदाली इ वा देवदालीपुप्फे इ वा मियवालुंकी इ वा मियवालुंकीफले इ वा घोसाडए इ वा घोसाडइफले इ वा कण्हकंदए इ वा वज्जकंदए इ वा, भवेयारूवे? गोयमा। णो इणट्ठे समट्ठे, कण्हलेस्सा णं एत्तो अणिट्ठतरिया चेव जाव अमणामतरिया चेव आसाएणं पन्नत्ता।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४१ । पृ० ४४७-४४८

(ख) वरवारुणीए व रसो, विविहाण व आसवाण जारिसओ।
महुमेरयस्स व रसो, एत्तो पम्हाए परएणं॥

—उत्त० अ ३४ । गा १४ । पृ० १०४६

चन्द्रप्रभा, मणिशीला, श्रेष्ठसीधु, श्रेष्टवारुणी, पत्रासव, पुष्पासव, फलासव, चोयासव, आसव, मधु, मैरेय, कापिशायन, खर्जुरसार, द्राक्षासार, सुपक्व इक्षुरस, अष्टप्रकारीयपिष्ट, जाम्बुफल कालिका, श्रेष्ट प्रसन्ना, आसला, मामला, पेशल, इषत् ओष्ठावलंबिनी, इषत् व्यवच्छेद कटुका, इषत् ताम्राक्षिकरणी, उत्कृष्ट मदप्रयुक्ता, उत्तम वर्ण, गंध, स्पर्शवाले, आस्वादनीय, विस्वादनीय, पीनेयोग्य, बृंहणीय, पुष्टिकारक, प्रदीप्तिकारक, दर्पणीय, मदनीय, सर्व इन्द्रिय, सर्व गात्र को आनन्दकारी आस्वाद से अधिक इष्टकर, कंतकर, प्रीतकर, मनोज्ञ तथा मनभावने आस्वाद वाली पद्म लेश्या होती है। मद, आसव, मधु, मेरक आदि से अनन्त गुण मधुर आस्वादन वाली होती है।

१३.६ शुक्ल लेश्या के रस

(क) सुक्कलेस्सा णं भन्ते! केरिसिया आसाएणं पन्नत्ता? गोयमा! से जहानामए गुले इ वा खंडे इ वा सक्करा इ वा मच्छंडिया इ वा पप्पडमोदए इ वा भिसकंदए इ वा पुप्फुत्तरा इ वा पउमुत्तरा इ वा आदंसिय इ वा सिद्धत्थिया इ वा आगासफालितोवमा इ वा उवमा इ वा अणोवमा इ वा, भवेयारूवे? गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, सुक्कलेस्सा एत्तो इट्ठतरिया चेव पियतरिया चेव मणामतरिया चेव आसाएणं पन्नत्ता।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू० ४६ । पृ० ४४८

(ख) खजूरमुद्दियरसो, खीररसो खंडसक्कररसो वा।
एत्तो वि अणंतगुणो, रसो उ सुक्काए नायव्वो॥

—उत्त० अ ३४ । गा १५ । पृ० १०४६

गोला, चीनी, शक्कर, मत्स्यडिका पर्पटमोदक वीसकंद, पुष्पोत्तरा, पद्मोत्तरा, आदर्शिका, शिद्धार्थिका, आकाशस्फटिकोपमाके उपम एवं अनुपम आस्वाद से अधिक इष्टकर, कन्तकर, प्रीतकर, मनोज्ञ, मनभावने आस्वाद वाली शुक्ल लेश्या होती है। खजूर, द्राक्ष, दूध, चीनी, शक्कर से अनन्त गुणी मधुर आस्वादवाली शुक्ल लेश्या होती है।

---

१४ द्रव्य लेश्या के स्पर्श

कण्ह लेस्साणं भन्ते कइ × × × फासा पन्नत्ता ? गोयमा ! दव्वलेस्सं पडुच्च × × × अट्ठफासा पन्नत्ता एवं × × × जाव सुक्कलेस्सा।

—भग० श १२ । उ ५ । प्र १६ । पृ० ६६४

द्रव्यलेश्या के आठों पौद्गलिक स्पर्श होते हैं।

१४ १ प्रथम तीन लेश्या का स्पर्श

(क) जह करगयस्स फासो, गोजिब्भाए व सागपत्ताणं।
एत्तो वि अणंतगुणो, लेसाणं अप्पसत्थाणं॥

करवत, गाय की जीभ, शाक के पत्ते का जैसा स्पर्श होता है उससे भी अनन्तगुण अधिक रुक्ष स्पर्श प्रथम तीन अप्रशस्त लेश्याओं का होता है।

—उत्त० अ ३४ । गा १८ । पृ० १०४६

(ख) (तओ) सीयलुक्खाओ।

—ठाण० स्था ३ । उ ४ । सू २२१ । पृ० २२०

(ग) तओ सीयललुक्खाओ

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४७ । पृ० ४४६

प्रथम तीन लेश्या शीत-रुक्ष की स्पर्शवाली होती है।

---

१४ २ पश्चात् की तीन लेश्या का स्पर्श

(क) जह बूरस्स फासो नवणीयस्स व सिरीसकुसुमाणं।
एत्तो वि अणंतगुणो, पसत्थ लेसाण तिण्हं पि॥

--उत्त० अ ३४ । गा १६ । पृ० १०४६

बूर बनस्पति, नवनीत (मक्खन) और सिरीष के फूल का जैसा स्पर्श होता है उससे भी अनन्त गुण कोमल (स्निग्ध) स्पर्श तीन प्रशस्त लेश्याओं का होता है।

(ख) (तओ) निद्धुण्हाओ।

—ठाण० स्था ३ । उ ४ । सू २२१ । पृ० २२०

(ग) तओ निद्धण्हाओ।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४७ । पृ० ४४६

पश्चात् की तीन लेश्याओं का स्पर्श उष्ण-स्निग्ध होता है।

·१५ द्रव्य लेश्या के प्रदेश

कण्हलेस्सा णं भन्ते। कइ पएसिया पन्नत्ता ? गोयमा ! अणंत पएसिया पन्नत्ता, एवं जाव सुक्कलेस्सा।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ४६। पृ० ४४६

कृष्ण लेश्या यावत् शुक्ल लेश्या अनन्त प्रदेशी होती है। द्रव्य लेश्या का एक स्कन्ध अनन्त प्रदेशी होता है।

·१६ द्रव्य लेश्या और प्रदेशावगाह—क्षेत्रावगाह

(क) कण्हलेस्सा णं भंते। कइ पएसोगाढा पन्नत्ता ? गोयमा !
असंखेज्ज पएसोगाढा पन्नत्ता, एवं जाव सुक्कलेस्सा।

—पण्ण० प० १७। उ ४। सू ४६ पृ० ४४६

कृष्ण लेश्या यावत् शुक्ल लेश्या असख्यात् प्रदेश क्षेत्र अवगाह करती है। यह लेश्या के एक स्कध की अपेक्षा वर्णन मालूम होता है।

(ख) लेश्या क्षेत्राधिकार—क्षेत्रावगाह

सट्ठाणंसमुग्धादे उववादे सव्वलोय सुहाणं।
लोयस्सासंखेज्जदिभागं खेत्त तु तेउतिये॥ ५४२

—गोजी० गाथा

सुक्कस समुग्घादे असंखलोगा य सव्व लोगो य।

—गोजी० पृ० १९६। गाथा अनअंकित

प्रथम तीन लेश्याओं का सामान्य से (सर्व लेश्या द्रव्यों की अपेक्षा) स्वस्थान, समुद्घात तथा उपपाद की अपेक्षा सर्वलोक प्रमाण क्षेत्र अवगाह है तथा तीन पश्चात् की लेश्याओं का लोक के असंख्यात् भाग क्षेत्र परिमाण अवगाह है। शुक्ललेश्या का क्षेत्रावगाह समुद्घात का अपेक्षा लोक का असख्यात् भाग (बहु भाग) या सर्वलोक परिमाण है।

·१७ द्रव्यलेश्या की वर्गणा

कण्हलेस्साए णं भंते ! केवइयाओ वग्गणाओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! अणंताओ वग्गणाओ एवं जाव सुक्कलेस्साए।

कृष्ण यावत् शुक्ल लेश्याओं की प्रत्येक की अनन्त वर्गणा होती है।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ४६। पृ० ४४६

१८ द्रव्यलेश्या और गुरुलघुत्व

कण्हलेसा णं भंते ! किं गुरुया, जाव अगुरुयलहुया ? गोयमा ! नो गुरुया नो लहुया, गुरुयलहुया वि, अगुरुयलहुया वि। से केणट्ठेण ? गोयमा ! दव्वलेस्सं पडुच्च ततियपएण, भावलेस्सं पडुच्च चउत्थपएण एवं जाव सुक्कलेस्सा।

—भग० श १। उ ६। प्र २८६।६० पृ० ४११

कृष्णलेश्या यावत् शुक्ललेश्या द्रव्यलेश्या की अपेक्षा गुरुलघु है तथा भावलेश्या की अपेक्षा अगुरुलघु है।

---

१६ द्रव्यलेश्याओं की परस्पर परिणमन-गति

से किं तं लेस्सागइ ? २ जण्ण कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प तारूवत्ताए तावण्णत्ताए तागंधत्ताए तारसत्ताए ताफासत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ एवं नीललेसा काऊलेस्सं पप्प तारूवत्ताए जाव ताफासत्ताए परिणमइ, एवं काऊलेस्सावि तेऊलेस्सं, तेऊलेस्सावि पम्हलेस्सं, पम्हलेस्सावि सुक्कलेस्सं पप्प तारूवत्ताए जाव परिणमइ, से तं लेस्सागइ।

—पण्ण० प १६। उ ४। सू १५। पृ ४३३

एक लेश्या दूसरी लेश्या के द्रव्यों का सयोग पाकर उस रूप, वर्ण, गन्ध, रस तथा स्पर्श रूप मे परिणत होती है वह उसकी लेश्यागति कहलाती है।

लेश्यागति विहायगइ का ११ वाँ भेद है। —पण्ण० प १६। सू १४। पृ० ४३२-३

१६ १ कृष्णलेश्या का अन्य लेश्याओं में परिणमन

(क) से नूणं भंते ! कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प तारूवत्ताए तावण्णताए तागंधत्ताए तारसत्ताए ताफासत्ताए भुज्जो २ परिणमइ ? हंता गोयमा ! कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—'कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ'? गोयमा ! से जहानामए खीरे दूसिं पप्प सुद्धे वा वत्थे रागं पप्प तारूवत्ताए जाव ताफासत्ताए भुज्जो २ परिणमइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—'कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू० ३९। पृ० ४४५

—भग० श ४। उ १०। प्र० १। पृ० ४६८

(ख) से नूणं भंते ! कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प तारूवत्ताए तावण्णत्ताए तागंधत्ताए तारसत्ताए ताफासत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ ? इत्तो आढत्तं जहा चउत्थओ उद्देसओ तहा भाणियव्वं जाव वेरुलियमणिदिट्ठंतोत्ति।

—पण्ण० प १७ । उ ५ । सू ५४ । पृ ४५०

कृष्णलेश्या नीललेश्या के द्रव्यों का सयोग पाकर उसके रूप, उसके वर्ण, उसकी गन्ध, उसके रस, उसके स्पर्श में बार-बार परिणत होती है, यथा दूध दही का सयोग पाकर दहीरूप तथा शुद्ध (श्वेत) वस्त्र रंग का संयोग पाकर रंगीन वस्त्र रूप परिणत होता है।

(ग) से नूणं भंते ! कण्हलेस्सा नीललेस्सं काऊलेस्सं तेऊलेस्सं पम्हलेस्सं सुक्कलेस्सं पप्प तारूवत्ताए तावण्णत्ताए तागंधत्ताए तारसत्ताए ताफासत्ताए भुज्जो २ परिणमइ ? हंता गोयमा ! कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प जाव सुक्कलेस्सं पप्प तारूवत्ताए तागंधत्ताए ताफासत्ताए भुज्जो २ परिणमइ। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—'कण्हलेस्सा नीललेस्सं जाव सुक्कलेस्सं पप्प तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ' ? गोयमा ! से जहानामए वेरुलियमणी सिया कण्हसुत्तए वा नीलसुत्तए वा लोहियसुत्तए वा हालिद्दसुत्तए वा सुक्किल्लसुत्तए वा आइए समाणे तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ, से तेणट्ठेण एवं वुच्चइ—'कण्हलेस्सा नीललेस्सं जाव सुक्कलेस्सं पप्प तारूवत्ताए भुज्जो २ परिणमइ।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ३२ । पृ० ४४५-४४६

कृष्णलेश्या नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या, पद्मलेश्या तथा शुक्ललेश्या के द्रव्यों का सयोग पाकर उन उन लेश्याओं के रूप, वर्ण, गध, रस और स्पर्श रूप बार-बार परिणत होती है, यथा—वैडूर्यमणि मे जैसे रंग का सूता पिरोया जाय वह वैसे ही रग मे प्रतिभासित हो जाती है।

१६.२ नीललेश्या का अन्य लेश्याओं में परस्पर परिणमन

(क) एवं एएण अभिलावेण नीललेस्सा काऊलेस्सं पप्प × × जाव भुज्जो २ परिणमइ।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ३१ । पृ० ४४५

(ख) से नूण भंते ! नीललेस्सा कण्हलेस्सं जाव सुकलेस्सं पप्प तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ ? हंता गोयमा ! एवं चेव।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ३३ । पृ० ४४६

नीललेश्या कापोतलेश्या के द्रव्यों का सयोग पाकर उस रूप, वर्ण, गध, रस, स्पर्श मे परिणत होती है।

नीललेश्या कृष्ण, कापोत, तेजो, पद्म, तथा शुक्ल लेश्या के द्रव्यों का सयोग पाकर उनके रूप, वर्ण, गध, रस और स्पर्श रूप परिणत होती है।

१६.३ कापोत लेश्या का अन्य लेश्याओ मे परस्पर परिणमन

(क) एवं एएण अभिलावेण ×× काऊलेस्सा तेऊलेस्सं पप्प ×× जाव भुज्जो भुज्जो परिणमइ।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ३१। पृ० ४४५

(ख) काऊलेस्सा कण्हलेस्सं नीललेस्सं तेऊलेस्सं पम्हलेस्सं सुक्कलेस्सं पप्प ×× जाव भुज्जो भुज्जो परिणमइ ? हंता गोयमा ! तं चेव।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ३३। पृ० ४४६

कापोत लेश्या तेजो लेश्या के द्रव्यो का सयोग पाकर उस रूप, वर्ण, गध, रस और स्पर्श रूप परिणत होती है।

कापोत लेश्या कृष्ण, नील, तेजो, पद्म और शुक्ल लेश्या के द्रव्यो का सयोग पाकर उनके रूप, वर्ण, गध, रस और स्पर्श रूप परिणत होती है।

१६.४ तेजो लेश्या का अन्य लेश्याओ मे परस्पर परिणमन

(क) एवं एएण अभिलावेण × × × तेऊलेस्सा पम्हलेस्स पप्प × × × जाव भुज्जो भुज्जो परिणमइ।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू० ३१। पृ० ४४५

(ख) एव तेऊलेस्सा कण्हलेस्सं नीललेस्सं काऊलेस्सं पम्हलेस्सं सुक्कलेस्सं पप्प ××× जाव भुज्जो भुज्जो परिणमइ।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ३३ पृ० ४४६

तेजोलेश्या पद्मलेश्या के द्रव्यो का सयोग पाकर उसके रूप वर्ण, गध, रस और स्पर्श परिणत होती है।

तेजो लेश्या कृष्ण, नील, कापोत, पद्म और शुक्ल लेश्या के द्रव्यों का सयोग पाकर उनके रूप, वर्ण, गध, रस और स्पर्श रूप परिणत होती है।

१६.५ पद्म लेश्या का अन्य लेश्याओं मे परस्पर परिणमन

(क) एवं एएणं अभिलावेणं × × पम्हलेस्सा सुक्कलेस्सं पप्प जाव भुज्जो भुज्जो परिणमइ।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ३१। पृ० ४४५

(ख) एवं पम्हलेस्सा कण्हलेस्सं नीललेस्सं काऊलेस्सं तेऊलेस्स सुक्कलेस्सं पप्प जाव भुज्जो भुज्जो परिणमइ ? हंता गोयमा ! तं चेव।

—पण्ण० प १७ | उ ४ | सू ३३ | पृ० ४४६

पद्म लेश्या शुक्ल लेश्या के द्रव्यों का संयोग पाकर उसके रूप, वर्ण, गंध, रस और स्पर्श रूप परिणत होती है।

पद्म लेश्या कृष्ण, नील, कापोत, तेजो और शुक्ल लेश्या के द्रव्यों का संयोग पाकर उनके रूप, वर्ण, गंध, रस और स्पर्श रूप परिणत होती है।

१९ ६ शुक्ललेश्या का अन्य लेश्याओं में परस्पर परिणमन

से नूणं भंते ! सुक्कलेस्सा कण्हलेस्सं नीललेस्सं तेऊलेस्सं पम्हलेस्स पप्प जाव भुज्जो २ परिणमइ ? हंता गोयमा ! तं चेव।

—पण्ण० प १७ | उ ४ | सू ३३ | पृ० ४४६

शुक्ल लेश्या कृष्ण, नील, कापोत, तेजो, पद्म लेश्या के द्रव्यों का संयोग पाकर उनके रूप, वर्ण, गंध, रस और स्पर्श रूप परिणत होती है।

·२० लेश्याओं का परस्पर में अपरिणमन

२०.१ कृष्ण लेश्या कदाचित् अन्य लेश्याओं में परिणत नही होती।

से नूणं भन्ते ! कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प णो तारूवत्ताए जाव णो ताफासत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ ? हंता गोयमा ! कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प णो तारूवत्ताए, णो तावन्नत्ताए, णो तारसत्ताए, णो ताफासत्ताए भुज्जो २ परिणमइ। से केणट्ठेणं भन्ते ! एवं वुच्चइ ? गोयमा ! आगारभावमायाए वा से सिया, पलिभागभावमायाए वा से सिया, कण्हलेस्सा णं सा, णो खलु नीललेस्सा, तत्थ गया ओसक्कइ उस्सक्कइ वा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—'कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प णो तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ।

—पण्ण० प १७ | उ ५ | सू ५५ | पृ० ४५०-५१

कृष्ण लेश्या नील लेश्या के द्रव्यों का सयोग पाकर उसके रूप, वर्ण, गध, रस तथा स्पर्श रूप कदाचित् नही परिणत होती है ऐसा कहा जाता है क्योंकि उस समय वह केवल आकार भाव मात्र से या प्रतिबिम्ब मात्र से नील लेश्या है। वहाँ कृष्ण लेश्या नील लेश्या नहीं है। वहा कृष्ण लेश्या स्व स्वरूप में रहती हुई भी छायामात्र से—प्रतिबिम्ब मात्र से नील लेश्या यानि सामान्य विशुद्धि-अविशुद्धि में उत्सर्पण-अवसर्पण करती है। यह अवस्था नारकी और देवों की स्थित लेश्या में होती है।

२० २ नील लेश्या कदाचित् अन्य लेश्याओं मे परिणत नही होती।

से नूणं भन्ते। नीललेस्सा काऊलेस्सं पप्प णो तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ ? हंता गोयमा। नीललेस्सा काऊलेस्स पप्प णो तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ। से केणट्ठेणं भन्ते। एवं वुच्चइ—'नीललेस्सा काऊलेसं पप्प णो तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ ? गोयमा। आगारभावमायाए वा सिया, पलिभाग-भावमायाए वा सिया नीललेस्सा णं सा, णो खलु सा काऊलेस्सा तत्थगया ओसक्कइ उस्सक्कइ वा, से एएणट्ठेण गोयमा। एवं वुच्चइ—नीललेस्सा काऊलेस्सं पप्प णो तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ।

—पण्ण० प १७। उ ५। सू ५५। पृ० ४५१

उसी प्रकार नील लेश्या कापोत लेश्या मे परिणत नही होती है ऐसा कहा जाता है क्योंकि (नारकी और देवो की स्थित लेश्या मे) वह केवल आकार भाव-प्रतिबिम्ब भाव मात्र से कापोतत्व को प्राप्त होती है।

२० ३ कापोतलेश्या कदाचित् अन्य लेश्याओं मे परिणत नही होती।

एवं काऊलेसा तेऊलेसं पप्प।

—पण्ण० प १७। उ ५। सू० ५५। पृ० ४५१

जैसा कृष्ण-नीललेश्या का कहा उसी प्रकार कापोतलेश्या मात्र आकार भाव से, प्रतिबिम्ब भाव से तेजोत्व को प्राप्त होती है अतः कापोतलेश्या तेजोलेश्या मे परिणत नही होती है ऐसा कहा जाता है।

२० ४ तेजोलेश्या कदाचित् अन्य लेश्याओं में परिणत नही होती।

(एवं) तेऊलेस्सा पम्हलेस्स पप्प।

—पण्ण० प १७। उ ५। सू ५५। पृ० ४५१

जैसा कृष्ण-नील लेश्या का कहा उसी प्रकार तेजोलेश्या मात्र आकार भाव से, प्रतिबिम्ब भाव से पद्मत्व को प्राप्त होती है अतः तेजोलेश्या पद्मलेश्या में परिणत नही होती है ऐसा कहा जाता है।

२० ५ पद्मलेश्या कदाचित् अन्य लेश्याओ मे परिणत नही होती।

(एवं) पम्हलेस्सा सुक्कलेस्सं पप्प।

—पण्ण० प १७। उ ५। सू ५५। पृ० ४५१

जैसा कृष्ण-नीललेश्या का कहा उसी प्रकार पद्मलेश्या मात्र आकार भाव से, प्रति-बिम्ब भाव से शुक्लत्व को प्राप्त होती है अत: पद्मलेश्या शुक्ललेश्या मे परिणत नही होती है ऐसा कहा जाता है।

२०६ शुक्ललेश्या कदाचित् अन्य लेश्याओं में परिणत नही होती।

से नूणं भंते ! सुक्कलेस्सा पम्हलेस्सं पप्प णो तारूवत्ताए जाव परिणमइ ? हंता गोयमा ! सुक्कलेस्सा तं चेव। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—'सुक्कलेस्सा जाव णो परिणमइ ? गोयमा ! आगारभावमायाए वा जाव सुक्कलेस्सा णं सा, णो खलु सा पम्हलेस्सा, तत्थगया ओसक्कइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—'जाव णो परिणमइ'।

—पण्ण० प १७। उ ५। सू ५५। पृ० ४५१

शुक्ललेश्या मात्र आकार भाव से—प्रतिबिम्ब भाव से पद्मत्व को प्राप्त होती है, शुक्ललेश्या पद्मलेश्या के द्रव्यों का संयोग पाकर (यह द्रव्य संयोग अतिसामान्य ही होगा) पद्मलेश्या के रूप, वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श में सामान्यतः अवसर्पण करती है। अतः यह कहा जाता है कि शुक्ललेश्या पद्मलेश्या मे परिणत नही होती है। टीकाकार मलयगिरि यहाँ इस प्रकार खुलासा करते हैं। प्रश्न उठता है—

यदि कृष्णलेश्या नीललेश्या में परिणत नही होती है तो सातवीं नरक मे सम्यक्त्व की प्राप्ति किस प्रकार होती है ? क्योंकि सम्यक्त्व जिनके तेजोलेश्यादि शुभलेश्या का परिणाम होता है उनके ही होती है और सातवी नरक में कृष्णलेश्या होती है तथा 'भाव परावत्तीए पुण सुरनेरइयाणं पि छल्लेसा' अर्थात् भाव की परावृत्ति से देव तथा नारकी के भी छह लेश्या होती है, यह वाक्य कैसे घटेगा ? क्योंकि अन्य लेश्या द्रव्य के संयोग से तदरूप परिणमन सम्भव नही है तो भाव की परावृत्ति भी नही हो सकती है।

उत्तर में कहा गया है कि मात्र आकार भाव से—प्रतिबिम्ब भाव से कृष्णलेश्या नीललेश्या होती है लेकिन वास्तविक रूप में तो कृष्णलेश्या ही है, नीललेश्या नही हुई है; क्योंकि कृष्णलेश्या अपने स्वरूप को छोड़ती नही है। जिस प्रकार आरीसा में किसी का प्रतिबिम्ब पड़ने से वह उस रूप नही हो जाता है लेकिन आरीसा ही रहता है प्रतिबिम्बित वस्तु का प्रतिबिम्ब या छाया जरूर उसमें दिखाई देता है।

ऐसे स्थल में जहाँ कृष्णलेश्या अपने स्वरूप में रहकर 'अवष्वष्कते—उष्वष्कते' नीललेश्या के आकार भाव मात्र को धारण करने से या उसके प्रतिबिम्ब भाव मात्र को धारण करने से उत्सर्पण करती है—नील लेश्या को प्राप्त होती है। कृष्णलेश्या से नीललेश्या विशुद्ध है उससे उसके आकार भाव मात्र या प्रतिबिम्ब भाव मात्र को धारण करती कुछ एक विशुद्ध होती है अतः उत्सर्पण करती है, नील लेश्यत्व को प्राप्त होती है ऐसा कहा है।

२०.७ लेश्या आत्मा सिवाय अन्यत्र परिणत नही होती है।

अह भंते ! पाणाइवाए मुसावाए जाव मिच्छादंसणसल्ले, पाणाइवायवेरमणे जाव मिच्चादंसणसल्लविवेगे, उप्पत्तिया जाव पारिणामिया, उग्गहे जाव धारणा,

उट्ठाणे-कम्मे-बले-वीरिए-पुरिसक्कारपरक्कमे, नेरइयत्ते असुरकुमारत्ते जाव वेमाणियत्ते, णाणावरणिज्जे जाव अन्तराइए, कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा, सम्मदिट्ठी-मिच्छादिट्ठी-सम्मामिच्छादिट्ठी, चक्खुदंसणे-अचक्खुदंसणे-ओहीदंसणे-केवलदंसणे, आभिणिबोहियणाणे जाव विभंगणाणे, आहारसन्ना-भयसन्ना-मैथूनसन्ना-परिग्गहसन्ना, ओरालियसरीरे वेउव्विएसरीरे आहारगसरीरे तेयएसरीरे कम्मएसरीरे, मणजोगे-वइजोगे-कायजोगे, सागारोवओगे अणागारोवओगे जे यावन्ने तहप्पगारा सव्वे ते णण्णत्थ आयाए परिणमंति ? हंता गोयमा। पाणाइवाए जाव सव्वे ते णण्णत्थ आयाए परिणमंति।

—भग० श २० । उ ३ । प्र १ । पृ० ७६२

प्राणातिपातादि १८ पाप, प्राणातिपातादि १८ पापों का विरमण, औत्पात्तिकी आदि ४ बुद्धि, अवग्रह यावत् धारणा, उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकारपराक्रम, नारकादि २४ दण्डक-अवस्था, ज्ञानावरणीय आदि कर्म, कृष्णादि छहलेश्या, तीन दृष्टि, चार दर्शन, पाच ज्ञान, तीन अज्ञान, चार सज्ञा, पाँच शरीर, तीन योग, साकार उपयोग, अनाकार उपयोग इत्यादि अन्य इसी प्रकार के सर्व आत्मा के सिवाय अन्यत्र परिणत नही होते हैं। यह पाठ द्रव्य और भाव दोनों लेश्याओं मे लागू होना चाहिये।

---

२१ द्रव्यलेश्या और स्थान

(क) केवइया ण भंते ! कण्हलेस्सा ठाणा पन्नत्ता ? गोयमा ! असंखेज्जा कण्हलेस्सा ठाणा पन्नत्ता एवं जाव सुक्कलेस्सा।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ५० । पृ० ४४६

(ख) अस्संखिज्जाणोसप्पिणीण, उस्सप्पिणीण जे समया।
संखाईया लोगा, लेसाण हवन्ति ठाणाइं ॥

—उत्त० अ ३४ । गा ३३ । पृ० १०४७

कृष्णलेश्या यावत् शुक्ललेश्या के असख्यात स्थान होते हैं। असख्यात् अवसर्पिणी तथा उत्सर्पिणी में जितने समय होते हैं अथवा असख्यात् लोकाकाश के जितने प्रदेश होते हैं उतने लेश्याओं के स्थान होते हैं।

(ग) लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु २ कण्हलेस्सं परिणमइ २ त्ता कण्हलेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति × × × × ×—लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु वा विसुज्झमाणेसु नीललेस्सं परिणमइ २ त्ता नीललेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति।

—भग० श १३ । उ १ । प्र १९ तथा २० का उतर । पृ० ६७९

लेश्या स्थान से संक्लिष्ट होते-होते कृष्णलेश्या में परिणमन करके जीव कृष्णलेशी नारक में उत्पन्न होता है। लेश्या स्थान से संक्लिष्ट होते-होते या विशुद्ध होते-होते नीललेश्या में में परिणमन करके नीललेशी नारक में उत्पन्न होता है।

द्रव्यलेश्या की अपेक्षा यदि विवेचन किया जाय तो द्रव्यलेश्या के असख्यात् स्थान है तथा वे स्थान पुद्गल की मनोज्ञता-अमनोज्ञता, दुर्गन्धता-सुगन्धता, विशुद्धता-अविशुद्धता तथा शीतरूक्षता—स्निग्धउष्णता की हीनाधिकता की अपेक्षा कहे गये हैं।

भावलेश्या की अपेक्षा यदि विवेचन किया जाय तो एक-एक लेश्या की विशुद्धि अविशुद्धि की हीनाधिकता से किये गये भेद रूप स्थान—कालोपमा की अपेक्षा असंख्यात् अवसर्पिणी उत्सर्पिणी के जितने समय होते हैं अथवा क्षेत्रोपमा की अपेक्षा असंख्यात् लोकाकाश के जितने प्रदेश होते हैं उतने भावलेश्या के स्थान होते हैं।

भावलेश्या के स्थानों के कारणभूत कृष्णादि लेश्या द्रव्य हैं। द्रव्यलेश्या के स्थान के बिना भावलेश्या का स्थान बन नहीं सकता है। जितने द्रव्यलेश्या के स्थान होते हैं उतने ही भावलेश्या के स्थान होने चाहिये।

प्रज्ञापना के टीकाकार श्री मलयगिरि ने प्रज्ञापना का विवेचन द्रव्यलेश्या की अपेक्षा माना है तथा उत्तराध्ययन का विवेचन भावलेश्या की अपेक्षा माना है।

·२२ द्रव्यलेश्या की स्थिति

२२·१ कृष्णलेश्या की स्थिति।

मुहुत्तद्धं तु जहन्ना, तेत्तीसं सागरा मुहुत्तहिया।
उक्कोसा होइ ठिई, नायव्वा कण्हलेसाए॥

—उत्त० अ ३४। गा ३४। पृ० १०४७

कृष्णलेश्या की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट मुहूर्त अधिक तेतीस सागरोपम की होती है।

२२·१ नीललेश्या की स्थिति।

मुहुत्तद्धं तु जहन्ना, दसउदही पलियमसंखभागमब्भहिया।
उक्कोसा होइ ठिई, नायव्वा नीललेसाए॥

—उत्त० अ ३४। गा ३५। पृ० १०४७

नीललेश्या की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट तीन पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक दससागरोपम की होती है।

२२ ३ कापोतलेश्या की स्थिति।

मुहुत्तद्धं तु जहन्ना, तिण्णुदही पलियमसंखभागमब्भहिया।
उक्कोसा होइ ठिई, नायव्वा काऊलेसाए॥

—उत्त० अ ३४। गा ३६। पृ० १०४७

कापोतलेश्या की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त तथा उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यामवें भाग अधिक तीन सागरोपम की होती है।

२२ ४ तेजोलेश्याकी स्थिति।

मुहुत्तद्धं तु जहन्ना, दोण्णुदही पलियमसंखभागमब्भहिया।
उक्कोसा होइ ठिई, नायव्वा तेऊलेसाए॥

- उत्त० अ ३४। गा ३७। पृ० १०४७

तेजोलेश्या की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त तथा उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यातवें भाग अधिक दो सागरोपम की होती है।

२२ ५ पद्मलेश्या की स्थिति।

मुहुत्तद्धं तु जहन्ना, दसउदही होइ मुहुत्तमब्भहिया।
उक्कोसा होइ ठिई नायव्वा पम्हलेसाए॥

—उत्त० अ ३४। गा ३८। पृ० १०४७

पाठान्तर •—दस होंति य सागरा मुहुत्तहिया। द्वितीय चरण।

पद्मलेश्या की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त तथा उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अधिक दस सागरोपम की होती है।

२२ ६ शुक्ललेश्या की स्थिति।

मुहुत्तद्धं तु जहन्ना, तेत्तीसं सागरा मुहुत्तहिया।
उक्कोसा होइ ठिई, नायव्वा सुक्कलेसाए॥

—उत्त० अ ३४। गा ३९। पृ० १०४७

शुक्ललेश्या की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त तथा उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अधिक तेतीस सागरोपम की होती है।

एसा खलु लेसाण, ओहेण ठिई (उ) वण्णिया होइ।

—उत्त० अ ३४। गा ४० पूर्वार्ध। पृ० १०४७

इस प्रकार औघिक (सामान्यत•) लेश्या की स्थिति कही है।

·२३ द्रव्यलेश्या और भाव

आगमों में द्रव्यलेश्या के भाव-सम्बन्धी कोई पाठ नही है। लेकिन पुद्‌गल द्रव्य होने के कारण इसका 'पारिणामिक' भाव है।

---

२४ लेश्या और अन्तरकाल।

(क) कण्हलेसस्स णं भंते! अन्तरं कालओ केवचिरं होइ? जहन्नेणं अन्तोमुहुत्तं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोपमाइं अन्तोमुहुत्तमब्भहियाइं, एवं नीललेसस्सवि, काऊलेसस्सवि, तेऊलेसस्स णं भन्ते! अन्तरकालओ केवचिरं होइ? जहन्नेणं अन्तोमुहुत्तं, उक्कोसेणं वणस्सइकालो, एवं पम्हलेसस्सवि, सुक्कलेसस्सवि दोण्हवि एवमंतरं, अलेसस्स णं भन्ते! अन्तरकालओ केवचिरं होइ? गोयमा! साइयस्स अपज्जवसियस्स नत्थि अन्तरं।

—जीवा० प्रति ६। गा २६६। पृ० २५८

कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या का अन्तरकाल जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट मुहुर्त अधिक तेतीस सागरोपम है तथा तेजोलेश्या का अन्तरकाल जघन्य अन्तर्मुहूर्त तथा उत्कृष्ट वनस्पति काल है तथा पद्मलेश्या तथा शुक्ललेश्या का अन्तरकाल तेजोलेश्या के अन्तरकाल के समान होता है। अलेशी सादि अपर्यवसित है तथा अन्तरकाल नही है।

यह विवेचन जीव की अपेक्षा है, द्रव्यलेश्या, भावलेश्या दोनों पर लागू हो सकता है।

(ख) अन्तरमवरुक्कस्सं किण्हतियाणं मुहुत्तअन्तं तु।
उवहीणं तेत्तीसं अहियं होदित्ति णिद्दिट्ठं॥ ५५२
तेउतियाणं एवं णवरि य उक्कस्स विरहकालो दु।
पोग्गलपरिवट्टा हु असंखेज्जा होंति णियमेण॥ ५५३

—गोजी० गा०

कृष्णादि तीन प्रथम लेश्या का जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहुर्त है तथा उत्कृष्ट कुछ अधिक तेतीस सागरोपम है। तेजो आदि तीन शुभलेश्याओं का अन्तरकाल भी इसी प्रकार है परन्तु कुछ विशेपता है। शुभलेश्याओं का उत्कृष्ट अन्तरकाल नियम से असख्यात् पुद्‌गल परावर्तन है।

२५ तपोलब्धि से प्राप्त तेजोलेश्या

२५ १ तपोलब्धि से प्राप्त तेजोलेश्या पौद्गलिक है।

(क) तिहिं ठाणेहिं समणे निग्गंथे संखित्तविउलतेऊलेस्से भवइ, तं जहा--आयावणयाए, खंतिखमाए, अपाणगेणं तवो कम्मेणं।

— ठाण० स्था ३ । उ ३ । सू १८२ । पृ० २१५

तीन स्थान—प्रकार से श्रमण निर्ग्रन्थ को सक्षिप्त-विपुल तेजोलेश्या की प्राप्ति होती है, यथा—(१) आतापन (शीत तापादि सहन) से, (२) क्षातिक्षमा (क्रोधनिग्रह) से, (३) अपान-केन तपकर्म्म (छट्ठ छट्ठ भक्त तपस्या) से।

(ख) गौतम गणधर तथा अन्य अणगारों के विशेपणो मे स्थान-स्थान पर 'संखित्तवि-उलतेऊलेस्से' समास विशेपण शब्द का व्यवहार हुआ है।

—भग० श १ । उ १ । प्रश्नोत्थान १ । पृ० ३८४

(हमने यहाँ एक ही सदर्भ दिया है लेकिन अनेक स्थानो मे इस समास शब्द का व्यवहार हुआ है, अर्थ और भाव सब जगह एक ही है।)

(ग) कुद्धस्स अणगारस्स तेऊलेस्सा निसट्ठा समाणी दूरं गया, दूरं निवयइ, देसं गया, देसं निवयइ, जहिं जहिं च णं सा निवयइ तहिं तहिं णं ते अचित्ता वि पोग्गला ओभासेति जाव पभासेंति।

—भग० श ७ । उ १० । प्र ११ । पृ० ५३०

क्रुधित अणगार के द्वारा निक्षिप्त तेजोलेश्या दूर या पास जहाँ जहाँ जाकर गिरती है वहाँ वहाँ वे अचित् पुद्गल द्रव्य अवभास यावत् प्रभास करते हैं।

इससे यह स्पष्ट होता है कि तपोलब्धि प्राप्त तेजोलेश्या प्रायोगिक द्रव्यलेश्या—पौद्-गलिक है। यह छभेदी लेश्या की तेजोलेश्या से भिन्न है ऐसा प्रतीत होता है।

२५ २ यह तेजोलेश्या दो प्रकार की होती है, यथा—(१) सीओसिणतेऊलेस्सा, (२) सीयलिय तेऊलेस्सा।

(१) शीतोष्ण तेजोलेश्या, (२) शीतल तेजोलेश्या। इनका उदाहरण भगवान महावीर के जीवन मे मिलता है।

तए णं अहं गोयमा। गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स अणुकंपणट्ठयाए वेसियायणस्स बालतवस्सिस्स सीओसिणतेउलेस्सा (तेय) पडिसाहरणट्ठयाए एत्थ णं अन्तरा अहं सीयलियं तेउलेस्सं निसिरामि, जाए सा ममं सीयलियाए तेउलेस्साए वेसिया-

यणस्स बालतवस्सिसस्स सीओसिणा (सा उसिणा) तेउलेस्सा पडिहया, तए णं से वेसियायणे बालतवस्सी ममं सीयलियाए तेउलेस्साए सीओसिणं तेउलेस्सं पडिहयं जाणित्ता गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा छविच्छेदं वा अकीरमाणं पासित्ता सीओसिणं तेउलेस्सं पडिसाहरइ।

—भग० श १५ । पै० ६ । पृ० ७१४

तब, हे गौतम । मंखलिपुत्र गोशालक पर अनुकम्पा लाकर वेश्यायन बालतपस्वी की (निक्षिप्त) तेजोलेश्या का प्रतिसंहार करने के लिये मैने शीत तेजोलेश्या बाहर निकाली और मेरी शीत तेजोलेश्या ने वेश्यायन बालतपस्वी की उष्ण तेजोलेश्या का प्रतिघात किया। तत्पश्चात् वेश्यायन बालतपस्वी ने मेरी शीत तेजोलेश्या से अपनी उष्ण तेजोलेश्या का प्रतिघात हुआ समझ कर तथा मंखलीपुत्र गोशालक के शरीर को थोडी या अधिक किसी प्रकार की पीड़ा या उसके अवयव का छविच्छेद न हुआ जानकर अपनी उष्ण तेजोलेश्या को वापस खीच लिया।

यहाँ यह बात नोट करने की है कि उष्ण तेजोलेश्या को फेंककर वापस खीचा भी जा सकता है।

२५.३ तपोकर्म्म से तेजोलेश्या प्राप्ति का उपाय।

कहन्नं भंते । संखित्तविउल तेउलेस्से भवइ ? तए णं अहं गोयमा । गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी—जे णं गोसाला । एगाए सणहाए कुम्मासपिंडियाए एगेण य वियडासएणं छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय २ जाव विहरइ। से णं अन्तो छण्हं मासाणं संखित्तविउलतेउलेस्से भवइ, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते ममं एयमट्ठं सम्मं विणएणं पडिसुणेइ।

—भग० श १५ । पै० ६ । पृ० ७१५

संक्षिप्त-विपुल तेजोलेश्या किस प्रकार प्राप्त होती है ? नखसहित जली हुई उड़द की दाल के बाकले मुट्ठी भर तथा एक चल्लू भर पानी पीकर जो निरन्तर छट्ठछट्ठ भक्त तप उर्ध्व हाथ रखकर करता है, विहरता है उसको छ मास के अन्त में संक्षिप्त-विपुल तेजोलेश्या की प्राप्त होती है।

संक्षिप्तविपुल का भाव टीकाकार अभयदेवसूरि ने इस प्रकार वर्णन किया है।

संक्षिप्त—अप्रयोग काल में संक्षिप्त।

विपुल—प्रयोगकाल मे विस्तीर्ण।

२५.४ तपोलब्धि जन्य तेजोलेश्या मे घात-भस्म करने की शक्ति।

जावइए णं अज्जो। गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं ममं वहाए सरीरगंसि तेये निसट्ठे, से णं अलाहि पज्जत्ते सोलसण्हं जणवयाण, तं जहा—अंगाणं, वंगाण, मगहाण, मलयाण, मालवागाणं, अच्छाण, वच्छाणं, कोच्छाण, पाढाण, लाढाण, वज्जाण, मोलीण, कासीण, कोसलाणं, अवाहाण, सभुत्तराण घायाए, वहाए, उच्छादणयाए, भासीकरणयाए।

भग० श० १५। पै० २३। पृ० ७२६

भगवान महावीर ने श्रमण निग्रन्थो को बुलाकर कहा—हे आर्यों। मखलिपुत्र गोशालक ने मुझे वध करने के लिये अपने शरीर से जो तेजोलेश्या निकाली थी वह अंग बगादि १६ देशों का घात करने, वध करने, उच्छेद करने तथा भस्म करने में समर्थ थी।

इसके आगे के कथानक मे गोशालक ने अपने शरीर से तेजोलेश्या को निकाल कर, फेंककर सर्वानुभूति तथा सुनक्षत्र अणगारो को भस्म कर दिया था। उसके पाठ इसी उद्देश में पैरा १६ तथा १७ मे है।

—भग० श १५। पै० १६, १७। पृ० ७२४

२५.५ श्रमण निग्रन्थ की तेजोलेश्या तथा देवताओं की तेजोलेश्या।

जे इमे भन्ते। अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति एए णं कस्स तेऊलेस्सं वीइवयंति? गोयमा। मासपरियाए समणे निग्गंथे वाणमंतराण देवाण तेऊलेस्सं वीइवयइ, दुमासपरियाए समणे निग्गंथे असुरिंदवज्जियाणं भवणवासीण देवाण तेऊलेस्सं वीइवयइ, एवं एए णं अभिलावेणं तिमासपरियाए समणे निग्गंथे असुरकुमाराण देवाण तेऊलेस्सं वीइवयइ, चउमासपरियाए समणे निग्गथे गहगणनक्खत्त-ताराख्वाण जोइसियाणं देवाण तेऊलेस्सं वीइवयइ, पंचमासपरियाए समणे निग्गंथे चंदिमसूरियाणं जोइसिंदाण जोइसरायाणं तेऊलेस्सं वीइवयइ, छम्मामासपरियाए समणे निग्गंथे सोहम्मीसाणाणं देवाण तेऊलेस्सं वीइवयइ, सत्तमासपरियाए समणे निग्गंथे सणकुमारमाहिंदाणं देवाण तेऊलेस्सं वीइवयइ, अट्ठमासपरियाए समणे निग्गंथे बंभलोगलंतगाण देवाणं तेऊलेस्सं वीइवयइ, नवमासपरियाए समणे निग्गंथे महासुक्कसहस्साराण देवाण तेऊलेस्सं वीइवयइ, दसमासपरियाए समणे निग्गंथे आणयपाणआरणच्चुयाणं देवाणं तेऊलेस्सं वीइवयइ, एक्कारसमासपरियाए समणे निग्गंथे गेवेज्जगाणं देवाण तेऊलेस्सं वीइवयइ, बारसमासपरियाए समणे निग्गंथे

अणुत्तरोववाइयाणं देवाणं तेऊलेस्सं वीइवयइ, तेण परं सुक्के सुक्काभिजाए भवित्ता-तओ पच्छा सिज्झइ जाव अन्तं करेइ। (तेऊ—पाठांतर तेय)

—भग श १४ । उ ६ । प्र १२ । पृ० ७०७

जो यह श्रमण निग्रन्थ आर्यत्व अर्थात् पापरहितत्व मे विहरता है वह यदि एक मास की दीक्षा की पर्यायवाला हो तो वाणव्यन्तर देवों की तेजोलेश्या* को अतिक्रम करता है; दो मास की पर्यायवाला असुरेन्द्र वाद भवनपति देवताओ की तेजोलेश्या अतिक्रम करता है, तीन मास की पर्यायवाला हो तो असुरकुमार देवो की, चार मास की पर्यायवाला ग्रहगण, नक्षत्र एवं तारागणरूप ज्योतिष्क देवो की, पाच मास की पर्यायवाला ज्योतिष्कों के इन्द्र, ज्योतिष्कों के राजा (चन्द्र-सूर्य) की; छ मास की पर्यायवाला सौधर्म और इशानवासी देवो की, सात मास की पर्यायवाला सनत्कुमार और माहेन्द्र देवों की; आठ मास की पर्यायवाला ब्रह्मलोक और लातक देवो की, नव मास की पर्यायवाला महाशुक्र और सहस्रार देवो की, दस मास की पर्यायवाला आनत, प्राणत, आरण और अच्युत देवों की, ग्यारह मास की पर्यायवाला ग्रैवयेक देवो की तथा बारह मास की दीक्षा की पर्यायवाला पापरहित रूप विहरनेवाला श्रमण निग्रन्थ अनुतरोपपातिक देवों की तेजोलेश्या को अतिक्रम करता है।

·२६ द्रव्यलेश्या और दुर्गति-सुगति।

(क) कण्हानीलाकाऊ, तिन्नि वि एयाओ अहम्मलेसाओ।
एयाहि तिहि वि जीवो, दुग्गइं उववज्जई॥
तेऊ पम्हा सुक्का, तिन्नि वि एयाओ धम्मलेसाओ।
एयाहि तिहि वि जीवो, सुग्गइ उववज्जई॥

—उत्त० अ ३४। गा ५६—५७। पृ० १०४८

(ख) [तओलेस्साओ ××× पन्नत्ता तं जहा-कण्हलेसा, नीललेसा, काऊलेसा, तओलेस्साओ ××× पन्नत्ता तं जहा—तेऊ, पम्ह सुक्कलेस्सा] एवं (तिन्नि) दुग्गइगामिणीओ (तिन्नि) सुग्गइगामिणीओ।

—ठाण स्था ३। उ ४। सू २२। पृ० २२०

---

* तेजोलेश्या का यहाँ टीकाकार ने "सुखासिकाम" अर्थ किया है।

(ग) तओ दुग्गइगामियाओ (कण्ह, नील, काऊ) तओ सुगइगामियाओ (तेऊ, पम्ह, सुक्कलेस्साओ)।

- पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४७ । पृ० ४४६

कृष्ण, नील तथा कापोतलेश्याएं दुर्गति में जाने की हेतु हैं तथा तेजो, पद्म तथा शुक्ललेश्याएं सुगति में जाने की हेतु हैं।

यह पाठ द्रव्य और भाव दोनों में लागू हो सकते हैं। स्थानांग तथा प्रज्ञापना में द्रव्य तथा भाव दोनों के गुणों का मिश्रित विवेचन है। प्रज्ञापना के टीकाकार मलय-गिरि का कथन है कि लेश्या अध्यवसायों की हेतु है और संक्लिष्ट-असंक्लिष्ट अध्यवसायों से जीव दुर्गति-सुगति को प्राप्त होता है। यह विवेचनीय विषय है।

'२७ लेश्या के छ भेद और पंच (पुद्गल) वर्ण

एयाओ णं भन्ते ! छल्लेस्साओ कइसु वन्नेसु साहिज्जंति ? गोयमा ! पंचसु वन्नेसु साहिज्जंति, तंजहा-कण्हलेस्सा कालएणं वन्नेणं साहिज्जइ, नीललेस्सा नील-वन्नेण साहिज्जइ, काऊलेस्सा काललोहिएणं वन्नेणं साहिज्जइ, तेऊलेस्सा लोहिएणं वन्नेणं साहिज्जइ, पम्हलेस्सा हालिद्दएणं वन्नेणं साहिज्जइ, सुक्कलेस्सा सुक्किल्लएणं वन्नेणं साहिज्जइ।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ४० । पृ० ४४७

कृष्णलेश्या काले वर्ण की है, नीललेश्या नीले वर्ण की है कापोतलेश्या कालालोहित वर्ण की है, तेजोलेश्या लोहित वर्ण की हे, पद्मलेश्या पीले वर्ण की है, शुक्ललेश्या श्वेत वर्ण की है।

---

२८ द्रव्यलेश्या और जीव के उत्पत्ति-मरण के नियम

२८ १ द्रव्यलेश्या का ग्रहण और जीव के उत्पत्ति-मरण के नियम।

(क) से किं तं लेसाणुवायगइ ? २ जल्लेसाइं दव्वाइं परियाइत्ता कालं करेइ तल्लेसेसु उववज्जइ, तंजहा-कण्हलेसेसु वा जाव सुक्कलेसेसु वा, से तं लेसाणुवायगइ।

—पण्ण० प १६ । उ १ । सू १५ । पृ० ४३३

(ख) जीवे णं भंते ! जे भविए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! किं लेसेसु उववज्जइ ? गोयमा ! जल्लेसाइं दव्वाइं परियाइत्ता कालं करेइ तल्लेसेसु

अणुत्तरोववाइयाणं देवाणं तेऊलेस्सं वीइवयइ, तेण परं सुक्के सुक्काभिजाए भवित्ता-तओ पच्छा सिज्झइ जाव अन्तं करेइ। (तेऊ—पाठांतर तेय)

—भग श १४। उ ६। प्र १२। पृ० ७०७

जो यह श्रमण निग्रन्थ आर्यत्व अर्थात् पापरहितत्व मे विहरता है वह यदि एक मास की दीक्षा की पर्यायवाला हो तो वाणव्यन्तर देवों की तेजोलेश्या* को अतिक्रम करता है; दो मास की पर्यायवाला असुरेन्द्र बाद भवनपति देवताओं की तेजोलेश्या अतिक्रम करता है, तीन मास की पर्यायवाला हो तो असुरकुमार देवो की; चार मास की पर्यायवाला ग्रहगण, नक्षत्र एवं तारागणरूप ज्योतिष्क देवो की, पाच मास की पर्यायवाला ज्योतिष्कों के इन्द्र, ज्योतिष्कों के राजा (चन्द्र-सूर्य) की, छ मास की पर्यायवाला सौधर्म और इशानवासी देवों की, सात मास की पर्यायवाला सनत्कुमार और माहेन्द्र देवो की; आठ मास की पर्यायवाला ब्रह्मलोक और लांतक देवो की; नव मास की पर्यायवाला महाशुक्र और सहस्रार देवों की, दस मास की पर्यायवाला आनत, प्राणत, आरण और अच्युत देवो की, ग्यारह मास की पर्यायवाला ग्रैवेयक देवो की तथा बारह मास की दीक्षा की पर्यायवाला पापरहित रूप विहरनेवाला श्रमण निग्रन्थ अनुतरोपपातिक देवों की तेजोलेश्या को अतिक्रम करता है।

·२६ द्रव्यलेश्या और दुर्गति-सुगति।

(क) कण्हानीलाकाऊ, तिन्नि वि एयाओ अहम्मलेसाओ।
एयाहि तिहि वि जीवो, दुग्गइं उववज्जई॥
तेऊ पम्हा सुक्का, तिन्नि वि एयाओ धम्मलेसाओ।
एयाहि तिहि वि जीवो, सुग्गइ उववज्जई॥

—उत्त० अ ३४। गा ५६—५७। पृ० १०४८

(ख) [तओलेस्साओ × × × पन्नत्ता तं जहा-कण्हलेसा, नीललेसा, काऊलेसा, तओलेस्साओ × × × पन्नत्ता तं जहा—तेऊ, पम्ह सुक्कलेस्सा] एवं (तिन्नि) दुग्गइगामिणीओ (तिन्नि) सुग्गइगामिणीओ।

—ठाण स्था ३। उ ४। सू २२। पृ० २२०

---

* तेजोलेश्या का यहाँ टीकाकार ने "सुखासिकाम" अर्थ किया है।

(ग) तओ दुग्गइगामियाओ (कण्ह, नील, काऊ) तओ सुग्गइगामियाओ (तेऊ, पम्ह, सुक्कलेस्साओ)।

— पण्ण० प १७। उ ४। सू ४७। पृ० ४४६

कृष्ण, नील तथा कापोतलेश्याएं दुर्गति में जाने की हेतु हैं तथा तेजो, पद्म तथा शुक्ललेश्याएं सुगति में जाने की हेतु हैं।

यह पाठ द्रव्य और भाव दोनों में लागू हो सकते हैं। स्थानांग तथा प्रज्ञापना में द्रव्य तथा भाव दोनों के गुणों का मिश्रित विवेचन है। प्रज्ञापना के टीकाकार मलयगिरि का कथन है कि लेश्या अध्यवसायों की हेतु है और संक्लिष्ट-असंक्लिष्ट अध्यवसायों से जीव दुर्गति-सुगति को प्राप्त होता है। यह विवेचनीय विषय है।

'२७ लेश्या के छः भेद और पंच (पुद्गल) वर्ण

एयाओ णं भन्ते ! छल्लेस्साओ कइसु वन्नेसु साहिज्जति ? गोयमा ! पंचसु वन्नेसु साहिज्जंति, तंजहा-कण्हलेस्सा कालएणं वन्नेणं साहिज्जइ, नीललेस्सा नीलवन्नेण साहिज्जइ, काऊलेस्सा काललोहिएणं वन्नेणं साहिज्जइ, तेऊलेस्सा लोहिएणं वन्नेणं साहिज्जइ, पम्हलेस्सा हालिद्दएणं वन्नेणं साहिज्जइ, सुक्कलेस्सा सुक्किल्लएणं वन्नेणं साहिज्जइ।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ४०। पृ० ४४७

कृष्णलेश्या काले वर्ण की है, नीललेश्या नीले वर्ण की है कापोतलेश्या कालालोहित वर्ण की है, तेजोलेश्या लोहित वर्ण की है, पद्मलेश्या पीले वर्ण की है, शुक्ललेश्या श्वेत वर्ण की है।

---

२८ द्रव्यलेश्या और जीव के उत्पत्ति-मरण के नियम

२८ १ द्रव्यलेश्या का ग्रहण और जीव के उत्पत्ति-मरण के नियम।

(क) से किं तं लेसाणुवायगइ ? २ जल्लेसाइं दव्वाइं परियाइत्ता कालं करेइ तल्लेसेसु उववज्जइ, तंजहा-कण्हलेसेसु वा जाव सुक्कलेसेसु वा, से तं लेसाणुवायगइ।

—पण्ण० प १६। उ १। सू १५। पृ० ४३३

(ख) जीवे णं भंते ! जे भविए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! किंलेसेसु उववज्जइ ? गोयमा ! जल्लेसाइं दव्वाइं परियाइत्ता कालं करेइ तल्लेसेसु

उववज्जइ, तं जहा-कण्हलेसेसु वा नीललेसेसु वा काऊलेसेसु वा ; एवं जस्स जा लेस्सा सा तस्स भाणियव्वा। जाव-जीवे णं भंते! जे भविए जोइसिएसु उववज्जित्तए? पुच्छा, गोयमा! जल्लेसाइं दव्वाइं परियाइत्ता कालं करेइ तल्लेसेसु उववज्जइ, तं जहा-तेऊलेसेसु। जीवे णं भंते! जे भविए वेमाणिएसु उववज्जित्तए से णं भंते! किं लेसेसु उववज्जइ? गोयमा! जल्लेसाइं दव्वाइं परियाइत्ता कालं करेइ तल्लेसेस उववज्जइ; तं जहा तेऊलेसेसु वा पम्हलेसेसु वा सुक्कलेसेसु वा।

—भग० श ३। उ ४। प्र १७, १८, १६। पृ० ४५६

लेश्या अनुपातगति विहायगति का १२वाँ भेद है। देखो पण्ण० प १६। सू १४। पृ० ४३२-३) जिस लेश्या के द्रव्यो को ग्रहण करके जीव काल करता है उसी लेश्या में जाकर उत्पन्न होता है, इसे लेश्या के अनुपातगति कहते हैं।

जो जीव जिस लेश्या के द्रव्यों को ग्रहण करके काल करता है वह उसी लेश्या में जाकर उत्पन्न होता है। भविक नारक कृष्ण, नील या कापोत लेश्या, भविक ज्योतिषी देव तेजोलेश्या, भविक वैमानिक देव तेजो, पद्म या शुक्ललेश्या के द्रव्यो ग्रहण करके जिस लेश्या में काल करता है उसी लेश्या में उत्पन्न होता है। या दण्डक मे जिस जीव के जो लेश्यायें कही है उसी प्रकार कहना।

२८२ द्रव्यलेश्या का परिणमन और जीव के उत्पत्ति-मरण के नियम।

लेसाहिं सव्वाहिं, पढमे समयम्मि परिणयाहिं तु।
न हु कस्सइ उववाओ, परे भवे अत्थि जीवस्स॥
लेसाहिं सव्वाहिं, चरिमे समयम्मि परिणयाहिं तु।
न हु कस्सइ उववाओ, परे भवे अत्थि जीवस्स॥
अतमुहुत्तम्मि गए, अंतमुहुत्तम्मि सेसए चेव।
लेसाहिं परिणयाहिं, जीवा गच्छन्ति परलोयं॥

—उत्त० अ ३४। गा ५८, ५६, ६०। पृ० १०४८

सभी लेश्याओं की प्रथम समय की परिणति में किसी भी जीव की परभव में उत्पत्ति नहीं होती है तथा सभी लेश्याओं की अन्तिम समय की परिणति में भी किसी जीव की परभव मे उत्पत्ति नही होती है। लेश्या की परिणति के बाद अन्तर्मुहूर्त बीतने पर और अन्तमुहूर्त शेष रहने पर जीव परलोक में जाता है।

---

२९ लेश्या-स्थानों का अल्प-बहुत्व

२९.१ *जघन्य स्थानों में द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ तथा द्रव्य-प्रदेशार्थ अल्प-बहुत्व।*

एएसि णं भंते! कण्हलेस्साठाणाण जाव सुक्कलेस्साठाणाण य जहन्नगाण दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?

गोयमा! सव्वत्थोवा जहन्नगा काऊलेस्साठाणा दव्वट्ठयाए, जहन्नगा नीललेस्साठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, जहन्नगा कण्हलेस्साठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, जहन्नगा तेऊलेस्साठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, जहन्नगा पम्हलेस्साठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, जहन्नगा सुक्कलेस्साठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

पएसट्ठयाए-सव्वोत्थोवा जहन्नगा काऊलेस्साठाणा पएसट्ठयाए, जहन्नगा नीललेस्साठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, जहन्नगा कण्हलेस्साठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, जहन्नगा तेऊलेस्साए ठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, जहन्नगा पम्हलेस्साठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, जहन्नगा सुक्कलेस्साठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

दव्वट्ठपएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा जहन्नगा काऊलेस्साठाणा दव्वट्ठयाए, जहन्नगा नीललेस्साठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, एवं कण्हलेस्सा, तेऊलेस्सा, पम्हलेस्सा, जहन्नगा सुक्कलेस्सा ठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, जहन्नएहिंतो सुक्कलेस्साठाणेहिंतो दव्वट्ठयाए जहन्नगा काऊलेस्साठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, जहन्नगा नीललेस्साठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, एवं जाव सुक्कलेस्साठाणा।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ५१। पृ० ४४६

द्रव्यार्थ रूप में—जघन्य कापोतलेश्या स्थान सबसे कम है, जघन्य नीललेश्या स्थान उससे असख्यात् गुण हैं, जघन्य कृष्णलेश्या स्थान उससे असख्यात् गुण हैं, जघन्य तेजोलेश्या स्थान उससे असख्यात् गुण है, जघन्य पद्मलेश्या स्थान उससे असख्यात् गुण हैं, जघन्य शुक्ललेश्या स्थान उससे असख्यात् गुण है।

प्रदेशार्थ रूप भी इसी प्रकार जानना।

जघन्य द्रव्यार्थ शुक्ललेश्या स्थान से जघन्य कापोतलेश्या प्रदेशार्थ स्थान असख्यात् गुण है, उससे जघन्य नीललेश्या प्रदेशार्थ स्थान असख्यात् गुण है, इसी प्रकार यावत् शुक्ललेश्या तक जानना।

२९.२ उत्कृष्ट स्थानो मे द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ, द्रव्य-प्रदेशार्थ अल्पवहुत्व।

एएसि णं भंते! कण्हलेस्साठाणाणं जाव सुक्कलेस्साठाणाण य उक्कोसगाणं दव्वट्ठयाए एएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा (जाव विसेसाहिया वा)?

गोयमा! सव्वत्थोवा उक्कोसगा काउलेस्साठाणा दव्वट्ठयाए, उक्कोसगा नील-लेस्साठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, एवं जहेव जहन्नगा तहेव उक्कोसगावि, नवरं उक्कोसत्ति अभिलावो।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ५२। पृ० ४४६।५०

जिस प्रकार जघन्य लेश्या स्थानो का कहा उसी प्रकार उत्कृष्टलेश्या स्थानो का द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ, द्रव्यप्रदेशार्थ तीन प्रकार से कहना।

२९ ३ जघन्य उत्कृष्ट उभय स्थानो में द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ तथा द्रव्य-प्रदेशार्थ अल्पवहुत्व।

एएसि णं भंते। कण्हलेस्सठाणाणं जाव सुक्कलेस्सठाणाण य जहन्नउक्कोसगाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा (जाव विसेसाहिया वा)?

गोयमा! सव्वत्थोवा जहन्नगा काऊलेस्साठाणा दव्वट्ठयाए, जहन्नगा नील-लेस्साठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, एवं कण्हतेऊपम्हलेस्सठाणा, जहन्नगा सुक्क-लेस्सठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, जहन्नएहिंतो सुक्कलेसाठाणेहिंतो दव्वट्ठयाए उक्कोसा काऊलेस्सठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, उक्कोसा नीललेस्सठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा एवं कण्हतेऊपम्हलेस्सठाणा, उक्कोसा सुक्कलेस्सठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

पएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा जहन्नगा काउलेस्सठाणा पएसट्ठयाए, जहन्नगा नील-लेसठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, एवं जहेव दव्वट्ठयाए तहेव पएसट्ठयाए वि भाणियव्वं, नवरं पएसट्ठयाएत्ति अभिलावविसेसो।

दव्वट्ठपएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा जगहन्नगा काउलेस्साठाणा दव्वट्ठयाए, जहन्नगा नीललेस्साठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, एव कण्हतेऊपम्हलेस्साणा, जहन्नगा सुक्कलेस्सठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, जहन्नएहिंतो सुक्कलेस्सठाणेहिंतो दव्वट्ठ याए उक्कोसा काऊलेस्सठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, उक्कोसा नीललेस्सठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, एव कण्हतेऊपम्हलेसट्ठाणा, उक्कोसगा सुक्कलेस्सठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, उक्कोसएहिंतो सुक्लेस्सठाणेहिंतो दव्वट्ठयाए जहन्नगा काऊलेस्सठाणा पएसट्ठयाए अणंतगुणा, जहन्नगा नीललेस्सठाणा पएसट्ठयाए असं-

खेज्जगुणा एवं कण्हतेऊपम्हलेस्सठाणा, जहन्नगा सुक्कलेस्सठाणा पएसट्ठाए असंखेज्जगुणा, जहन्नएहिंतो सुक्कलेस्सठाणेहिंतो पएसट्ठयाए उक्कोसा काऊलेस्सठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, उक्कोसगा नीललेस्सठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, एवं कण्हतेऊपम्हलेस्सठाणा, उक्कोसगा सुक्कलेस्सठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

—पण्ण० प १७। उ ४। सू ५३। पृ० ४५०

सबसे कम जघन्य कापोतलेश्या स्थान द्रव्यार्थिक, जघन्य नीललेश्या द्रव्यार्थिक स्थान असख्यात् गुण और इसी प्रकार क्रमशः कृष्ण, तेजो, पद्म तथा शुक्ललेश्या जघन्य द्रव्यार्थिक स्थान असख्यात् गुण। जघन्य शुक्ललेश्या द्रव्यार्थिक स्थान से कापोत लेश्या का द्रव्यार्थिक उत्कृष्ट स्थान असख्यात् गुण, उत्कृष्ट नीललेश्या द्रव्यार्थिक स्थान और इसी प्रकार क्रमशः कृष्ण, तेजो, पद्म और शुक्ललेश्या उत्कृष्ट द्रव्यार्थिक स्थान असख्यात् गुण है।

जैसा द्रव्यार्थिक स्थान कहा वैसा प्रदेशार्थिक स्थान कहना, केवल द्रव्यार्थिक जगह प्रदेशार्थिक कहना।

द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ—सबसे कम जघन्य कापोतलेश्या के द्रव्यार्थ स्थान, नीललेश्या जघन्य द्रव्यार्थ स्थान असख्यात गुण, तथा क्रमशः इसी प्रकार कृष्ण, तेजो, पद्म और शुक्ल लेश्या के द्रव्यार्थ जघन्य स्थान असख्यात् गुण। जघन्य शुक्ललेश्या द्रव्यार्थ स्थानो से उत्कृष्ट कापोतलेश्या द्रव्यार्थ स्थान असख्यात् गुण, उत्कृष्ट नीललेश्या द्रव्यार्थ स्थान असख्यात् गुण, और इसी प्रकार क्रमशः कृष्ण, तेजो, पद्म और शुक्ललेश्या उत्कृष्ट द्रव्यार्थ स्थान असख्यात् गुण। शुक्ललेश्या उत्कृष्ट द्रव्यार्थ स्थान से जघन्य कापोतलेश्या प्रदेशार्थ स्थान **अनन्तगुण** है। जघन्य कापोतलेश्या प्रदेशार्थ स्थान से जघन्य नीललेश्या प्रदेशार्थ स्थान असंख्यात् गुण है, तथा इसी प्रकार कृष्ण, तेजो, पद्म और शुक्ललेश्या जघन्य प्रदेशार्थ स्थान असख्यात् गुण है, जघन्य शुक्ललेश्या प्रदेशार्थ स्थान से उत्कृष्ट कापोतलेश्या प्रदेशार्थ स्थान असख्यात् गुण, उससे नीललेश्या उत्कृष्ट प्रदेशार्थ स्थान असख्यात् गुण है और इसी प्रकार कृष्ण, तेजो, पद्म और शुक्ललेश्या उत्कृष्ट प्रदेशार्थ स्थान असख्यात गुण है।

---

३ द्रव्यलेश्या (विस्रसा अजीव-नोकर्म)

३.१ द्रव्यलेश्या नोकर्म के भेद।

१ दो भेद

नो कम्म दव्वलेसा पओगसा विससा उ नायव्वा।

नोकर्म द्रव्यलेश्या के दो भेद-प्रायोगिक तथा विस्रसा।

—उत्त० अ ३४। नि० गा ५४२। पूर्वार्ध

•२ अजीव नोकर्म द्रव्यलेश्या के दस भेद

अजीव कम्म नो दव्वलेसा, सा दसविहा उ नायव्वा।
चन्दाण य सूराण य, गहगण नक्खत्त ताराणं॥
आभरणच्छायाणा-दंसगाण, मणि कागिणीण जा लेसा।
अजीव दव्व-लेसा, नायव्वा दसविहा एसा॥

—उत्त० अ ३४। नि० गा ५३७,३८

अजीव नोकर्म द्रव्यलेश्या के दस भेद, यथा—चन्द्रमा की लेश्या, सूर्य की, ग्रह की, नक्षत्र की, तारागण की लेश्या, आभरण की लेश्या, छाया की लेश्या, दर्पण की लेश्या, मणि की तथा कांकणी की लेश्या।

यहाँ लेश्या शब्द से उपरोक्त चन्द्रमादि से निसर्गत ज्योति विशेषादि को उपलक्ष किया है, ऐसा मालूम पड़ता है।

३•२ सरूपी सकर्मलेश्या का अवभास, उद्द्योत, तप्त एवं प्रभास करना

अत्थि णं भंते! सरूवी सकम्मलेस्सा पोग्गला ओभासेंति, उज्जोवेन्ति, तवेन्ति, पभासेंति? हंता अत्थि?

कयरे णं भंते! सरूवी सकम्मलेस्सा पोग्गल ओभासेंति, जाव पभासेंति? गोयमा! जाओ इमाओ चन्दिम-सूरियाणं देवाणं विमाणेहिंतो लेस्साओ बहिया अभिनिस्सडाओ ताओ ओभासेंति (जाव) पभासेंति, एवं एएणं गोयमा! ते सरूवी सकम्मलेस्सा पोग्गला ओभासेंति, उज्जोवेंति, तवेंति, पभासेंति।

—भग० श० १४। उ ९। प्र २-३। पृ० ७०६

सरूपी सकर्मलेश्या के पुद्गल अवभास, उद्द्योत, तप्त तथा प्रभास करते हैं यथा—चन्द्र तथा सूर्यदेवों के विमानों से बाहर निकली लेश्या अवभासित, उद्योतित, तप्त, प्रभासित होती है।

टीकाकार ने कहा कि चन्द्रादि विमान से निकले हुए प्रकाश के पुद्गलों को उपचार से सकर्मलेश्या कहा गया है। क्योंकि उनके विमान के पुद्गल सचित्त पृथ्वीकायिक है और वे पृथ्वीकायिक जीव सकर्मलेशी हैं अतः उनसे निकले पुद्गलों को उपचार से सकर्मलेश्या पुद्गल कहा गया है। अन्यथा वे अजीव नोकर्म द्रव्यलेश्या के पुद्गल हैं।

३•३ सूर्य की लेश्या का शुभत्व

किमिदं भंते! सूरिए (अचिरुग्गयं बालसूरियं जासुमणा कुसुमपुंजप्पकासं लोहित्तगं); किमिदं भंते! सूरियस्स अट्ठे? गोयमा! सुभे सूरिए, सुभे सूरियस्स

अट्ठे। किमिदं भन्ते। सुरिए, किमिदं भन्ते। सूरियस्स पभा? एवं चेव, एवं छाया, एवं लेस्सा।

—भग० श १४। उ ६। प्र १०-११। पृ० ७०७

उगते हुए बाल सूर्य की लेश्या शुभ होती है। टीकाकार ने यहाँ लेश्या का अर्थ 'वर्ण' लिया है।

३४ सूर्य की लेश्या का प्रतिघात अभिताप

(क) लेस्सापडिघाएणं उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसन्ति लेस्साभितावेणं मज्झन्तियमुहुत्तंसि मूले य दूरे य दीसन्ति लेस्सापडिघाएणं अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसन्ति, से तेणट्ठेणं गोयमा। एव वुच्चइ जम्बुद्दीवे णं दीवे सूरिया उग्गमण मुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसन्ति जाव अत्थमण जाव दीसन्ति।

—भग० श ८। उ ८। प्र० ३८। पृ० ५६०

लेश्या के प्रतिघात से उगता हुआ सूर्य दूर होते हुए भी नजदीक दिखलाई पडता है तथा मध्यान्ह का सूर्य नजदीक होते हुए भी लेश्या के अभिताप से दूर दिखलाई पडता है। तथा लेश्या के प्रतिघात से डूबता हुआ सूर्य दूर होते हुए भी नजदीक दिखलाई पडता है।

लेश्या-प्रतिघात=तेज का प्रतिघात होना अर्थात् कम होना।

लेश्या-अभिताप=तेज का अभिताप होना अर्थात् तेज का प्रखर होना।

(ख) ता कस्सि णं सूरियस्स लेस्सापडिहया आहिताइ वएज्जा? ××× ता जे णं पोग्गला सूरियस्स लेस्सं फुसन्ति ते णं पोग्गला सूरियस्स लेस्सं पडिहणति, आदिट्ठावि ण पोग्गला सूरियस्स लेस्सं पडिहणति, चरिमलेस्संतरगयावि ण पोग्गला सूरियस्स लेस्सं पडिहणति ××× आहिताइ वएज्जा।

—चन्द० प्रा ५। पृ० ६६४

—सूरि० प्रा ५। वही पाठ

सूर्य की लेश्या का तीन स्थान पर प्रतिघात होता है—

(१) जो पुद्गल सूर्य की लेश्या का स्पर्श करते हैं वे सूर्य की लेश्या का प्रतिघात-विनाश करते हैं। टीकाकार ने मेरुतट भित्ति संस्थित पुद्गलों का उदाहरण दिया है।

(२) अदृष्ट पुद्गल भी सूर्य की लेश्या का प्रतिघात करते हैं। टीकाकार ने यहाँ भी मेरुतट भित्ति संस्थित सूक्ष्म अदृश्यमान् पुद्गलों का उदाहरण दिया है।

(३) चरमलेश्या अन्तर्गत पुद्गल भी सूर्य की लेश्या का प्रतिघात करते हैं। टीकाकार कहते हैं कि मेरु पर्वत के अन्यत्र भी प्राप्त चरमलेश्या के विशेष स्पर्शी पुद्गलों से सूर्य की लेश्या का प्रतिघात होता है।

३ ५ चन्द्र-सूर्य की लेश्या का आवरण

—××× ता जया णं राहू देवे आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वेमाणे वा परियारेमाणे वा चन्दस्स वा सूरस्स वा लेस्सं आवरेमाणे चिट्ठइ [आवरेत्ता वीइवयइ], तया णं मणुस्सलोए मणुस्सा वयंति—एवं खलु राहुणा चन्दे वा सूरे वा गहिए —××× —

चन्द० प्रा० २० । पृ० ७४६

—सूरि० प्रा० २० । वही पाठ

राहू देव के इस प्रकार आते, जाते, विकुर्वना करते, परिचारना करते सूर्य-चन्द्र की लेश्या का आवरण होता है। इसी को मनुष्य लोक मे चन्द्र-सूर्य ग्रहण कहते है।

.४ भावलेश्या

.४१ भावलेश्या—जीवपरिणाम

जीवपरिणामे णं भंते। कइविहे पन्नत्ते ? गोयमा ! दसविहे पन्नत्ते। तंजहा-गइपरिणामे १, इंदियपरिणामे २, कसायपरिणामे ३, लेस्सापरिणामे ४, जोगपरिणामे ५, उवओगपरिणामे ६, णाणपरिणामे ७, दसणपरिणामे ८, चरित्तपरिणामे ६, वेयपरिणामे १०।

—पण्ण० प० १३। सू० १। पृ० ४०८

— ठाण० स्था १०। सू ७१३। पृ० ३०४ (केवल उत्तर)

जीव परिणाम के दस भेद हैं, यथा—

१—गति परिणाम, २—इन्द्रिय परिणाम, ३—कषाय परिणाम, ४—लेश्या परिणाम, ५—योग परिणाम, ६—उपयोग परिणाम, ७—ज्ञान परिणाम, ८—दर्शन परिणाम, ६—चारित्र परिणाम तथा १०—वेद परिणाम।

४१ १ लेश्या परिणाम के भेद

लेस्सापरिणामे णं भंते ! कइविहे पन्नत्ते ? गोयमा ! छव्विहे पन्नत्ते, तं जहा—कण्हलेस्सापरिणामे, नीललेस्सापरिणामे, काऊलेस्सापरिणामे, तेऊलेस्सा-परिणाम, पम्हलेस्सापरिणामे, सुक्कलेस्सापरिणामे।

—पण्ण० प १३। सू २। पृ० ४०६

लेश्या-परिणाम के छ भेद हैं, यथा—

१—कृष्णलेश्या परिणाम, २—नीललेश्या परिणाम, ३—कापोतलेश्या परिणाम, ४—तेजोलेश्या परिणाम, ५—पद्मलेश्या परिणाम तथा ६—शुक्ललेश्या परिणाम।

४१ २ लेश्या परिणाम की विविधता

(क) कण्हलेस्सा णं भंते! कइविहं परिणामं परिणमइ? गोयमा! तिविहं वा नवविहं वा सत्तावीसविहं वा एक्कासीइविहं वा बेतेयालीसतविहं वा बहुयं वा बहुविहं वा परिणामं परिणमइ, एवं जाव सुक्कलेस्सा।

पण्ण० प १७ | उ ४ | सू ४८ | पृ० ४४६

(ख) तिविहो व नवविहो वा, सत्तावीसइविहेक्कसीओ वा।
दुसओ तेयालो वा, लेसाणं होइ परिणामो वा॥

—उत्त० अ ३४ | गा २० | पृ० १०४६

कृष्णलेश्या—तीन प्रकार के, नौ प्रकार के, सत्ताईस प्रकार के, इक्यासी प्रकार के, दो सौ तेंतालिस प्रकार के, बहु, बहु प्रकार के परिणाम होते हैं। इसी प्रकार यावत् शुक्ललेश्या के परिणाम समझना।

---

४२ भावलेश्या अवर्णी-अगंधी-अरसी-अस्पर्शी

(कण्हलेस्सा) भावलेस्सं पडुच्च अवण्णा, अरसा, अगंधा, अफासा, एवं जाव सुक्कलेस्सा—

—भग० श १२ | उ ५ | प्र १६ | पृ० ६६४

छओं भावलेश्या अवर्णी, अरसी, अगन्धी, अस्पर्शी हैं।

---

४३ भावलेश्या और अगुरुलघुत्व

प्र०—कण्हलेस्सा णं भंते! किं गरुया, जाव अगरुयलहुया?

उ०—गोयमा! नो गरुया, नो लहुया, गरुयलहुया वि, अगुरुयलहुया वि।

प्र०—से केणट्ठेणं?

उ०—गोयमा! दव्वलेस्सं पडुच्च ततियपएण, भावलेस्सं पडुच्च चउत्थपएणं, एवं जाव—सुक्कलेस्सा

—भग० श १ | उ ९ | प्र २८९-९० | पृ० ४११

कृष्णलेश्या यावत् शुक्ललेश्या-भावलेश्या की अपेक्षा अगुरुलघु हैं।

·४४ लेश्या-स्थान

(क) केवइया णं भंते ! कण्हलेस्सा ठाणा पन्नत्ता ? गोयमा ! असंखेज्जा कण्हलेस्साठाणा पन्नत्ता, एवं जाव सुक्कलेस्सा ।

—पण्ण० प १७ । उ ४ । सू ५० । पृ० ४४६

(ख) अस्संखिज्जाणोसप्पिणीण उस्सप्पिणीण जे समया वा ।
संखाईया लोगा, लेसाण हवन्ति ठाणाइं ॥

—उत्त० अ ३४ । गा ३३ । पृ० १०४७

कृष्णलेश्या यावत् शुक्ललेश्या के असंख्यात् स्थान होते हैं। असख्यात् अवसर्पिणी तथा उत्सर्पिणी मे जितने समय होते हैं तथा असंख्यात् लोकाकाश के जितने प्रदेश होते हैं उतने लेश्याओं के स्थान होते हैं।

(ग) लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु २ कण्हलेस्सं परिणमइ २ त्ता कण्हलेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति × × ×—लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु वा विसुज्झमाणेसु नीललेस्सं परिणमइ २ त्ता नीललेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति ।

—भग० श १३ । उ १ । प्र १६-२० का उत्तर । पृ० ६७६

लेश्या स्थान से संक्लिष्ट होते-होते कृष्णलेश्या मे परिणमन करके कृष्णलेशी नारकी में उत्पन्न होता है। लेश्यास्थान से संक्लिष्ट होते-होते या विशुद्ध होते-होते नीललेश्या मे परिणमन करके नीललेशी नारकी मे उत्पन्न होता है।

भावलेश्या की अपेक्षा यदि विवेचन किया जाय तो एक-एक लेश्या की विशुद्धि-अविशुद्धि के हीनाधिकता से किये गये भेद रूप स्थान-कालोपमा की अपेक्षा असख्यात् अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी के जितने समय होते हैं तथा क्षेत्रोपमा की अपेक्षा असंख्यात् लोकाकाश के जितने प्रदेश होते हैं उतने भावलेश्या के स्थान होते हैं।

द्रव्यलेश्या की अपेक्षा यदि विवेचन किया जाय तो द्रव्यलेश्या के असंख्यात् स्थान है तथा वे स्थान पुद्गल की मनोज्ञता-अमनोज्ञता, दुर्गन्धता-सुगन्धता, विशुद्धता-अविशुद्धता, शीतरुक्षता-स्निग्धउष्णता की हीनाधिकता की अपेक्षा कहे गये हैं।

भावलेश्या के स्थानों के कारणभूत कृष्णादि लेश्याद्रव्य हैं। द्रव्यलेश्या के स्थान के विना भावलेश्या का स्थान वन नहीं मकता है। जितने द्रव्यलेश्या के स्थान होते हैं उतने ही भावलेश्या के स्थान होने चाहिए।

प्रज्ञापना के टीकाकार श्री मलयगिरि ने प्रज्ञापना का विवेचन द्रव्यलेश्या की अपेक्षा माना है तथा उत्तराध्ययन का विवेचन भावलेश्या की अपेक्षा माना है।

४५ भावलेश्या की स्थिति

मुहुत्तद्धं तु जहन्ना, तेत्तीसा सागरा मुहुत्तऽहिया।
उक्कोसा होइ ठिई, नायव्वा कण्हलेसाए॥
मुहुत्तद्धं तु जहन्ना, दस उदही पलियमसंखभागमब्भहिया।
उक्कोसा होइ ठिई, नायव्वा नीललेसाए॥
मुहुत्तद्धं तु जहन्ना, तिण्णुदही पलियमसंखभागमब्भहिया।
उक्कोसा होइ ठिई, नायव्वा काऊलेसाए॥
मुहुत्तद्धं तु जहन्ना, दोण्णुदही पलियमसंखभागमब्भहिया।
उक्कोसा होइ ठिई, नायव्वा तेऊलेसाए॥
मुहुत्तद्धं तु जहन्ना, दस होंति य सागरा मुहुत्तहिया*।
उक्कोसा होइ ठिई, नायव्वा पम्हलेसाए॥
मुहुत्तद्धं तु जहन्ना, तेत्तीसं सागरा मुहुत्तहिया।
उक्कोसा होइ ठिई, नायव्वा सुक्कलेसाए॥
एसा खलु लेसाणं, ओहेण ठिई उ वण्णिया होइ।

* पाठान्तर—दसउदही होइ मुहुत्तमब्भहिया।

—उत्त० अ ३४ । गा ३४ से ४० । पृ० १०४७

सामान्यत भावलेश्या की स्थिति द्रव्यलेश्या के अनुसार ही होनी चाहिये अत उपरोक्त पाठ द्रव्य और भावलेश्या दोनो मे लागू हो सकता है। नारकी और देवता की भावलेश्या मे परिणमन हो तो वह केवल आकारभावमात्र, प्रतिविम्बभावमात्र होना चाहिये क्योंकि वहाँ मूल की द्रव्यलेश्या का अन्य लेश्या मे परिणमन केवल आकारभावमात्र, प्रतिविम्बमात्र होता है। अत. नारकी और देवता मे यदि 'भाव परावत्तिए पुण सुर नेरियाण पि छल्लेस्सा'' होती है वह प्रतिविम्ब भावमात्र होनी चाहिये।

·४६ भावलेश्या और भाव

४६ १ जीवोदय निष्पन्न भाव

(क) से किं तं जीवोदयनिप्फन्ने ? अणेगविहे पन्नत्ते, तजहा—नेरइए तिरिक्खजोणिए मणुस्से देवे, पुढविकाइए जाव तसकाइए, कोहकसाई जाव लोभकसाइ, इत्थीवेयए पुरिसवेयए नपुसगवेयए, कण्हलेस्से जाव सुक्कलेस्से, मिच्छादिट्ठी सम्मदिट्ठी सम्ममिच्छादिट्ठी, अविरए, असण्णी, अण्णाणी, आहारए, छउमत्थे, सजोगी, संसारत्थे, असिद्धे सेतं जीवोदयनिप्फन्ने।

—अणुओ० सू १२६ । पृ० ११११

(ख) भावे उदओ भणिओ, छण्हं लेसाण जीवेसु।

—उत्त० अ ३४। नि० गा ५४२ उत्तरार्ध

(ग) भावादो छल्लेस्सा ओदयिया होंति × × ×।

—गोजी० गा ५५४। पृ० २००

कृष्णलेश्या यावत् शक्ललेश्या जीवोदय निष्पन्न भाव है।

४६.२ भावलेश्या और पाँच भाव

आगमों में प्राप्त पाठो के अनुसार लेश्या औदयिक भाव में गिनाई गई है। उपशम-क्षय-क्षयोपशम-भावो में लेश्या होने के पाठ उपलब्ध नही है। उत्तराध्ययन की निर्युक्ति का एक पाठ है।

(क) दुविहा विसुद्धलेस्सा, उपसमखइआ कसायाणं।

—उत्त० अ ३४। नि० गा ५४० उत्तरार्ध

तत्र द्विविधा विशुद्धलेश्या 'उपसमखइय त्ति सूत्रत्वादुपशमक्षयजा, केषा पुनरुपशमक्षयौ ? यतो जायत इयमित्याह--कषायाणाम्, अयमर्थः कषायोपशमजा कषायक्षयजा च, एकान्त-विशुद्धि चाऽऽश्रित्यैवमभिधानम्, अन्यथा हि क्षायोपशमिक्यपि शुक्ला तेजः पद्मे च विशुद्धलेश्ये सम्भवतः एवेति।

—उपर्युक्त निर्युक्ति गाथा पर वृत्ति

विशुद्धलेश्या द्विविध—औपशमिक और क्षायिक। यह उपशम और क्षय किसका ? कषायो का। अतः कषाय औपशमिक और कषाय क्षायिक। यह एकात विशुद्धि की अपेक्षा कहा गया है अन्यथा क्षायोपशमिक भाव मे भी तीनो विशुद्धलेश्या सम्भव है।

गोम्भरसार जीवकाड मे भी एक पाठ है।

(ख) मोहुदय खओवसमोवसमखयज जीवफंदणं भावो।

—गोजी० गा० ५३५ उत्तरार्ध

मोहनीय कर्म के उदय, क्षयोपशम, उपशम, क्षय से जो जीव के प्रदेशो की चचलता होती है उसको भावलेश्या कहते। अर्थात् चारो भावों के निष्पन्न मे लेश्या होती है।

पारिणामिक भाव जीव तथा अजीव सभी द्रव्यों में होता है।

लेश्या शाश्वत भाव है (देखो विविध)।

---

४७ भावलेश्या के लक्षण

४७ १ कृष्णलेश्या के लक्षण

पचासवप्पवत्तो, तीहिं अगुत्तो छसुं अविरओ य।
तिव्वारंभपरिणओ, खुद्दो साहसिओ नरो॥
निद्धन्धसपरिणामो, निस्संसो अजिइंदिओ।
एयजोगसमाउत्तो, कण्हलेसं तु परिणमे॥

—उत्त० अ० ३४। गा २१, २२। १०४६

पाँचो आश्रवों में प्रवृत्त, तीन गुप्तियो से अगुप्त, छः काय की हिंसा से अविरत, तीव्र आरम्भ मे परिणत, क्षुद्र, साहसिक, निर्दयी, नृशस, अजितेन्द्रिय पुरुष कृष्णलेश्या के परिणाम वाला होता है।

४७ २ नीललेश्या के लक्षण

इस्साअमरिसअतवो, अविज्जमाया अहीरिया य।
गेही पओसे य सढे, पमत्ते रसलोलुए*॥
आरंभाओ अविरओ खुद्दो साहसिओ नरो।
एयजोगसमाउत्तो, नीललेसं तु परिणमे॥

—उत्त० अ ३४। गा २३, २४। पृ० १०४६ ४७

ईर्ष्यालु, कदाग्रही, अतपस्वी, अज्ञानी, मायावी, निर्लज्ज, विषयी, द्वेषी, रसलोलुप, आरम्भी, अविरत, क्षुद्र, साहसिक पुरुष नीललेश्या के परिणामवाला होता है।

४७ ३ कापोतलेश्या के लक्षण

वंके वंकसमायारे, नियडिल्ले अणुज्जुए।
पलिउंचग ओवहिए, मिच्छदिट्ठी अणारिए॥
उप्फालगदुट्ठवाई य, तेणे यावि य मच्छरी।
एयजोगसमाउत्तो, काऊलेसं तु परिणमे॥

—उत्त० अ ३४। गा २५, २६। पृ० १०४७

वचन से वक्र, विषम आचरणवाला, कपटी, असरल, अपने दोषों को ढाँकनेवाला, परिग्रही, मिथ्या दृष्टि, अनार्य, मर्मभेदक, दुष्ट वचन बोलने वाला, चोर, मत्सर स्वभाववाला पुरुष कापोतलेश्या के परिणामवाला होता है।

---

* पाठान्तर-पमत्ते रसलोलुए सायगवेसए य।

(ख) भावे उदओ भणिओ, छण्हं लेसाण जीवेसु।

—उत्त० अ ३४। नि० गा ५४२ उत्तरार्ध

(ग) भावादो छल्लेस्सा ओदयिया होंति × × ×।

—गोजी० गा ५५४। पृ० २००

कृष्णलेश्या यावत् शक्ललेश्या जीवोदय निष्पन्न भाव है।

४६·२ भावलेश्या और पाँच भाव

आगमों में प्राप्त पाठों के अनुसार लेश्या औदयिक भाव में गिनाई गई है। उपशम-क्षय-क्षयोपशम-भावो में लेश्या होने के पाठ उपलब्ध नही है। उत्तराध्ययन की निर्युक्ति का एक पाठ है।

(क) दुविहा विसुद्धलेस्सा, उपसमखइआ कसायाणं।

—उत्त० अ ३४। नि० गा ५४० उत्तरार्ध

तत्र द्विविधा विशुद्धलेश्या 'उपसमखइय त्ति सूत्रत्वादुपशमक्षयजा, केषा पुनरुपशमक्षयौ ? यतो जायत इयमित्याह--कषायाणाम्, अयमर्थः कषायोपशमजा कषायक्षयजा च, एकान्त-विशुद्धि चाऽऽश्रित्यैवमभिधानम्, अन्यथा हि क्षायोपशमिक्यपि शुक्ला तेजः पद्मे च विशुद्धलेश्ये सम्भवतः एवेति।

—उपर्युक्त निर्युक्ति गाथा पर वृत्ति

विशुद्धलेश्या द्विविध—औपशमिक और क्षायिक। यह उपशम और क्षय किसका? कषायो का। अतः कषाय औपशमिक और कषाय क्षायिक। यह एकात विशुद्धि की अपेक्षा कहा गया है अन्यथा क्षायोपशमिक भाव मे भी तीनो विशुद्धलेश्या सम्भव है।

गोम्भरसार जीवकाड मे भी एक पाठ है।

(ख) मोहुदय खओवसमोवसमखयज जीवफंदणं भावो।

—गोजी० गा० ५३५ उत्तरार्ध

मोहनीय कर्म के उदय, क्षयोपशम, उपशम, क्षय से जो जीव के प्रदेशो की चचलता होती है उसको भावलेश्या कहते। अर्थात् चारो भावों के निष्पन्न मे लेश्या होती है।

पारिणामिक भाव जीव तथा अजीव सभी द्रव्यों में होता है।

लेश्या शाश्वत भाव है (देखो विविध)।

---

४७ भावलेश्या के लक्षण

४७.१ कृष्णलेश्या के लक्षण

पंचासवप्पवत्तो, तीहिं अगुत्तो छसुं अविरओ य।
तिव्वारंभपरिणओ, खुद्दो साहसिओ नरो॥
निद्धंधसपरिणामो, निस्संसो अजिइंदिओ।
एयजोगसमाउत्तो, कण्हलेसं तु परिणमे॥

—उत्त० अ० ३४। गा २१, २२। १०४६

पाँचों आश्रवों मे प्रवृत्त, तीन गुप्तियों से अगुप्त, छः काय की हिंसा से अविरत, तीव्र आरम्भ मे परिणत, क्षुद्र, साहसिक, निर्दयी, नृशंस, अजितेन्द्रिय पुरुष कृष्णलेश्या के परिणाम वाला होता है।

४७ २ नीललेश्या के लक्षण

इस्साअमरिसअतवो, अविज्जमाया अहीरिया य।
गेही पओसे य सढे, पमत्ते रसलोलुए* ॥
आरंभाओ अविरओ खुद्दो साहसिओ नरो।
एयजोगसमाउत्तो, नीललेसं तु परिणमे॥

—उत्त० अ ३४। गा २३, २४। पृ० १०४६ ४७

ईर्ष्यालु, कदाग्रही, अतपस्वी, अज्ञानी, मायावी, निर्लज्ज, विषयी, द्वेषी, रसलोलुप, आरम्भी, अविरत, क्षुद्र, साहसिक पुरुष नीललेश्या के परिणामवाला होता है।

४७ ३ कापोतलेश्या के लक्षण

वंके वंकसमायारे, नियडिल्ले अणुज्जुए।
पलिउंचग ओवहिए, मिच्छदिट्ठी अणारिए॥
उप्फालगदुट्ठवाई य, तेणे यावि य मच्छरी।
एयजोगसमाउत्तो, काऊलेसं तु परिणमे॥

—उत्त० अ ३४। गा २५, २६। पृ० १०४७

वचन से वक्र, विषम आचरणवाला, कपटी, असरल, अपने दोषों को ढाँकनेवाला, परिग्रही, मिथ्या दृष्टि, अनार्य, मर्मभेदक, दुष्ट वचन बोलने वाला, चोर, मत्सर स्वभाववाला पुरुष कापोतलेश्या के परिणामवाला होता है।

---

* पाठान्तर-पमत्ते रसलोलुए सायगवेसए य।

४७ ४ तेजोलेश्या के लक्षण

नीयावित्ती अचवले, अमाई अकुऊहले।
विणीयविणए दन्ते, जोगवं उवहाणवं॥
पियधम्मे दढधम्मे, वज्जभीरू हिएसए।
एयजोगसमाउत्तो, तेऊलेसं तु परिणमे॥

—उत्त० अ ३४। गा २७-२८। पृ० १०४७

नम्र, चपलता रहित, निष्कपट, कुतूहल से रहित, विनीत, इन्द्रियो का दमन करनेवाला, स्वाध्याय तथा तप को करनेवाला, प्रियधर्मी, दृढ़धर्मी, पापभीरू, हितैषी जीव, तेजोलेश्या के परिणामवाला होता है।

४७ ५ पद्मलेश्या के लक्षण

पयणुक्कोहमाणे य, मायालोभे य पयणुए।
पसंतचित्ते दंतप्पा, जोगवं उवहाणवं॥
तहा पयणुवाई य, उवसंते जिइंदिए।
एयजोगसमाउत्तो, पम्हलेसं तु परिणमे॥

—उत्त० अ ३४। गा २९-३०। पृ० १०४७

जिसमें क्रोध, मान, माया और लोभ स्वल्प हैं, जो प्रशान्तचित्त वाला है, जो मन को वश मे रखता है, जो योग तथा उपधानवाला, अत्यल्पभाषी, उपशान्त और जितेन्द्रिय होता है—उसमें पद्मलेश्या के परिणाम होते हैं।

४७ ६ शुक्ललेश्या के लक्षण

अट्टरुद्दाणि वज्जित्ता, धम्मसुक्काणि साहए।*
पसंतचित्ते दंतप्पा, समिए गुत्ते य गुत्तिसु॥
सरागे वीयरागे वा, उवसते जिइंदिए।
एयजोगसमाउत्तो, सुक्कलेसं तु परिणमे॥

—उत्त० अ ३४। गा ३१-३२। पृ० १०४७

आर्त और रौद्रध्यान को त्यागकर जो धर्म और शुक्ल ध्यान का चिन्तन करता है, जिनका चित्तशान्त है, जिनने आत्मा (मन तथा इन्द्रिय) को वश कर रखा है तथा जो समिति तथा गुप्तिवन्त है , जो सराग अथवा वीतराग है, उपशान्त और जितेन्द्रिय है—उसमें शुक्ललेश्या के परिणाम होते हैं।

---

* पाठान्तर-झायए

'४८ भावलेश्या के भेद

४८ १ लेश्या परिणाम के भेद

लेस्सापरिणामे णं भंते ! कइविहे पन्नत्ते ? गोयमा ! छव्विहे पन्नत्ते, तंजहा- कण्हलेस्सापरिणामे, नीललेस्सापरिणामे, काऊलेस्सापरिणामे, तेऊलेस्सापरिणामे, पम्हलेस्सापरिणामे, सुक्कलेस्सापरिणामे।

पण्ण० प १३ । सू २ । पृ० ४०६

लेश्यापरिणाम के छः भेद हैं, यथा—

१—कृष्णलेश्या परिणाम, २—नीललेश्या परिणाम, ३—कापोतलेश्या परिणाम, ४—तेजोलेश्या परिणाम, ५—पद्मलेश्या परिणाम तथा ६—शुक्ललेश्या परिणाम।

४९ विभिन्न जीवों में लेश्या परिणाम

(नेरइया) लेस्सापरिणामेणं कण्हलेस्सा वि, नीललेस्सा वि, काऊलेस्सा वि।

(असुरकुमारा) कण्हलेस्सा वि जाव तेऊलेस्सा वि। ×× एवं जाव थणियकुमारा।

(पुढविकाइया) जहा नेरइयाणं, नवरं तेऊलेस्सा वि एवं आउवणस्सइकाइया वि।

तेउवाउ एवं चेव, नवरं लेस्सापरिणामेणं जहा नेरइया।

बेइंदिया जहा नेरइया।

एवं जाव चउरिंदिया।

पंचिंदियातिरिक्खजोणिया, नवरं लेस्सा परिणामेणं जाव सुक्कलेस्सा वि।

(मणुस्सा) लेस्सापरिणामेणं कण्हलेस्सा वि जाव अलेस्सा वि।

(वाणमंतरा) जहा असुरकुमारा।

(एवं जोइसिया) नवरं लेस्सापरिणामेणं तेऊलेस्सा।

(वेमाणिया) नवरं लेस्सापरिणामेणं तेऊलेसा वि, पम्हलेस्सा वि, सुक्कलेस्सा वि।

—पण्ण० प १३ । सू ३ । पृ० ४०६-१०

लेश्यापरिणाम से नारकी कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी है। असुरकुमार कृष्णलेशी नीललेशी, कापोतलेशी, तेजोलेशी है। इस प्रकार स्तनितकुमार तक जानो।

जैसा नारकी के लेश्यापरिणाम के विषय में कहा—वैसे ही पृथ्वीकाय के लेश्या परिणाम के विषय में जानो परन्तु उनमें तेजोलेशी भी है। इसी प्रकार अप्काय, वनस्पतिकाय के विषय में जानो।

जैसा नारकी के लेश्या परिणाम के विषय में कहा—वैसा ही अग्निकाय-वायुकाय के लेश्या परिणाम के विषय में समझो।

जैसा नारकी के लेश्यापरिणाम के विषय में कहा—वैसा ही बेइन्द्रिय के विषय में समझो। इस प्रकार तेइन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय के विषय में समझो।

लेश्यापरिणाम से तिर्यंच पचेन्द्रिय कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी होते हैं।

लेश्यापरिणाम से मनुष्य कृष्णलेशी यावत् अलेशी होते हैं अर्थात् छः लेश्यावाले भी होते हैं, अलेशी भी होते हैं।

जैसा असुरकुमार के लेश्या परिणाम के विषय में कहा—वैसा ही वाणव्यंतर देवों के विषय में समझो।

लेश्यापरिणाम से ज्योतिष्क देव तेजोलेशी हैं।

लेश्यापरिणाम से वैमानिक देव—तेजोलेशी, पद्मलेशी, शुक्ललेशी हैं।

४६ १ भाव परावृत्ति से देव नारकी में लेश्या

भावपरावत्तिए पुण सुर नेरइयाणं पि छल्लेस्सा।

भाव की परावृत्ति होने से देव और नारक के भी छ लेश्या होती है।

—पण्ण० प १७। उ ५। सू ५४ की टीका में उद्धृत

·५ लेश्या और जीव

·५१ लेश्या की अपेक्षा जीव के भेद

५१ १ जीवों के दो भेद

(क) अहवा दुविहा सव्वजीव पन्नत्ता, तं जहा—सलेस्सा य अलेस्सा य, जहा असिद्धा सिद्धा, सव्व थोवा अलेस्सा सलेस्सा अणंतगुणा।

—जीवा० प्रति ६। सर्व जीव। सू २४५। पृ० २५२

(ख) अहवा दुविहा सव्वजीवा पन्नत्ता, तंजहा × × × [एवं सलेस्सा चेव अलेस्सा चेव × × ×]

—जीवा० प्रति ६। सर्व जी। सू २४५। पृ० २५१

(ग) दुविहा सव्वजीव पन्नत्ता, तंजहा × × × एवं एसा गाहा फासेयव्वा जाव ससरीरी चेव असरीरी चेव।

सिद्धसइंदिकाए, जोगे वेए कसाय लेसा य।
णाणुवओगाहारे, भासग चरिमे य ससरीरी ॥

—ठाण० स्था २ । उ ४ । सू १०१ । पृ० २००

सर्वजीवों के दो भेद—सलेशी जीव, अलेशी जीव।

५१ २ जीवों के सात भेद

(क) अहवा सत्तविहा सव्वजीवा पन्नत्ता, तंजहा—कण्हलेस्सा, नीललेस्सा, काऊलेस्सा, तेऊलेस्सा, पम्हलेस्सा, सुक्कलेस्सा, अलेस्सा ××× सेत्तं सत्तविहा सव्वजीवा पन्नत्ता।

—जीवा० प्रति ६ । सर्व जी । सू २६६ । पृ० २५८

(ख) सत्तविहा सव्वजीवा पन्नत्ता, तंजहा—कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा अलेस्सा।

—ठाण० स्था० ७ । सू ५६२ । पृ० २८१

सर्व जीवों के सात भेद हैं—कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी, तेजोलेशी, पद्मलेशी, शुक्ललेशी, अलेशी जीव।

---

५२ लेश्या की अपेक्षा जीव की वर्गणा

(१) एगा कण्हलेस्साणं वग्गणा, एगा नीललेस्साणं वग्गणा, एवं जाव सुक्कलेस्साणं वग्गणा।

कृष्णलेशी जीवों की एक वर्गणा है इसी प्रकार नील, कापोत, तेजो, पद्म तथा शुक्ल-लेश्या जीवों की वर्गणाएं हैं।

(२) एगा कण्हलेस्साणं नेरइयाणं वग्गणा, जाव काऊलेस्साणं नेरइयाणं वग्गणा, एवं जस्स जाइ लेस्साओ, भवणवइवाणमंतरपुढविआउवणस्सइकाइयाणं च चत्तारि लेस्साओ तेऊवाउबेंदियतेइंदियचउरिंदियाणं तिन्निलेस्साओ पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं मणूस्साणं छल्लेस्साओ, जोइसियाणं एगा तेऊलेस्सा, वेमाणियाणं तिन्निउवरिमलेस्साओ।

कृष्णलेशी नारकियों की एक वर्गणा होती है इसी प्रकार दण्डक में जिसके जितनी लेश्या होती है उतनी वर्गणा जानना।

(३) एगा कण्हलेस्साण भवसिद्धियाण वग्गणा, एगा कण्हलेस्साण अभवसिद्धियाण वग्गणा, एवं छसु वि लेस्सासु दो दो पयाणि भाणियव्वाणि, एगा

कण्हलेस्साणं भवसिद्धियाणं नेरइयाणं वग्गणा, एगा कण्हलेस्साणं अभवसिद्धियाणं नेरइयाणं वग्गणा, एवं जस्स जइ लेस्साओ तस्स तइ भाणियव्वाओ, जाव वेमाणियाणं।

कृष्णलेशी भवसिद्धिक जीवों की एक वर्गणा होती है तथा कृष्णलेशी अभवसिद्धिक जीवों की एक वर्गणा होती है इसी प्रकार छओं लेश्याओं में दो-दो पद कहना। कृष्णलेशी भवसिद्धिक नारक जीवों की एक वर्गणा, कृष्णलेशी अभवसिद्धिकों की एक वर्गणा तथा इसी प्रकार दण्डक मे यावत् वैमानिक जीवों तक जिसके जितनी लेश्या हो उतनी भवसिद्धिक-अभवसिद्धिक वर्गणा कहना।

(४) एगा कण्हलेस्साणं समदिट्ठियाणं वग्गणा, एगा कण्हलेस्साणं मिच्छादिट्ठियाण वग्गणा, एगा कण्हलेस्साण सम्ममिच्छदिट्ठियाण वग्गणा, एवं छसु वि लेस्सासु जाव वेमाणियाणं जेसिं जइ दिट्ठीओ।

कृष्णलेशी सम्यक् दृष्टि जीवों की एक वर्गणा होती है, कृष्णलेशी मिथ्या दृष्टि जीवों की एक वर्गणा तथा कृष्णलेशी सम-मिथ्या दृष्टि जीवों की एक वर्गणा। इसी प्रकार छओं लेश्याओं में तथा दण्डक के जीवों में यावत् वैमानिक जीवों तक जिसके जितनी लेश्या तथा दृष्टि हो उतनी सम्यक् दृष्टि, मिथ्या दृष्टि तथा सममिथ्या दृष्टि व लेश्या की अपेक्षा जीवों की दृष्टि वर्गणा कहना।

(५) एगा कण्हलेस्साणं कण्हपक्खियाणं वग्गणा, एगा कण्हलेस्साणं सुक्कपक्खियाणं वग्गणा, एवं जाव वेमाणियाणं, जस्स जइ लेस्साओ, एए अट्ठ चउवीसदण्डया।

कृष्णलेशी कृष्णपक्षी जीवों की एक वर्गणा है, कृष्णलेशी शुक्लपक्षी जीवों की एक वर्गणा है। इसी प्रकार छओं लेश्याओ में तथा दण्डक के यावत् वैमानिक जीवों तक मे जिसके जितनी लेश्या तथा जो पक्षी हो उतनी कृष्णपक्षी शुक्लपक्षी वर्गणा कहना।

वर्गणा शब्द की भावाभिव्यक्ति अंग्रेजी के Grouping शब्द मे पूर्ण रूप से व्यक्त होती है। सामान्यतः समान गुण व जातिवाले समुदाय को वर्गणा कहते।

—ठाण० स्था १। सू ५१। पृ० १८४-१८५

लेस्सा य काऊलेस्सा य। तत्थ जे काऊलेस्सा ते बहुतरा जे नीललेस्सा पन्नत्ता ते थोवा।

—जीवा० प्रति ३। उ २। सू ८८। पृ० १४१

वालुका प्रभा पृथ्वी के नारकी के दो लेश्या होती हैं, यथा-नील और कापोत। उनमें अधिकतर कापोत लेश्यावाले हैं, नीललेश्या वाले थोड़े हैं।

·५ पंकप्रभा नारकी में

पंकप्पभाए पुच्छा, एगा नीललेस्सा पन्नत्ता।

—जीवा० प्रति ३। उ २ सू ८८। पृ० १४१

पंकप्रभा पृथ्वी के नारकी के एक नीललेश्या होती है।

·६ धूम्रप्रभा नारकी में

धूमप्पभाए पुच्छा, गोयमा! दो लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा य नीललेस्सा य, ते बहुतरगा जे नीललेस्सा थोवतरगा जे कण्हलेस्सा।

—जीवा० प्रति ३। उ २। सू ८८। पृ० १४१

धूम्रप्रभा पृथ्वी के नारकी के दो लेश्या होती हैं, यथा—कृष्णलेश्या, नीललेश्या। उनमें अधिकतर नीललेश्या वाले हैं, कृष्णलेश्या वाले थोड़े हैं।

·७ तमप्रभा नारकी में

तमाए पुच्छा, गोयमा! एगा कण्हलेस्सा।

—जीवा० प्रति ३। उ २। सू ८८। पृ० १४१

तमप्रभा पृथ्वी के नारकी के एक कृष्णलेश्या होती है।

·८ तमतमाप्रभा नारकी में

अहे सत्तमाए एगा परम कण्हलेस्सा।

—जीवा० प्रति ३। उ २। सू ८८। पृ० १४१

तमतमाप्रभा पृथ्वी के नारकी के एक परम कृष्णलेश्या होती है।

समुच्चय गाथा

एवं सत्तवि पुढवीओ नेयव्वाओ, णावत्तं लेसासु।
गाहा—काऊ य दोसु तइयाए मीसिया नीलिया चउत्थीए।
पंचमियाए मीसा कण्हा तत्तो परम कण्हा॥

—भग० श १। उ ५। प्र ४६। पृ० ४०१

पहली और दूसरी नारकी में एक कापोत लेश्या, तीसरी में कापोत और नील, चौथी में एक नील, पंचमी में नील और कृष्ण, छट्ठी में एक कृष्ण और सातवीं मे एक परम कृष्णलेश्या होती है।

·६ तिर्यंच मे

तिरिक्ख जोणियाणं भंते ! कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! छल्ले-स्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १३ । पृ० ४३८

तिर्यंच के कृष्ण यावत् शुक्ल छओ लेश्या होती है ।

·१० एकेन्द्रिय में

(क) एगिंदियाणं भंते ! कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ ? गोयमा चत्तारि लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा जाव तेऊलेसा ।

—पण्ण० प० १७ । उ २ । सू० १३ । पृ० ४३८
—भग० श १७ । उ १२ । प्र १२ । पृ० ७६१

एकेन्द्रिय के चार लेश्या होती है, यथा—कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या ।

·११ पृथ्वीकाय मे

(क) पुढविकाइयाणं भंते ! कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! एवं चेव (जहा एगिंदियाणं) ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १३ । पृ० ४३८

(ख) (पुढविकाइया) तेसिणं भंते ! जीवाणं कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! चत्तारि लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा, नीललेस्सा काऊलेस्सा तेऊलेस्सा ।

—भग० श १६ । उ ३ । प्र २ । पृ० ७८२

(ग) असुरकुमाराणं चत्तारि लेस्सा पन्नत्ता, तंजहा—कण्हलेस्सा नीललेस्सा काऊलेस्सा तेऊलेस्सा एवं जाव थणियकुमाराणं एवं पुढविकाइयाणं ।

—ठाण० स्था ४ । उ ३ । सू ३६५ । पृ० २४०

(घ) भवणवइवाणमंतर पुढविआउवणस्सइकाइयाणं च चत्तारि लेस्साओ ।

ठाण० स्था २ । उ १ । सू ७२ । पृ० १८४

पृथ्वीकाय के जीवो में चार लेश्या होती है, यथा—कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोत-लेश्या, तेजोलेश्या ।

(च) (पुढविकाइए णं भंते ! जे भविए पुढविकाइएसु उववज्जित्तए) चत्तारि लेस्साओ ।

—भग० श २४ । उ १२ । प्र ४ । पृ० ८२६

पृथ्वीकाय मे उत्पन्न होने योग्य पृथ्वीकायिक जीवो में चार लेश्या होती है ।

(छ) (पुढविकाइए णं भन्ते ! जे भविए पुढविकाइएसु उववज्जित्तए) सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ जाओ × × लेस्साओ तिन्नि।

—भग० श २४ । उ १२ । प्र ८ । पृ० ८३०

पृथ्वीकाय में उत्पन्न होने योग्य जघन्य स्थितिवाले पृथ्वीकायिक जीवों में तीन लेश्या होती है।

(ज) असुरकुमाराणं तओ लेस्साओ संकिलिट्ठाओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा नीललेस्सा काऊलेस्सा × × एवं पुढविकाइयाणं।

—ठाण० स्था ३ । उ १ । सू १८१ । पृ० २०५

पृथ्वीकाय में तीन संक्लिष्ट लेश्या होती है, यथा—कृष्ण, नील, कापोतलेश्या।

·११·१ सूक्ष्म पृथ्वीकाय में

(सुहुम पुढविकाइया) तेसिणं भंते ! जीवाणं कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! तिन्नि लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा, नीललेस्सा काऊलेस्सा।

—जीवा० प्रति १ । सू १३ । पृ० १०६

सूक्ष्म पृथ्वीकाय के जीवों में तीन लेश्या होती है, यथा—कृष्ण, नील, कापोत लेश्या।

·११·२ वादर पृथ्वीकाय में

चार लेश्या होती है।

·११·३ स्निग्ध तथा खर पृथ्वीकाय में

(सण्हवायर पुढविकाइया ; खरवायर पुढविकाइया) चत्तारि लेस्साओ।

—जीवा० प्रति १ । सू १५ । पृ० १०६

स्निग्ध तथा खर वादर पृथ्वीकाय में कृष्णादि चार लेश्या होती है।

·११·४ अपर्याप्त वादर पृथ्वीकाय में

चार लेश्या होती है।

·११·५ पर्याप्त वादर पृथ्वीकाय मे

तीन लेश्या होती है।

·१२ अप्काय में

(क) भवणवइवाणमंतर पुढविआउवणस्सइकाइयाणं च चत्तारि लेस्साओ।

—ठाण० स्था २ । उ १ । सू ७२ । पृ० १८४

(ख) आउवणस्सइकाइयाणवि एवं चेव (जहा पुढविकाइयाणं)।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १३ । पृ० ४३८

(ग) आउकाइया × × एवं जो पुढविकाइयाण गमो सो चेव भाणियव्वो।

—भग० श १६ । उ ३ । प्र १७ । पृ० ७८२-८३

(घ) असुरकुमाराण चत्तारि लेस्सा पन्नत्ता, तंजहा—कण्हलेस्सा नीललेस्सा काऊलेस्सा तेऊलेस्सा × × एवं × × आउवणस्सइकाइयाण।

—ठाण० स्था ४। उ ३। सू ३६५। पृ० २४०

अप्काय के जीवो मे चार लेश्या होती हैं।

(ङ) असुरकुमाराण तओ लेस्साओ सकिलिट्ठाओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा नीललेस्सा काऊलेस्सा × × एवं पुढविकाइयाणं आउवणस्सइकाइयाण वि।

—ठाण० स्था ३। उ १। सू १८१। पृ० २०५

अप्काय में तीन सक्लिष्ट लेश्या होती है।

१२ १ सूक्ष्म अप्काय मे

(सुहुम आउकाइया) जहेव सुहुम पुढविकाइयाणं।

—जीवा० प्रति १। सू १६। पृ० १०६

सूक्ष्म अप्काय में तीन लेश्या होती है।

•१२ २ वादर अप्काय में

(वायर आउकाइया) चत्तारि लेस्साओ।

—जीवा० प्रति १। सू १७। पृ० १०६

वादर अप्काय मे चार लेश्या होती है।

१२ ३ अपर्याप्त वादर अप्काय में

चार लेश्या होती है।

१२ ४ पर्याप्त वादर अप्काय मे

तीन लेश्या होती हैं।

•१३ तेउकाय में

(क) तेउवाउवेइंदियतेइंदियचउरिंदियाणं जहा नेरइयाण।

—पण्ण० पद १७। उ २। सू १३। पृ० ४३८

(ख) तेउवाउवेइंदियतेइंदियचउरिंदियाण वि तओ लेस्सा जहा नेरइयाण।

—ठाण० स्था ३। उ १। सू १८१। पृ० २०५

(ग) तेउवाउवेइंदियतेइंदियचउरिंदियाण तिन्नि लेस्साओ।

– ठाण० स्था २। उ १। सू ७२। पृ० १८४

तेउकाय में तीन लेश्या होती है।

(घ) जइ तेउकाइएहिंतो (भविए पुढविकाइएसु) उववज्जंति × × तिन्नि लेस्साओ।

—भग० श० २४। उ १२। प्र १६। पृ० ८३१

पृथ्वीकाय में उत्पन्न होने योग्य तेउकायिक जीव में तीन लेश्या होती है।

·१३·१ सूक्ष्म तेउकाय में

(सुहुम तेउकाइया) जहा सुहुम पुढविकाइयाणं ।

– जीवा० प्रति १ । सू २४ । पृ० ११०

सूक्ष्म तेउकाय में तीन लेश्या होती है ।

·१३·२ बादर तेउकाय में

(बायर तेउकाइया) तिन्नि लेस्सा ।

—जीवा० प्रति १ । सू २५ । पृ० १११

बादर तेउकाय में तीन लेश्या होती है।

·१४ वायुकाय में :—

देखो ऊपर तेउकाय के पाठ (·१३)

तीन लेश्या होती है ।

·१४·१ सूक्ष्म वायुकाय में

(सुहुम वाउकाइया)—जहा तेउकाइया ।

—जीवा० प्रति १ । सू २६ । पृ० १११

सूक्ष्म वायुकाय में तीन लेश्या होती है ।

·१४·२ बादर वायुकाय में

(बायर वाउकाइया) सेसं तं चेव (सुहुम वाउकाइया) ।

—जीवा० प्रति १ । सू २६ । पृ० १११

बादर वायुकाय में तीन लेश्या होती है ।

·१५ वनस्पतिकाय में

(क) आउवणस्सइकाइयाणवि एवं चेव (जहा पुढविकाइयाणं) ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १३ । पृ० ४३८

(ख) असुरकुमाराणं चत्तारि लेस्सा पन्नत्ता, तंजहा—कण्हलेस्सा नीललेस्सा काउलेस्सा तेऊलेस्सा ×× एवं ×× आउवणस्सइकाइयाणं ।

—ठाण० स्था० ४ । उ ३ । सू ३९५ । पृ० २४०

(ग) भवणवइवाणमंतरपुढविआउवणस्सइकाइयाणं च चत्तारि लेस्साओ ।

—ठाण० स्था २ । उ १ । सू ७२ । पृ० १८४

वनस्पतिकाय के जीवों में चार लेश्या होती है ।

(घ) असुरकुमाराणं तओ लेस्साओ संकिलिट्ठाओ पन्नत्ताओ, तंजहा-कण्हलेस्सा नीललेस्सा काऊलेस्सा ×× एवं पुढविकाइयाणं आउवणस्सइकाइयाणं वि ।

—ठाण० स्था ३ । उ १ । सू १८१ । पृ० २०५

वनस्पतिकाय में तीन संक्लिष्ट लेश्या होती है ।

१५.१ सूक्ष्म वनस्पतिकाय में

अवसेसं जहा पुढविकाइयाणं।

—जीवा० प्रति १। सू १८। पृ० १०६

सूक्ष्म वनस्पतिकाय में तीन लेश्या होती है।

१५.२ वादर वनस्पतिकाय मे

(बायर वणस्सइकाइया) तहेव जहा बायर पुढविकाइयाण।

—जीवा० प्रति १। सू २१। पृ० ११०

वादर वनस्पतिकाय में चार लेश्या होती है।

१५.३ अपर्याप्त वादर वनस्पतिकाय में

चार लेश्या होती है। पाठ नहीं मिला।

१५.४ पर्याप्त वादर वनस्पतिकाय में

तीन लेश्या होती है। पाठ नही मिला।

१५.५ प्रत्येक शरीर वादर वनस्पतिकाय मे

चार लेश्या होती है। पाठ नही मिला।

'१५.६ अपर्याप्त प्रत्येक वादर वनस्पतिकाय में—

चार लेश्या होती है। पाठ नही मिला।

१५.७ पर्याप्त प्रत्येक वादर वनस्पतिकाय मे—

तीन लेश्या होती है। पाठ नही मिला।

१५.८ साधारण शरीर वादर वनस्पतिकाय में

तीन लेश्या होती है। पाठ नहीं मिला।

१५.९ उत्पल आदि दस प्रत्येक वादर वनस्पतिकाय मे

(क) (उप्पलेसु एकवत्तए) ते णं भंते! जीवा किं कण्हलेसा नीललेसा काऊलेसा तेऊलेसा? गोयमा! कण्हलेसे वा जाव तेऊलेसे वा कण्हलेस्सा वा नीललेस्सा वा काऊलेस्सा वा तेऊलेसा वा अहवा कण्हलेसे य नीललेस्से य एवं एए दुयासंजोग-तियासंजोगचउक्कसंजोगेणं असीइ भंगा भवंति।

भग० श ११। उ १। सू १३। पृ० २२३

उत्पल जीव में चार लेश्या होती हैं। उत्पल का एक जीव कृष्णलेश्या वाला यावत् तेजोलेश्या वाला होता है। अथवा अनेक जीव कृष्णलेश्या वाले, नीललेश्या वाले होते हैं, अथवा एक कृष्णलेश्या वाला तथा एक नीललेश्यावाला होता है। इस प्रकार द्विकसयोग, त्रिकसयोग, तथा चतुष्कसयोग से सब मिलकर अस्सी भागे कहना। एक पत्री उत्पल वनस्पति-काय में प्रथम की चार लेश्या होती है। एक जीव के चार लेश्या, अनेक जीवों के भी

चारलेश्या के चार भांगे=कुल ८ भागे। द्विकसंयोग मे एक तथा अनेक की चउभंगी होती है। कृष्णादि चार लेश्या के छः द्विकसंयोग होते हैं। उसको पूर्वोक्त चउभंगी के साथ गुणा करने से द्विकसंजोगी २४ विकल्प होते हैं। चार लेश्या के त्रिकसंयोगी ८ विकल्प होते हैं। उनको पूर्वोक्त चउभंगी के साथ गुणा करने से त्रिकसंयोगी के ३२ विकल्प होते हैं। तथा चतुष्कसंजोगी के १६ विकल्प होते हैं अतः सब मिलकर ८० विकल्प होते हैं।

(ख) (सालुए एगपत्तए) एवं उप्पलुद्देसग वत्तव्वया ? अपरिसेसा भाणियव्वा जाव अणंतखुत्तो।

—भग० श ११ । उ २ । प्र १ । पृ० ६२५

एक पत्री उत्पल की तरह एक पत्री शालुक को जानना।

(ग) (पलासे एगपत्तए) लेसासु ते णं भंते ! जीवा किं कण्हलेसा नीललेसा काऊलेस्सा ? गोयमा ! कण्हलेस्से वा नीललेस्से वा काऊलेस्से वा छव्वीसं भंगा, सेसं तं चेव। सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥

—भग० श ११ । उ ३ । प्र २ । पृ० ६२५

एकपत्री पलास वृक्ष में प्रथम तीन लेश्या होती है। एक और अनेक जीव की अपेक्षा से इसके २६ विकल्प जानना।

(घ) (कुंभिए एगपत्तए) एवं जहा पलासुद्देसए तहा भाणियव्वे।

—भग० श० ११ । उ ४ । प्र १ । पृ० ६२५

एकपत्री पलास की तरह एकपत्री कुंभिक में तीन लेश्या, २६ विकल्प होते हैं।

(ङ) (नालिए एगपत्तए) एवं कुंभिउद्देसग वत्तव्वया निरविसेसं भाणियव्वा।

—भग० श० ११ । उ ५ । प्र १ । पृ० ६२५

एक पत्री नालिक वनस्पति में एकपत्री कुंभिक की तरह तीन लेश्या छव्वीस विकल्प होते हैं।

(च) (पउमे) एवं उप्पलुद्देसग वत्तव्वया निरवसेसा भाणियव्वा।

—भग० श० ११ । उ ६ । प्र १ । पृ० ६२५

एकपत्री पद्म वनस्पतिकाय मे उत्पल की तरह चार लेश्या तथा अस्सी भांगे होते हैं।

(छ) (कन्निए) एवं चेव निरवसेसं भाणियव्वं।

—भग० श० ११ । उ ७ । प्र १ । पृ० ६२५

एक पत्री कर्णिका वनस्पतिकाय मे उत्पल की तरह चार लेश्या, अस्सी विकल्प होते हैं।

(ज) (नलिणे) एवं चेव निरविसेसं जाव अणंतखुत्तो।

—भग० श० ११ । उ ८ । प्र १ । पृ० ६२५

एक पत्री नलिन वनस्पतिकाय के उत्पल की तरह चार लेश्या तथा अस्सी विकल्प होते हैं।

१५.१० शालि, व्रीहि आदि वनस्पतिकाय मे

(क) इनके मूल मे

साली वीही गोधूम-जाव जवजवाणं ×× जीवा मूलत्ताए—ते ण भंते। जीवा किं कण्हलेस्सा नीललेस्सा काऊलेस्सा छव्वीसं भंगा।

—भग० श० २१। व १। उ १। प्र १। पृ० ८११

शालि, व्रीहि, गोधूम, यावत् जवजव आदि के मूल के जीवों मे तीन लेश्या और छव्वीस विकल्प होते हैं।

(ख) इनके कद मे

तीन लेश्या, २६ विकल्प होते हैं।

(ग) इनके स्कन्ध मे

तीन लेश्या, २६ विकल्प होते हैं।

(घ) इनकी त्वचा मे

तीन लेश्या, २६ विकल्प होते हैं।

(ङ) इनकी शाखा मे

तीन लेश्या, २६ विकल्प होते हैं।

(च) इनके प्रवाल मे

तीन लेश्या, २६ विकल्प होते हैं।

(छ) इनके पत्र मे

तीन लेश्या, २६ विकल्प होते हैं।

(ज) इनके पुष्प में

एव पुप्फे वि उद्देसओ, नवरं देवा उववज्जंति जहा उप्पलुद्देसे चत्तारि लेस्साओ, असीइ भंगा।

चार लेश्या-तथा अस्सी विकल्प होते हैं क्योकि इनमें देवता उत्पन्न होते हैं।

(झ) इनके फल में

जहा पुप्फे एवं फले वि उद्देसओ अपरिसेसो भाणियव्वो।

फल मे भी पुष्प की तरह चार लेश्या तथा अस्सी विकल्प होते है।

(ञ) इनके वीज मे

एवं वीए वि उद्देसओ।

वीज में भी पुष्प की तरह चार लेश्या तथा अस्सी विकल्प होते हैं।

—भग० श २१। व १। उ २ से १०। प्र १। पृ० ८११

'१५'११ कलई आदि वनस्पतिकाय में

कलाय-मसूर-तिल-मुग्ग-मास-निप्फायकुलत्थ-आलिसदंग-सडिण-पलिमंथगाणं × × एवं मूलादीया दसउद्देसगा भाणियव्वा जहेव सालीणं निरवसेसं तहेव।

—भग० श २१ | व ३ | उ १ से १० | प्र० १ | पृ० ८११

कलई, मसूर, तिल, मूंग, अरहड, वाल, कलत्थी, आलिसंदक, सटिन, पालिमथक, वनस्पति के मूल, कन्द, स्कन्ध, त्वचा, शाखा, प्रवाल, पत्र मे तीन लेश्या तथा २६ विकल्प तथा पुष्प-फल-बीज में चार लेश्या तथा अस्सी विकल्प होते हैं।

१५'१२ अलसी आदि वनस्पतिकाय में

अह भंते! अयसि कुसुंभ-कोद्दव कंगु-रालग-तुवरी-कोदूसा-सण-सरिसव-मूलगबीयाणं × × एवं एत्थ वि मूलादीया दस उद्देसगा जहेव सालीणं निरवसेसं तहेव भाणियव्वं।

—भग० श २१ | व ३ | उ १ से १० | प्र १ | पृ० ८११

अलसी, कुसम्भ, कोद्रव, काग, राल, कुवेर, कोदुसा, सण. सरसव, मूलकवीज वनस्पति के मूल, कन्द, स्कन्ध, त्वचा, शाखा, प्रवाल, पत्र मे तीन लेश्या तथा २६ विकल्प होते हैं तथा पुष्प-फल-बीज में चार लेश्या तथा अस्सी विकल्प होते हैं।

१५'१३ वास आदि वनस्पतिकाय में

अह भंते! वंस-वेणु-कणग कक्कावंस-चारुवंस-दण्डा-कुडा-विमाचण्डा-वेणुया-कल्लाणीणं × × × एवं एत्थवि मूलादीया दस उद्देसगा जहेव सालीणं, नवरं देवो सव्वत्थ वि न उववज्जइ, तिन्नि लेस्साओ, सव्वत्थ वि छव्वीसं भंगा।

—भग० श २१ | व ४ | पृ० ८१२

वांस, वेणु, कनक, ककविंश, चारूवंश, दण्डा, कुडा, विमा, चण्डा, वेणुका, कल्याणी, इनके मूल यावत् वीज में तीन लेश्या तथा छव्वीस विकल्प होते हैं।

१५'१४ इक्षु आदि वनस्पतिकाय मे

अह भंते! उक्खु-इक्खु वाडिया-वीरणा-इक्कड-भमास-सुंठि-सत्त-वेत्त-तिमिर-सयपोरग नलाणं × एवं जहेव वंसवग्गो तहेव, एत्थ वि मूलादीया दस उद्देसगा, नवरं खंधुद्देसे देवा उववज्जंति, चत्तारि लेस्साओ पन्नत्ता।

—भग० श २१ | व ५ | पृ० ८१२

इक्षु, इक्षुवाटिका, वीरण, इक्कडभमास-सूठ-शर-वेत्र-तिमिर-सयपोरग-नल—इनके स्कन्ध वाद मूलादि मे तीन लेश्या, २६ विकल्प तथा स्कन्ध मे चार लेश्या तथा अस्सी विकल्प होते हैं।

'१५.१५ सेडिय आदि तृण विशेष वनस्पतिकाय मे

अह भंते। सेडिय-भंतिय दब्भ-कोतिय-दब्भकुस-पव्वग पादेइल-अज्जुण-आसाढग रोहिय-समु-अवखीर-भुस एरंड-कुरुकुंद-करकर-सुंठ-विभंगु-महुरयण-थुरग-सिप्पिय-सुंकलितगाणं × × एवं एत्थ वि दस उद्देसगा निरवसेसं जहेव वंसवग्गो।

—भग० श २१। व ६। पृ० ८१२

सेडिय, भंतिय (भडिय), दर्भ, कोतिय, दर्भकुश, पर्वक, पोदेइल (पोइदइल), अर्जुन (अजन), आषाढक, रोहितक, समु, तवखीर, भुस, एरण्ड, कुरुकंद, करकर, सूंठ, विभग, मधुरयण (मधुवयण), थुरग, शिल्पिक, सुकलितृण—इनके मूल यावत् वीज मे तीन लेश्या तथा २६ विकल्प होते हे।

'१५.१६ अभ्ररूह आदि वनस्पतिकाय मे

अह भंते। अब्भरुह-वायण-हरितग-तंदुलेज्जग-तण-वत्थुल-पोरग मज्जारयाई-विल्लि-पालक्क दगपिप्पलिय-दव्वि सोत्थिय सायमंडुक्कि-मूलग-सरिसव-अंबिलसाग-जियंतगाणं × × एवं एत्थ वि दस उद्देसगा जहेव वंसवग्गो।

—भग० श २१। व ७। पृ० ८१२

अभ्ररूह, वायण, हरितक, तादलजो, तृण, वत्थुल, पोरक, मार्जारक, विल्लि, (चिल्लि), पालक्क, दगपिप्पली, दव्वि (दर्वी), स्वस्तिक, शाकमडुकी, मूलक, सरसव, अंबिलशाक, जियतग—इनके मूल यावत् वीज मे तीन लेश्या तथा २६ विकल्प होते हैं।

'१५.१७ तुलसी आदि वनस्पतिकाय मे—

अह भंते। तुलसी-कण्ह-दराल-फणेज्जा-अज्जा-चूयणा-चोरा-जीरा-दमणा-मुरुया-इंदीवर-सयपुप्फाणं × × एत्थ वि दस उद्देसगा निरवसेसं जहा वंसाणं।

—भग० श २१। व ८। पृ० ८१२

तुलसी, कृष्ण, दराल, फणेज्जा, अज्जा, चूतणा, चोरा, जीरा, दमणा, मरुया, इंदीवर, शतपुष्प—इनके मूल यावत् वीज में तीन लेश्या तथा २६ विकल्प होते हैं।

'१५.१८ ताल तमाल आदि वनस्पतिकाय मे

अह भंते। ताल-तमाल तक्कलि-तेतलि-साल-सरला-सारगल्लाणं जाव केयति-कदलि-कंदलि-चम्मरुक्ख-गुंतरुक्ख-हिंगुरुक्ख-लवंगरुक्ख-पूयफल-खज्जूरि-नालएरीणं—मूले कन्दे खंधे तयाए साले य एएसु पंचसु उद्देसगेसु देवो न उववज्जइ। तिन्निलेस्साओ × × × उवरिल्लेसु (पवाले-पत्ते-पुप्फे-फले-बीए) पंचसु उद्देसगेसु-देवो उववज्जइ। चत्तारिलेस्साओ।

—भग० श २२। व १। पृ० ८१२

ताड, तमाल-तक्कलि, तेतलि, साल, देवदार, सारग्गल यावत् केतकी, केला, कंदली, चर्मवृक्ष, गुदवृक्ष, हिंगुवृक्ष, लवंगवृक्ष, सुपारीवृक्ष, खजूर, नारिकेल—इनके मूल, कंद-स्कन्ध, त्वचा (छाल) शाखा में तीन लेश्या तथा २६ विकल्प होते हैं। अवशेष—प्रवाल, पत्र, पुष्प, फल, वीज में चार लेश्या तथा अस्सी विकल्प होते हैं।

'१५'१६ लीमडा, आम्र आदि वनस्पतिकाय मे

अह भंते ! निंबंबजंबुकोसंबतालअंकोल्लपीलुसेलुसल्लइमोयइमालुयवउलपलासकरंजपुत्तंजीवगरिट्ठवहेडगहरियगभल्लाय उंबरियखीरणिधायइपियालपूइयणिवायगसेण्हयपासियसीसवअयसिपुण्णागनागरुक्खसीवण्णअसोगाणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एवं मूलादीया दस उद्देसगा कायव्वा निरवसेसं जहा तालवग्गो ॥

—भग० श २२ । व २ । पृ० ८१२-१३

निम्व, आम्र, जाबू, कोशंव, ताल, अंकोल्ल, पीलु , सेलु, सल्लकी, मोचकी, मालुक, वकुल, पलाश, करंज, पुत्रजीवक, अरिष्ट, बहेड़ा, हरड, भिलामा, उ वेभरिका, क्षीरिणी, धावडी, प्रियाल, पूतिनिम्ब, सेण्हय, पासिय, सीसम, अतसी, नागकेसर, नागवृक्ष, श्रीपर्णी, अशोक इनके मूल, कद, स्कंध, त्वचा, शाखा मे तीन लेश्या तथा २६ विकल्प होते हैं। अवशेष—प्रवाल, पत्र, पुष्प, फल, वीज मे चार लेश्या तथा अस्सी विकल्प होते हैं।

१५'२० अगस्तिक आदि वनस्पतिकाय में

अह भंते ! अत्थियातिंदुयबोरकविट्ठअंबाडगमाउलिंगबिल्लआमलगफणसदाडिमआसत्थउंबरवडणग्गोहनंदिरुक्खपिप्पलिसतरपिलक्खुरुक्खकाउंबरियकुच्छुंभरियदेवदालितिलगलउयछत्तोहसिरीससत्तवण्णदहिवण्णलोद्धधवचंदण अज्जुणणीवकुडुगकलंवाण एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति ते णं भंते ! एवं एत्थ वि मूलादीया दस उद्देसगा तालवग्गसरिसा णेयव्वा जाव बीयं ॥

—भग० श २२ । व २ । पृ० ८१३

अगस्तिक, तिंदुक, वोर, कोठी, अम्वाडग, वीजोरु, विल्व, आमलक, पनस, दाडिम, अश्वत्थ (पीपल), उंवर, वड, न्यग्रोध, नन्दिवृक्ष, पीपर, सतर, प्लक्षवृक्ष, काकोदुम्बरी, कस्तुम्भरि देवदालि, तिलक, लकुच, छत्रोध, शिरिष, सप्तपर्ण, दधिपर्ण, लोध्रक, धव, चन्दन, अर्जुन, नीप, कुटज, कदम्व—इनके मूल, कन्द, स्कन्ध, त्वचा, शाखा मे तीन लेश्या तथा २६ विकल्प होते हैं। अवशेप—प्रवाल, पत्र, पुष्प, फल, वीज मे चार लेश्या तथा अस्सी विकल्प होते हैं।

'१५.२१ वेंगन आदि वनस्पतिकाय मे—

अह भंते ! वाइंगणिअल्लइपोंडइ एवं जहा पण्णवणाए गाहाणुसारेणं णेयव्वं जाव गंजपाडलावासिअंकोल्लाणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एव एत्थ वि मूलादीया दस उद्देसगा तालवग्गसरिसा णेयव्वा जाव वीयंति निरवसेसं जहा वंसवग्गो।

भग० श० २२ । व ४ । पृ० ८१२

वेंगन, अल्लइ, (सल्लई) पोडइ, [थुडकी, कच्छुरी, जासुमणा, रुपी आढकी, नीली, तुलसी, मातुलिंगी, कस्तुभरी, पिप्पलिका, अलसी, वल्ली, काकमाची, वुच्चु पटोल कदली, विउव्वा, वत्थुल, वदर, पत्तउर, मीयउर, जवमय, निगुडी, कस्तुवरि, अत्थई, तलउडा, शण, पाण, काममर्द, अग्घाडग, श्यामा, सिन्दुवार करमर्द, अद्दरूसग, करीर, ऐरावण, महित्थ, जाउलग, मालग, परिली, गजमारिणी, कुव्वकारिया, भडी, जीवन्ती, केतकी] गज, पाटला, वासी, अंकोल—इनके मूल यावत् वीज में तीन लेश्या तथा २६ विकल्प होते हैं।

'१५.२२ सिरियक आदि वनस्पतिकाय मे—

अह भन्ते ! सिरियकाणवनालियकोरंटगवंधुजीवगमणोज्जा जहा पण्णवणाए पढमपए गाहाणुसारेणं जाव नलणी य कुंदमहाजाईणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एवं एत्थ वि मूलादीया दस उद्देसगा निरवसेसं जहा सालीणं ॥

—भग० श २२ । व ५ । पृ० ८१३

सिरियक, नवमालिका, कोरटक, वन्धुजीवक, मणोज्जा, (पिइय, पाण, कणेर, कुज्जय, सिंदुवार, जाती, मोगरो, यूथिका, मल्लिका, वासन्ती, वत्थुल, कत्थुल, सेवाल, ग्रन्थी, मृग दन्तिका, चम्पक जाति,) नवणीइया, कुंद, महाजाति—इनके मूल यावत् पत्र मे तीन लेश्या तथा २६ विकल्प होते हैं। पुष्प, फल, वीज में चार लेश्या तथा अस्सी विकल्प होते हैं।

१५.२३ पूसफलिका आदि वनस्पतिकाय मे—

अह भंते ! पूसफलिकालिंगीतुंवीतउसीएलावालुकी एवं पयाणि छिंदियव्वाणि पण्णवणा गाहाणुसारेणं जहा तालवग्गे जाव दधिफोल्लइकाकलिसोक्कलिअक्कवोदीणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एवं मूलादीया दस उद्देसगा कायव्वा जहा तालवग्गो, णवरं फलउद्देसे ओगाहणाए जहण्णेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं धणुहपुहुत्तं, ठिई सव्वत्थ जहण्णेण अन्तोमुहुत्तं उक्कोसेण वासपुहुत्तं सेसं तं चेव।

—भग० श० २२ । व ६ । पृ० ८१३

पूसफलिका, कालिंगी, तुंवडी, त्रपुषी, एलवालुकी, (घोपातकी, पण्डोला, पचांगुलिका नीली, कण्डूइया, कट्टुइया, ककोडी, कारेली, सुभगा, कुयधाय, वागुलीया, पाववल्ली, देवदाली,

अप्फोया, अतिमुक्त, नागलता, कृष्णा, सूरवल्ली, संघट्टा, सुमणसा, जासुवण, कुविंदवल्ली, मुद्दिया, द्राक्षना वेला, अम्बावल्ली, क्षीरविदारिका, जयन्ती, गोपाली, पाणी, मासावल्ली, गुजावल्ली, वच्छाणी, शशविन्दु, गोत्तफुसिया, गिरिकर्णिका, मालुका, अञ्जनकी) दधिपुष्पिका, काकलि, सोकलि, अर्कबोदी—इनके मूल, कंद, स्कन्ध, त्वचा (छाल), शाखा मे तीन लेश्या तथा २६ विकल्प होते है। अवशेष—प्रवाल, पत्र, पुष्प, फल वीज में चार लेश्या तथा अस्सी विकल्प होते हैं।

अंक '१५.६ से '१५ २३ तक में वर्णित वनस्पतियाँ—प्रत्येक वनस्पतिकाय है।

१५ २४ आलुक आदि साधारण वनस्पतिकाय में—

रायगिहे जाव एवं वयासी—अह भंते ! आलुयमूलगसिंगवेरहालिद्दरुक्खकंडरियजारुच्छीरबिरालिकिट्ठिकुंदुकण्हकडडसुमहुपयलइमहुसिंगिणिरुहासप्पसुगंधाछिण्ण रुहाबीयरुहाणं एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एव मूलादीया दस उद्देसगा कायव्वा वंसवग्गसरिसा।

—भग० श २३ । व १ । पृ० ८१३

आलुक, मूला, आदु, हलदी, रुरु, कण्डरिक, जीरु, क्षीरविराली, किट्ठी, कुन्दु, कृष्ण, कडसु, मधु, पयलइ, मधुसिंगी, निरुहा, सर्पसुगन्धा, छिन्नरुहा, बीजरुहा—इनके मूल यावत् वीज मे तीन लेश्या तथा २६ विकल्प होते हैं।

'१५'२५ लोही आदि वनस्पतिकाय में—

अह भन्ते ! लोहीणीहूथीहूथिभगाअस्सकण्णीसीहकण्णीसीउंढीमुसंढीणं एएसि ण जे जीवा मूलत्ताए वक्कमंति एवं एत्थ वि दस उद्देसगा जहेव आलुयवग्गो।

—भग० श २३ । व २ । पृ० ८१४

लोही, नीहू, थीहू, थिभगा, अश्वकर्णी, सिंहकर्णी, सीउंढी, मुसुंढी—इनके मूल यावत् वीज में तीन लेश्या तथा २६ विकल्प होते हैं।

'१५ २६ आय आदि वनस्पतिकाय में—

अह भंते ! आयकायकुहुणकुंदुरुक्कउव्वेहलियसफासज्जाछत्तावंसाणियकुमाराण एएसि णं जे जीवा मूलत्ताए एवं एत्थ वि मूलादीया दस उद्देसगा निरवसेसं जहा आलुवग्गो।

—भग० श० २३ । व ३ । पृ० ८१४

आय, काय, कुहुणा, कुन्दुरुक्क, उव्वेहलिय, सफा, सेज्जा, छत्ता, वंशानिका, कुमारी—इनके मूल यावत् वीज में तीन लेश्या तथा छब्बीस विकल्प होते हैं।

१५.२७ पाठा आदि वनस्पतिकाय में—

अह भंते। पाढामियवालुंकिमहुररसारायवल्लिपउमामोंढरिदंतिचंडीणं एएसि णं जे जीवा मूल० एवं एत्थ वि मूलादीया दस उद्देसगा आलुयवग्गसरिसा।

—भग० श० २३। व ४। पृ० ८१४

पाठा, मृगवालुकी, मधुररसा, राजवल्ली, पद्मा, मोढरी, दंती, चण्डी—इनके मूल यावत् बीज मे तीन लेश्या तथा छब्बीस विकल्प होते हैं।

१५.२८ मापपर्णी आदि वनस्पतिकाय में—

अह भंते। मासपण्णीमुग्गपण्णीजीवगसरिसवकरेणुयकाओलिखीरकाकोलिभंगिणहिंकिमिरासिभद्दमुच्छणगलइपओयकिणापउलपाढेहरेणुयालोहीणं-एएसि णं जे जीवा मूल० एवं एत्थ वि दस उद्देसगा निरवसेसं आलुयवग्गसरिसा॥

—भग० श० २३। व ५ पृ० ८१४

मासपर्णी, मुद्गपर्णी, जीवक, सर्षप, करेणुक, काकोली, क्षीरकाकोली, भंगी, णही, कृमिराशि, भद्रमुस्ता, लांगली, पउय, किण्णा-पउलय, पाढ, हरेणुका, लोही— इनके मूल यावत् बीज में तीन लेश्या तथा छब्बीस विकल्प होते हैं।

एवं एत्थ पंचसु वि वग्गेसु पन्नासं उद्देसगा भाणियव्वा सव्वत्थ देवा न उववज्जंति तिन्नि लेस्साओ। सेवं भंते। २ त्ति

—भग० श० २३। पृ० ८१४

उपरोक्त (१५.२४ से १५.२८ तक) साधारण वनस्पतिकाय के जीवों में तीन लेश्या होती है, क्योंकि इनमें देवता उत्पन्न नही होते हैं।

१६ द्वीन्द्रिय में—

(क) तेउवाउवेइंदियतेइंदियचउरिंदियाण जहा नेरइयाण।

—पण्ण० प १७। उ २। प्र १३। पृ० ४३८

(ख) (वेइंदिया) तिन्निलेस्साओ।

—जीवा० प्रति० १। सू. २८। पृ० १११

(ग) तेउवाउवेइंदिय तेइंदियचउरिंदियाणं वि तओलेस्सा जहा नेरइयाण।

—ठाण० स्था ३। उ १। सू. १८१। पृ० २०५

(घ) तेउवाउवेइंदियतेइंदियचउरिंदिया ण तिन्निलेसाओ।

—ठाण० स्था २। उ १। सू. ५१। पृ० १८४

द्वीन्द्रिय में तीन लेश्या होती है।

१७ त्रीन्द्रिय मे—

देखो ऊपर द्वीन्द्रिय के पाठ (१६) तीन लेश्या होती है।

·१८ चतुरिंद्रिय में—

देखो ऊपर द्वीन्द्रिय के पाठ (·१६) तीन लेश्या होती है।

·१९ तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में—

(क) पंचेन्दियतिरिक्ख जोणियाणं पुच्छा। गोयमा! छल्लेसा—कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा।

—पण्ण० प १७। उ २। सू १३। पृ० ४३८

(ख) पंचिंदियतिरिक्ख जोणियाणं छ लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्ह-लेस्सा जाव सुक्कलेस्सा।

—ठाण० स्था ६। सू ५०४। पृ० २७२

(ग) पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं मणुस्साणं छल्लेस्साओ।

—ठाण० स्था २। उ १। सू० ५१। पृ० १८४

तिर्यञ्च पचेन्द्रिय के छ लेश्या होती है यथा—कृष्णलेश्या यावत् शुक्ललेश्या।

संक्लिष्टलेश्या तीन होती है—

(घ) पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं तओलेस्साओ संकिलिट्ठाओ पन्नत्ताओ, तजहा—कण्हलेस्सा, नीललेस्सा, काऊलेस्सा।

—ठाण० स्था ३। उ १। सू १८१। पृ० २०५

तिर्यंच पंचेन्द्रिय में तीन संक्लिष्ट लेश्या होती है—यथा—कृष्ण, नील, कापोत।

असंक्लिष्ट लेश्या तीन होती है—

(ङ) पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं तओलेस्साओ असंकिलिट्ठाओ पन्नत्ताओ, तंजहा—तेऊलेस्सा, पम्हलेस्सा, सुक्कलेस्सा।

ठाण० स्था ३। उ १। सू १८१। पृ० २०५

तिर्यंच पंचेन्द्रिय में तीन असंक्लिष्ट लेश्या होती है यथा—तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या।

·१९ १ तिर्यञ्च पचेन्द्रिय के विभिन्न भेदो में—

(क) (खहयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाण) एएसि ण भंते! जीवाणं कइ-लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा! छल्लेसाओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा।

(ख) (भुयपरिसप्पथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं) एवं जहा खहयराण तहेव।

(ग) (उरपरिसप्पथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं) जहेव भुयपरिसप्पाणं तहेव ।

(घ) (चउप्पयथलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाण) जहा पक्खीण ।

(ङ) (जलयरपचेंदियतिरिक्खजोणियाणं) जहा भुयपरिसप्पाण ।

जीवा० प्रति ३ । उ १ । सू ६७ । पृ० १४७-४८

जलचर, चतुष्पादस्थलचर, उरपरिसर्प स्थलचर, भुजपरिसर्प स्थलचर, खेचर तिर्यंच पचेन्द्रिय मे छः लेश्या होती है।

१६ २ समुर्च्छिम तिर्यंच पचेन्द्रिय में—

संमुच्छिमपंचेदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा । गोयमा ! जहा नेरइयाण ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १३ । पृ० ४३८

समुर्च्छिम तिर्य च पचेन्द्रिय मे तीन लेश्या होती है—यथा—कृष्ण-नील-कापोत।

१६ ३ जलचर समुर्च्छिम तिर्य च पचेन्द्रिय मे—

संमुच्छिमपंचेन्दियतिरिक्खजोणिया ×× जलयरा—लेस्साओ तिन्नि ।

—जीवा० प्रति १ । सू ३५ । पृ० ११३

जलचर समुर्च्छिम तिर्य च पचेन्द्रिय मे तीन लेश्या होती है।

१६ ४ स्थलचर समुर्च्छिम तिर्यञ्च पचेन्द्रिय मे—

चतुष्पादस्थलचर समुर्च्छिम मे—

(क) चउप्पय थलयर संमुच्छिमपंचेंदियतिरिक्खजोणिया××जहा जलयराण।

—जीवा० प्रति १ । सू ३६ । पृ० ११४

चतुष्पाद स्थलचर समुर्च्छिम तिर्यञ्च पचेन्द्रिय मे तीन लेश्या होती है।

उरपरिसर्प स्थलचर समुर्च्छिम मे—

(ख) उरयपरिसप्पसंमुच्छिमा ×× जहा जलयराण ।

—जीवा० प्रति १ । सू ३६ । पृ० ११४

उरपरिसर्प स्थलचर समुर्च्छिम तिर्यञ्च पचेन्द्रिय मे तीन लेश्या होती है।

भुजपरिसर्प स्थलचर समुर्च्छिम मे—

(ग) (भुयपरिसप्प संमुच्छिम थलयरा) जहा जलयराण ।

—जीवा० प्रति १ । सू ३६ । पृ० ११४

भुजपरिसर्प स्थलचर समुर्च्छिम तिर्यञ्च पचेन्द्रिय में तीन लेश्या होती है।

१६ ५ खेचर समुर्च्छिम तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय मे—

(संमुच्छिम पंचंदियतिरिक्खजोणिया ×× खहयरा) जहा जलयराणं ।

—जीवा० प्रति १ । सू ३६ । पृ० ११५

खेचर समुर्च्छिम तिर्यञ्च पचेन्द्रिय मे तीन लेश्या होती है।

'१९'६ गर्भज तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में—

गब्भवक्कंतिय पंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा। गोयमा! छल्लेस्सा—कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा।

—पण्ण० प १७। उ २। सू ११। पृ० ४३८

गर्भज तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में ६ लेश्या होती है।

'१९'७ गर्भज तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय (स्त्री) में—

तिरिक्खजोणिणीणं पुच्छा। गोयमा! छल्लेस्सा एयाओ चेव।

—पण्ण० प० १७। उ २। सू० १३। पृ० ४३८

तिर्यञ्च योनिक स्त्री (गर्भज तिर्यञ्च) में छः लेश्या होती है।

'१९'८ जलचर गर्भज तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय मे—

गब्भवक्कंतिय पंचेंदियतिरिक्खजोणिया × जलयरा × × छल्लेस्साओ।

—जीवा० प्रति १। सू ३८। पृ० ११५

गर्भज जलचर तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय मे छः लेश्या होती है।

'१९'९ स्थलचर गर्भज तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय मे—

चतुष्पाद स्थलचर गर्भज तिर्यञ्च पचेन्द्रिय में—

(क) गब्भवक्कंतियपंचेंदियतिरिक्खजोणिया × × थलयरा × चउप्पया × जहा जलयराणं।

—जीवा० प्रति १। सू ३८। पृ० ११६

चतुष्पाद स्थलचर गर्भज तिर्यञ्च पचेन्द्रिय मे ६ लेश्या होती है।

उरपरिसर्प स्थलचर गर्भज तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय मे—

(ख) गब्भवक्कन्तियपंचेंदियतिरिक्खजोणिया × × थलयरा × परिसप्पा × उरपरिसप्पा—जहा जलयराणं।

—जीवा० प्रति १। सू० ३८। पृ० ११६

उरपरिसर्प स्थलचर गर्भज तिर्यंच पंचेन्द्रिय मे छः लेश्या होती है।

भुजपरिसर्प स्थलचर गर्भज तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में—

(ग) गब्भवक्कंतियपंचेंदियतिरिक्खजोणिया × × थलयरा × परिसप्पा × भुयपरिसप्पा—जहा उरपरिसप्पा।

—जीवा० प्रति १। सू ३८। पृ० ११६

भुजपरिसर्प स्थलचर गर्भज तिर्यञ्च पचेन्द्रिय में छः लेश्या होती है।

१६.१० खेचर गर्भज तिर्यञ्च पचेन्द्रिय मे—

गब्भवक्कंतिय पंचेदियतिरिक्खजोणिया ×× खहयरा—जहा जलयराणं ।

—जीवा० प्रति० १ । सू.३८ । पृ० ११६

खेचर गर्भज तिर्यंच पचेन्द्रिय मे छः लेश्या होती है।

२० मनुष्य मे—

(क) मणूस्सा णं पुच्छा । गोयमा ! छल्लेस्सा एयाओ चेव ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १३ । पृ० ४३८

(ख) मणुस्साणं भंते ! कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! छ लेस्साओ पन्नत्ताओ ? तंजहा—कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा ।

– पण्ण० प १७ । उ ६ । सू १ । पृ० ४५१

(ग) पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं छ लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा, एवं मणुस्सदेवाण वि ।

—ठाण० स्था० ६ । सू.५०४ । पृ० २७२

(घ) पंचिदियतिरिक्खजोणियाणं मणुस्साण छल्लेस्साओ ।

—ठाण० स्था १ । सू.५१ । पृ० १८४

मनुष्य मे छ लेश्या होती है।

सक्लिष्ट लेश्या तीन होती हे।

(ङ) पंचिंदियतिरिक्खजोणियाण तओ लेस्साओ संकिलिट्ठाओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा नीललेस्सा काऊलेस्सा ×× एवं मणुस्साण वि ।

—ठाण० स्था ३ । उ १ । सू १८१ । पृ० २०५

मनुष्य मे तीन सक्लिष्ट लेश्या होती है, यथा—कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या ।

असक्लिष्ट लेश्या तीन होती है।

(च) पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं तओ लेस्साओ असंकिलिट्ठाओ पन्नत्ताओ, तंजहा—तेऊलेस्सा पम्हलेस्सा सुक्कलेस्सा × एवं मणुस्साण वि ।

—ठाण० स्था० ३ । उ १ । सू. १८१ । पृ० २०५

मनुष्य में तीन असक्लिष्ट लेश्या होती है यथा—तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या ।

२०.१ समुर्च्छिम मनुष्य में—

संमुच्छिममणुस्साणं पुच्छा । गोयमा ! जहा नेरइयाणं ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू.१३ । पृ० ४३८

समुर्च्छिम मनुष्य में प्रथम की तीन लेश्या होती हैं।

·२०·२ गर्भज मनुष्य में—

(क) गब्भवक्कंतियमणुस्साणं पुच्छा। गोयमा। छल्लेसाओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा।

—पण्ण० प १७। उ २। सू १३। पृ० ४३८

(ख) (गब्भवक्कंतियमणुस्सा) ते णं भंते! जीवा किं कण्हलेस्सा जाव अलेस्सा। गोयमा! सव्वेवि।

—जीवा० प्र १। सू ४१। पृ० ११६

गर्भज मनुष्य में ६ लेश्या होती है। अलेशी भी होता है।

·२०·३ गर्भज मनुष्यणी में—

(क) मणुस्सीण पुच्छा। गोयमा। एवं चेव।

—पण्ण० प० १७। उ २। सू १३। पृ० ४३८

(ख) मणुस्सीणं भंते! पुच्छा। गोयमा! छल्लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हा जाव सुक्का।

—पण्ण० प १७। उ ६। सू १। पृ० ४५१

मनुष्यणी (गर्भज) में छ लेश्या होती है।

·२०·४ कर्मभूमिज मनुष्य तथा मनुष्यणी में :—

कम्मभूमयमणुस्साणं भंते! कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा। छ लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हा जाव सुक्का। एवं कम्मभूमयमणुस्सीणवि।

—पण्ण० प १७। उ ६। सू १। पृ० ४५१

कर्मभूमिज मनुष्य में छः लेश्या होती है।

इसी प्रकार कर्मभूमिज मनुष्यणी (स्त्री) में भी छः लेश्या होती है।

·२०·५ कर्मभूमिज मनुष्य और मनुष्यणी के विभिन्न भेदों मे :—

(क) भरत—ऐरभरत क्षेत्र में (कर्मभूमिज) मनुष्य में

भरहेरवयमणुस्साणं भंते! कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा! छल्लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हा जाव सुक्का। एवं मणुस्सीणवि।

—पण्ण० प १७। उ ६। सू १। पृ० ४५१

भरत—ऐरभरत क्षेत्र के मनुष्य में छः लेश्या होती है। इसी प्रकार मनुष्यणी (स्त्री) मे भी छः लेश्या होती है।

(ख) महाविदेह क्षेत्र (कर्मभूमिज) के मनुष्य मे :—

पुव्वविदेहे अवरविदेहे कम्मभूमयमणुस्साणं कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ, गोयमा ! छल्लेस्साओ, तं जहा—कण्हा जाव सुक्का। एवं मणुस्सीणवि।

—पण्ण० प १७ | उ ६ | सू १ | पृ० ४५१

पूर्व और पश्चिम महाविदेह के कर्मभूमिज मनुष्य मे छः लेश्या होती है। इसी प्रकार मनुष्यणी (स्त्री) में भी छः लेश्या होती है।

२०६ अकर्मभूमिज मनुष्य तथा मनुष्यणी मे :—

अकम्मभूमयमणुस्साणं पुच्छा। गोयमा! चत्तारि लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हा जाव तेऊलेस्सा। एवं अकम्मभूमयमणुस्सीणवि।

—पण्ण० प १७ | उ ६ | प्र १ | पृ० ४५१

अकर्मभूमिज मनुष्य मे चार लेश्या होती है। इसी प्रकार मनुष्यणी (स्त्री) मे भी चार लेश्या होती है।

२०७ अकर्मभूमिज मनुष्य और मनुष्यणी के विभिन्न भेदो मे :—

(क) हेमवय—हैरण्यवय अकर्मभूमिज मनुष्य मे :—

एवं हेमवयएरन्नवयअकम्मभूमयमणुस्साणं मणुस्सीण य कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ ? गोयमा! चत्तारि, तंजहा—कण्हा जाव तेऊलेस्सा।

—पण्ण० प १७ | उ ६ | प्र १ | पृ० ४५१

हैमवय हैरण्यवय अकर्मभूमिज मनुष्य तथा मनुष्यणी में चार लेश्या होती है।

(ख) हरिवास—रम्यकवास अकर्मभूमिज मनुष्य मे :—

हरिवासरम्मयअकम्मभूमयमणुस्साणं मणुस्सीण य पुच्छा। गोयमा! चत्तारि, तंजहा—कण्हा जाव तेऊलेस्सा।

—पण्ण० प १७ | उ ६ | प्र १ | पृ० ४५१

हरिवास—रम्यकवास अकर्मभूमिज मनुष्य—मनुष्यणी में चार लेश्या होती है।

(ग) देवकुरु—उत्तरकुरु अकर्मभूमिज मनुष्य मे :—

देवकुरु उत्तरकुरु अकम्मभूमयमणुस्सा एवं चेव। एएसिं चेव मणुस्सीणं एवं चेव।

—पण्ण० प १७ | उ ६ | प्र १ | पृ० ४५१

देवकुरु—उत्तरकुरु अकर्मभूमिज मनुष्य में चार लेश्या होती है। इसी प्रकार मनुष्यणी मे भी चार लेश्या होती है।

(घ) धातकीखण्ड और पुष्कर द्वीप के अकर्मभूमिज मनुष्य मे—

धायइखंडपुरिमद्धे वि एवं चेव, पच्छिमद्धे वि। एवं पुक्खरदीवे वि भाणियव्वं।

— पण्ण० प १७ | उ ६ | प्र १ | पृ० ४५१

इसी प्रकार धातकीखण्ड के पूर्वार्द्ध तथा पश्चिमार्ध के हैमवय, हैरण्यवय, हरिवास, रम्यकवास, देवकुरु, उत्तरकुरु अकर्मभूमिज मनुष्य तथा मनुष्यणी मे चार लेश्या होती है।

इसी प्रकार पुष्करवर द्वीप के पूर्वार्द्ध तथा पश्चिमार्ध के हैमवय, हैरण्यवय, हरिवास, रम्यकवास, देवकुरु, अकर्मभूमिज मनुष्य तथा मनुष्यणी में चार लेश्या होती है।

'२०'८ अन्तर्द्वीपज मनुष्य और मनुष्यणी मे :—

एवं अंतरदीवगमणुस्साणं, मणुस्सीण वि।

—पण्ण० प १७ | उ ६ | प्र १ | पृ० ४५१

इसी प्रकार अंतर्द्वीपज मनुष्य तथा मनुष्यणी मे चार लेश्या होती है।

'२१ देव में :—

(क) देवाणं पुच्छा। गोयमा! छ एयाओ चेव।

—पण्ण० प १७ | उ २ | सू १३ | पृ० ४५८

(ख) पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं छल्लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा। एवं मणुस्सदेवाणवि।

—ठाण० स्था ६ | सू० ५०४ | पृ० २७२

(ग) (देवा) छल्लेस्साओ।

—जीवा० प्र १ | सू ४२ | पृ० ११७

देव में छः लेश्या होती है।

'२१'१ देवी में—

देवीणं पुच्छा। गोयमा! चत्तारि—कण्हलेस्सा जाव तेऊलेस्सा।

—पण्ण० प १७ | उ २ | सू १३ | पृ० ४३८

देवी में चार लेश्या होती है।

'२२ भवनपति देव में—

(क) भवणवासीणं भंते! देवाणं पुच्छा। गोयमा! एवं चेव

—पण्ण० प १७ | उ २ | सू १३ | पृ० ४३८

(ख) असुरकुमाराणं चत्तारि लेस्सा पन्नत्ता, तंजहा—कण्हलेस्सा-नीललेस्सा-काऊलेस्सा-तेऊलेस्सा, एवं जाव थणियकुमाराणं।

—ठाण० स्था ४ | उ ३ | सू ३९५ | पृ० २४०

(ग) भवणवइवाणमंतरपुढविआउवणस्सइकाइयाणं च चत्तारि लेस्साओ।

—ठाणा० स्था १ | सू ५१ | पृ० १८४

असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार—दसों भवनपति देवों में चार लेश्या होती है।

(घ) तीन सक्लिष्ट लेश्या होती है।

असुरकुमाराणं तओलेस्साओ संकिलिट्ठाओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा नीललेस्सा काऊलेस्सा। एवं जाव थणियकुमाराणं।

—ठाण० स्था ३ । उ १ । सू १८१ । पृ० २०५

असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार—दसो भवनपति देवो में तीन सक्लिष्ट लेश्या होती है।

२२ १ भवनपति देवी मे—

एवं भवणवासिणीणवि।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १३ । पृ० ४३८

भवनपति देवी में चार लेश्या होती है।

२२ २ भवनपति देव के विभिन्न भेदो में—

(क) **दीवकुमाराण भंते! कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा! चत्तारि लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा जाव तेऊलेस्सा।**

—भग० श १६ । उ ११ । पृ० ७५३

(ख) **उदहिकुमाराणं भंते! ×× एवं चेव।**

—भग० श १६ । उ १२ । पृ० ७५३

(ग) **एवं दिसाकुमारावि।**

—भग० श १६ । उ १३ । पृ० ७५३

(घ) **एवं थणियकुमारावि।**

—भग० श० १६ । उ १४ । पृ० ७५३

(ङ) **नागकुमाराणं भंते! ×× जहा सोलसमसए दीवकुमारुद्देसए तहेव निरवसेसं भाणियव्वं जाव इड्ढीति।**

—भग० श १७ । उ १३ । पृ० ७६१

(च) **सुवण्णकुमाराणं भंते! ×× एवं चेव।**

—भग० श० १७ । उ १४ । पृ० ७६१

(छ) **विज्जुकुमाराण भंते! ×× एवं चेव।**

—भग० श १७ । उ १५ । पृ० ७६१

(ज) **वाउकुमाराणं भंते! ×× एवं चेव।**

—भग० श १७ । उ १६ । पृ० ७६१

(झ) **अग्गिकुमाराणं भंते! ×× एव चेव।**

—भग० श १७ । उ १७ । पृ० ७६१

द्वीपकुमार में चार लेश्या होती है—यथा—कृष्ण, नील, कपोत, तेजो। इसी प्रकार नागकुमार यावत् स्तनितकुमार देव में चार लेश्या होती है।

(ञ) (चउसट्ठीए णं भंते। असुरकुमारावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि असुरकुमारावासंसि) एवं लेसासु वि, नवरं कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा। चत्तारि, तंजहा—कण्हा, नीला. काऊ, तेऊलेस्सा।

—भग० श १ | उ ५ | प्र० १६०-की टीका

असुरकुमारों सम्बन्धी अलग पाठ टीका ही में मिला है। असुरकुमार में चार लेश्या होती है।

'२३ वाणव्यंतर देव में—

(क) वाणमंतरदेवाणं पुच्छा। गोयमा। एवं चेव।

—पण्ण० प १७ | उ २ | सू १३ | पृ ४३८

(ख) वाणमंतराणं सव्वेसिं जहा असुरकुमाराणं।

—ठाणा० स्था ४ | उ ३ | सूत्र ३६५ | पृ० २४०

(ग) भवणवइवाणमंतरपुढविआउवणस्सइकाइयाणं चत्तारि लेस्साओ।

—ठाण० स्था १ | सू ५१ | पृ० १८४

(घ) वाणमंतराणं ×× एवं जहा सोलसमसए दीवकुमारुद्देसए।

—भग० श० १६ | उ १० | पृ० ७६०

वाणव्यंतर देव में चार लेश्या होती है।

तीन संक्लिष्ट लेश्या होती है।

(ङ) वाणमंतराणं जहा असुरकुमाराणं।

—ठाण० स्था ३ | उ १ | सू १८१ | पृ० २०१

वाणव्यंतर देव में तीन संक्लिष्ट लेश्या होती है।

'२३'१ वाणव्यंतर देवी में—

एवं वाणमंतरीण वि।

—पण्ण० प १७ | उ २ | सू १३ | पृ० ४३८

वाणव्यंतर देवी में चार लेश्या होती है।

'२४ ज्योतिषी देव में—

(क) जोइसियाणं पुच्छा। गोयमा। एगा तेऊलेस्सा।

—पण्ण० प १७ | उ २ | सू १३ | पृ० ४३८

(ख) जोइसियाणं एगा तेऊलेस्सा।

—ठाण० स्था १ | सू ५१ | १८४

ज्योतिषी देवों में एक तेजो लेश्या होती है।

२४ १ ज्योतिषी देवी मे—

एवं जोइसिणीण वि।

पण्ण० पद १७ । उ २ । सू १३ । पृ० ४३८

ज्योतिषी देवी मे एक तेजो लेश्या होती है।

२५ वैमानिक देव मे—

(क) वेमाणियाण पुच्छा। गोयमा। तिन्नि लेस्सा पन्नत्ता, तंजहा—तेऊलेस्सा पम्हलेस्सा सुक्कलेस्सा।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १३ । पृ० ४३८

(ख) वेमाणियाणं तओ लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—तेऊपम्हसुक्कलेस्सा।

—ठाण० स्था ३ । उ १ । सू १८१ । पृ० २०५

(ग) वेमाणियाण तिन्नि उवरिमलेस्साओ।

—ठाण० स्था १ । सू ५१ । पृ० १८४

वैमानिक देव मे तीन लेश्या होती है, यथा—तेजो पद्म शुक्ल लेश्या।

२५ १ वैमानिक देवी में—

वेमाणिणीण पुच्छा। गोयमा। एगा तेऊलेस्सा।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १३। पृ० ४३८

वैमानिक देवी में एक तेजो लेश्या होती है।

२५ २ वैमानिक देव के विभिन्न भेदो मे—

(क) सौधर्म—ईशान देव में

(१) सोहम्मीसाणदेवाणं कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा। एगा तेऊलेस्सा पन्नत्ता।

—जीवा० प्रति ३ । सू २१५ । पृ० २३६

(२) दोसु कप्पेसु देवा तेऊलेस्सा पन्नत्ता, तंजहा—सोहम्मे चेव ईसाणे चेव।

—ठाण० स्था २ । उ ४ । सू ११५ । पृ० २०२

सौधर्म तथा ईशान देवलोक के देव मे एक तेजो लेश्या होती है।

(ख) सनत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म मे—

सणकुमारमाहिंदेसु एगा पम्हलेस्सा एवं बम्हलोगेवि पम्हा।

—जीवा० प्रति ३। सू २१५ । पृ० २३६

सनत्कुमार—माहेन्द्र—ब्रह्म देव मे एक पद्म लेश्या होती है।

(ग) ब्रह्मलोक के बाद के देव में (लांतक से नव ग्रैवेयक देव में)।

सेसेसु एगा सुक्कलेस्सा।

—जीवा० प्रति ३ । सू २१५ । पृ० २३६

लांतक से नव ग्रैवेयक देव में एक शुक्ल लेश्या होती है।

(घ) अनुत्तरोपपातिक देव मे -

अणुत्तरोववाइयाणं एगा परमसुक्कलेस्सा।

—जीवा० प्रति ३ । सू २१५ । पृ० २३६

अनुत्तरोपपातिक देव में एक परम शुक्ल लेश्या होती है।

·२६ पंचेन्द्रिय में—

(पंचेंदिया) छल्लेस्साओ।

—भग० श २० । उ १ । प्र ४ । पृ० ७६०

(औधिक) पंचेन्द्रिय के छः लेश्या होती है।

समुच्चय गाथा

कण्हानीलाकाऊतेऊलेस्सा य भवणवंतरिया।
जोइससोहम्मीसाणे तेऊलेस्सा मुणेयव्वा॥
कप्पेसणकुमारे माहिंदे चेव बंभलोए य।
एएसु पम्हलेस्सा तेणं परं सुक्कलेस्साओ॥
पुढवीआउवणस्सइ बायर पत्तेय लेस्स चत्तारि।
गब्भयतिरयनरेसु छल्लेस्सा तिण्णि सेसाणं॥

—संग्रह गाथा

—भग० श १ । उ २ । प्र ६७ टीका से

भवनपति तथा वाणव्यंतर देव मे चार लेश्या, ज्योतिष-सौधर्म-ईशान देव मे तेजो लेश्या, सनत्कुमार-माहिन्द्र-ब्रह्म देव में पद्म लेश्या, लातक से अनुत्तरोपपातिक देव मे शुक्ललेश्या, पृथ्वीकाय-अप्काय, बादर प्रत्येक शरीरी वनस्पतिकाय मे चार लेश्या, गर्भज तिर्यंच-मनुष्य में छः लेश्या, शेष जीवो मे तीन लेश्या होती है।

·२७ गुणस्थान के अनुसार जीवों मे—

(क) प्रथम गुणस्थान के जीवों मे—छः लेश्या होती है।

(ख) द्वितीय गुणस्थान के जीवो में—छः लेश्या होती है।

(ग) तृतीय गुणस्थान के जीवों मे—छः लेश्या होती है।

(घ) चतुर्थ गुणस्थान के जीवो मे—छः लेश्या होती है।

(ङ) पचम गुणस्थान के जीवो मे—छः लेश्या होती है।

(च) षष्ठ गुणस्थान के जीवो मे—छः लेश्या होती है।

(छ) सप्तम गुणस्थान के जीवो मे—अन्तिम तीन लेश्या होती है।

(ज) अष्टम गुणस्थान के जीवो में—एक शुक्ल लेश्या होती है।

(झ) नवम गुणस्थान के जीवो में—एक शुक्ल लेश्या होती है।

(ञ) दशम गुणस्थान के जीवो मे—

(नियंठे ण भंते ! पुच्छा। गोयमा ! सलेस्से होज्जा नो अलेस्से होज्जा, जइ सलेस्से होज्जा से ण भंते ! कइसु लेस्सासु होज्जा ? गोयमा ! एगाए सुक्कलेस्साए होज्जा।) सुहुमसपराए जहा नियंठे।

—भग० श २५। उ ७। प्र ५१। पृ० ८९०

दशवें (सूक्ष्मसपराय) गुणस्थान जीव मे एक शुक्ललेश्या होती है।

ट—ग्यारहवे गुणस्थान के जीवो मे :—

नियठे णं भंते ! पुच्छा। गोयमा ! सलेस्से होज्जा, णो अलेस्से होज्जा, जइ सलेस्से होज्जा से णं भंते ! कइसु लेस्सासु होज्जा ? गोयमा ! एगाए सुक्कलेस्साए होज्जा।

—भग० श २५। उ ६। प्र ९१। पृ० ८८२

ग्यारहवें गुणस्थान के जीव मे एक शुक्ललेश्या होती है।

ठ—बारहवे गुणस्थान के जीवो मे :—

एक शुक्ललेश्या होती है।

ड—तेरहवें गुणस्थान के जीवो मे :—

सिणाए पुच्छा, गोयमा ! सलेस्से वा होज्जा, अलेस्से वा होज्जा, जइ सलेस्से होज्जा ? से णं भंते ! कइसु लेस्सासु होज्जा ? गोयमा ! एगाए परमसुक्कलेस्साए होज्जा।

—भग० श २५। उ ६। प्र ९२। पृ० ८८२

तेरहवें गुणस्थान मे एक परम शुक्ललेश्या होती है।

ढ—चौदहवें गुणस्थान के जीवो मे (देखो पाठ ऊपर) अलेशी होते है।

२८ सयतियो मे :—

क—पुलाक में :—

पुलाए णं भंते ! किं सलेस्से होज्जा, अलेस्से होज्जा ? गोयमा ! सलेस्से होज्जा, णो अलेस्से होज्जा, जइ सलेस्से होज्जा से णं भते ! कइसु लेस्सासु होज्जा ? गोयमा ! तिसु विसुद्धलेस्सासु होज्जा, तंजहा, तेऊलेस्साए पम्हलेस्साए सुक्कलेस्साए।

—भग० श २५। उ ६। प्र ८९। पृ० ८८२

पुलाक में तीन लेश्या होती है—यथा, तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या ।

ख—वकुस मे :—

एवं बउसस्सवि ।

—भग० श २५ । उ ६ । प्र ८६ । पृ० ८८२

वकुस में पुलाक की तरह तीन लेश्या होती है ।

ग—प्रतिसेवना कुशील में :—

एवं पडिसेवणाकुसीलेवि ।

—भग० श २५ । उ ६ । प्र ८६ । पृ० ८८२

प्रतिसेवना कुशील में भी पुलाक की तरह तीन लेश्या होती है ।

नोट :—तत्त्वार्थ के भाष्य मे वकुस और प्रतिसेवना कुशील मे ६ लेश्या वताई है ।

बकुश प्रतिसेवनाकुशीलयोः सर्वाः षडपि ।

—तत्त्व० अ ६ । सू ४६ । भाष्य । पृ० ४३५

घ—कषाय कुशील में :—

कसायकुसीले पुच्छा। गोयमा! सलेस्से होज्जा णो अलेस्से होज्जा, जइ सलेस्से होज्जा से णं भंते! कइसु लेस्सासु होज्जा ? गोयमा! छसु लेस्सासु होज्जा, तंजहा, कण्हलेस्साए जाव सुक्कलेस्साए ।

—भग० श २५ । उ ६ । प्र ६० । पृ० ८८२

कषाय कुशील में छः लेश्या होती है ।

नोट :—तत्त्वार्थ भाष्य मे कषाय कुशील में तीन शुभलेश्या बताई है ।

—तत्त्व० अ ६ । सूत्र ४६ । भाष्य । पृ० ४३५

ङ—निर्ग्रन्थ मे :—

नियंठे णं भंते! पुच्छा। गोयमा! सलेस्से होज्जा, णो अलेस्से होज्जा। जइ सलेस्से होज्जा, से ण भंते! कइसु लेस्सासु होज्जा ? गोयमा। एगाए सुक्कलेस्साए होज्जा ।

—भग० श २५ । उ ६ । प्र ६१ । पृ० ८८२

निर्ग्रंथ में एक लेश्या होती है ।

च—स्नातक मे :—

सिणाए पुच्छा। गोयमा! सलेस्से वा होज्जा, अलेस्से वा होज्जा, जइ सलेस्से होज्जा से णं भंते! कइसु लेस्सासु होज्जा ? गोयमा! एगाए परमसुक्कलेस्साए होज्जा ।

—भग० श २५ । उ ६ । प्र ६२ । ८८२

स्नातक सलेशी तथा अलेशी दोनो होते हैं जो सलेशी होते हैं उनमें एक परम शुक्ल-लेश्या होती है।

छ—सामायिक चारित्र वाले संयति मे :—

सामाइयसंजए णं भंते ! किं सलेस्से होज्जा, अलेस्से होज्जा ? गोयमा ! सलेस्से होज्जा जहा कसायकुसीले।

—भग० श २५ । उ ७ । प्र ४६ । पृ० ८६०

सामायिक चारित्र वाले संयति में छः लेश्या होती हैं।

ज—छेदोपस्थानीय चारित्र वाले संयति में :—

एवं छेदोवट्ठावणिएवि।

—भग० श २५ । उ ७ । प्र ४६ । पृ० ८६०

इसी प्रकार छेदोपस्थानीय चारित्र वाले संयति में छः लेश्या होती है।

झ—परिहारविशुद्धिक चारित्र वाले संयति मे :—

परिहारविशुद्धिए जहा पुलाए।

—भग० श २५ । उ ७ । प्र ४६ । पृ० ८६०

परिहारविशुद्धिक चारित्र वाले संयति मे तीन लेश्या होती है।

ञ—सूक्ष्म संपराय वाले संयति में :—

सुहुमसंपराए जहा नियंठे।

—भग० श २५ । उ ७ । प्र ४६ । पृ० ८६०

सूक्ष्म संपराय चारित्र वाले संयति में एक शुक्ललेश्या होती है।

ट—यथाख्यात चारित्र वाले संयति में :—

अहक्खाए जहा सिणाए नवरं जइ सलेस्से होज्जा, एगाए सुक्कलेस्साए होज्जा।

—भग० श २५। उ ७ । प्र ४६ । पृ० ८६०

यथाख्यात चारित्र वाले सलेशी तथा अलेशी (स्नातक की तरह) दोनो होते हैं जो सलेशी होते हैं उनके एक शुक्ललेश्या होती है।

२६—विशिष्ट जीवों में :—

१—अश्रुत्वा केवली होनेवाले जीव के अवधि ज्ञान के प्राप्त करने की अवस्था मे —

असोच्चा णं भंते × × (विब्भंगे अन्नाणे सम्मत्तपरिग्गहिए खिप्पामेव ओही परावत्तइ) से णं भंते ! कइसु लेस्सासु होज्जा ? गोयमा ! तिसु विशुद्धलेस्सासु होज्जा, तंजहा, तेऊलेस्साए, पम्हलेस्साए, सुक्कलेस्साए।

—भग० श ६ । उ ३१ । प्र १२ । पृ० ५७६

अश्रुत्वा केवली होने वाले जीव के विभंग अज्ञान की प्राप्ति के बाद मिथ्यात्व के पर्याय क्षीण होते-होते, सम्यग्दर्शन के पर्याय बढते-बढते विभंग अज्ञान सम्यक्त्वयुक्त होता है तथा अति शीघ्र अवधिज्ञान रूप परिवर्तित होता है। उस अवधिज्ञानी जीव के तीन विशुद्ध लेश्या होती है।

२—श्रुत्वा केवली होने वाले जीव के अवधिज्ञान के प्राप्त करने की अवस्था में :—

(सोच्चा णं भंते × × से णं ते णं ओहीनाणेणं समुप्पन्नेणं × ×) से णं भंते ! कइसु लेस्सासु होज्जा ? गोयमा ! छसु लेस्सासु होज्जा। तंजहा, कण्हलेस्साए जाव सुक्कलेस्साए।

—भग० श ६ । उ ३१ । प्र ३५ । पृ० ५८०

श्रुत्वा केवली होने वाले जीव के अवधिज्ञान की प्राप्ति होने के बाद उस अवधिज्ञानी जीव के छः लेश्या होती है।

टीकाकार ने इसका इस प्रकार स्पष्टीकरण किया है—

"यद्यपि भावलेश्यासु प्रशस्तास्वेव तिसृष्ववधिज्ञानं लभते तथाऽपि द्रव्यलेश्याः प्रतीत्य षट्स्वपि लेश्यासु लभते सम्यक्त्वश्रुतवत्"। यदाह—'सम्मत्तसुय सव्वासु लब्भइ' त्ति तल्लाभे चासौ षट्स्वपि भवतीत्युच्यते इति।

—भग० श ६ । उ ३१ पर टीका

यद्यपि अवधिज्ञान की प्राप्ति तीन शुभलेश्या मे होती है परन्तु द्रव्यलेश्या की अपेक्षा सम्यक्त्व श्रुत की तरह छओं लेश्या में अवधिज्ञान होता है। जैसा कहा है—सम्यक्त्वश्रुत छओं लेश्या में प्राप्त होता है।

·५४ विभिन्न जीव और लेश्या स्थिति

·५४·१ नारकी की लेश्या स्थिति :—

दस वाससहस्साइं, काऊए ठिई जहन्निया होइ।
तिण्णुदही पलियवमसंखभागं च उक्कोसा॥
तिण्णुदही पलियवमसंखभागो जहन्न नीलठिई।
दस उदही पलिओवममसंखभागं च उक्कोसा॥
दस उदही पलिओवममसंखभागं जहन्निया होइ।
तेत्तीससागराइ उक्कोसा होइ किण्हाए लेसाए॥
एसा नेरइयाणं, लेसाण ठिई उ वण्णिया होइ।

—उत्त० अ ३४ । गा ४१-४४ । पृ० १०४७

कापोतलेश्या की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष की, उत्कृष्ट स्थिति पल्योपम के असख्यातवें भाग सहित तीन सागरोपम की होती है।

नीललेश्या की स्थिति जघन्य पल्योपम के असख्यातवें भाग सहित तीन सागरोपम की, उत्कृष्ट स्थिति पल्योपम के असख्यातवें भाग सहित दस सागरोपम की होती है।

कृष्णलेश्या की स्थिति जघन्य पल्योपम के असख्यातवें भाग सहित दस सागरोपम की, उत्कृष्ट स्थिति तेंतीस सागरोपम की होती है।

(उपरोक्त) लेश्याओं की यह स्थिति नारकी की कही गई है।

५४ २ तिर्यंच की लेश्या स्थिति :—

अंतोमुहुत्तमद्धं लेसाण ठिई जहिं जहिं जा उ।
तिरियाण नराणं वा वज्जित्ता केवलं लेसं॥

—उत्त० अ ३४ | गा ४५ | पृ० १०४७

तिर्यंच की सर्व लेश्याओं की जघन्य उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की है।

५४ ३ मनुष्य की लेश्या की स्थिति :—

क—पाँच लेश्या की स्थिति—

अंतोमुहुत्तमद्धं लेसाण ठिई जहिं जहिं जा उ।
तिरियाण नराणं वा वज्जित्ता केवल लेसं॥

—उत्त० अ ३४ | गा ४५ | पृ० १०४७

मनुष्यों में शुक्ललेश्या को छोड़कर अवशिष्ट सब लेश्याओं की जघन्य एवं उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की है।

ख—शुक्ललेश्या की स्थिति :—

मुहुत्तद्धं तु जहन्ना, उक्कोसा होइ पुव्वकोडी ओ।
नवहिं वरिसेहिं ऊणा, नायव्वा सुक्कलेसाए॥

—उत्त० अ ३४ | गा ४६ | पृ० १०४७

शुक्ललेश्या की स्थिति—जघन्य अंतर्मुहूर्त्त, उत्कृष्ट नौ वर्ष न्यून एक करोड़ पूर्व की है।

•५४ ४ देव की लेश्या स्थिति :—

तेण परं वोच्छामि, लेसाण ठिई उ देवाणं॥
दस वाससहस्साइं, किण्हाए ठिई जहन्निया होइ।
पलियमसंखिज्जइमो, उक्कोसा होइ किण्हाए॥
जा किण्हाए ठिई खलु, उक्कोसा सा उ समयमब्भहिया।
जहन्नेणं नीलाए, पलियमसंखं च उक्कोसा॥

जा नीलाए ठिई खलु, उक्कोसा सा उ समयमब्भहिया।
जहन्नेणं काऊए, पलियमसंखं च उक्कोसा॥
तेण परं वोच्छामि, तेऊलेसा जहा सुरगणाणं।
भवणवइवाणमंतर जोइस वेमाणियाणं च॥
पलिओवमं जहन्ना, उक्कोसा सागरा उ दुण्हहिया।
पलियमसंखेज्जेणं, होइस भागेण तेऊए॥
दसवाससहस्साइं, तेऊए ठिई जहन्निया होइ।
दुन्नुदही पलिओवमअसंखभागं च उक्कोसा॥
जा तेऊए ठिई खलु, उक्कोसा सा उ समयमब्भहिया।
जहन्नेणं पम्हाए, दस मुहुत्ताऽहियाइं उक्कोसा॥
जा पम्हाए ठिई खलु, उक्कोसा सा उ समयमब्भहिया।
जहन्नेणं सुक्काए, तेत्तीसमुहुत्तमब्भहिया॥

—उत्त० अ ३४। गा ४७-५५। पृ० १०४८

देवों की लेश्या की स्थिति में कृष्णलेश्या की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग की होती है। नीललेश्या की जघन्य स्थिति तो कृष्ण लेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक है और उत्कृष्ट स्थिति पल्योपम के असंख्यातवें भाग की है।

कापोत लेश्या की जघन्य स्थिति, नीललेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग की होती है।

तेजोलेश्या की स्थिति जघन्य एक पल्योपम और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक दो सागरोपम की (वैमानिक की) होती है।

तेजोलेश्या की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष (भवनपति और व्यन्तर देवों की अपेक्षा) और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक दो सागरोपम की होती है।

जो उत्कृष्ट स्थिति तेजोलेश्या की है उससे एक समय अधिक पद्मलेश्या की जघन्य स्थिति होती है और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दस सागरोपम की है।

जो उत्कृष्ट स्थिति पद्मलेश्या की हे, उससे एक समय अधिक शुक्ललेश्या की जघन्य स्थिति होती है, और शुक्ललेश्या की स्थिति उत्कृष्ट तेंतीस सागरोपम की होती है।

५५ लेश्या और गर्भ उत्पत्ति

कण्हलेसे णं भंते ! मणुस्से कण्हलेसं गब्भं जणेज्जा ? हंता गोयमा ! जणेज्जा। कण्हलेसे मणुस्से नीललेसं गब्भं जणेज्जा ? हंता गोयमा ! जणेज्जा, जाव सुक्कलेसं गब्भं जणेज्जा। नीललेसे मणुस्से कण्हलेसं गब्भं जणेज्जा ? हंता गोयमा ! जणेज्जा, एवं नीललेसे मणुस्से जाव सुक्कलेसं गब्भं जणेज्जा, एवं काऊलेसेणं छप्पि आलावगा भाणियव्वा। तेऊलेसाण वि पम्हलेसाण वि सुक्कलेसाण वि, एवं छत्तीसं आलावगा भाणियव्वा। कण्हलेसा इत्थिया कण्हलेसं गब्भं जणेज्जा ? हंता गोयमा ! जणेज्जा, एवं एए वि छत्तीसं आलावगा भाणियव्वा। कण्हलेसे णं भंते ! मणुस्से कण्हलेसाए इत्थियाए कण्हलेसं गब्भं जणेज्जा ? हंता गोयमा ! जणेज्जा, एवं एए छत्तीसं आलावगा। कम्मभूमगकण्हलेसे णं भंते ! मणुस्से कण्हलेसाए इत्थियाए कण्हलेसं गब्भं जणेज्जा ? हंता गोयमा ! जणेज्जा, एवं एए छत्तीसं आलावगा। अकम्मभूमयकण्हलेसे मणुस्से अकम्मभूमयकण्हलेसाए इत्थियाए अकम्मभूमयकण्हलेसं गब्भं जणेज्जा ? हंता गोयमा ! जणेज्जा, नवरं चउसु लेसासु सोलस आलावगा, एवं अंतरदीवगाण वि। —भग० श १६। उ २। प्रज्ञापणा की भोलावणा पृ० ७८१

—पण्ण० प १७। उ ६। सू ६७। पृ० ४५२

१—कृष्णलेशी मनुष्य कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी गर्भ को उत्पन्न करता है।

२—नीललेशी मनुष्य कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी गर्भ को उत्पन्न करता है।

३—कापोतलेशी मनुष्य कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी गर्भ को उत्पन्न करता है।

४—तेजोलेशी मनुष्य कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी गर्भ को उत्पन्न करता है।

५ - पद्मलेशी मनुष्य कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी गर्भ को उत्पन्न करता है।

६—शुक्ललेशी मनुष्य कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी गर्भ को उत्पन्न करता है।

७ से १२ – इसी प्रकार कृष्णलेशी स्त्री यावत् शुक्ललेशी स्त्री कृष्णलेशी यावत् शुक्ल-लेशी गर्भ को उत्पन्न करती है।

१३ से १८—कृष्णलेशी मनुष्य यावत् शुक्ललेशी मनुष्य कृष्णलेशी स्त्री से यावत् शुक्ल-लेशी स्त्री से कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी गर्भ को उत्पन्न करता है।

१६ से २४—कर्मभूमिज कृष्णलेशी मनुष्य यावत् शुक्ललेशी मनुष्य कृष्णलेशी स्त्री यावत् शुक्ललेशी स्त्री से कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी गर्भ उत्पन्न करता है।

२५ से २८—अकर्मभूमिज कृष्णलेशी मनुष्य यावत् तेजोलेशी मनुष्य अकर्मभूमिज कृष्णलेशी स्त्री यावत् तेजोलेशी स्त्री कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी गर्भ उत्पन्न करता है।

२६ से ३२—इसी प्रकार अन्तर्द्वीपज मनुष्यों का जानना।

५६ जीव और लेश्या समपद

१—नारकी और लेश्या समपद :—

(क) नेरइया णं भंते ! सव्वे समलेस्सा ? गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे । से केणट्ठेणं जाव नो सव्वे समलेस्सा ? गोयमा ! नेरइया दुविहा पण्णत्ता । तंजहा पुव्वोववन्नगा य, पच्छोववन्नगा य, तत्थ णं जे ते पुव्वोयवन्नगा ते णं विसुद्धलेस्सतरागा, तत्थ णं जे ते पच्छोववन्नगा ते णं अविसुद्धलेस्सतरागा, से तेणट्ठेणं ।

—भग० श १ । उ २ । प्र ७५-७६ पृ० ३९१

(ख) एवं जहेव वन्नेणं भणिया तहेव लेस्सासु विशुद्धलेसतरागा अविशुद्धलेसतरागा य भाणियव्वा ।

—पण्ण० प १७ । उ १ । सू ३ । पृ० ४३५

नारकी दो तरह के होते है यथा—१ पूर्वोपपन्नक, २ पश्चादुपपन्नक । उनमें जो पूर्वोपपन्नक हैं वे विशुद्धलेश्या वाले होते हैं, तथा जो पश्चादुपपन्नक हैं वे अविशुद्धलेश्या वाले होते हैं । अतः नारकी समलेश्या वाले नही होते हैं।

२—पृथ्वीकाय यावत् वनस्पतिकाय, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पचेन्द्रिय तथा मनुष्य और लेश्या समपद :—

क—पुढविकाइयाणं आहारकम्मवन्न लेस्सा जहा नेरइयाणं ×× जहा पुढविकाइया तहा जाव चउरिंदिया । पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा नेरइया । ×× मणुस्सा जहा नेरइया ।

—भग० श १ । उ २ । प्र ८४, ८६, ९०, ९३ । पृ० ३९२

ख—पुढविकाइया आहारकम्मवन्नलेस्साहिं जहा नेरइया × एवं जाव चउरिंदिया । पंचेदिय तिरिक्खजोणिया जहा नेरइया । मणुस्सा सव्वे णो समाहारा । सेसं जहा नेरइयाणं ।

—पण्ण० प १७ । उ १ । सू ८-९ । पृ० ४३६

पृथ्वीकाय यावत् वनस्पतिकाय, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पचेन्द्रिय, मनुष्य-नारकी की तरह समलेश्या वाले नही होते हैं।

३—देव और लेश्या समपद :—

१—असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार देव में—

क—(असुर कुमारा) एवं वन्नलेस्साए पुच्छा । तत्थ णं जे ते पूव्वोववन्नगा तेणं अविशुद्धवन्नतरागा, तत्थ णं जे ते पच्छोववन्नगा ते ण विशुद्धवन्नतरागा, से

तेणट्ठेणं गोयमा। एवं वुच्चइ-असुरकुमाराण सव्वे णो समवन्ना। एवं लेस्साएवि ××× एवं जाव थणियकुमारा।

—पण्ण० प १७ | उ १ | सू ७ | पृ० ४३५

(ख) (असुरकुमारा) जहा नेरइया तहा भाणियव्वा, नवरं-कम्म वण्ण-लेस्साओ परिवण्णेयव्वाओ पुव्वोववण्णा महाकम्मतरा, अविसुद्धवण्णतरा, अविसुद्धलेसतरा, पच्छोववण्णा पसत्था, सेसं तहेव। एवं जाव—थणियकुमाराणं।

—भग० श १ | उ २ | प्र ८३ | पृ० ३९२

असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार दसों भवनवासी देव—समलेश्या वाले नहीं हैं क्योंकि उनमें जो पूर्वोपपन्नक हैं वे अविशुद्धलेश्यावाले होते हैं, तथा जो पश्चादुपपन्नक हैं वे विशुद्धलेश्या वाले होते हैं। अतः असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार—दसों भवनवासी देव समलेश्या वाले नही होते हैं।

२—वाणव्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक देव में :—

क—वाणमंतरजोइसवेमाणिया जहा असुरकुमारा।

—भग० श १ | उ २ | प्र ९६ | पृ० ३९३

ख—वाणमंतराणं जहा असुरकुमाराणं। एवं जोइसियवेमाणियाणवि।

पण्ण० प० १७ | ३१ | सू० १० | पृ० ४३७

वाणव्यंतर—ज्योतिष-वैमानिक देव भवनवासी देवो की तरह समलेश्यावाले नहीं होते हैं।

---

५७ लेश्या और जीव का उत्पत्ति-मरण

५७ १ लेश्या-परिणति तथा जीव का उत्पत्ति-मरण :—

लेसाहिं सव्वाहिं, पढमे समयम्मि परिणयाहिं तु।
न हु कस्सइ उववाओ, परेभवे अत्थि जीवस्स॥
लेस्साहिं सव्वाहिं चरिमे, समयम्मि परिणयाहिं तु।
न हु कस्सइ उववाओ, परेभवे होइ जीवस्स॥
अंतमुहुत्तम्मि गए, अंतमुहुत्तम्मि सेसए चेव।
लेसाहिं परिणयाहिं, जीवा गच्छन्ति परलोयं॥

—उत्त० अ ३४ | गा ५८-६० | पृ० १०४८

सभी लेश्याओं की प्रथम समय की परिणति में किसी भी जीव की परभव मे उत्पत्ति नही होती। सभी लेश्याओं की अन्तिम समय की परिणति मे किसी भी जीव की परभव

में उत्पत्ति नही होती। लेश्या की परिणति के वाद अन्तर्मुहूर्त वीतने पर और अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर जीव परलोक में जाता है।

'५७'२ मरण काल में लेश्या-ग्रहण और उत्पत्ति के समय की लेश्या

जीवे णं भंते ! जे भविए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! किं लेसेसु उववज्जइ ? गोयमा ! जल्लेसाइं दव्वाइं परिआइत्ता कालं करेइ, तल्लेसेसु उववज्जइ, त जहा—कण्हलेसेसु वा नीललेसेसु वा काऊलेसेसु वा एवं जस्स जा लेस्सा सा तस्स भाणियव्वा।

जाव-जीवे णं भंते ! जे भविए जोइसिएसु उववज्जित्तए पुच्छा ? गोयमा ! जल्लेसाइं दव्वाइं परिआइत्ता कालं करेइ तल्लेसेसु उववज्जइ, तंजहा—तेऊलेसेसु।

जीवे णं भंते ! जे भविए वेमाणिएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! किं लेसेसु उववज्जइ ? गोयमा ! जल्लेसाइं दव्वाइं परिआइत्ता कालं करेइ तल्लेसेसु उववज्जइ, तंजहा—तेऊलेसेसु वा, पम्हलेसेसु वा, सुक्कलेसेसु वा।

—भग० श ३। उ ४। प्र १७-१६। पृ० ४५६।

जो जीव नारकियों मे उत्पन्न होने योग्य है वह जीव जिस लेश्या के द्रव्यो को ग्रहण करके काल करता है उसी लेश्या मे जाकर उत्पन्न होता है, यथा—कृष्ण लेश्या में, नील लेश्या में अथवा कापोत लेश्या में। यावत् दण्डक के ज्योतिषी जीवो के पहले तक ऐसा ही कहना। अर्थात् जिसके जो लेश्या हो उसके वह लेश्या कहनी।

जो जीव ज्योतिषी देवो में उत्पन्न होने योग्य है वह जीव जिस लेश्या के द्रव्यों को ग्रहण करके काल करता है उसी लेश्या मे जाकर उत्पन्न होता है, अर्थात् तेजोलेश्या मे। जो जीव वैमाणिक देवों में उत्पन्न होने योग्य है वह जीव जिस लेश्या के द्रव्यों को ग्रहण करके काल करता है उसी लेश्या में जाकर उत्पन्न होता है, यथा तेजोलेश्या मे, पद्मलेश्या मे अथवा शुक्ललेश्या मे, अर्थात् जिसके जो लेश्या हो उसके वह लेश्या कहनी।

दण्डक के अन्तिम सूत्र को दिखाने के निमित्त पूर्वोक्त सूत्र (जाव—जीवे णं भंते इत्यादि) कहा गया है। टीकाकार का कथन है कि यदि ऐसा ही था तो फिर केवल वैमानिक का सूत्र ही कहना चाहिये था फिर ज्योतिषी तथा वैमानिक के सूत्र अलग-अलग क्यों कहे ? वैमानिक और ज्योतिषियों की लेश्या उत्तम होती है यह दिखाने के निमित्त ही दोनों के सूत्र अलग-अलग कहे गए हैं। अथवा ऐसा करने का कारण सूत्रो की विचित्र गति हो सकती है।

५७'३ मरण की लेश्या से अतिक्रान्त करने पर :

अणगारे णं भंते ! भावियप्पा चरमं देवावासं वीइक्कंते परमं देवावासं असंपत्ते एत्थ णं अंतरा कालं करेज्जा, तस्स णं भंते ! कहिं गइ कहिं उववाए पन्नत्ते ? गोयमा ! जे से तत्थ परियस्सओ (परिस्सऊ) तल्लेसा देवावासा, तहिं तस्स गइ, तहिं तस्स उववाए पन्नत्ते। से य तत्थ गए विराहेज्जा, कम्मलेस्सामेव पडिवडइ, से य तत्थ गए णो विराहेज्जा, तामेव लेस्सं उवज्जिता णं विहरइ। अणगारे णं भंते ! भावियप्पा चरम असुरकुमारा वासं वीइक्कंते परमं असुरकुमारा० एवं चेव, एवं जाव थणियकुमारावासं, जोइसियावासं एवं वेमाणिया वासं जाव विहरइ।

—भग० श १४ | उ १ | प्र २, ३ | पृ० ६६५

भवितात्मा अणगार (साधु) जिसने चरम देवावास का उल्लंघन किया हो तथा अभी तक परम अर्थात् अगले देवावास को प्राप्त नहीं हुआ हो वह साधु यदि इस वीच में मृत्यु को प्राप्त हो तो उसकी कहाँ गति होगी तथा वह कहाँ उत्पन्न होगा ?

टीकाकार प्रश्न को समझाते हुए कहते हैं—उत्तरोत्तर प्रशस्त अध्यवसाय स्थान को प्राप्त होनेवाला अणगार जो चरम—सौधर्मादि देवलोक के इस तरफ वर्तमान देवावास की स्थिति आदि बधने योग्य अध्यवसाय स्थान को पार कर गया हो तथा परम - ऊपर स्थित सनत्कुमारादि देवलोक की स्थिति आदि बंधने योग्य अध्यवसाय को प्राप्त नही हुआ हो उस अवसर मे यदि मरण को प्राप्त हो तो उसकी कहाँ गति होगी तथा वह कहाँ उत्पन्न होगा ?

चरम देवावास तथा परम देवावास के पास जहाँ उस लेश्या वाले देवावास हैं वहाँ उसकी गति होगी तथा वहाँ उसका उत्पाद होगा।

टीकाकार इस उत्तर को समझाते हुए कहते हैं—सौधर्मादि देवलोक तथा सनत्कुमारादि देवलोक के पास ईशानादि देवलोक में जिस लेश्या मे साधु मरण को प्राप्त होता है उस लेश्यावाले देवलोक मे उसकी गति तथा उसका उत्पाद होता है।

वह साधु वहाँ जाकर यदि अपनी पूर्व की लेश्या की विराधना करता है तो वह कर्मलेश्या से पतित होता है (टीकाकार यहाँ कर्मलेश्या से भावलेश्या का अर्थ ग्रहण करते हैं) तथा वहाँ जाकर यदि वह लेश्या की विराधना नही करता है तो वह उसी लेश्या का आश्रय करके विहरता है।

'५८ किसी एक योनि से स्व/पर योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में कितनी लेश्या* :—

'५८'१ रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

'५८'१'१ पर्याप्त असंज्ञी पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि से रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१ : पर्याप्त असज्ञी पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि से रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पज्जत्ता (त्त) असन्नि पंचिंदियतिरिक्ख जोणिए णं भंते ! जे भविए रयणप्पभाए पुढवीए नेरइएसु उववज्जित्तए × × × तेसि णं भंते ! जीवाणं कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! तिन्नि लेस्साओ पन्नताओ । तं जहा कण्हलेस्सा, नीललेस्सा, काऊलेस्सा**) उनमें कृष्ण, नील तथा कापोत तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १ । प्र ७, १२ । पृ० ८१५

---

* इस विवेचन में निम्नलिखित नौ गमको की अपेक्षा से वर्णन किया गया है :—

१—उत्पन्न होने योग्य जीव की औघिक स्थिति तथा उत्पन्न होने योग्य जीवस्थान की औघिक स्थिति,

२—उत्पन्न होने योग्य जीव की औघिक स्थिति तथा उत्पन्न होने योग्य जीवस्थान की जघन्यकाल स्थिति,

३—उत्पन्न होने योग्य जीव की औघिक स्थिति तथा उत्पन्न होने योग्य जीवस्थान की उत्कृष्टकालस्थिति,

४—उत्पन्न होने योग्य जीव की जघन्यकालस्थिति तथा उत्पन्न होने योग्य जीवस्थान की औघिक स्थिति,

५—उत्पन्न होने योग्य जीव की जघन्यकालस्थिति तथा उत्पन्न होने योग्य जीवस्थान की जघन्यकालस्थिति,

६—उत्पन्न होने योग्य जीव की जघन्यस्थिति तथा उत्पन्न होने योग्य जीवस्थान की उत्कृष्टकालस्थिति,

७—उत्पन्न होने योग्य जीव की उत्कृष्टकालस्थिति तथा उत्पन्न होने योग्य जीवनस्थान की औघिक स्थिति,

८—उत्पन्न होने योग्य जीव की उत्कृष्टकालस्थिति तथा उत्पन्न होने योग्य जीवस्थान की जघन्यकालस्थिति,

९—उत्पन्न होने योग्य जीव की उत्कृष्टकालस्थिति तथा उत्पन्न होने योग्य जीवस्थान की उत्कृष्टकालस्थिति।

गमक—२ : पर्याप्त असंज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से जघन्यस्थितिवाले रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पज्जत्ता असन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते। जे भविए जहन्नकालट्ठिईएसु रयणप्पभापुढविनेरइएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते। × × × एवं सच्चेव वत्तव्वया निरवसेसा भाणियव्वा**) उनमे कृष्ण, नील तथा कापोत तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र २८, २९। पृ० ८१६

गमक ३— पर्याप्त असज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से उत्कृष्टस्थितिवाले रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पज्जत्ताअसन्निपंचिंदियतिरिक्ख जोणिए णं भंते। जे भविए उक्कोसकालट्ठिईएसु रयणप्पभापुढविनेरइएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते। जीवा० अवसेसं तं चेव, जाव—अनुबंधो**) उनमे कृष्ण, नील तथा कापोत तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र ३१, ३२। पृ० ८१६

गमक—४ : जघन्यस्थितिवाले पर्याप्त असज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**जहन्नकालट्ठिईयपज्जत्ताअसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते। जे भविए रयणप्पभापुढविनेरइएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते। × × × सेसं तं चेव**) उनमें कृष्ण, नील तथा कापोत तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र ३४, ३५। पृ० ८१७

गमक—५ : जघन्यस्थितिवाले पर्याप्त असंज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से जघन्यस्थितिवाले रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**जहन्नकालट्ठिईयपज्जत्त असन्नि पंचिंदियतिरिक्ख जोणिए णं भंते। जे भविए जहन्नकालट्ठिईएसु रयणप्पभापुढविनेरइएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते। जीवा० सेसं तं चेव**) उनमे कृष्ण, नील तथा कापोत तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र ३७, ३८। पृ० ८१७

गमक—६ : जघन्यस्थितिवाले पर्याप्त असज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से उत्कृष्टस्थितिवाले रत्नप्रभा पृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**जहन्नकालट्ठिईयपज्जत्ता० जाव—तिरिक्खजोणिए णं भंते। जे भविए उक्कोसकालट्ठिईएसु रयणप्पभापुढविनेरइएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते। जीवा० अवसेसं तं चेव**) उनमे कृष्ण, नील तथा कापोत तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र ४०, ४१। पृ० ८१७

गमक—७ : उत्कृष्टस्थितिवाले पर्याप्त असंज्ञी पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि से रत्नप्रभा-पृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**उक्कोसकालट्ठिईयपज्जत्तअसन्नि-पंचिंदियतिरिक्ख जोणिए णं भंते! जे भविए रयणप्पभापुढविनेरइएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते! जीवा० × × × अवसेसं जहेव ओहियगमएणं तहेव अणुगंतव्वं**) उनमें कृष्ण, नील तथा कापोत तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १ । प्र ४३, ४४ । पृ० ८१७-१८

गमक—८ : उत्कृष्टस्थितिवाले पर्याप्त असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से जघन्यस्थिति-वाले रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**उक्कोसकालट्ठिईयपज्जत्त० तिरिक्ख जोणिए णं भंते! जे भविए जहन्नकालट्ठिईएसु रयण० जाव—उववज्जित्तए × × × ते णं भंते! जीवा० × × × सेसं तं चेव जहा सत्तमगमए**) उनमें कृष्ण, नील तथा कापोत तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १ । प्र ४६, ४७ । पृ० ८१८

गमक—९ : उत्कृष्टस्थितिवाले पर्याप्त असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से उत्कृष्टस्थिति-वाले रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**उक्कोसकालट्ठिईयपज्जत्त—जाव—तिरिक्खजोणिए णं भंते! जे भविए उक्कोसकालट्ठिईएसु रयण० जाव—उववज्जित्तए × × × ते णं भंते! जीवा० × × × सेसं जहा सत्तमगमए**) उनमें कृष्ण, नील तथा कापोत तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १ । प्र ४९, ५० । पृ० ८१८

५८ १ २ पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

गमक—१ : पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से रत्नप्रभा-पृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निपंचिं-दियतिरिक्ख जोणिए णं भंते! जे भविए रयणप्पभपुढविनेरइएसु उववज्जित्तए × × × तेसि णं भंते! जीवाणं कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा! छल्लेस्साओ पन्नत्ताओ! तं जहा—कण्हलेस्सा, जाव—सुक्कलेस्सा**) उनमें कृष्ण यावत् शुक्ल छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १ । प्र ५५, ५६ । पृ० ८१९

गमक—२ : पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से जघन्य-कालस्थितिवाले रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पज्जत्तसंखेज्ज०**

जाव—जे भविए जहन्नकाल० ××× ते णं भंते। जीवा एवं सो चेव पढमो गमओ निरवसेसो भाणियव्वो) उनमे कृष्ण यावत् शुक्ल छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र ६१, ६२। पृ० ८१६

गमक—३ : पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से उत्कृष्ट-स्थितिवाले रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (सो चेव उक्कोस-कालट्ठिईएसु उववन्नो ××× अवसेसो परिमाणादीओ भवाएसपज्जवसाणो सो चेव पढमगमओ णेयव्वो) उनमें कृष्ण यावत् शुक्ल छ लेश्या होती है।

—भग० श २४। उ १। प्र ६३। पृ० ८१६

गमक—४ : जघन्यस्थितिवाले पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (जहन्नकालट्ठिईय-पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते। जे भविए रयणप्पभपुढवि० जाव—उववज्जित्तए ××× ते णं भंते ××× लेस्साओ तिन्नि आदिल्लाओ) उनमे प्रथम की तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र ६४, ६५। पृ० ८१६-२०

गमक—५ : जघन्यस्थितिवाले पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से जघन्यस्थितिवाले रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो ××× ते णं भंते। एवं सो चेव चउत्थो गमओ निरवसेसो भाणियव्वो) उनमे प्रथम की तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र ६६। पृ० ८२०

गमक—६ : जघन्यस्थितिवाले पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से उत्कृष्ट स्थितिवाले रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो ××× ते णं भंते। एवं सो चेव चउत्थो गमओ निरवसेसो भाणियव्वो) उनमें प्रथम की तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र ६७। पृ० ८२०

गमक—७ : उत्कृष्टस्थितिवाले पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (उक्कोसकालट्ठिईय-पज्जत्तसंखेज्जवासाउय० जाव—तिरिक्खजोणिए णं भंते। जे भविए रयणप्पभा-पुढविनेरइएसु उववज्जित्तए ××× ते णं भंते। जीवा० अवसेसो परिमाणादीओ भवाएसपज्जवसाणो एएसिं चेव पढमगमओ णेयव्वो) उनमें कृष्ण यावत शुक्ल छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र ६८, ६९। पृ० ८२०

गमक—८ : उत्कृष्टस्थितिवाले पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेंद्रिय तिर्यञ्च योनि से जघन्यस्थितिवाले रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं। (**सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो × × × ते णं भंते! जीवा० सो चेव सत्तमो गमओ निरवसेसो भाणियव्वो**) उनमें कृष्ण यावत् शुक्ल छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र ७०, ७१। पृ० ८२०

गमक—९ : उत्कृष्टस्थितिवाले पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि से उत्कृष्टस्थितिवाले रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**उक्कोसकालट्ठिईयपज्जत्त० जाव—तिरिक्खजोणिए णं भंते! जे भविए उक्कोसकालट्ठिईय० जाव—उववज्जित्तए × × × ते णं भंते! जीवा० सो चेव सत्तमगमओ निरवसेसो भाणियव्वो**) उनमें कृष्ण यावत् शुक्ल छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र ७२, ७३। पृ० ८२०-२१

५८ १ ३ पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य से रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-९ : पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य से रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पज्जत्त संखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते। जे भविए रयणप्पभाए पुढवीए नेरइएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते! एवं सेसं जहा सन्निपंचिंदयतिरिक्खजोणियाणं—जाव—'भवाएसो' त्ति। ग० १। सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो—एस (सा) चेव वत्तव्वया। ग० २। सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो—एस चेव वत्तव्वया। ग० ३। सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ जाओ—एस चेव वत्तव्वया। ग० ४। सो चेव जहन्नकालट्ठिइएसु उववन्नो—एस चेव वत्तव्या चउत्थगमग सरिसा णेयव्वा। ग० ५। सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उवन्नो—एस चेव गमगो। ग० ६। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिईओ जाओ, सो चेव पढमगमओ णेयव्वो। ग० ७। सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो, सच्चेव सत्तमगमगवत्तव्वया। ग० ८। सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो, सच्चेव सत्तमगमगवत्तव्वया। ग० ९**) उनमें नव ही गमकों में छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र ९१-१००। पृ० ८२३-२४

'५८ २ शर्कराप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

५८ २ १ पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से शर्कराप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से शर्कराप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पज्जत्त संखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्ख जोणिए णं भंते ! जे भविए सक्करप्पभाए पुढवीए नेरइएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते ! जीवा × × × एवं जहेव रयणप्पभाए उववज्जंत-(गम) गस्स लद्धी सच्चेव निरवसेसा भाणियव्वा × × × एवं रयणप्पभपुढविगमग सरिसा णव वि गमगा भाणियव्वा ×××**) उनमे प्रथम के तीन गमकों मे छ लेश्या, मध्यम के तीन गमको मे आदि की तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमको मे छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १ । प्र० ७४ ७५ । पृ० ८२१

५८ २ २ पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य से शर्कराप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य से शर्कराप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पज्जत्त संखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए सक्करप्पभाए पुढवीए नेरइएसु जाव—उववज्जित्तए × × × ते णं भंते ! सो चेव रयणप्पभपुढविगमओ णेयव्वो × × × एवं एसा ओहिएसु तिसु वि गमएसु मणूसस्स लद्धी × × × ! सो चेव अप्पणाजहन्नकालट्ठिईओ जाओ तस्स वि तिसु वि गमएसु एस चेव लद्धी × × ×। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिईओ जाओ तस्स वि तिसु वि गमएसु × × × सेसं जहा पढमगमए**) उनमे नव ही गमको मे छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १ । प्र १०१-१०४ । पृ० ८२४

५८ ३ वालुकाप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

५८ ३ १ पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से वालुकाप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से वालुकाप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव ह (**पज्जत्तसंखेज्जवासाउय-सन्निपंचिंदियतिरिक्ख जोणिए णं भंते ! जे भविए सक्करप्पभाए पुढवीए नेरइएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते ! जीवा० × × × एवं जहेव रयणप्पभाए उववज्जंतग (मग) स्स लद्धी सच्चेव निरवसेसा भाणियव्वा—जाव 'भवाएसो' त्ति ।**

× × × एवं रयणप्पभपुढविगमसरिसा णव वि गमगा भाणियव्वा × × × एवं जाव—'छट्ठपुढवि' त्ति०) उनमे प्रथम के तीन गमकों मे छ लेश्या, मध्यम के तीन गमकों मे आदि की तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमकों मे छ लेश्या होती हैं। ('५८ १'२)।

—भग० श २४। उ १। प्र ७४, ७५। पृ० ८२१

५८'३'२ पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य से वालुकाप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य से वालुकाप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते! जे भविए सक्करप्पभाए पुढवीए नेरइएसु जाव०—उववज्जित्तए × × × ते णं भंते!० सो चेव रयणप्पभपुढविगमओ णेयव्वो × × × सेसं तं चेव, जाव—'भवाएसो' त्ति। × × × एवं एसा ओहिएसु तिसु गमएसु मणूसस्स लद्धी। × × ×।—ग० १-३। सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ जाओ, तस्स वि तिसु वि गमएसु एस चेव लद्धी। × × × सेसं जहा ओहियाणं। × × ×।—ग० ४-६। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिईओ जाओ। तस्स वि तिसु वि गमएसु × × × सेसं जहा पढमगमए। × × × ग० ७-९। एव जाव—छट्ठपुढवी) उनमे नव ही गमकों में छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र १०१-१०४। पृ० ८२४

५८'४ पंकप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

'५८'४'१ पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से पंकप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से पंकप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८'३'१) उनमे प्रथम के तीन गमकों मे छ लेश्या, मध्यम के तीन गमकों मे आदि की तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमकों में छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र ७४-७५। पृ० ८२१

'५८'४'२ पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य से पंकप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-९ : पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य से पंकप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८'३'२) उनमें नौ गमकों ही मे छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १। प्र १०१-१०४। पृ० ८२४

५८५ धूमप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

५८५.१ पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से धूमप्रभा पृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यच योनि से धूमप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८.३.१) उनमे प्रथम के तीन गमकों मे छ लेश्या, मध्यम के तीन गमकों मे आदि की तीन लेश्या तथा शेप के तीन गमको मे छः लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १ । प्र ७४, ७५ । पृ० ८२१

५८५.२ पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य से धूमप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य से धूमप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८.३.२) उनमें नव गमको ही मे छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १ । प्र १०१-१०४ । पृ० ८२४

५८६ तमप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

५८६.१ पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से तमप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीवो मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से तमप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८.३.१) उनमे प्रथम के तीन गमको मे छ लेश्या, मध्यम के तीन गमकों में आदि की तीन लेश्या तथा शेप के तीन गमकों में छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १ । प्र ७४, ७५ । पृ० ८२१

५८६.२ पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य से तमप्रभापृथ्वी नारकी में उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ :—पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य से तमप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८.३.२) उनमे नौ गमकों ही म छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १ । प्र १०१-१०४ । पृ० ८२४

५८७ तमतमाप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

५८७.१ पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से तमतमाप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पज्जत्तसंखेज्जवासाउय० जाव—तिरिक्ख-**

जोणिए णं भंते ! जे भविए अहेसत्तमाए पुढवीए नेरइएसु उववज्जित्तए ××× ते णं भंते ! जीवा० एवं जहेव रयणप्पभाए णव गमगा लद्धी वि सच्चेव ××× सेसं तं चेव, जाव—'अनुबंधो'त्ति। ×××।- प्र ७६,७७। ग० १। सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो० सच्चेव वत्तव्वया जाव—'भवाएसो' त्ति ××× प्र ७८। ग० २। सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो० सच्चेव लद्धी जाव -'अणुबंधो'त्ति ×××।—प्र० ७६। ग० ३। सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ जाओ० सच्चेव रयणप्पभपुढविजहन्नकालट्ठिईयवत्तव्वया भाणियव्वा, जाव 'भवाएसो'त्ति ×××—प्र ८०। ग० ४। सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो० एवं सो चेव चउत्थो गमओ निरवसेसो भाणियव्वो, जाव—'कालाएसो'त्ति—प्र ८१। ग० ५। सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो० सच्चेव लद्धी जाव -'अणुबंधो त्ति ×××—प्र ८२। ग० ६। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिईओ जहन्नेणं ××× ते णं भंते !० अवसेसा सच्चेव सत्तमपुढविपढमगमवत्तव्वया भाणियव्वा, जाव—'भवाएसो'त्ति ××× सेसं तं चेव—प्र ८४। ग० ७। सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो० सच्चेव लद्धी ××× सत्तमगमगसरिसो—प्र ८५। ग० ८। सो चेव उक्कोसकालट्ठिएसु उववन्नो० एस चेव लद्धी जाव—'अणुबधो'त्ति—प्र ८६। ग० ६) इनमें प्रथम के तीन गमकों में छ लेश्या, मध्यम के तीन गमकों मे आदि की तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमकों में छ लेश्या होती हैं ('५८'१'२)।

—भग० श २४। उ १। प्र ७६ ८६। पृ० ८२१-२२

'५८ ७'२ पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य से तमतमाप्रभापृथ्वी के नारकी मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य से तमतमाप्रभापृथ्वी के नारकी में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए अहेसत्तमाए पुढवि (वीए) नेरइएसु उववज्जित्तए ××× ते णं भंते ! जीवा० ××× अवसेसो सो चेव सक्करप्पभापुढविगमओ णेयव्वो ××× सेसं तं चेव जाव—'अणुबंधो'त्ति ×××। ग० १। सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो—एस चेव वत्तव्वया ×××। ग० २। सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो—एस चेव वत्तव्वया ×××। ग० ३। सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ जाओ, तस्स वि तिसु वि गमएसु एस चेव वत्तव्वया ×××। ग० ४-६। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिईओ जाओ, तस्स वि तिसु वि गमएसु एस चेव वत्तव्वया ×××। ग० ७-६) इनमें नौ गमकों ही में छ लेश्या होती हैं (५८ २ २)।

—भग० श २४। उ १। प्र १०५-११०। पृ० ८२४-२५

५८८ असुरकुमार देवों में उत्पन्न होने योग्य अन्य गति के जीवों में :—

५८८.१ पर्याप्त असंज्ञी पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि से असुरकुमार देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : पर्याप्त असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से असुरकुमार देवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (पज्जत्तअसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए असुरकुमारेसु उववज्जित्तए ××× ते णं भंते ! जीवा० ? एवं रयणप्पभागमगसरिसा णव वि गमा भाणियव्वा ××× अवसेसं तं चेव) उनमें नव गमकों ही में आदि की तीन लेश्या होती हैं (५८.१.१ ग० १-६)

—भग० श २४ । उ २ । प्र २, ३ । पृ० ८२५

५८८.२ असंख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से असुरकुमार देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में—

गमक—१-६ : असंख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि से असुरकुमार देवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (असंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए असुरकुमारेसु उववज्जित्तए ××× ते णं भंते ! जीवा—पुच्छा । ××× चत्तारि लेस्सा आदिल्लाओ ×××। ग० १ । सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो—एस चेव वत्तव्वया ×××। ग० २ । सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो ×××—एस चेव वत्तव्वया ××× सेसं तं चेव । ग० ३ । सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ जाओ ××× ते णं भंते ! अवसेसं तं चेव जाव—'भवाएसो'त्ति ×××। ग० ४। सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो—एस चेव वत्तव्वया ×××। ग० ५। सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो ××× सेसं तं चेव ×××। ग० ६। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिईओ जाओ, सो चेव पढम गमगो भाणियव्वो ×××। ग० ७। सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो, एस चेव वत्तव्वया ×××। ग० ८। सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो, एस चेव वत्तव्वया ×××। ग० ६) उनमें नौ गमकों ही में आदि की चार लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ २ । प्र ५-१५ । पृ० ८२५।२७

५८८.३ पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से असुरकुमार देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में —

गमक—१-६ पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से असुरकुमार देवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (पज्जत्तसंखेज्जवासाउय सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए असुरकुमारेसु उववज्जित्तए ××× ते णं भंते !

जीवा० × × × एवं एएसिं रयणप्पभपुढविगमगसरिसा नव गमगा णेयव्वा। नवरं जाहे अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ भवइ, ताहे तिसु वि गमएसु इमं णाणत्तं—चत्तारि लेस्साओ) उनमे प्रथम के तीन गमकों मे छः लेश्या, मध्यम के तीन गमकों में प्रथम की चार लेश्या तथा शेष के तीन गमकों में छः लेश्या होती हैं ('५८'१'२)।

—भग० २४। उ २। प्र १६,१७। पृ० ८२७

'५८८'४ असंख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य से असुरकुमार देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : असंख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य से असुरकुमार देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (असंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए असुरकुमारेसु उववज्जित्तए × × × एवं असंखेज्जवासाउयतिरिक्खजोणियसरिसा आदिल्ला तिन्नि गमगा णेयव्वा × × ×—प्र २०। ग० १-३। सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ जाओ, तस्स वि जहन्नकालट्ठिइयतिरिक्खजोणिय सरिसा तिन्नि गमगा भाणियव्वा × × × सेसं तं चेव—प्र० २१। ग० ४-६। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिईओ जाओ, तस्स वि ते चेव पच्छिल्लगा तिन्नि गमगा भाणियव्वा—प्र० २२। ग० ७-९) उनमे नौ गमकों ही में आदि की चार लेश्या होती हैं ('५८'८२)।

—भग० श २४। उ २। प्र २०-२२। पृ० ८२७

'५८८५ पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य से असुरकुमार देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य से असुरकुमार देवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते। जे भविए असुरकुमारेसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते। जीवा० ? एवं जहेव एएसिं रयणप्पभाए उववज्जमाणाणं णव गमगा तहेव इह वि णव गमगा भाणियव्वा × × × सेसं तं चेव) उनमें नौ गमकों ही में छः लेश्या होती हैं। ('५८'१३)।

—भग० श २४। उ २। प्र २४, २५। पृ० ८२७-२८

५८९ नागकुमार यावत् स्तनितकुमार देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

५८९१ पर्याप्त असंज्ञी पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि से नागकुमार देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-९ : पर्याप्त असज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से नागकुमार देवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (नागकुमारा णं भंते। × × × जइ तिरिक्ख० ? एवं जहा

असुरकुमाराणं वत्तव्वया तहा एएसिं वि जाव—'असन्नि'त्ति) उनमें नौ गमकों ही में प्रथम की तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ ३। प्र १-२। पृ० ८२८

५८६.२ असंख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि से नागकुमार देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : असंख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से नागकुमार देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (असंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते! जे भविए नागकुमारेसु उववज्जित्तए ××× ते णं भंते! जीवा० अवसेसो सो चेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स गमगो भाणियव्वो जाव—'भवाएसो'त्ति ×××—प्र० ५। ग० १। सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो, एस चेव वत्तव्वया ×××—प्र० ६। ग० २। सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो, तस्स वि एस चेव वत्तव्वया ××× सेसं तं चेव जाव—'भवाएसो'ति—प्र० ७। ग० ३। सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ जाओ, तस्स वि तिसु वि गमएसु जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स जहन्नकालट्ठिइयस्स तहेव निरवसेसं—प्र० ८। ग० ४-६। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिईओ जाओ, तस्स वि तहेव तिन्नि गमगा जहा असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स ××× सेसं तं चेव—प्र० ६। ग० ७-६) उनमें नव गमकों मे ही प्रथम की चार लेश्या होती हैं (५८८.२)

—भग० श २४। उ ३। प्र ४-६। पृ० ८२८

५८६.३ पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से नागकुमार देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से नागकुमार देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (पज्जत्तसंखेज्जवासाउय० जाव—जे भविए नागकुमारेसु उववज्जित्तए ××× एवं जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स वत्तव्वया तहेव इह वि णवसु वि गमएसु ××× सेसं तं चेव) उनमें प्रथम के तीन गमकों में छ लेश्या, मध्यम के तीन गमकों मे प्रथम की चार लेश्या तथा शेष के तीन गमकों में छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ ३। प्र १०। पृ० ८२८

५८६.४ असंख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य से नागकुमार देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : असंख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य से नागकुमार देवों म होने उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (असंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते! जे भविए

नागकुमारेसु उववज्जित्तए × × × एवं जहेव असंखेज्जवासाउयाणं तिरिक्ख-जोणियाणं नागकुमारेसु आदिल्ला तिन्नि गमगा तहेव इमस्स वि × × × सेसं तं चेव—प्र १३। ग० १-३। सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ जाओ, तस्स तिसु वि गमएसु जहा तस्स चेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स तहेव निरवसेसं—प्र १४। ग० ४-६। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिईओजाओ, तस्स तिसु वि गमएसु जहा तस्स चेव उक्कोसकालट्ठिइयस्स असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स—× × × सेसं तं चेव—प्र १५। ग० ७-६) उनमे नौ गमकों ही मे प्रथम की चार लेश्या होती है (५८.६.२—ग० १-३। '५८.८.४—ग०४-६)।

—भग० श २४। उ ३। प्र १३-१५। पृ० ८२८-२६

'५८.६.५ पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले सन्नी मनुष्य से नागकुमार देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

गमक—१-६: पर्याप्त संख्यात् वर्ष की आयुवाले सन्नी मनुष्य से नागकुमार देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते। जे भविए नागकुमारेसु उववज्जित्तए × × × एवं जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स सच्चेव लद्धी निरवसेसा नवसु गमएसु × × ×**) उनमे नौ गमकों मे ही छ लेश्या होती हैं ५८.८.५— ५८.१.३)।

—भग० श २४। उ ३। प्र १७। पृ० ६२६

५८.६.१ सुवर्णकुमार यावत् स्तनितकुमार देवों मे उत्पन्न होने योग्य नागकुमार देवो की तरह जो पाँच प्रकार के जीव हैं (**अवसेसा सुवन्नकुमाराइं जाव—थणियकुमारा एए अट्ठ वि उद्देसगा जहेव नागकुमारा तहेव निरवसेसा भाणियव्वा**) उन पाँचो प्रकार के जीवों के सम्बन्ध में नौ गमको के लिये जैसा नागकुमार उद्देशक मे कहा वैसा कहना। इन आठों देवों के सम्बन्ध में प्रत्येक के लिए एक-एक उद्देशक कहना।

—भग० श २४। उ ४-११। पृ० ८२६

'५८.१० पृथ्वीकायिक जीवो में उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

५८.१०.१ स्व योनि से पृथ्वीकायिक जीवो में उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

गमक—१-६ : पृथ्वीकायिक जीवो से पृथ्वीकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पुढविक्काइए णं भंते। जे भविए पुढविक्काइएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते! जीवा० × × × चत्तारि लेस्साओ × × ×** —प्र ३-४। ग० १। **सो चेव जहन्न-कालट्ठिईएसु उववन्नो × × ×—एवं चेव वत्तव्वया निरवसेसा**—प्र ६। ग० २। **सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो, ××× सेसं तं चेव, जाव—'अनुबंधो' त्ति ×××**—प्र ७। ग० ५। **सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ जाओ, सो चेव पढमिल्लओ गमओ**

योग्य जो जीव हैं (**जइ वणस्सइकाइएहिंतो उववज्जंति० ? वणस्सइकाइयाणं आउकाइयगमगसरिसा णव गमगा भाणियव्वा**) उनमें प्रथम के तीन गमकों में चार लेश्या, मध्यम के तीन गमकों में तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमकों में चार लेश्या होती है ('५८'१०'२—'५८'१०'१)।

—भग० श २४ । उ १२ । प्र १८ । पृ० ८३१

'५८'१०'६ द्वीन्द्रिय से पृथ्वीकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : द्वीन्द्रिय से पृथ्वीकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**बेइंदिए णं भंते ! जे भविए पुढविकाइएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते ! जीवा० × × × तिन्नि लेस्साओ × × ×—प्र २०-२१ । ग० १ । सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया भव्वा—प्र० २२ । ग० २ । सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो एस चेव बेइंदियस्स लद्धी—प्र० २३ । ग० ३ । सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ जाओ, तस्स वि एस चेव वत्तव्वया तिसु वि गमएसु × × × —प्र० २४ । ग० ४-६ । सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिईओ जाओ, एयस्स वि ओहियगमगसरिसा तिन्नि गमगा भाणियव्वा × × × —प्र० २५ । ग० ७-६**) उनमे नौ गमकों ही मे तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १२ । प्र २०—२५ । पृ० ८३२

'५८'१०'७ त्रीन्द्रिय से पृथ्वीकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : त्रीन्द्रिय से पृथ्वीकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**जइ तेइंदिएहिंतो उववज्जंति० एवं चेव नव गमगा भाणियव्वा × × ×**) उनमे नौ गमकों मे ही तीन लेश्या होती हैं (५८'१०'६)

—भग० २४ । उ १२ । प्र २६ । पृ० ८३३

५८'१०'८ चतुरिंद्रिय से पृथ्वीकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : चतुरिंद्रिय से पृथ्वीकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**जइ चउरिंदिएहिंतो उववज्जंति० एवं चेव चउरिंदियाण वि नव गमगा भाणियव्वा × × ×**) उनमे नौ गमकों में ही तीन लेश्या होती हैं ('५८'१०'६)

—भग० श २४ । उ १२ । प्र २७ । पृ० ८३३

५८'१०'६ असज्ञी पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि से पृथ्वीकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : असज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**असन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए पुढविकाइ-**

एसु उववज्जित्तए ××× ते णं भंते ! जीवा० एवं जहेव बेइंदियस्स ओहियगमए लद्धी तहेव ×××—सेसं तं चेव) उनमें नौ गमकों मे ही तीन लेश्या होती हैं ।

—भग० श २४ । उ १२ । प्र ३० । पृ० ८३३

५८ १० १० सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से पृथ्वीकायिक जीवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-९ . सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से पृथ्वीकायिक जीवो में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**जइ संखेज्जवासाउय (सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए०) ××× ते णं भंते ! जीवा० ××× एवं जहा रयणप्पभाए उववज्जमाणस्स सन्निस्स तहेव इह वि ××× लद्धी से आदिल्लएसु तिसु वि गमएसु एस चेव । मज्झिल्लएसु तिसु वि गमएसु एस चेव । नवरं ××× तिन्नि लेस्साओ । ××× पच्छिल्लएसु तिसु वि गमएसु जहेव पढमगमए ×××**) उनमे प्रथम के तीन गमकों मे छः लेश्या, मध्यम के तीन गमको में तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमको में छ लेश्या होती हैं (५८ १ २) ।

—भग० श २४ । उ १२ । प्र ३३, ३४ । पृ० ८३४

५८ १० ११ असज्ञी मनुष्य से पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—४-६ .—असज्ञी मनुष्य से पृथ्वीकायिक जीवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**असन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए पुढविक्काइएसु० से णं भंते । ××× एवं जहा असन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणियस्स जहन्नकालट्ठिईयस्स तिन्नि गमगा तहा एयस्स वि ओहिया तिन्नि गमगा भाणियव्वा तहेव निरवसेसं, सेसा छ न भण्णंति**) उनमे तीन ही गमक होते हैं तथा इन तीनो गमकों मे ही तीन लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १२ । प्र ३६ । पृ० ८३४

५८ १० १२ (पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले) सज्ञी मनुष्य से पृथ्वीकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

गमक—१-९ (पर्याप्त सख्यात् वर्ष की आयुवाले) सज्ञी मनुष्य से पृथ्वीकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**सन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए पुढविक्काइएसु उववज्जित्तए ××× ते णं भंते ! जीवा० एवं जहेव रयणप्पभाए उववज्जमाणस्स तहेव तिसु वि गमएसु लद्धी । ××× मज्झिल्लएसु तिसु गमएसु लद्धी जहेव सन्निपंचिंदियस्स, सेसं तं चेव निरवसेसं, पच्छिल्लगा तिन्नि गमगा जहा एयस्स चेव ओहिया गमगा**) उनमे प्रथम के तीन गमकों मे छ लेश्या, मध्यम के तीन गमको में तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमको में छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४ । उ १२ । प्र ३९, ४० । पृ० ८३४-३५

५८ १०'१३ असुरकुमार देवो से पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-९: असुरकुमार देवों से पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**असुरकुमारे णं भंते ! जे भविए पुढविक्काइएसु उववज्जित्तए—प्र ४३। तेसि णं भंते ! जीवाणं × × × लेस्साओ चत्तारि × × × एवं णव वि गमा णेयव्वा —प्र ४७**) उनमें नौ गमकों में ही चार लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १२। प्र ४३,४७। पृ० ८३५

५८ १०'१४ नागकुमार यावत् स्तनितकुमार देवो से पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-९ नागकुमार यावत् स्तनितकुमार देवों से पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**नागकुमारे णं भंते ! जे भविए पुढविक्काइएसु० एस चेव वत्तव्वया जाव—'भवाएसो'त्ति। × × × एवं णव वि गमगा असुरकुमारगमगसरिसा × × × एवं जाव—थणियकुमाराणं**) उनमें नौ गमकों में ही चार लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १२। प्र० ४८। पृ० ८३६

'५८ १० १५ वानव्यतर देवो से पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-९ : वानव्यंतर देवों से पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**वाणमंतर देवे णं भंते ! जे भविए पुढविक्काइएसु० एएसिं वि असुरकुमार-गमगसरिसा णव गमगा भाणियव्वा × × × सेसं तहेव**) उनमें नौ गमकों में ही चार लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ १२। प्र ५०। पृ० ८३६

'५८ १० १६ ज्योतिषी देवो से पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-९ : ज्योतिषी देवों से पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**जोइसियदेवे णं भंते ! जे भविए पुढविक्काइएसु लद्धी जहा असुरकुमाराणं। नवरं एगा तेऊलेस्सा पन्नत्ता। × × × एव सेसा अट्ठ गमगा भाणियव्वा**) उनमें नौ गमकों में ही एक तेजोलेश्या होती है।

—भग० श २४। उ १२। प्र ५२। पृ० ८३६

५८ १० १७ सौधर्मकल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१ ९ : सौधर्मकल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव है (**सोहम्मदेवे णं भंते ! जे भविए पुढविक्काइएसु उववज्जित्तए**

× × × एवं जहा जोइसियस्स गमगो। ××× एवं सेसा वि अट्ठ गमगा भाणियव्वा) उनमे नो गमकों मे ही एक तेजोलेश्या होती है।

—भग० श २४। उ १२। प्र ५५। पृ० ८३६

५८ १० १८ ईशान कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पृथ्वीकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे —

गमक—१-६ . ईशान कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पृथ्वीकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**ईसाणदेवे णं भंते ! जे भविए० × × × एवं ईसाणदेवेण वि णव गमगा भाणियव्वा × × × सेसं तं चेव**) उनमे नौ गमकों में ही एक तेजोलेश्या होती है।

—भग० श २४। उ १२। प्र ५५। पृ० ८३६

५८ ११ अप्कायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे —

५८ ११ १ से १८ स्व-पर योनि से अप्कायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ . स्व-पर योनि से अप्कायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**आउक्काइया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ? एवं जहेव पुढविक्काइयउद्देसए, जाव – × × × पुढविक्काइए णं भंते ! जे भविए आउक्काइएसु उववज्जित्तए × × × एवं पुढविक्काइयउद्देसगसरिसो भाणियव्वो × × × सेसं तं चेव**) उनके सम्बन्ध मे लेश्या की अपेक्षा से पृथ्वीकायिक उद्देशक (५८ १० १- १८) मे जैसा कहा वैसा ही कहना।

—भग० श २४। उ १३। प्र १। पृ० ८३७

५८ १२ अग्निकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

५८ १२ १-१२ स्व-पर योनि से अग्निकायिक जीवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ . स्व-पर योनि से अग्निकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**तेउक्काइया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ? एवं जहेव पुढविक्काइयउद्देसगसरिसो उद्देसो भाणियव्वो। नवरं × × × देवेहिंतो ण उववज्जंति, सेसं तं चेव**) उनके सम्बन्ध मे लेश्या की अपेक्षा से पृथ्वीकायिक जीवों के उद्देशक (५८ १० १- १२) में जैसा कहा वैसा ही कहना।

—भग० श २४। उ १४। प्र १। पृ० ८३७

५८ १३ वायुकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे —

५८ १३ १ १२ स्व-पर योनि से वायुकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों मे —

गमक—१-६ स्व-पर योनि से वायुकायिक जीवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**वाउक्काइया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जति ? एवं जहेव तेउक्काइयउद्देसओ**

तहेव) उनके सम्बन्ध में लेश्या की अपेक्षा से अग्निकायिक उद्देशक ('५८ १२) में जैसा कहा वैसा ही कहना।

—भग० श २४ । उ १५ । प्र १ । पृ० ८३७

५८ १४ वनस्पतिकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

५८'१४ १- १८ स्व-पर योनि से वनस्पतिकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : स्व-पर योनि से वनस्पतिकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**वणस्सइकाइया णं भंते ! × × × एवं पुढविकाइयसरिसो उद्देसो**) उनके सबंध में लेश्या की अपेक्षा से पृथ्वीकायिक उद्देशक (५८'१० १-'१८) में जैसा कहा वैसा ही कहना।

—भग० श २४ । उ १६ । प्र १ । पृ० ८३७

५८ १५ द्वीन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

५८ १५ १- १२ स्व-पर योनि से द्वीन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : स्व-पर योनि से द्वीन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं **(बेइंदियाणं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ? जाव—पुढविकाइए णं भंते ! जे भविए बेइंदिएसु उववज्जित्तए × × × सच्चेव पुढविकाइयस्स लद्धी × × × देवेसु न चेव उववज्जंति)** उनके सम्बन्ध में लेश्या की अपेक्षा से पृथ्वीकायिक उद्देशक ('५८ १० १- १२) में जैसा कहा वैसा ही कहना।

—भग० श २४ । उ १७ । प्र १ । पृ० ८३७

५८ १६ त्रीन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

५८'१६ १ १२ स्व-पर योनि से त्रीन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : स्व पर योनि से त्रीन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं **(तेइंदिया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ? एवं तेइंदियाणं जहेव बेइंदियाणं उद्देसो)** उनके सम्बन्ध में लेश्या की अपेक्षा से द्वीन्द्रिय उद्देशक ('५८ १५ १- १२) में जैसा कहा वैसा ही कहना।

—भग० श २४ । उ १८ । प्र १ । पृ० ८३७

५८ १७ चतुरिन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

५८ १७ १- १२ स्व पर योनि से चतुरिन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : स्व-पर योनि से चतुरिन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं **(चउरिंदिया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ? जहा तेइंदियाणं उद्देसओ तहेव चउरिंदियाण वि)** उनके सम्बन्ध में लेश्या की अपेक्षा से त्रीन्द्रिय उद्देशक (५८ १६ १- १२) में जैसा कहा वैसा ही कहना।

—भग० श २४ । उ १९ । प्र १ । पृ० ८३८

५८ १८ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे —

५८ १८ १ रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी मे पचेन्द्रिय तिर्यंच यानि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी स पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जा जीव हे (**रयणप्पभपुढविनेरइए णं भंते ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्ख जोणिएसु उववज्जित्तए × × ×तेसि णं भंते जीवाणं × × × एगा काऊलेस्सा पन्नत्ता प्र ३, ५ । ग० १ । सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो × × ×—प्र ६ । ग० २ । एवं सेसा वि सत्त गमगा भाणियव्वा जहेव नेरइयउद्देसए सन्निपंचिंदिएहिं समं— प्र ६ । ग० ३-९**) उनमे नौ गमकों मे ही एक कापोत लेश्या होती है।

—भग० श २४ । उ २० । प्र ३-६ । पृ० ८३८

५८ १८ २ शर्कराप्रभापृथ्वी के नारकी से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : शर्कराप्रभापृथ्वी क नारकी स पचेन्द्रिय तियच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**सक्करप्पभापुढविनेरइए णं भंते ! जे भविए० ? एवं जहा रयणप्पभाए णव गमगा तहेव सक्करप्पभाए वि × × × एवं जाव— छट्ठपुढवी । नवर ओगाहणा लेस्सा ठिइ अणुबंधो सवेहो य जाणियव्वा**) उनमे नौ गमकों मे ही एक कापोत लेश्या होती है।

—भग० श २४ । उ २० । प्र ७ । पृ० ८३९

५८ १८ ३ वालुकाप्रभापृथ्वी क नारकी से पचेन्द्रिय तियच यानि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे —

गमक—१-९ : वालुकाप्रभापृथ्वी क नारकी स पचेन्द्रिय तियच यानि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ऊपर ५८ १८ २) उनमे नौ गमकों मे ही नील तथा कापोत दो लेश्या होती हैं ('५३ ४)।

—भग० श २४ । उ २० । प्र ७ । पृ० ८३९

५८ १८ ४ पंकप्रभापृथ्वी के नारकी स पचेन्द्रिय तिर्यंच यानि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : पंकप्रभापृथ्वी क नारकी से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ऊपर ५८ १८'२) उनमे नौ गमकों मे ही एक नील लेश्या होती है ('५३'५)।

—भग० श २४ । उ २० । प्र ७ । पृ० ८३९

'५८ १८ ५ धूमप्रभापृथ्वी के नारकी से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक -१-६ : धूमप्रभापृथ्वी के नारकी से पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ऊपर ५८ १८ २) उनमे नौ गमकों मे ही कृष्ण तथा नील दो लेश्या होती हैं ('५३ ६)।

—भग० श २४ । उ २० । प्र ७ । पृ० ८३६

५८ १८ ६ तमप्रभापृथ्वी के नारकी से पचेंद्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ : तमप्रभापृथ्वी के नारकी से पचेंद्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव है (देखो पाठ ऊपर '५८ १८'२) उनमे नौ गमकों मे ही एक कृष्ण लेश्या होती है ('५३ ७)।

—भग० श २४ । उ २० । प्र ७ । पृ० ८३६

५८ १८ ७ तमतमाप्रभापृथ्वी के नारकी से पचेंद्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

गमक—१-६ : तमतमाप्रभा पृथ्वी के नारकी से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**अहेसत्तमपुढवीनेरइए णं भंते। जे भविए० ? एवं चेव णव गमगा। नवरं ओगाहणा, लेस्सा, ठिइ, अणुबधा जाणियव्वा × × × लद्धी णवसु वि गमएसु-जहा पढमगमए**) उनमे नौ गमकों मे ही एक परम कृष्ण लेश्या होती हैं (५३'८)।

—भग० श २४ । उ २० । प्र ८ । पृ० ८३६

'५८ १८ ८ पृथ्वीकायिक योनि से पचेंद्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक १-६: पृथ्वीकायिक योनि से पचेंद्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव है (**पुढविकाइए णं भंते। जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते। जीवा० ? एवं परिमाणादीया अणुबंधपज्जवसाणा जच्चेव अप्पणो सट्ठाणे वत्तव्वा सच्चेव पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु वि उववज्जमाणस्स भाणियव्वा × × × सेसं तं चेव**) उनमें प्रथम के तीन गमको में चार लेश्या, मध्यम के तीन गमकों मे तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमको मे चार होती हैं (५८ १० १)।

—भग० श २४ । उ २० । प्र १०-१२ । पृ० ८३६-४०

५८ १८ ६ अप्कायिक योनि से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ : अप्कायिक योनि से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पुढविकाइए णं भंते। जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जित्तए**

××× ते णं भंते ! जीवा० ? एवं परिमाणादीया अणुबंधपज्जवसाणा जच्चेव अप्पणो सट्ठाणे वत्तव्वया सच्चेव पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु वि उववज्जमाणस्स भाणियव्वा। ××× जइ आउक्काइएहिंतो उववज्जंति० ? एवं आउक्काइयाण वि। एवं जाव—चउरिंदिया उववाएयव्वा। नवरं सव्वत्थ अप्पणो लद्धी भाणियव्वा। ××× जहेव पुढविक्काइएसु उववज्जमाणाणं लद्धी तहेव सव्वत्थ ×××) उनमे प्रथम के तीन गमकों मे चार लेश्या, मध्यम के तीन गमकों मे तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमकों मे चार लेश्या होती हैं (देखो ५८.१०.२)।

—भग० श २४। उ २०। प्र १०-१२। पृ० ८३९-४०

५८.१८.१० अग्निकायिक योनि से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : अग्निकायिक योनि से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ऊपर ५८.१८.९) उनमे नौ गमकों मे ही तीन लेश्या होती हैं (देखो ५८.१०.३)।

—भग० श २४। उ २०। प्र १०-१२। पृ० ८३९-४०

५८.१८.११ वायुकायिक योनि से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे —

गमक—१-९ : वायुकायिक योनि से पचेन्द्रिय तियंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ऊपर ५८.१८.९) उनमे नव गमकों मे ही तीन लेश्या होती हैं (देखो ५८.१०.४)।

—भग० २४। उ २०। प्र १०-१२। पृ० ८३९-४०

५८.१८.१२ वनस्पतिकायिक योनि से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ वनस्पतिकायिक योनि से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ऊपर ५८.१८.९) उनमे प्रथम के तीन गमकों मे चार लेश्या, मध्यम के तीन गमकों मे तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमकों मे चार लेश्या होती हैं (देखो ५८.१०.५)।

—भग० श २४। उ २०। प्र १०-१२। पृ० ८३९-४०

५८.१८.१३ द्वीन्द्रिय से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : द्वीन्द्रिय से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ऊपर ५८.१८.९) उनमे नौ गमकों मे ही तीन लेश्या होती हैं (देखो ५८.१०.६)।

—भग० श २४। उ २०। प्र १०-१२। पृ० ८३९-४०

'५८'१८'१४ त्रीन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : त्रीन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव है (देखो पाठ ऊपर '५८'१८'६) उनमे नौ गमकों में ही तीन लेश्या होती हैं (देखो ५८'१०'७)।

—भग० श २४ । उ २० । प्र १०-१२ । पृ० ८३६-४०

'५८'१८ १५ चतुरिन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : चतुरिन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ऊपर '५८'१८'६) उनमें नौ गमकों में ही तीन लेश्या होती हैं (देखो '५८'१०'८)।

—भग० श २४ । उ २० । प्र १०-१२ । पृ० ८३६-४०

'५८'१८'१६ असज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : असंज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव है (**असन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते। जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते!? अवसेसं जहेव पुढविक्काइएसु उववज्जमाणस्स असन्निस्स तहेव निरवसेसं, जाव—'भवाएसो'त्ति × × × ग० १। × × × बिइयगमए एस चेव लद्धी—प्र० १५ । ग० २। सो चेव उक्कोसकालट्ठिइएसु उववन्नो × × × ते णं भंते! जीवा० ? एवं जहा रयणप्पभाए उववज्जमाणस्स असन्निस्स तहेव निरवसेसं जाव—'कालादेसो'त्ति × × × सेसं तं चेव—प्र० १६ । ग० ३। सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ जाओ × × × ते णं भंते!—अवसेसं जहा एयस्स पुढविक्काइएसु उववज्जमाणस्स मज्झिमेसु तिसु गमएसु तहा इह वि मज्झिमेसु तिसु गमएसु जाव—'अणुबंधो'त्ति—प्रश्न १७। ग० ४। सो चेव जहन्नकालट्ठिइएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया × × ×—प्र १८। ग० ५। सो चेव उक्कोसकालट्ठिइएसु उववन्नो × × × एस चेव वत्तव्वया—प्र १६। ग० ६। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिईओ जाओ सच्चेव पढमगमगवत्तव्वया × × ×—प्र २०। ग० ७। सो चेव जहन्नकालट्ठिइएसु उववन्नो, एस चेव वत्तव्वया जहा सत्तमगमए × × ×—प्र २१। ग० ८। सो चेव उक्कोसकालट्ठिइएसु उववन्नो, × × × एवं जहा रयणप्पभाए उववज्जमाणस्स असन्निस्स नवमगमए तहेव निरवसेसं जाव—'कालादेसो' त्ति × × × सेसं तं चेव—प्र २२। ग० ६**) उनमे नौ गमकों मे ही तीन लेश्या होती हैं

(देखो ग० १, २, ४, ५, ६, ७, ८ के लिए ५८ १० ९ तथा ग० ३ व ९ के लिए ५८ ११)

—भग० श २४ | उ २० | प्र १४-२२ | पृ० ८४०-४१

५८ १८ '१७ सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-९ ' सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि मे पचेंद्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**संखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्ख जोणिए णं भंते। जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जित्तए** × × × **ते णं भंते। अवसेसं जहा एयस्स चेव सन्निस्स रयणप्पभाए उववज्जमाणस्स पढमगमए** × × × **सेसं तं चेव जाव—'भवाएसो'त्ति** × × ×—प्र २५-२६। ग० १। **सो चेव जहन्नकालट्ठिईएस उववन्नो एस चेव वत्तव्वया** × × ×—प्र २७। ग० २। **सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो** × × × **एस चेव वत्तव्वया** × × ×—प्र २८। ग० ३। **सो चेव जहन्नकालट्ठिईओ जाओ** × × ×। **लद्धी से जहा एयस्स चेव सन्निपंचिंदियस्स पुढविक्काइएसु उववज्जमाणस्स मज्झिल्लएसु तिसु गमएसु सच्चेव इह वि मज्झिमेसु तिसु गमएसु कायव्वा** × × × —प्र २९। ग० ४-६। **सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिईओ जाओ जहा पढमगमए** × × ×—प्र ३०। ग० ७। **सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया** × × × —प्र ३१। ग० ८। **सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो** × × × **अवसेसं तं चेव** × × ×—प्र ३२। ग० ९) उनमें प्रथम के तीन गमकों में छ लेश्या, मध्यम के तीन गमकों मे तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमकों में छ लेश्या होती हैं (ग० १, २, ३, ७, ८, ९ के लिए देखो ५८ १ २, ग० ४, ५, ६ के लिए देखो '५८ १० १०)

—भग० श २४ | उ २० | प्र २५-३२ | पृ० ८४१-४२

५८ १८ १८ असज्ञी मनुष्य योनि से पचेन्द्रिय तिर्यञ्च-योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

गमक—१-३ ' असज्ञी मनुष्य योनि से पचेन्द्रिय तिर्यञ्च-योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**असन्निमणुस्से णं भंते। जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जित्तए** × × ×। **लद्धी से तिसु वि गमएसु जहेव पुढविक्काइएसु उववज्जमाणस्स** × × ×) उनमे प्रथम के तीन गमक ही होते हैं तथा इन तीनों गमको मे ही तीन लेश्या होती हैं ('५८ १० ११)।

—भग० श २४ | उ २० | प्र ३४ | पृ० ८४२

'५८'१८'१९ सख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य योनि से पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

गमक—१-९ : संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य योनि से पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**सन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्ख-जोणिएसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते !० लद्धी से जहा एयस्सेव सन्निमणुस्सस्स पुढविक्काइएसु उववज्जमाणस्स पढमगमए जाव—'भवाएसो'त्ति × × ×—प्र ३८। ग० १। सो चेव जहन्नकालट्ठिइएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया × × × —प्र ३९। ग० २। सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो × × × सच्चेव वत्तव्वया × × ×—प्र ४०। ग० ३। सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिइओ जाओ, जहा सन्निपंचिंदिय-तिरिक्ख जोणियस्स पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जमाणस्स मज्झिमेसु तिसु गमएसु निरवसेसा भाणियव्वा × × ×—प्र ४१। ग० ४-६। सो चेव अप्पणा उक्कोस-कालट्ठिइओ जाओ सच्चेव पढमगमग वत्तव्वया × × × – प्र ४२। ग० ७। सो चेव जहन्नकालट्ठिइएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया × × ×—प्र ४३। ग० ८। सो चेव उक्कोसकालट्ठिइएसु उववन्नो × × × एस चेव लद्धी जहेव सत्तमगमए × × ×—प्र ४४। ग० ९**) उनमे प्रथम के तीन गमको में छ लेश्या (देखो '५८'१०'१२), मध्यम के तीन गमको में तीन लेश्या (देखो '५८'१८'१७) तथा शेष के तीन गमकों में छ लेश्या होती हैं।

—भग० श २४। उ २०। प्र ३७-४४। पृ० ८४२-४३

'५८'१८'२० असुरकुमार देवों से पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

गमक—१-९: असुरकुमार देवों से पचेंद्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**असुरकुमारे णं भंते ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जित्तए × × ×। असुरकुमाराणं लद्धी णवसु वि गमएसु जहा पुढविक्काइएसु उववज्जमाणस्स, एवं जाव—ईसाणदेवस्स तहेव लद्धी × × ×**) उनमें नौ गमको मे ही चार लेश्या होती हैं ('५८'१०'१३)।

—भग० श २४। उ २०। प्र ४७। पृ० ८४३

'५८'१८'२१ नागकुमार यावत् स्तनितकुमार देवों से पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

गमक—१-९ : नागकुमार यावत् स्तनितकुमार देवों से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**नागकुमारे णं भंते ! जे भविए० ? एस चेव वत्तव्वया**

× × × **एवं जाव—थणियकुमारे**) उनमें नौ गमको में ही चार लेश्या होती हैं (५८·१८·२०7 ५८ १० १३)।

—भग० श २४ | उ २० | प्र ४८ | पृ० ८४३

५८ १८ २२ वानव्यतर देवो से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : वानव्यतर देवो से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**वाणमंतरे णं भंते ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्ख० ? एवं चेव** × × ×) उनमे नौ गमको मे ही चार लेश्या होती हैं (५८ १८·२१)।

—भग० श २४ | उ २० | प्र ५० | पृ० ८४३

५८ १८ २३ ज्योतिषी देवों से पचेन्द्रिय तिर्यच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ . ज्योतिषी देवों मे पचेंद्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**जोइसिए णं भंते ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्ख० ? एस चेव वत्तव्वया जहा पुढविक्काइयउद्देसए** × × ×) उनमें नौ गमको में ही एक तेजोलेश्या होती है (५८ १० १६)।

—भग० श २४ | उ २० | प्र ५२ | पृ० ८४३

५८ १८ २४ सौधर्मकल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ सौधर्मकल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पचेंद्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**सोहम्मदेवे णं भंते ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जित्तए** × × × **सेसं जहेव पुढविक्काइयउद्देसए नवसु वि गमएसु** × × ×) उनमें नौ गमकों में ही एक तेजोलेश्या होती है (५८ १० १७)।

—भग० श २४ | उ २० | प्र ५४ | पृ० ८४४

५८ १८ २५ ईशान कल्पोपपन्न वैमानिक देवो से पचेंद्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : ईशान कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पचेंद्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (× × × **एवं ईसाणदेवे वि**) उनमे नौ गमकों में ही एक तेजोलेश्या होती है (५८ १८ २४)।

—भग० श २४ | उ २० | प्र ५४ | पृ० ८४४

५८ १८ २६ सनत्कुमार कल्पोपपन्न वैमानिक देवो से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ सनत्कुमार कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पचेंद्रिय तिर्यंच योनि में

उत्पन्न होने योग्य जो जीव है (**ईसानदेवे वि। एएणं कमेणं अवसेसा वि जाव— सहस्सारदेवेसु उववाएयव्वा। नवरं ××× लेस्सा—सणंकुमार—माहिंद—बंभलोएसु एगा पम्हलेस्सा**) उनमें नौ गमकों में ही एक पद्मलेश्या होती है।

—भग० श २४। उ २०। प्र ५४। पृ० ८४४

५८ १८'२७ माहेन्द्र कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पचेंद्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-९ : माहेन्द्र कल्पोपपन्न वैमानिक देवो से पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ '५८ १८'२६) उनमें नौ गमकों मे ही एक पद्मलेश्या होती है।

—भग० श २४। उ २०। प्र ५४। पृ० ८४४

५८ १८'२८ ब्रह्मलोक कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पचेंद्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : ब्रह्मलोक कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८'१८'२६) उनमे नव गमकों में ही एक पद्मलेश्या होती है।

—भग० श २४। उ २०। प्र ५४। पृ० ८४४

'५८ १८'२९ लातक कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-९ : लांतक कल्पोपपन्न वैमानिक देवो से पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**ईसाणदेवे वि एवं एएणं कमेणं अवसेसा वि जाव— सहस्सारदेवेसु उववाएयव्वा। नवरं ××× लेस्सा सणंकुमार—माहिंद—बंभलोएसु एगा पम्हलेस्सा, सेसाणं एगा सुक्कलेस्सा** ×××) उनमें नौ गमकों मे ही एक शुक्ललेश्या होती है।

—भग० श २४। उ २०। प्र ५४। पृ० ८४४

५८'१८ ३० महाशुक्र कल्पोपपन्न वैमानिक देवो से पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

गमक—१-९ : महाशुक्र कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८'१८ २९) उनमें नौ गमकों में ही एक शुक्ललेश्या होती है।

—भग० श २४। उ २०। प्र ५४। पृ० ८४४

५८ १८ ३१ सहस्रार कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-९ सहस्रार कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से पचेन्द्रिय तिर्यच योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखा पाठ ५८ १८ २९) उनमे नौ गमकों मे ही एक शुक्ललेश्या होती है।

—भग० श २४ । उ २० । प्र ५४ । पृ० ८४४

५८ १९ मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे —

५८ १९ १ रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों में —

गमक—१-९ . रत्नप्रभापृथ्वी के नारकी से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव है (**रयणप्पभपुढविनेरइए णं भंते। जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए** × × × **अवसेसा वत्तव्वया जहा पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जंतस्स तहेव।** × × × **सेसं तं चेव**) उनमे नौ गमकों मे ही एक कापोतलेश्या होती है (५८ १८ १)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र २ । पृ० ८४४

५८ १९ २ शर्कराप्रभापृथ्वी के नारकी से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे .—

गमक—१-९ . शर्कराप्रभापृथ्वी के नारकी से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**रयणप्पभपुढविनेरइए णं भंते। जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए** × × × **अवसेसा वत्तव्वया जहा पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जंतस्स तहेव।** × × × **सेसं त चेव। जहा रयणप्पभाए वत्तव्वया तहा सक्करप्पभाए वि** × × ×) उनमे नौ गमकों मे ही एक कापोतलेश्या होती है (५८ १९ १ ५८ १८ १)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र २ । पृ० ८४४

५८ १९ ३ वालुकाप्रभापृथ्वी के नारकी से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे .—

गमक—१-९ ' वालुकाप्रभापृथ्वी के नारकी से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**रयणप्पभपुढविनेरइए ण भंते। जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए** × × × **अवसेसा वत्तव्वया जहा पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जंतस्स तहेव।** × × × **सेसं तं चेव। जहा रयणप्पभाए वत्तव्वया तहा सक्करप्पभाए वि।** × × × **ओगाहणा—लेस्सा—णाण—ट्ठिइ—अणुबंध—संवेहं णाणत्तं च जाणेज्जा जहेव तिरिक्ख जोणियउद्देसए। एवं-जाव—तमापुढविनेरइए**) उनमे नौ गमकों मे ही नील तथा कापोत दो लेश्या होती हैं (५३ ४)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र २ । पृ० ८४४

'५८ १६ ४ पंकप्रभापृथ्वी के नारकी से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : पंकप्रभापृथ्वी के नारकी से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ '५८'१६'३) उनमें नौ गमकों में ही एक नीललेश्या होती है ('५३ ५)

—भग० श २४ । उ २१ । प्र २ । पृ० ८४४

'५८ १६'५ धूमप्रभापृथ्वी के नारकी से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : धूमप्रभापृथ्वी के नारकी से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८'१६'३) उनमें नौ गमकों में ही कृष्ण और नील दो लेश्या होती हैं ('५३'६)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र २ । पृ० ८४४

'५८'१६'६ तमप्रभापृथ्वी के नारकी से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : तमप्रभापृथ्वी के नारकी से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ '५८'१६ ३) उनमें नौ गमकों में ही एक कृष्णलेश्या होती है ('५३'७)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र २ । पृ० ८४४

'५८ १६'७ पृथ्वीकायिक जीवों से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : पृथ्वीकायिक जीवों से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पुढविक्काइए णं भंते ! जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते ! जीवा० ? एवं जहेव पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जमाणस्स पुढविक्काइयस्स वत्तव्वया सा चेव इह वि उववज्जमाणस्स भाणियव्वा णवसु वि गमएसु ×××सेसं तं चेव निरवसेसं**) उनमें प्रथम के तीन गमकों में चार लेश्या, मध्यम के तीन गमकों में तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमकों में चार लेश्या होती है (५८ १८८७ '५८'१० १)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ४-५ । पृ० ८४४

'५८ १६ ८ अप्कायिक जीवों से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : अप्कायिक जीवों से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पुढविक्काइए णं भंते ! जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए ××× ते णं भंते ! जीवा० ? एवं जहेव पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जमाणस्स पुढविक्काइयस्स वत्तव्वया सा चेव इह वि उववज्जमाणस्स भाणियव्वा णवसु वि गमएसु । ××× एवं आउक्कायाण वि । एवं वणस्सइकायाण वि । एवं जाव—चउरिंदियाण वि ×××**) उनमें प्रथम के तीन गमकों में चार लेश्या, मध्यम के तीन गमकों में तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमकों में चार लेश्या होती हैं (५८ १८'६७ ५८ १० २)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ४-६ । पृ० ८४५

५८ १९ ९ वनस्पतिकायिक जीवों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-९ वनस्पतिकायिक जीवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ (५८ १९ ८) उनमे प्रथम के तीन गमको मे चार लेश्या, मध्यम के तीन गमको मे तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमको मे चार लेश्या होती हैं (५८ १८ १२ > ५८ १० ५) ।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ४-६ । पृ० ८४५

५८ १९ १० द्वीन्द्रिय जीवों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-९ द्वीन्द्रिय जीवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ १९ ८) उनमे नौ गमको में ही तीन लेश्या होती हैं (५८·१८ १३ > ५८ १० ६) ।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ४-६ । पृ० ८४५

५८ १९ ११ त्रीन्द्रिय जीवों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे —

गमक—१-९ : त्रीन्द्रिय जीवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ १९ ८) उनमे नौ गमको मे ही तीन लेश्या होती हैं (५८ १८ १४ > ५८ १० ७) ।

—भग० श० २४ । उ २१ । प्र ४-६ पृ० ८४५

५८ १८ १२ चतुरिन्द्रिय जीवों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : चतुरिन्द्रिय जीवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ १९ ८) उनमे नौ गमको मे ही तीन लेश्या होती हे (५८ १८ १५ > ५८ १०·८) ।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ४-६ । पृ० ८४५

·५८ १९ १३ असज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि के जीवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-९ : असज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि के जीवों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव है (× × × **असन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिय–सन्निपंचिंदियतिरिक्ख जोणिय—असन्निमणुस्स-सन्निमणुस्सा य एए सव्वे वि जहा पंचिंदिय-तिरिक्खजोणिय उद्देसए तहेव भाणियव्वा** × × ×) उनमे नौ गमको मे ही तीन लेश्या होती हैं (५८·१८ १६) ।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ६ । पृ० ८४५

'५८'१६ १४ सख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च योनि के जीवों से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : संख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च योनि के जीवों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव है (देखो पाठ ५८ १६'१३) उनमें प्रथम के तीन गमको में छ लेश्या, मध्यम के तीन गमको मे तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमको मे छ लेश्या होती हैं (५८'१८ १७)।

—भग० श २४ | उ २१ | प्र ६ | पृ० ८४५

'५८'१६ १५ असज्ञी मनुष्य योनि के जीवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-३ : असज्ञी मनुष्य योनि के जीवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ '५८'१६'१३) उनमे पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि उद्देशक की तरह प्रथम के तीन ही गमक होते हैं तथा उन तीनो ही गमको मे तीन लेश्या होती हैं (५८'१८ १८7 '५८'१० ११) ।

—भग० श २४ | उ २१ | प्र ६ | पृ० ८४५

'५८ १६'१६ सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि के जीवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ : सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि के जीवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ १६ १३) उनमे प्रथम के तीन गमको मे छ लेश्या, मध्यम के तीन गमको मे तीन लेश्या तथा शेष के तीन गमको मे छ लेश्या होती हैं ('५८ १८ १६)

—भग० श २४ | उ २१ | प्र ६ | पृ० ८४५

'५८'१६'१७ असुरकुमार देवों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ : असुरकुमार देवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**असुरकुमारे णं भंते ! जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए × × × । एवं जच्चेव पंचिदियतिरिक्खजोणियउद्देसए वत्तव्वया सच्चेव एत्थ वि भाणियव्वा । × × × सेसं तं चेव । एवं जाव—'ईसाणदेवो'त्ति**) उनमे नौ गमको मे ही चार लेश्या होती है (५८'१८'२०)।

—भग० श २४ | उ २१ | प्र ६ | पृ० ८४५

५८'१६ १८ नागकुमार यावत् स्तनितकुमार देवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ ' नागकुमार यावत् स्तनितकुमार देवों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८'१६ १७) उनमे नौ गमको में ही चार लेश्या होती है (५८ १८ २१)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ६ । पृ० ८४५

५८ १६ १६ वानव्यतर देवो स मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ ' वानव्यतर देवो से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८'१६ १७) उनमे नौ गमको मे ही चार लेश्या होती हैं (५८ १८ २१)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ६ । पृ० ८४५

५८'१६'२० ज्योतिषी देवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे —

गमक—१-६ . ज्योतिषी देवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ १६ १७) उनमें नौ गमको में ही एक तेजोलेश्या होती है (५८ १८ २३)।

भग० श २४ । उ २१ । प्र ६ । पृ० ८४५

५८ १६ २१ सौधर्मकल्पोपपन्न वैमानिक देवो से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : सौधर्मकल्पोपपन्न वैमानिक देवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ १६ १७) उनमे नौ गमकों मे ही एक तेजोलेश्या होती है (५८ १८ २४7 ५८ १० १७)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ६ । पृ० ८४५

५८'१६ २२ ईशानकल्पोपपन्न वैमानिक देवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो में '—

गमक—१-६ . ईशानकल्पोपपन्न वैमानिक देवो से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ १६ १७) उनमे नौ गमकों मे ही एक तेजोलेश्या होती है (५८ २८ २५ > ५८ १८ २४)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ६ । पृ० ८४५

५८ १६ २३ सनत्कुमार कल्पोपपन्न वैमानिक देवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे '—

गमक—१-६ . सनत्कुमार कल्पोपपन्न वैमानिक देवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हे (× × × **सणंकुमारादीया जाव—'सहस्सारो'त्ति जहेव**

पंचिंदियतिरिक्खजोणिय उद्देसए। ××× सेसं तं चेव ×××) उनमे नौ गमको मे ही एक पद्मलेश्या होती है ('५८ १८ २६)।

—भग० २४ । उ २१ । प्र ६ । पृ० ८४५

'५८ १६ '२४ माहेन्द्रकल्पोपपन्न वैमानिक देवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : माहेन्द्रकल्पोपपन्न वैमानिक देवो से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ १६ २३) उनमे नौ गमको मे ही एक पद्मलेश्या होती है ('५८'१८'२७)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ६ । पृ० ८४५

'५८'१६'२५ ब्रह्मलोक कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : ब्रह्मलोक कल्पोपपन्न वैमानिक देवो से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ '५८ १६'२३) उनमे नौ गमकों में ही एक पद्मलेश्या होती है ('५८'१८ २८)

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ६ । पृ० ८४५

५८'१६ २६ लान्तक कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

गमक—१-६ : लान्तक कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ :५८'१६'२३) उनमें नौ गमकों मे ही एक शुक्ललेश्या होती है ('५८'१८ २६)।

—भग० श २४ । उ१ । प्र ६। पृ० ८४५

५८'१६'२७ महाशुक्र कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : महाशुक्र कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ १६ २३) उनमें नौ गमकों मे ही एक शुक्ल लेश्या होती है ('५८'१८'३०)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ६ । पृ० ८४५

५८ १६ २८ महस्सार कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवों में '—

गमक—१-६ : सहस्रार कल्पोपपन्न वैमानिक देवों में मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८.१६.२३) उनमें नौ गमकों में ही एक शुक्ललेश्या होती है (५८.१८.३१)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र ६ । पृ० ८४५

५८.१६.२६ आनत यावत् अच्युत (आनत प्राणत, आरण तथा अच्युत) देवों में मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में —

गमक—१-६ : आनत यावत अच्युत देवों से मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**आणय देवे ण भंते। जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते। एवं जहेव सहस्सारदेवाणं वत्तव्वया × × × सेसं तं चेव × × × एवं णव वि गमगा० × × × एवं जाव—अच्चुयदेवो** × × ×) उनमें नौ गमकों में ही एक शुक्ललेश्या होती है (५८.१६.२८ / ५८.१८.३१)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र १० ११ । पृ० ८४५

५८.१६.३० ग्रैवेयक कल्पातीत (नौ ग्रैवेयक) देवों में मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में .—

गमक—१-६ : ग्रैवेयक कल्पातीत देवों में मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**गेवेज्ज(ग)देवे णं भंते। जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए × × × अवसेसं जहा आणयदेवस्स वत्तव्वया × × × सेसं त चेव। × × × एवं सेसेसु वि अट्ठगमएसु** × × ×) उनमें नौ गमकों में ही एक शुक्ललेश्या होती है (५८.१६.२६)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र १४ । पृ० ८४६

५८.१६.३१ विजय, वैजयन्त, जयन्त तथा अपराजित अनुत्तरौपपातिक कल्पातीत देवों में मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में —

गमक—१-६ : विजय, वैजयन्त, जयन्त तथा अपराजित अनुत्तरौपपातिक कल्पातीत देवों में मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**विजय, वेजयंत, जयंत, अपराजियदेवे णं भंते। जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए × × × एवं जहेव गेवेज्ज(ग)देवाणं। × × × एवं सेसा वि अट्ठगमगा भाणियव्वा × × × सेसं तं चेव**) उनमें नौ गमकों में ही एक शुक्ललेश्या होती है (५८.१६.३०)।

—भग० श २४ । उ २१ । प्र० १६ । पृ० ८४६

५८.१६.३२ सर्वार्थसिद्ध अनुत्तरौपपातिक कल्पातीत देवों में मनुष्य योनि में उत्पन्न होने योग्य जीवों में —

गमक—१-३ : सर्वार्थसिद्ध अनुत्तरौपपातिक कल्पातीत देवों मे मनुष्य योनि मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**सव्वट्ठसिद्धगदेवे णं भंते ! जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए० ? सा चेव विजयादि देव वत्तव्वया भाणियव्वा** × × × **सेसं तं चेव** × × × —प्र० १७ | ग० १ | **सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया** × × × —प्र० १८ | ग० २ | **सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया** × × × -प्र० १६ | ग० ३ | **ए ए चेव तिन्नि गमगा, सेसा न भण्णंति** × × ×) उनमे तीन गमक होते हैं तथा उन तीनों गमको मे ही एक शुक्ललेश्या होती है (५८ १६ ३१) |

—भग० श २४ | उ २१ | प्र १७-१६ | पृ० ८४६-४७

५८ २० वानव्यंतर देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

५८ २०'१ पर्याप्त असज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि के जीवो से वानव्यन्तर देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त असज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि के जीवो मे वानव्यंतर देवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**वाणमंतरा णं भंते !** × × × **एवं जहेव णागकुमारउद्देसए असन्नी तहेव निरवसेसं** × × ×) उनमे नौ गमको मे ही तीन लेश्या होती हैं (५८ ६ १) |

—भग० श २४ | उ २२ | प्र १ | पृ० ८४७

५८ २० २ असख्यात् वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेंद्रिय तिर्यंच योनि के जीवो से वानव्यतर देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१ ६ : असंख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि के जीवो से वानव्यंतर देवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**असंखेज्जवासाउय**) **सन्निपंचिंदिय० जे भविए वाणमंतरेसु उववज्जित्तए** × × × **सेसं तं चेव जहा नागकुमारउद्देसए** × × ×—प्र २ | ग० १ | **सो चेव जहन्नकालट्ठिइएसु उववन्नो जहेव णागकुमाराण बिइयगमे वत्तव्वया**—प्र २ | ग० २ | **सो चेव उक्कोसकालट्ठिइएसु उववन्नो** × × × **एस चेव वत्तव्वया** × × × प्र ४ | ग० ३ | **मज्झिमगमगा तिन्नि वि जहेव नागकुमारेसु पच्छिमेसु तिसु गमएसु तं चेव जहा नागकुमारुद्देसए** × × × प्र ४ | ग० ४-६) उनमें नौ गमको में ही चार लेश्या होती हैं (५८ ६ २)

—भग० श २४ | उ २ | प्र २-४ | पृ० ८४७

•५८ २० ३ (पर्याप्त) सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि के जीवो से वानव्यतर देवो में उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : (पर्याप्त) सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय योनि के जीवो मे

वानव्यन्तर देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (संखेज्जवासाउय० तहेव, देखो पाठ ५८ २० २) उनमे प्रथम के तीन गमकों मे छ लेश्या, मध्यम के तीन गमकों मे चार लेश्या तथा शेष के तीन गमकों मे छ लेश्या होती है (५८ ९ ०)।

—भग० श २४ । उ २२ । प्र २-४ । पृ० ८४७

५८ २० ४ असख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि मे वानव्यतर देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : असख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से वानव्यतर देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**जइ मणुस्स० असंखेज्जवासाउयाणं जहेव नागकुमाराणं उद्देसे तहेव वत्तव्वया। × × × सेसं तहेव × × ×**) उनमे नौ गमकों मे ही चार लेश्या होती हैं (५८ ९ ४)।

—भग० श २४ । उ २२ । प्र ५ । पृ० ८४७

•५८ २० ५ (पर्याप्त) सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि मे वानव्यतर देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : (पर्याप्त) सख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से वानव्यतर देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (× × × **संखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से जहेव नागकुमारुद्देसए** × × ×) उनमे नौ गमकों मे ही छ लेश्या होती हैं (५८ ९ ५)।

—भग० श २४ । उ २२ । प्र ५ । पृ० ८४७

५८ २१ ज्योतिषी देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

•५८ २१ १ असख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से ज्योतिषी देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१ से ४ व ७ से ९ असख्यात् वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से ज्योतिषी देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**असंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए जोइसिएसु उववज्जित्तए** × × × **अवसेसं जहा असुरकुमारुद्देसए** × × × एवं अणुबंधो वि सेसं तहेव × × ×—प्र ३। ग० १। सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो × × × एस चेव वत्तव्वया × × ×—प्र ४। ग० २। सो चेव उक्कोसकालट्ठिईएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया × × ×—प्र० ५। ग० ३। सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ जाओ × × × तेणं भंते जीवा० ? एस चेव वत्तव्वया × × × एवं अणुबंधोऽवि सेसं तहेव। × × × जहन्नकालट्ठिइयस्स एस चेव एक्को गमो—प्र ६-७। ग० ४। सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिईओ जाओ सा चेव ओहिया वत्तव्वया × × × एवं अणुबंधोवि सेसं तं चेव। एवं पच्छिमा तिन्नि

गमगा णेयव्वा। ××× णवर सत्त गमगा - प्र ८। ग० ७-९) उनमे सात गमक होते तथा इन सातो गमको मे प्रथम की चार लेश्या होती है ('५८'८०)। गमक ५ व ६ नही होते।

—भग० श २४। उ २३। प्र ३ ८। पृ० ८४७-४८

५८'२१ २ सख्यात् वर्ष की आयुवाले सन्नी पचेन्द्रिय तिर्यच योनि से ज्योतिषी देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-९ : संख्यात वर्ष की आयुवाले सन्नी पचेन्द्रिय तिर्यच योनि से ज्योतिषी देवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव है (**जइ संखेज्जवासाउयसन्निपंचिदिय० ? संखेज्जवासाउयाणं जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणाणं तहेव नव वि गमा भाणियव्वा। ××× सेसं तहेव निरवसेसं भाणियव्वं**) उनमे प्रथम के तीन गमको मे छ लेश्या, मध्यम के तीन गमको मे चार लेश्या तथा शेष के तीन गमको मे छ लेश्या होती हैं (५८ ८'३)।

—भग० श २४। उ २३। प्र ६। पृ० ८४८

५८'२१ ३ असख्यात् वर्ष की आयुवाले सन्नी मनुष्य योनि से ज्योतिषी देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-४, ७-९ : असख्यात् वर्ष की आयुवाले सन्नी मनुष्य योनि से ज्योतिषी देवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**असंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते ! जे भविए जोइसिएसु उववज्जित्तए ××× एवं जहा असंखेज्जवासाउयसन्निपंचिदियस्स जोइसिएसु चेव उववज्जमाणस्स सत्त गमगा तहेव मणुस्साणवि ××× सेसं तहेव निरवसेसं जाव—'संवेहो'त्ति**) उनमे सात गमक होते हैं। इन सातो गमको मे प्रथम की चार लेश्या होती हैं ('५८ ८४)। गमक ५ व ६ नही होते।

—भग० श २४। उ २३। प्र ११। पृ० ८४८

५८ २१ ४ सख्यात् वर्ष की आयुवाले सन्नी मनुष्य योनि से ज्योतिषी देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-९ : सख्यात् वर्ष की आयुवाले सन्नी मनुष्य योनि से ज्योतिषी देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**जइ संखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से० ? संखेज्जवासाउयाण जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणाण तहेव नव गमगा भाणियव्वा। ××× सेसं तं चेव निरवसेसं ×××**) उनमे नौ गमको मे ही छ लेश्या होती हैं (५८ ८५)।

—भग० श २४। उ २३। प्र १२। पृ० ८४८

५८ २२ सौधर्म देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

५८ २२ १ असंख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से सौधर्म देवो में उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-४, ७-९ : असंख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि के जीवो से सौधर्म देवो में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**असंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्ख-जोणिए णं भंते। जे भविए सोहम्मगदेवेसु उववज्जित्तए × × × ते णं भंते। अवसेसं जहा जोइसिएसु उववज्जमाणस्स। × × × एवं अणुबंधो वि, सेसं तहेव × × ×** -प्र० ३-४। ग० १। **सो चेव जहन्नकालट्ठिईएसु उववन्नो एस चेव वत्तव्वया × × ×** —प्र० ४। ग० २। **सो चेव उक्कोसकालट्ठिइएसु उववन्नो × × × एस चेव वत्तव्वया × × × सेसं तहेव × × ×**—प्र० ५। ग० ३। **सो चेव अप्पणा जहन्नकाल-ट्ठिइओ जाओ × × × एस चेव वत्तव्वया × × × सेसं तहेव × × ×**—प्र० ६। ग० ४। **सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिइओ जाओ, आदिल्लगमगसरिसा तिन्नि गमगा णेयव्वा × × ×**—प्र० ७। ग० ७-९) उनमे सात गमक होते हैं तथा इन सातो गमको मे प्रथम की चार लेश्याए होती हैं (५८ २१ १)।

—भग० श २४। उ २४। प्र ३-७। पृ० ८४६

५८ २२ २ संख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से सौधर्म देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवो में —

गमक—१-९ : संख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि के जीवो से सौधर्म देवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**जइ संखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदिय० ? संखेज्जवासाउयस्स जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणस्स तहेव णव वि गमगा × × × सेसं तं चेव**) उनमें प्रथम के तीन गमको में छ: लेश्याएँ, मध्यम के तीन गमको मे चार लेश्याए तथा शेष के तीन गमको में छ लेश्याए होती हैं (५८ ८ ३)।

—भग० श २४। उ २४। प्र ८। पृ० ८४६

५८ २२ ३ असंख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से सौधर्मकल्प देवा मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे —

गमक—१ ४, ७ ९ असंख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से सौधर्मकल्प देवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**असंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते। जे भविए सोहम्मकप्पे देवत्ताए उववज्जित्तए० ? एवं जहेव असंखेज्जवासाउयस्स सन्नि-पंचिंदियतिरिक्खजोणियस्स सोहम्मे कप्पे उववज्जमाणस्स तहेव सत्त गमगा × × ×। सेसं तहेव निरवसेसं**) उनमें सात गमक होते हैं तथा इन सातो गमको मे प्रथम की चार लेश्याए होती हैं (५८ २२ १)।

—भग० श २४। उ २४। प्र १०। पृ० ८४६

'५८'२२'४ संख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य योनि से सौधर्म देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : संख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य योनि से सौधर्म देवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**जइ संखेज्जवासाउयसन्निमणुस्सेहिंतो० ? एवं संखेज्जवासा-उयसन्निमणुस्साण जहेव असुरकुमारेसु उववज्जमाणाण तहेव णव गमगा भाणि-यव्वा। ××× सेसं तं चेव**) उनमें नौ गमकों में ही छः लेश्याएं होती हैं ('५८'८५)।

—भग० श २४ । उ २४ । प्र ११ । पृ० ८४९

'५८'२३ ईशान देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

'५८'२३'१ असंख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च योनि से ईशान देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-४, ७-९ : असंख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से ईशान देवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**ईसाणदेवाणं एस चेव सोहम्मगदेवसरिसा वत्तव्वया। ××× सेसं तहेव**) उनमें सात गमक होते हैं तथा इन सातों गमकों में प्रथम की चार लेश्याएं होती हैं ('५८'२२'१)।

—भग० श २४ । उ २४ । प्र १२ । पृ० ८४९-५०

'५८'२३'२ संख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से ईशान देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-९ : संख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से ईशान देवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**संखेज्जवासाउयाण तिरिक्खजोणियाण मणुस्साण य जहेव सोहम्मेसु उववज्जमाणाण तहेव निरवसेसं णव वि गमगा**) उनमें प्रथम के तीन गमकों में छः लेश्याएं, मध्यम के तीन गमकों में चार लेश्याएं तथा शेष के तीन गमकों में छः लेश्याएं होती हैं ('५८'२२'२)।

—भग० श २४ । उ २४ । प्र १४ । पृ० ८५०

'५८'२३'३ असंख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य योनि से ईशान देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-४, ७-९ : असंख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य योनि से ईशान देवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**असंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्स वि तहेव ××× जहा पंचिदियतिरिक्खजोणियस्स असंखेज्जवासाउयस्स ××× सेसं तहेव**) उनमें सात गमक होते हैं तथा इन सातों गमकों में प्रथम की चार लेश्याएं होती हैं ('५८'२२'३)।

—भग० श २४ । उ २४ । प्र १३ । पृ० ८५०

५८ २३'४ सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से ईशान देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ . सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से ईशान देवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ २३ ०) उनमें नो गमकों मे ही छ लेश्याए होती हैं (५८ २२ ४ 7 ५८ ८ ५)।

—भग० श २४ । उ २४ । प्र १४ । पृ० ८५०

५८ २४ सनत्कुमार देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे —

५८ २४ १ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तियच योनि से सनत्कुमार देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ ' पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से सनत्कुमार देवों में होने योग्य जो जीव हैं (**पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निपंचिंदिय-तिरिक्खजोणिए णं भंते ! जे भविए सनंकुमारदेवेसु उववज्जित्तए० ? अवसेसा परिमाणादीया भवाएसपज्जवसाणा सच्चेव वत्तव्वया भाणियव्वा जहा सोहम्मे उववज्जमाणस्स । × × × जाहे य अप्पणा जहन्नकालट्ठिईओ भवइ ताहे तिसु वि गमएसु पंच लेस्साओ आदिल्लाओ कायव्वाओ, सेसं तं चेव**) उनमे प्रथम के तीन गमको मे छः लेश्याए, मध्यम के तीन गमकों में पाँच लेश्याए तथा शेष क तीन गमकों मे छः लेश्याए होती हैं (५८ २२ २)।

—भग० श २४। उ २४ । प्र १६ । पृ० ८५०

५८ २४ २ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि मे सनत्कुमार देवो में उत्पन्न होने योग्य जीवो मे '—

गमक—१-६ : पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि मे सनत्कुमार देवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव है (**जइ मणुस्सेहिंतो उववज्जंति० ? मणुस्साण जहेव सक्करप्पभाए उववज्जमाणाण तहेव णव वि गमा भाणियव्वा**) उनमे नो गमको मे ही छः लेश्याए होती हैं (५८ २२)।

—भग० श २४ । उ २४ । प्र १७ । पृ० ८५०

'५८ २५ माहेन्द्र देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे —

५८ २५ १ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से माहेन्द्र देवो मे उत्पन्न योग्य जीवो मे —

गमक—१ ६ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से माहेन्द्र देवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**माहिंदगदेवा णं भंते ! × × × जहा सणंकुमारगदेवाण वत्तव्वया तहा माहिंदगदेवाण भाणियव्वा**) उनमे प्रथम के × × ×

गमकों में छः लेश्याएं, मध्यम के तीन गमकों में पाँच लेश्याए तथा शेष के तीन गमकों में छः लेश्याएं होती हैं (५८'२४'१)।

—भग० श २४ । उ २४ । प्र १८ । पृ० ८५०

'५८ २५ २ पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से माहेन्द्र देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से माहेन्द्र देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ २५'१) उनमे नौ गमको मे ही छः लेश्याएं होती हैं (५८'२४'२) ।

—भग० श २४ । उ २४ । प्र १८ । पृ० ८५०

'५८ २६ ब्रह्मलोक देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

५८ २६'१ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से ब्रह्मलोक देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से ब्रह्मलोक देवो में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**एवं बंभलोगदेवाण वि वत्तव्वया**) उनमें प्रथम के तीन गमकों में छः लेश्याए, मध्यम के तीन गमको में पाँच लेश्याएं तथा शेष के तीन गमकों मे छ. लेश्याएं होती हैं (५८'२४ १)।

—भग० श २४ । उ २४ । प्र १८ । पृ० ८५०

'५८'२६ २ पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से ब्रह्मलोक देवो में उत्पन्न योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से ब्रह्मलोक देवो में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८'२६ १) उनमे नौ गमकों मे ही छः लेश्याएं होती हैं ('५८'२४'२)।

५८ २७ लातक देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

'५८'२७ १ पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि से लांतक देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से लातक देवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (× × × **जहा सणकुमारगदेवाण वत्तव्वया तहा माहिंदगदेवाणं भाणियव्वा। × × × एवं जाव - सहस्सारो। × × × लंतगादीण जहन्नकालट्ठिइयस्स तिरिक्खजोणियस्स तिसु वि गमएसु छप्पि (छव्वि ?) लेस्साओ कायव्वाओ**) उनमें नौ गमकों में ही छः लेश्याए होती हैं।

—भग० श० २४ । उ २४ । प्र १८ । पृ० ८५०

५८·२७ २ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से लातक देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से लातक देवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ २७ १) उनमे नौ गमकों मे ही छ लेश्याए होती हैं (·५८ २४ २)।

—भग० श २४। उ २४। प्र १८। पृ० ८५०

५८ २८ महाशुक्रदेवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

५८ २८ १ पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से महाशुक्र देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-९ : पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से महाशुक्रदेवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ २७ १) उनमे नौ गमकों मे ही छः लेश्याए होती हैं (५८ २४ १)।

—भग० श २४। उ २४। प्र १८। पृ० ८५०

५८ २८ २ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से महाशुक्र देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से महाशुक्र देवों में उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ २७ १) उनमे नौ गमकों मे ही छ लेश्याए होती हैं (५८ २४ २)।

—भग० श २४। उ २४। प्र १८। पृ० ८५०

५८ २९ सहस्रारदेवों में उत्पन्न होने योग्य जीवो में :—

५८ २९ १ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से सहस्रार देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी पचेंद्रिय तिर्यंच योनि से सहस्रार देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ २७ १) उनमे नौ गमको में ही छः लेश्याए होती हैं (५८ २४ १)।

—भग० श २४। उ २४। प्र १८। पृ० ८५०

५८ २९ २ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से सहस्रार देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों में —

गमक—१-९ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से सहस्रार देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ २७ १) उनमें नौ गमको मे ही छ लेश्याए होती हैं (५८ २४ २)।

—भग० श २४। उ २४। प्र १८। पृ० ८५०

५८ ३० आनत देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

५८ ३० १ पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि मे आनत देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से आनत देवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**पज्जत्तसंखेज्जवासाउयसन्निमणुस्से णं भंते। जे भविए आणयदेवेसु उववज्जित्तए० ? मणुस्साण य वत्तव्वया जहेव सहस्सारेसु उववज्जमाणाणं। ××× सेसं तहेव जाव—अणुबंधो। ××× एव सेसा वि अट्ठ गमगा भाणियव्वा ××× एवं जाव-अच्चुयदेवा ×××**) उनमे नौ गमको मे ही छः लेश्याएँ होती है (५८·२६ २)।

—भग० श २४। उ २४। प्र २०। पृ० ८५०

५८ ३१ प्राणत देवो मे उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

५८ ३१ १ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से प्राणत देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

गमक—१-६ : पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी मनुष्य योनि से प्राणत देवो मे उत्पन्न होने योग्य योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ ३० १) उनमे नौ गमको मे ही छः लेश्याए होती हैं।

—भग० २४। उ २४। प्र २०। पृ० ८५०

·५८ ३२ आरण देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवो मे :—

५८ ३२ १ पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से आरण देवों में उत्पन्न होने योग्य जीवों में :—

गमक—१-६ : पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से आरण देवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (देखो पाठ ५८ ३० १) उनमे नौ गमको में ही छः लेश्याए होती हैं।

—भग० श २४। उ २४। प्र २०। पृ० ८५०

५८ ३३ अच्युत देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

·५८ ३३ १ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से अच्युत देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-६ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से अच्युत देवो में उत्पन्न होने योग्य जो जीव है (देखो पाठ ५८ ३० १) उनमे नौ गमको मे ही छः लेश्याए होती हैं।

—भग० श २४। उ २४। प्र २०। पृ० ८५०

५८ ३४ ग्रैवयक देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

५८ ३४ १ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से ग्रैवयक देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१-९ : पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से ग्रैवयक देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**गेवेज्जगदेवा णं भंते ! × × × एस चेव वत्तव्वया × × ×**) उनमें नौ गमकों में ही छः लेश्याए होती हैं।

—भग० श २४ । उ २४ । प्र २१ । पृ० ८५१

५८ ३५ विजय, वैजयत, जयत तथा अपराजित देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

५८ ३५ १ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से विजय, वैजयत, जयत तथा अपराजित देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१, ९ : पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से विजय, वैजयन्त, जयन्त तथा अपराजित देवो मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**विजय-वेजयंत-जयंत-अपराजियदेवा णं भंते ! × × × एस चेव वत्तव्वया निरवसेसा, जाव—'अणुवंधो'त्ति । × × × एवं सेसा वि अट्ठ गमगा भाणियव्वा × × × मणूसे लद्धी णवसु वि गमएसु जहा गेवेज्जेसु उववज्जमाणस्स × × ×**) उनमें नौ गमकों मे ही छः लेश्याए होती हैं (५८ ३४ १)।

—भग० श २४ । उ २४ । प्र २२ । पृ० ८५१

५८ ३६ सर्वार्थसिद्ध देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

५८ ३६ १ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से सर्वार्थसिद्ध देवों मे उत्पन्न होने योग्य जीवों मे :—

गमक—१, ४, ७ पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी मनुष्य योनि से सर्वार्थसिद्ध देवों मे उत्पन्न होने योग्य जो जीव हैं (**सव्वट्ठसिद्धगदेवा**) (**से णं भंते ! × × × अवसेसा जहा विजयाईसु उववज्जंताणं × × ×** —प्र २३-२४ । ग० १ । **सो चेव अप्पणा जहन्नकालट्ठिइओ जाओ एस वत्तव्वया × × × सेसं तहेव × × ×**—प्र २५ । ग० ४ । **सो चेव अप्पणा उक्कोसकालट्ठिइओ जाओ, एस चेव वत्तव्वया × × × सेसं तहेव, जाव—'भवाएसो'त्ति । × × ×**—प्र २६ । ग० ७ । **एए तिन्नि गमगा सव्वट्ठसिद्धगदेवाणं × × ×**) उनमे तीनों गमकों मे ही छः लेश्याए होती हैं (५८ ३५ १)। इसमे पहला, चौथा तथा सातवाँ तीन ही गमक होते है।

—भग० श २४ । उ २४ । प्र २३-२६ । पृ० ८५१

·५८ के सभी पाठ भगवती शतक २४ से लिए गए है। इस शतक मे स्व/पर योनि से स्व/पर योनि मे उत्पन्न होने योग्य जीवो का नौ गमको तथा उपपात के अतिरिक्त निम्न लिखित बीस विषयो की अपेक्षा से विवेचन हुआ हे :—

(१) स्थिति, (२) सख्या, (३) सहनन, (४) शरीरावगाहना, (५) सस्थान, (६) लेश्या, (७) दृष्टि, (८) ज्ञान, (९) योग, (१०) उपयोग, (११) सज्ञा, (१२) कषाय, (१३) इंद्रिय, (१४) समुद्घात, (१५) वेदन, (१६) वेद, (१७) कालस्थिति, (१८) अध्यवसाय, (१९) कालादेश तथा (२०) भवादेश। हमने लेश्या की अपेक्षा से पाठ ग्रहण किया हैं। गमको का विवरण पृ० १०० पर देखें।

·५९ जीव समूहों में कितनी लेश्या :—

सिय भंते! जाव—चत्तारि पंच पुढविकाइया एगयओ साहारणसरीरं बंधंति ××× ? नो इणट्ठे समट्ठे। ××× पत्तेयं सरीरं बंधंति। ××× तेसिणं भंते! जीवाणं कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा! चत्तारि लेस्साओ पन्नत्ताओ, तं जहा—कण्हलेस्सा, नीललेस्सा, काऊलेस्सा, तेऊलेस्सा।

सिय भंते! जाव—चत्तारि पंच आउक्काइया एगयओ साहारणसरीरं बंधंति ××× एवं जो पुढविकाइयाणं गमो सो चेव भाणियव्वो।

सिय भंते! जाव—चत्तारि पंच तेउक्काइया० एवं चेव। नवरं उववाओ ठिई उव्वट्टणा य जहा पन्नवणाए, सेसं तं चेव। वाउकाइयाणं एवं चेव।

टीका—लेश्यायामपि यतस्तेजसोऽप्रशस्तलेश्या एव पृथिवीकायिकास्त्वाद्यचतुर्लेश्या', यच्चेदमिह न सूचितं तद्विचित्रत्वात्सूत्रगतेरिति।

सिय भंते! जाव—चत्तारि पंच वणस्सइकाइया० पुच्छा। गोयमा! जो इणट्ठे समट्ठे। अणंता वणस्सइकाइया एगयओ साहारणसरीरं बंधंति। सेसं जहा तेउकाइयाण जाव—उव्वट्टंति ××× सेसं तं चेव।

—भग० श १९। उ ३। प्र० १, २, १७, १८, १९। पृ० ७८१-८२

सिय भंते! जाव—चत्तारि पंच बेंदिया एगयओ साहारणसरीरं बंधंति ××× णो इणट्ठे समट्ठे। ××× पत्तेयसरीरं बंधंति। ××× तेसिणं भंते! जीवाण कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा! तओ लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा, नीललेस्सा, काऊलेस्सा। ××× एवं तेइंदिया(ण) वि, एवं चउरिंदिया(ण) वि। ××× सिय भंते! जाव चत्तारि पंच पंचिंदिया एगयओ साहारण० ? एवं जहा बेंदियाण, नवरं छल्लेसाओ।

—भग० श २०। उ १। प्र १ से ४। पृ० ७९०

दो, तीन, चार, पाँच अथवा बहु पृथ्वीकायिक जीव साधारण शरीर नहीं बाँधते हैं, प्रत्येक शरीर बांधते हैं। इन पृथ्वीकायिक जीव समूह के प्रथम की चार लेश्याएँ होती हैं।

इसी प्रकार अप्कायिक जीव समूह साधारण शरीर नहीं, प्रत्येक शरीर बांधते हैं और इनके चार लेश्याएँ होती हैं।

अग्निकायिक तथा वायुकायिक जीव समूह भी साधारण शरीर नहीं, प्रत्येक शरीर बाँधते हैं और इनके प्रथम की तीन लेश्याएँ होती हैं।

दो यावत् पाँच यावत् संख्यात यावत् असंख्यात वनस्पतिकायिक जीव समूह साधारण शरीर नहीं बांधते हैं, प्रत्येक शरीर बांधते हैं। इन वनस्पतिकायिक जीव समूहों के प्रथम की चार लेश्याएँ होती हैं। लेकिन अनन्त वनस्पतिकायिक जीव समूह साधारण शरीर बांधते हैं। इन वनस्पतिकायिक जीव समूहों के प्रथम की तीन लेश्याएँ होती हैं।

द्वीन्द्रिय यावत् चतुरिन्द्रिय जीव समूह साधारण शरीर नहीं बांधते हैं, प्रत्येक शरीर बांधते हैं। इन जीव समूहों के प्रथम की तीन लेश्याएँ होती हैं।

पचेंद्रिय जीव समूह भी साधारण शरीर नहीं बांधते हैं, प्रत्येक शरीर बांधते हैं। इन पचेंद्रिय जीव समूह के छः लेश्याएँ होती हैं।

---

६ से ८ सलेशी जीव

·६१ सलेशी जीव और समपद :—

·६१·१ सलेशी जीव-दण्डक और समपद :—

सलेस्सा णं भंते ! नेरइया सव्वे समाहारा, समसरीरा, समुस्सासनिस्सासा सव्वे वि पुच्छा ? गोयमा ! एवं जहा ओहिओ गमओ तहा सलेस्सागमओ वि निरवसेसो भाणियव्वो जाव वेमाणिया।

—पण्ण० प १७ । उ १ । सू ११ । पृ० ४३७

सर्व सलेशी नारकी समाहारी, समशरीरी, समोच्छ्वासनिश्वासी, समकर्मी, समवर्णी, समलेशी, समवेदनावाले, समक्रियावाले समायुष्यवाले तथा समोपपन्नक नहीं हैं।

देखो औघिक गमक -पण्ण० प १७ । उ १ । सू १ से ६ । पृ० ४३४-३५

सर्व सलेशी असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार समाहारी यावत् समोपपन्नक नहीं हैं।

देखो—पण्ण० प १७ । उ १ । सू ७ । पृ० ४३५-३६

सर्व सलेशी पृथ्वीकाय समाहारी, समकर्मी, समवर्णी तथा समलेशी नहीं हैं लेकिन समवेदनावाले तथा समक्रियावाले हैं। इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय तक जानना।

देखो—पण्ण० प १७ । उ १ । सू ८ । पृ० ४३६

सर्व सलेशी तिर्यंच पंचेन्द्रिय सलेशी नारकी की तरह समाहारी यावत समोपपन्नक नही हैं।

देखो—पण्ण० प १७। उ १। सू ८। पृ० ४३६

सर्व सलेशी मनुष्य समाहारी यावत् समोपपन्नक नही हैं।

देखो—पण्ण० प १७। उ १। सू ६। पृ० ४३६-३७

सर्व सलेशी वानव्यंतर देव असुरकुमार की तरह समाहारी यावत् समोपपन्नक नही हैं।

देखो—पण्ण० प १७। उ १। सू १०। पृ० ४३७

सर्व ज्योतिष-वैमानिक देव भी असुरकुमार की तरह समाहारी यावत् समोपपन्नक नही हैं।

देखो—पण्ण० प १७। उ १। सू १०। पृ० ४३७

·६१·२ कृष्णलेशी जीव-दण्डक और समपद :—

कण्हलेस्सा ण भंते! नेरइया सव्वे समाहारा पुच्छा? गोयमा! जहा ओहिया, नवरं नेरइया वेयणाए माइमिच्छदिट्ठीउववन्नगा य अमाइसम्मदिट्ठीउववन्नगा य भाणियव्वा, सेसं तहेव जहा ओहियाणं। असुरकुमारा जाव वाणमंतरा एते जहा ओहिया, नवरं मणुस्साण किरियाहिं विसेसो– जाव तत्थ ण जे ते सम्मदिट्ठी ते तिविहा पन्नत्ता, तंजहा—संजया-असंजया-संजयासंजया य, जहा ओहियाण, जोइसियवेमाणिया आइल्लियासु तिसु लेस्सासु ण पुच्छिज्जंति।

—पण्ण० प १७। उ १। सू ११। पृ० ४३७

कृष्णलेशी सर्व नारकी औघिक नारकी की तरह समाहारी यावत् समोपपन्नक नही हैं लेकिन वेदना में मायी मिथ्यादृष्टिउपपन्नक और अमायी सम्यग्दृष्टिउपपन्नक कहना। बाकी सर्व जैसा औघिक नारकी का कहा वैसा जानना। असुरकुमार से लेकर वानव्यंतर देव तक औघिक असुरकुमार की तरह कहना परन्तु मनुष्य की क्रिया मे विशेषता है यावत् उनमें जो सम्यग् दृष्टि हैं वे तीन प्रकार के हैं—यथा सयत, असयत, सयतासंयत इत्यादि जैसा औघिक मनुष्य के विषय में कहा—वैसा ही जानना।

ज्योतिषी तथा वैमानिक देवों के सम्बन्ध में आदि की तीन लेश्या को लेकर पृच्छा नही करनी।

·६१·३ नीललेशी जीव-दण्डक और समपद :—

एवं जहा कण्हलेस्सा विचारिया तहा नीललेस्सा वि विचारेयव्वा।

—पण्ण० प १७। उ १। सू ११। पृ० ४३७

जैसा कृष्णलेशी जीव-दण्डक का विवेचन किया —वैसा नीललेशी जीव-दण्डक का भी विवेचन करना।

·६१४ कापोतलेशी जीव-दण्डक और समपद—

काऊलेस्सा नेरइएहिंतो आरब्भ जाव वाणमंतरा, नवरं काऊलेस्सा नेरइया वेयणाए जहा ओहिया।

—पण्ण० प १७। उ १। सू ११। पृ० ४३७

कापोत लेश्या का नारकी से लेकर वानव्यंतर देव तक (कृष्णलेशी नारकी की तरह) विचार करना लेकिन कापोतलेशी नारकी की वेदना—औधिक नारकी की तरह जानना।

·६१५ तेजोलेशी जीव-दण्डक और समपद—

तेऊलेस्साणं भंते! असुरकुमाराणं ताओ चेव पुच्छाओ? गोयमा! जहेव ओहिया तहेव, नवरं वेयणाए जहा जोइसिया।

पुढविआउवणस्सइपंचेंदियतिरिक्खमणुस्सा जहा ओहिया तहेव भाणियव्वा, नवरं मणुस्सा किरियाहिं जे संजया ते पमत्ता य अपमत्ता य भाणियव्वा, सरागा वीयरागा नत्थि। वाणमंतरा तेऊलेस्साए जहा असुरकुमारा, एवं जोइसियवेमाणिया वि, सेसं तं चेव।

—पण्ण० प १७। उ १। सू ११। पृ० ४३७

तेजोलेशी सर्व असुरकुमार औधिक असुरकुमार की तरह समाहारी यावत् समोपपन्नक नहीं हैं परन्तु वेदना—ज्योतिषी की तरह समझना।

तेजोलेशी सर्व पृथ्वीकाय अप्काय-वनस्पतिकाय-तिर्यंचपंचेन्द्रिय मनुष्य औधिक की तरह समझना परन्तु मनुष्य की क्रिया में विशेषता है—उनमें जो संयत हैं वे प्रमत्त तथा अप्रमत्त के भेद से दो प्रकार के हैं परन्तु सराग तथा वीतराग—ऐसे भेद नहीं करना।

तेजोलेशी वानव्यंतर देव असुरकुमार की तरह समाहारी यावत् समोपपन्नक नहीं है।

इसी प्रकार ज्योतिषी तथा वैमानिक देवों के सम्बन्ध में समझना।

·६१६ पद्मलेशी जीव-दंडक और समपद —

एवं पम्हलेस्सा वि भाणियव्वा, नवरं जेसिं अत्थि। ××× नवरं पम्हलेस्स सुक्कलेस्साओ पंचेंदियतिरिक्खजोणियमणुस्सवेमाणियाणं चेव।

—पण्ण० प १७। उ १। सू ११। पृ० ४३७

जैसा तेजोलेशी जीव दंडक के विषय में कहा, उसी प्रकार पद्मलेशी जीव दंडक के विषय में समझना। परन्तु जिसके पद्मलेश्या होती है उसी के कहना।

सर्व सलेशी तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय सलेशी नारकी की तरह समाहारी यावत समोपपन्नक नही है।

देखो—पण्ण० प १७ । उ १ । सू ८ । पृ० ४३६

सर्व सलेशी मनुष्य समाहारी यावत् समोपपन्नक नहीं हैं।

देखो—पण्ण० प १७ । उ १ । सू ६ । पृ० ४३६-३७

सर्व सलेशी वानव्यंतर देव असुरकुमार की तरह समाहारी यावत् समोपपन्नक नही हैं।

देखो—पण्ण० प १७ । उ १ । सू १० । पृ० ४३७

सर्व ज्योतिष-वैमानिक देव भी असुरकुमार की तरह समाहारी यावत् समोपपन्नक नही हैं।

देखो—पण्ण० प १७ । उ १ । सू १० । पृ० ४३७

'६१'२ कृष्णलेशी जीव-दण्डक और समपद :—

कण्हलेस्सा ण भंते ! नेरइया सव्वे समाहारा पुच्छा ? गोयमा ! जहा ओहिया, नवरं नेरइया वेयणाए माइमिच्छदिट्ठीउववन्नगा य अमाइसम्मदिट्ठीउववन्नगा य भाणियव्वा, सेसं तहेव जहा ओहियाणं। असुरकुमारा जाव वाणमंतरा एते जहा ओहिया, नवरं मणुस्साण किरियाहिं विसेसो– जाव तत्थ ण जे ते सम्मदिट्ठी ते तिविहा पन्नत्ता, तंजहा—संजया-असंजया-संजयासंजया य, जहा ओहियाण, जोइसियवेमाणिया आइल्लियासु तिसु लेस्सासु ण पुच्छिज्जंति।

—पण्ण० प १७ । उ १ । सू ११ । पृ० ४३७

कृष्णलेशी सर्व नारकी औधिक नारकी की तरह समाहारी यावत् समोपपन्नक नही हैं लेकिन वेदना में मायी मिथ्यादृष्टिउपपन्नक और अमायी सम्यग्दृष्टिउपपन्नक कहना। बाकी सर्व जैसा औधिक नारकी का कहा वैसा जानना। असुरकुमार से लेकर वानव्यंतर देव तक औधिक असुरकुमार की तरह कहना परन्तु मनुष्य की क्रिया मे विशेषता है यावत् उनमें जो सम्यग् दृष्टि हैं वे तीन प्रकार के हैं—यथा संयत, असंयत, संयतासंयत इत्यादि जैसा औधिक मनुष्य के विषय में कहा—वैसा ही जानना।

ज्योतिषी तथा वैमानिक देवों के सम्बन्ध में आदि की तीन लेश्या को लेकर पृच्छा नहीं करनी।

'६१'३ नीललेशी जीव-दण्डक और समपद :—

एवं जहा कण्हलेस्सा विचारिया तहा नीललेस्सा वि विचारेयव्वा।

—पण्ण० प १७ । उ १ । सू ११ । पृ० ४३७

जैसा कृष्णलेशी जीव-दण्डक का विवेचन किया—वैसा नीललेशी जीव-दण्डक का भी विवेचन करना।

६१ ४ कापोतलेशी जीव-दण्डक और समपद.—

काऊलेस्सा नेरइएहिंतो आरब्भ जाव वाणमंतरा, नवरं काऊलेस्सा नेरइया वेयणाए जहा ओहिया।

—पण्ण० प १७ । उ १ । सू ११ । पृ० ४३७

कापोत लेश्या का नारकी से लेकर वानव्यंतर देव तक (कृष्णलेशी नारकी की तरह) विचार करना लेकिन कापोतलेशी नारकी की वेदना—औघिक नारकी की तरह जानना।

६१ ५ तेजोलेशी जीव-दण्डक और समपद:—

तेऊलेस्साणं भंते ! असुरकुमाराणं ताओ चेव पुच्छाओ ? गोयमा ! जहेव ओहिया तहेव, नवरं वेयणाए जहा जोइसिया।

पुढविआउवणस्सइपंचेंदियतिरिक्खमणुस्सा जहा ओहिया तहेव भाणियव्वा, नवरं मणुस्सा किरियाहिं जे संजया ते पमत्ता य अपमत्ता य भाणियव्वा, सरागा वीयरागा नत्थि। वाणमंतरा तेऊलेस्साए जहा असुरकुमारा, एवं जोइसियवेमाणिया वि, सेसं तं चेव।

—पण्ण० प १७ । उ १ । सू ११ । पृ० ४३७

तेजोलेशी सर्व असुरकुमार औघिक असुरकुमार की तरह समाहारी यावत् समोपपन्नक नहीं हैं परन्तु वेदना—ज्योतिषी की तरह समझना।

तेजोलेशी सर्व पृथ्वीकाय-अप्काय-वनस्पतिकाय-तिर्यंचपंचेन्द्रिय मनुष्य औघिक की तरह समझना परन्तु मनुष्य की क्रिया में विशेषता है—उनमें जो संयत हैं वे प्रमत्त तथा अप्रमत्त के भेद से दो प्रकार के हैं परन्तु सराग तथा वीतराग—ऐसे भेद नहीं करना।

तेजोलेशी वानव्यंतर देव असुरकुमार की तरह समाहारी यावत् समोपपन्नक नहीं हैं।

इसी प्रकार ज्योतिषी तथा वैमानिक देवों के सम्बन्ध में समझना।

६१ ६ पद्मलेशी जीव-दण्डक और समपद —

एवं पम्हलेस्सा वि भाणियव्वा, नवरं जेसिं अत्थि। ××× नवरं पम्हलेस्स-सुक्कलेस्साओ पंचेंदियतिरिक्खजोणियमणुस्सवेमाणियाणं चेव।

—पण्ण० प १७ । उ १ । सू ११ । पृ० ४३७

जैसा तेजोलेशी जीव दंडक के विषयमें कहा, उसी प्रकार पद्मलेशी जीव दंडक के विषय में समझना। परन्तु जिसके पद्मलेश्या होती है उसी के कहना।

'६१ ७ शुक्ललेशी जीव-दंडक और समपद :—

सुक्कलेस्सा वि तहेव जेसिं अत्थि, सव्वं तहेव जहा ओहियाणं गमओ, नवरं पम्हलेस्ससुक्कलेस्साओ पंचेंदियतिरिक्खजोणियमणुस्सवेमाणियाण चेव न सेसाण त्ति।

—पण्ण० प १७ । उ १ । सू ११ पृ० ४३७

जैसा औघिक दंडक के विषय में कहा—वैसा ही शुक्ललेशी दंडक के विषय में समझना परन्तु जिसके शुक्ल लेश्या होती है उसी के कहना ।

सम्मुच्चयगाथा

सलेस्सा णं भंते ! नेरइया सव्वे समाहारगा ? ओहियाणं, सलेस्साणं, सुक्कलेस्साणं, एएसि णं तिण्हं एक्को गमो, कण्हलेस्साणं नीललेस्साणं वि एक्को गमो नवरं वेयणाए मायिमिच्छादिट्ठीउववन्नगा य, अमायिसम्मदिट्ठीउववन्नगा य भाणियव्वा। मणुस्सा किरियासु सरागवीयरागपमत्तापमत्ता ण भाणियव्वा। काऊलेसाए वि एसेव गमो। नवरं नेरइए जहा ओहिए दंडए तहा भाणियव्वा, तेऊलेस्सा, पम्हलेसा जस्स अत्थि जहा ओहिओ दंडओ तहा भाणियव्वा। नवरं मणुस्सा सरागा य वीयरागा य न भाणियव्वा।

गाहा—दुक्खाउए उदिन्ने आहारे कम्मवन्न लेस्सा य।
समवेयण-समकिरिया समाउए चेव बोधव्वा॥

—भग० श १ । उ २ । प्र ६७ । पृ० ३६३

'६२ लेश्या तथा प्रथम-अप्रथम :—

सलेस्से ण भंते! (पढमे-अपढमे) पुच्छा ? गोयमा! जहा आहारए, एवं पुहुत्तेण वि, कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा एवं चेव, नवरं जस्स जा लेस्सा अत्थि। अलेस्से णं जीवमणुस्ससिद्धे जहा नोसन्नी-नोअसन्नी।

—भग० श १८ । उ १ । प्र० १० । पृ० ७६२

सलेशी जीव (एकवचन बहुवचन) प्रथम नहीं, अप्रथम है। इसी तरह कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी तक जानना। जिस जीव के जितनी लेश्याएँ हो उसी प्रकार कहना। अलेशी जीव (जीव-मनुष्य-सिद्ध) प्रथम है, अप्रथम नहीं है।

'६३ सलेशी जीव चरम-अचरम :—

सलेस्सो जाव सुक्कलेस्सो जहा आहारओ, नवरं जस्स जा अत्थि [सव्वत्थ एगत्तेण सिय चरिमे, सिय अचरिमे, पुहुत्तेणं चरिमा वि अचरिमा वि] अलेस्सो जहा

नोसन्नी-नोअसन्नी [नोसन्नी-नोअसन्नी जीवपए सिद्धपए य अचरिमे मणुस्सपए चरिमे एगत्तपुहुत्तेणं]।

—भग० श १८ । उ १ । प्र २६ । पृ० ७६३

सलेशी, कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी जीव सर्वत्र एकवचन की अपेक्षा कदाचित् चरम भी कदाचित् अचरम भी होता है। बहुवचन की अपेक्षा सलेशी यावत् शुक्ललेशी चरम भी होते हैं, अचरम भी। अलेशी जीवपद से तथा सिद्धपद से अचरम है तथा मनुष्यपद से चरम है एकवचन से भी, बहुवचन से भी।

६४ सलेशी जीव की सलेशीत्व की अपेक्षा स्थिति :—

६४·१ सलेशी जीव की स्थिति :—

सलेसे णं भंते ! सलेसेत्ति पुच्छा। गोयमा ! सलेसे दुविहे पन्नत्ते, तंजहा—अणाइए वा अपज्जवसिए, अणाइए वा सपज्जवसिए।

—पण्ण० प १८ । द्वा ८ । सू ६ । पृ० ४५६

सलेशी जीव सलेशीत्व की अपेक्षा दो प्रकार के होते हैं। (१) अनादि अपर्यवसित तथा (२) अनादि सपर्यवसित।

६४·२ कृष्णलेशी जीव की स्थिति :—

कण्हलेस्से णं भंते ! कण्हलेसेत्ति कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं।

—पण्ण० प १८ । द्वा ८ । सू ६ । पृ० ४५६

— जीवा० प्रति ६ । सू २६६ । पृ० २५८

कृष्णलेशी जीव की कृष्णलेशीत्व की अपेक्षा जघन्य स्थिति अंतर्मुहूर्त की तथा उत्कृष्ट स्थिति साधिक अंतर्मुहूर्त तैंतीस सागरोपम की होती है।

६४·३ नीललेशी जीव की स्थिति :—

(क) नीललेस्से णं भंते ! नीललेसेत्ति पुच्छा ? गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं पलिओवमासंखिज्जइभागमब्भहियाइं।

—पण्ण० प १८ । द्वा ८ । सू ६ । पृ० ४५६

(ख) नीललेस्से णं भंते ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमब्भहियाइं।

— जीवा० प्रति ६ । सू २६६ । पृ० २५८

नीललेशी जीव की नीललेशीत्व की अपेक्षा जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त की तथा उत्कृष्ट स्थिति पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक दस सागरोपम की होती है।

६४ ४ कापोतलेशी जीव की स्थिति :—

(क) काउलेसे ण पुच्छा ? गोयमा ! जहन्नेण अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेण तिन्नि सागरोवमाइं पलिओवमासंखिज्जइभागमब्भहियाइं ।

—पण्ण० प १८ । द्वा ८ । सू ६ । पृ० ४५६

(ख) काऊलेस्से णं भंते ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेण तिन्नि सागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमब्भहियाइं ।

—जीवा० प्रति ६ । सू २६६ । पृ० २५८

कापोतलेशी जीव की कापोतलेशीत्व की अपेक्षा जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त की तथा उत्कृष्ट स्थिति पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक तीन सागरोपम की होती है।

६४'५ तेजोलेशी जीव की स्थिति :—

(क) तेऊलेसे ण पुच्छा ? गोयमा ! जहन्नेण अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं दो सागरोवमाइं पलिओवमासंखिज्जइभागमब्भहियाइं ।

—पण्ण० प १८ । द्वा ८ । सू ६ । पृ० ४५६

ख) तेऊलेस्से ण भंते ? गोयमा ! जहन्नेण अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं दोण्णि सागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमब्भहियाइं ।

—जीवा० प्रति ६ । सू २६६ । पृ० २५८

तेजोलेशी जीव की तेजोलेशीत्व की अपेक्षा जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त की तथा उत्कृष्ट स्थिति पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक दो सागरोपम की होती है।

६४ ६ पद्मलेशी जीव की स्थिति :—

(क) पम्हलेसे ण पुच्छा ? गोयमा ! जहन्नेण अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेण दस सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं ।

—पण्ण० प १८ । द्वा ८ । सू ६ । पृ० ४५६

(ख) पम्हलेस्से ण भंते ? गोयमा ! जहन्नेण अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेण दस सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं ।

—जीवा० प्रति ६ । सू २६६ । पृ० २५८

पद्मलेशी जीव की पद्मलेशीत्व की अपेक्षा जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त की तथा उत्कृष्ट स्थिति साधिक अन्तर्मुहूर्त दस सागरोपम की होती है।

६४ ७ शुक्ललेशी जीव की स्थिति :—

(क) सुक्कलेसे ण पुच्छा ? गोयमा ! जहन्नेण अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेण तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं ।

—पण्ण० प १८ । द्वा ८ । सू ६ । पृ० ४५६

(ख) सुक्कलेस्से ण भंते ? गोयमा ! जहन्नेण अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेण तेत्तीसं सागरोवमाइं अन्तोमुहुत्तमब्भहियाइं ।

—जीवा० प्रति ६ । सू २६६ । पृ० २५६

शुक्ललेशी जीव की शुक्ललेशीत्व की अपेक्षा जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त की तथा उत्कृष्ट स्थिति साधिक अन्तर्मुहूर्त तैंतीस सागरोपम की होती है ।

६४८ अलेशी जीव की स्थिति :—

(क) अलेस्से ण पुच्छा ? गोयमा ! साइए अपज्जवसिए ।

—पण्ण० प १८ । द्वा ८ । सू ६ । पृ० ४५६

(ख) अलेस्से ण भंते ? साइए अपज्जवसिए ।

—जीवा० प्रति ६ । सू २६६ । पृ० २५८

अलेशी जीव सादि अपर्यवसित होते हैं ।

६५ सलेशी जीव का लेश्या की अपेक्षा अतरकाल :—

६५.१ कृष्णलेशी जीव का :—

कण्हलेसस्स णं भंते ! अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं ।

—जीवा० प्रति ६ । सू २६६ । पृ० २५८

कृष्णलेशी जीव का कृष्णलेशीत्व की अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त का तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक अन्तर्मुहूर्त तैंतीस सागरोपम का होता है ।

६५.२ नीललेशी जीव का :—

एवं नीललेसस्स वि ।

—जीवा० प्रति ६ । सू २६६ । पृ० २५८

नीललेशी जीव का नीललेशीत्व की अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त का तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक अन्तर्मुहूर्त तैंतीस सागरोपम का होता है ।

६५.३ कापोतलेशी जीव का :—

(एवं) काऊलेसस्स वि ।

—जीवा० प्रति ६ । सू २६६ । पृ० २५८

कापोतलेशी जीव का कापोतलेशीत्व की अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त का तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक अन्तर्मुहूर्त तैंतीस सागरोपम का होता है ।

६५'४ तेजोलेशी जीव का :—

तेऊलेसस्स णं भंते ! अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं वणस्सइकालो ।

—जीवा० प्रति ६ । सू २६६ । पृ० २५८

तेजोलेशी जीव का तेजोलेशीत्व की अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त का तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल वनस्पति काल का अर्थात् अनंतकाल का होता है ।

६५'५ पद्मलेशी जीव का :—

एवं पम्हलेसस्स वि सुक्कलेसस्स वि दोण्ह वि एवमंतरं ।

—जीवा० प्रति ६ । सू २६६ । पृ० २५८

पद्मलेशी जीव का पद्मलेशीत्व की अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त का तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल वनस्पति काल का होता है ।

'६५'६ शुक्ललेशी जीव का :—

देखो पाठ— ६५ ५

शुक्ललेशी जीव का शुक्ललेशीत्व की अपेक्षा जघन्य अतरकाल अन्तर्मुहूर्त का तथा उत्कृष्ट अतरकाल वनस्पतिकाल का होता है ।

'६५'७ अलेशी जीव का :—

अलेसस्स णं भंते ! अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा ! साइयस्स अपज्जवसियस्स णत्थि अंतरं ।

— जीवा० प्रति ६ । सू २६६ । पृ० २५८

अलेशी जीव का अन्तरकाल नही होता है।

६६ सलेशी जीव काल की अपेक्षा सप्रदेशी-अप्रदेशी :—

(कालादेसे णं किं सपएसा, अपएसा ?) सलेस्सा जहा ओहिया, कण्हलेस्सा, नीललेस्सा, काऊलेस्सा जहा आहारओ, नवरं जस्स अत्थि एयाओ, तेऊलेस्साए जीवाइओ तियभंगो, नवरं पुढविकाइएसु, आउवनस्सईसु छब्भंगा, पम्हलेस्स-सुक्कलेस्साए जीवाइओ तियभंगो । अलेसे(सीं)हिं जीव-सिद्धेहिं तियभंगो, मणुस्सेसु छब्भंगा ।

—भग० श ६ । उ ४ । प्र ५ । पृ० ४६६-६७

यहाँ काल की अपेक्षा से जीव सप्रदेशी है या अप्रदेशी—ऐसी पृच्छा है । काल की अपेक्षा से सप्रदेशी व अप्रदेशी का अर्थ टीकाकार ने एक समय की स्थिति वाले को अप्रदेशी तथा द्वयादि समय की स्थिति वाले को सप्रदेशी कहा है । इस सम्बध मे उन्होने एक गाथा भी उद्धृत की है ।

जो जस्स पढमसमए वट्ठइ भावस्स सो उ अपएसो।
अण्णम्मि वट्टमाणो कालाएसेण सपएसो॥

सलेशी जीव (एकवचन) काल की अपेक्षा से नियमतः सप्रदेशी होता है। सलेशी नारकी काल की अपेक्षा से कदाचित् सप्रदेशी होता है, कदाचित् अप्रदेशी होता है। इसी प्रकार यावत् सलेशी वैमानिक देव तक समझना।

सलेशी जीव (एकवचन) काल की अपेक्षा से सप्रदेशी होता है क्योंकि सलेशी जीव अनादि काल से सलेशी जीव है। सलेशी नारकी उत्पन्न होने के प्रथम समय की अपेक्षा से अप्रदेशी कहलाता है तथा तत्पश्चात्-काल की अपेक्षा से सप्रदेशी कहलाता है।

सलेशी जीव (बहुवचन) काल की अपेक्षा से नियमतः सप्रदेशी होते हैं क्योंकि सर्व सलेशी जीव अनादि काल से सलेशी जीव हैं। दंडक के जीवों का बहुवचन से विवचन करने से काल की अपेक्षा से सप्रदेशी अप्रदेशी के निम्नलिखित छः भंग होते हैं :—

(१) सर्व सप्रदेशी, अथवा (२) सर्व अप्रदेशी, अथवा (३) एक सप्रदेशी, एक अप्रदेशी, अथवा (४) एक सप्रदेशी, अनेक अप्रदेशी, अथवा (५) अनेक सप्रदेशी, एक अप्रदेशी, अथवा (६) अनेक सप्रदेशी, अनेक अप्रदेशी।

सलेशी नारकियों यावत् स्तनितकुमारों में तीन भंग होते हैं, यथा—प्रथम, अथवा पंचम, अथवा षष्ठ। सलेशी पृथ्वीकायिकों यावत् वनस्पतिकायिकों में छठा विकल्प होता है। सलेशी द्वीन्द्रियों यावत् वैमानिक देवों में प्रथम, अथवा पंचम, अथवा षष्ठ विकल्प होता है।

कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी जीव (एकवचन) कदाचित् सप्रदेशी होता है, कदाचित् अप्रदेशी होता है। कृष्णलेशी-नीललेशी-कापोतलेशी नारकी यावत् वानव्यंतर देव कदाचित् सप्रदेशी, कदाचित् अप्रदेशी होता है। कृष्णलेशी-नीललेशी-कापोतलेशी जीव (बहुवचन) अनेक सप्रदेशी, अनेक अप्रदेशी होते हैं। कृष्णलेशी-नीललेशी-कापोतलेशी नारकियों यावत् वानव्यंतर देवों (एकेन्द्रिय बाद) में प्रथम, अथवा पाँचवाँ, अथवा छठा विकल्प होता है। कृष्णलेशी–नीललेशी कापोतलेशी एकेन्द्रिय (बहुवचन) अनेक सप्रदेशी, अनेक अप्रदेशी होते हैं।

तेजोलेशी जीव (एकवचन) कदाचित् सप्रदेशी, कदाचित् अप्रदेशी होता है। तेजोलेशी असुरकुमार यावत् वैमानिक देव (अग्निकायिक, वायुकायिक, तीन विकलेन्द्रिय बाद) कदाचित् सप्रदेशी, कदाचित् अप्रदेशी होता है। तेजोलेशी जीवों (बहुवचन) में पहला, अथवा पाँचवाँ अथवा छठा विकल्प होता है। तेजोलेशी असुरकुमारों यावत् वैमानिक देवों, (पृथ्वीकायिकों, अप्कायिकों, वनस्पतिकायिकों को छोड़कर) में पहला अथवा पाँचवाँ

अथवा छठा विकल्प होता है। तेजोलेशी पृथ्वीकायिकों, अप्कायिकों, वनस्पतिकायिकों में छओं विकल्प होते हैं।

पद्मलेशी-शुक्ललेशी जीव (एकवचन) कदाचित् सप्रदेशी, कदाचित् अप्रदेशी होता है। पद्मलेशी-शुक्ललेशी तिर्यंचपंचेन्द्रिय, मनुष्य, वैमानिक देव कदाचित् सप्रदेशी होते हैं, कदाचित् अप्रदेशी होते हैं। पद्मलेशी-शुक्ललेशी जीवों (बहुवचन) में पहला अथवा पाँचवाँ अथवा छठा विकल्प होता है। पद्मलेशी-शुक्ललेशी तिर्यंचपंचेन्द्रिय, मनुष्य, वैमानिक देवों में पहला अथवा पाँचवाँ अथवा छठा विकल्प होता है।

अलेशी जीव (एकवचन) कदाचित् सप्रदेशी, कदाचित् अप्रदेशी होता है। अलेशी सिद्ध, मनुष्य कदाचित् सप्रदेशी, कदाचित् अप्रदेशी होता है। अलेशी जीव (बहुवचन) में पहला अथवा पाँचवाँ अथवा छठा विकल्प होता है। अलेशी सिद्धों में पहला अथवा पाँचवाँ अथवा छठा विकल्प होता है। अलेशी मनुष्यों में छओं विकल्प होते हैं।

'६७ सलेशी जीव के लेश्या की अपेक्षा उत्पत्ति-मरण के नियम :—

'६७'१ लेश्या की अपेक्षा जीव-दंडक में उत्पत्ति-मरण के नियम :—

से नूणं भंते ! कण्हलेसे नेरइए कण्हलेसेसु नेरइएसु उववज्जइ, कण्हलेसे उववट्टइ, जल्लेसे उववज्जइ तल्लेसे उववट्टइ ? हंता गोयमा ! कण्हलेसे नेरइए कण्हलेसेसु नेरइएसु उववज्जइ, कण्हलेसे उववट्टइ, जल्लेसे उववज्जइ तल्लेसे उववट्टइ, एवं नीललेसे वि, एवं काऊलेसे वि। एवं असुरकुमाराण वि जाव थणियकुमारा, नवरं लेसा अब्भहिया। से नूणं भंते ! कण्हलेसे पुढविकाइए कण्हलेसेसु पुढविकाइएसु उववज्जइ, कण्हलेसे उव्वट्टइ, जल्लेसे उववज्जइ तल्लेसे उववट्टइ ? हंता गोयमा ! कण्हलेसे पुढविकाइए कण्हलेसेसु पुढविकाइएसु उववज्जइ, सिय कण्हलेसे उववट्टइ, सिय नीललेसे उववट्टइ, सिय काऊलेसे उववट्टइ, सिय जल्लेसे उववज्जइ सिय तल्लेसे उववट्टइ। एवं नील-काऊलेसासु वि। से नूणं भंते ! तेऊलेसेसु पुढविकाइएसु उववज्जइ पुच्छा ? हंता गोयमा ! तेऊलेसे पुढविकाइए तेऊलेसेसु पुढविकाइएसु उववज्जइ, सिय कण्हलेसे उववट्टइ, सिय नीललेसे उववट्टइ, सिय काऊलेसे उववट्टइ तेऊलेसे उववज्जइ, नो चेव णं तेऊलेसे उववट्टइ। एवं आउकाइया वणस्सइकाइया वि। तेउवाउ एवं चेव, नवरं एएसिं तेऊलेसा नत्थि। बितियचउरिंदिया एवं चेव तिसु लेसासु। पंचेंदियतिरिक्खजोणिया मणुस्सा य जहा पुढविकाइया आइल्लिया तिसु लेसासु भणिया तहा छसु वि लेसासु भाणियव्वा. नवरं छप्पि लेसाओ चारेयव्वाओ। वाणमंतरा जहा असुर-

कुमारा। से नूण भंते! तेऊलेस्से जोइसिए तेऊलेस्सेसु जोइसिएसु उववज्जइ? जहेव असुरकुमारा। एवं वेमाणिया वि, नवरं दोण्हं पि चयंतीति अभिलावो।

—पण्ण० प १७। उ ३। सू २७। पृ० ४४३

यह निश्चित है कि कृष्णलेशी नारकी कृष्णलेशी नारकी मे उत्पन्न होता है, कृष्णलेशी रूप मे ही मरण को प्राप्त होता है। जिस लेश्या मे वह उत्पन्न होता है, उसी लेश्या मे मरण को प्राप्त होता है।

इसी प्रकार नीललेशी नारकी भी नीललेशी नारकी में उत्पन्न होता है तथा नीललेशी रूप मे ही मरण को प्राप्त होता है। जिस लेश्या मे वह उत्पन्न होता है, उसी लेश्या में मरण को प्राप्त होता है।

इसी प्रकार कापोतलेशी नारकी भी कापोतलेशी नारकी मे उत्पन्न होता है तथा कापोतलेशी रूप में ही मरण को प्राप्त होता है। जिस लेश्या मे वह उत्पन्न होता है, उसी लेश्या मे मरण को प्राप्त होता है।

इसी प्रकार असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार देवों के सबंध मे कहना, लेकिन लेश्या—कृष्ण, नील, कापोत, तेजो कहनी।

यह निश्चित है कि कृष्णलेशी पृथ्वीकायिक जीव कृष्णलेशी पृथ्वीकायिक मे उत्पन्न होता है तथा कदाचित् कृष्णलेशी होकर, कदाचित् नीललेशी होकर, कदाचित् कापोतलेशी होकर मरण को प्राप्त होता है। कदाचित् जिस लेश्या मे उत्पन्न होता है, कदाचित् उसी लेश्या में मरण को प्राप्त होता है।

इसी प्रकार नीललेशी तथा कापोतलेशी पृथ्वीकायिक जीव के सम्बन्ध मे वर्णन करना।

तेजोलेशी पृथ्वीकायिक जीव तेजोलेशी पृथ्वीकायिक मे उत्पन्न होता है तथा कदाचित् कृष्णलेशी होकर, कदाचित् नीललेशी होकर, कदाचित् कापोतलेशी होकर मरण को प्राप्त होता है। तेजोलेश्या में वह उत्पन्न होता है लेकिन मरण को प्राप्त नहीं होता है।

इसी प्रकार पृथ्वीकायिक जीव की तरह अप्कायिक जीव तथा वनस्पतिकायिक जीव के सम्बन्ध में चारों लेश्याओं का वर्णन करना।

इसी प्रकार पृथ्वीकायिक जीव की तरह अग्निकायिक जीव एवं वायुकायिक जीव के सम्बन्ध में तीन लेश्याओं का ही वर्णन करना, क्योंकि इनमें तेजोलेश्या नहीं होती है।

इसी प्रकार पृथ्वीकायिक जीव की तरह द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जीव के सम्बन्ध मे तीन लेश्याओं का ही वर्णन करना।

तिर्यंचपंचेन्द्रिय तथा मनुष्य के सम्बन्ध मे वैसा ही कहना जैसा पृथ्वीकायिक जीव के सम्बन्ध में आदि की तीन लेश्या को लेकर कहा, परन्तु छः लेश्याओं का वर्णन करना।

वानव्यंतर देव के सम्बन्ध में असुरकुमार की तरह कहना।

यह निश्चित है कि तेजोलेशी ज्योतिषी देव तेजोलेशी ज्योतिषी देव में उत्पन्न होता है तथा तेजोलेशी रूप मे च्यवन (मरण) को प्राप्त होता है।

इसी प्रकार तेजोलेशी वैमानिक देव तेजोलेशी वैमानिक देव में उत्पन्न होता है तथा तेजोलेशी रूप में च्यवन को प्राप्त होता है।

इसी प्रकार पद्मलेशी वैमानिक देव पद्मलेशी वैमानिक देव मे उत्पन्न होता है तथा पद्मलेशी रूप में च्यवन को प्राप्त होता है।

इसी प्रकार शुक्ललेशी वैमानिक देव शुक्ललेशी वैमानिक देव में उत्पन्न होता है तथा शुक्ललेशी रूप में च्यवन को प्राप्त होता है। वैमानिक देव जिस लेश्या मे उत्पन्न होता है उसी लेश्या मे च्यवन को प्राप्त होता है।

से नूणं भंते! कण्हलेसे नीललेसे काऊलेसे नेरइए कण्हलेसेसु नीललेसेसु काऊलेसेसु नेरइएसु उववज्जइ, कण्हलेसे नीललेसे काऊलेसे उववट्टइ, जल्लेसे उववज्जइ तल्लेसे उववट्टइ? हंता गोयमा! कण्हनीलकाऊलेसे उववज्जइ, जल्लेसे उववज्जइ तल्लेसे उववट्टइ। से नूण भंते! कण्हलेसे जाव तेऊलेसे असुरकुमारे कण्हलेसेसु जाव तेऊलेसेसु असुरकुमारेसु उववज्जइ? एवं जहेव नेरइए तहा असुरकुमारा वि जाव थणियकुमारा वि। से नूण भंते! कण्हलेसे जाव तेऊलेसे पुढविक्काइए कण्हलेसेसु जाव तेऊलेसेसु पुढविक्काइएसु उववज्जइ? एवं पुच्छा जहा असुरकुमाराण। हंता गोयमा! कण्हलेसे जाव तेऊलेसे पुढविक्काइए कण्हलेसेसु जाव तेऊलेसेसु पुढविक्काइएसु उववज्जइ, सिय कण्हलेसे उववट्टइ, सिय नीललेसे, सिय काऊलेसे उववट्टइ, सिय जल्लेसे उववज्जइ तल्लेसे उववट्टइ, तेऊलेसे उववज्जइ, नो चेव णं तेऊलेसे उववट्टइ। एवं आउकाइया वणस्सइकाइया वि भाणियव्वा। से नूणं भंते! कण्हलेसे नीललेसे काऊलेसे तेउकाइए कण्हलेसेसु नीललेसेसु काऊलेसेसु तेऊकाइएसु उववज्जइ, कण्हलेसे नीललेसे काऊलेसे उववट्टइ, जल्लेसे उववज्जइ तल्लेसे उववट्टइ? हंता गोयमा! कण्हलेसे नीललेसे काऊलेसे तेऊकाइए कण्हलेसेसु नीललेसेसु काऊलेसेसु तेऊकाइएसु उववज्जइ, सिय कण्हलेसे उववट्टइ, सिय नीललेसे उववट्टइ, सिय काऊलेसे उववट्टइ, सिय जल्लेसे उववज्जइ तल्लेसे उववट्टइ। एवं वाउकाइयबेइंदियतेइंदियचउरिंदिया वि भाणियव्वा। से नूणं भंते! कण्हलेसे जाव सुक्कलेसे पंचेंदियतिरिक्खजोणिए कण्हलेसेसु जाव सुक्कलेसेसु पंचेंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जइ पुच्छा। हंता गोयमा! कण्हलेसे जाव सुक्कलेसे पंचेंदियतिरिक्खजोणिए कण्हलेसेसु जाव सुक्कलेसेसु पंचेंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जइ, सिय कण्हलेसे उववट्टइ जाव सिय सुक्कलेसे उववट्टइ, सिय जल्लेसे उववज्जइ

तल्लेसे उववट्टइ। एवं मणूसे वि। वाणमंतरा जहा असुरकुमारा। जोइसिय-वेमाणिया वि एवं चेव, नवरं जस्स जल्लेसा। दोण्ह वि 'चयण' ति भाणियव्वं।

—पण्ण० प १७। उ ३। सू २८। पृ० ४४३-४४

कृष्णलेशी, नीललेशी तथा कापोतलेशी नारकी क्रमशः कृष्णलेशी, नीललेशी तथा कापोतलेशी नारकी में उत्पन्न होता है तथा कृष्णलेश्या, नीललेश्या तथा कापोतलेश्या मे मरण को प्राप्त होता है। जिस लेश्या में वह उत्पन्न होता है उसी लेश्या में मरण को प्राप्त होता है।

कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी तथा तेजोलेशी असुरकुमार क्रमश कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी तथा तेजोलेशी असुरकुमार मे उत्पन्न होता है, तथा जिस लेश्या मे उत्पन्न होता है उसी लेश्या में मरण को प्राप्त होता है। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार तक कहना।

कृष्णलेशी यावत् तेजोलेशी पृथ्वीकायिक क्रमशः कृष्णलेशी यावत् तेजोलेशी पृथ्वी-कायिक में उत्पन्न होता है, तथा कदाचित् कृष्णलेश्या में, कदाचित् नीललेश्या में तथा कदाचित् कापोतलेश्या में मरण को प्राप्त होता है। कदाचित् जिस लेश्या मे वह उत्पन्न होता है उसी लेश्या में मरण को प्राप्त होता है। वह तेजोलेश्या में उत्पन्न होता है परन्तु तेजोलेश्या में मरण को प्राप्त नही होता है।

इसी प्रकार अप्कायिक तथा वनस्पतिकायिक जीवों के सम्बन्ध मे कहना।

कृष्णलेशी, नीललेशी तथा कापोतलेशी अग्निकायिक क्रमशः कृष्णलेशी, नीललेशी तथा कापोतलेशी अग्निकायिक मे उत्पन्न होता है। वह कदाचित् कृष्णलेश्या मे, कदाचित् नीललेश्या में तथा कदाचित् कापोतलेश्या में मरण को प्राप्त होता है। कदाचित् जिस लेश्या मे वह उत्पन्न होता है, उसी लेश्या मे मरण को प्राप्त होता है।

इसी प्रकार वायुकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, तथा चतुरिन्द्रिय के सम्बन्ध मे कहना।

कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी तिर्यंचपचेन्द्रिय कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी तिर्यंच-पचेन्द्रिय मे उत्पन्न होता है। वह कदाचित् कृष्णलेश्या मे कदाचित शुक्ललेश्या में मरण को प्राप्त होता है, कदाचित् जिस लेश्या मे उत्पन्न होता है उसी लेश्या में मरण को प्राप्त होता है।

इसी प्रकार मनुष्य के सम्बन्ध मे कहना।

वानव्यंतर देव के विषय मे भी वैसा ही कहना, जैसा असुरकुमार के सम्बन्ध में कहा।

इसी प्रकार ज्योतिषी तथा वैमानिक देवों के सम्बन्ध में कहना। लेकिन जिसके जो लेश्या हो, वही कहनी। ज्योतिषी तथा वैमानिक देवों के मरण के स्थान पर च्यवन शब्द का प्रयोग करना।

तदेवमेकैकलेश्याविषयाणि चतुर्विंशतिदंडकक्रमेण नैरयिकादीना सूत्राण्युक्तानि। तत्र कश्चिदाशंकेत - प्रविरलैकैकनारकादिविषयमेतत् सूत्रकदम्बकं, यदा तु बहवो भिन्नलेश्याकास्तस्या गतावुत्पद्यन्ते तदाऽन्याऽपि वस्तुगतिर्भवेत्, एकैकगतधर्मापेक्षया समुदायधर्मस्य क्वचिदन्यथाऽपि दर्शनात्। ततस्तदाशंकाऽपनोदाय येषा यावत्यो लेश्याः सम्भवन्ति तेषा युगपत्तावल्लेश्याविषयमेकैकं सूत्रमनन्तरोदितार्थमेव प्रतिपादयति—'से नूण भंते। कण्हलेसे नीललेसे काऊलेसे नेरइए कण्हलेसेसु नीललेसेसु काऊलेसेसु नेरइएसु उववज्जइ' इत्यादि, समस्त सुगमं।

—पण्ण० प २७। उ ३। सू २८ टीका

इस प्रकार एक एक लेश्या के सम्बन्ध मे चौबीस दंडक के क्रम से नारकी आदि के सम्बन्ध में सूत्र कहने। उसमे यदि कोई यह आशका करे कि विरल एक-एक नारकी के सम्बन्ध में यह सूत्र-समूह है तथा यदि भिन्न-भिन्न लेश्यावाले बहुत नारकी आदि उस गति मे एक साथ उत्पन्न हो तो वस्तुस्थिति अन्यथा भी हो सकती है, क्योंकि एक-एक व्यक्ति के धर्म की अपेक्षा समुदाय का धर्म क्वचित् अन्यथा भी जाना जाता है। अतः इस आशंका को दूर करने के लिए जिसमे जितनी लेश्याएं सम्भव हों उतनी लेश्याओं को एक साथ लेकर एक-एक सूत्र उपर्युक्त पाठ में कहा है।

'६७'२ एक लेश्या से परिणमन करके दूसरी लेश्या मे उत्पत्ति :—

'६७ २ १—नारकी में उत्पत्ति :—

से नूण भंते। कण्हलेस्से नीललेस्से जाव सुक्कलेस्से भवित्ता कण्हलेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति ? हंता गोयमा। कण्हलेस्से जाव उववज्जंति से केणट्ठेणं भंते। एवं वुच्चइ—कण्हलेस्से जाव उववज्जंति ? गोयमा। लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु संकिलिस्समाणेसु कण्हलेस्सं परिणमइ कण्हलेस्सं परिणमइत्ता कण्हलेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति, से तेणट्ठेण जाव —उववज्जंति।

से नूणं भंते। कण्हलेस्से जाव सुक्कलेस्से भवित्ता नीललेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति ? हंता गोयमा। जाव उववज्जंति, से केणट्ठेणं जाव उववज्जंति ? गोयमा। लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु वा विसुज्झमाणेसु वा नीललेस्सं परिणमइ नीललेस्सं परिणमइत्ता नीललेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति। से तेणट्ठेण गोयमा। जाव —उववज्जंति।

से नूणं भंते! कण्हलेस्से नीललेस्से जाव —भवित्ता काऊलेस्सेसु नेरइएसु

उववज्जंति ? एवं जहा नीललेस्साए तहा काऊलेस्साए वि भाणियव्वा जाव—से तेणट्ठेण जाव उववज्जंति।

—भग० श १३ । उ १ । प्र १९-२१ । पृ ६७९

कृष्णलेशी, नीललेशी यावत् शुक्ललेशी जीव लेश्यास्थान में संक्लिष्ट होते-होते कृष्णलेश्या मे परिणमन करता हुआ कृष्णलेश्या मे परिणमन करके कृष्णलेशी नारकी में उत्पन्न होता है।

कृष्णलेशी, नीललेशी यावत् शुक्ललेशी जीव लेश्या स्थान से संक्लिष्ट अथवा विशुद्ध होते-होते नीललेश्या मे परिणमन करता हुआ नीललेश्या मे परिणमन करके नीललेशी नारकी में उत्पन्न होता है।

कृष्णलेशी, नीललेशी यावत् शुक्ललेशी जीव लेश्यास्थान मे संक्लिष्ट अथवा विशुद्ध होते-होते कापोतलेश्या मे परिणमन करता हुआ कापोतलेश्या मे परिणमन कर के कापोतलेशी नारकी मे उत्पन्न होता है।

६७ २ २ देवों मे उत्पत्ति :—

से नूणं भंते ! कण्हलेस्से नील जाव सुक्कलेस्से भवित्ता कण्हलेस्सेसु देवेसु उववज्जंति ? हंता गोयमा ! एवं जहेव नेरइएसु पढमे उद्देसए तहेव भाणियव्व, नीललेस्साए वि जहेव नेरइयाणं जहा नीललेस्साए एवं जाव पम्हलेस्सेसु, सुक्कलेस्सेसु एवं चेव, नवरं लेस्सट्ठाणेसु विसुज्झमाणेसु विसुज्झमाणेसु सुक्कलेस्सं परिणमइ सुक्कलेस्सं परिणमइत्ता सुक्कलेस्सेसु देवेसु उववज्जंति, से तेणट्ठेण जाव—उववज्जंति।

—भग० श १३ । उ २ । । प्र १५ । पृ० ६८१

कृष्णलेशी, नीललेशी, यावत् शुक्ललेशी जीव लेश्यास्थान से संक्लिष्ट होते होते कृष्णलेश्या मे परिणमन करता हुआ कृष्णलेश्या मे परिणमन करके कृष्णलेशी देवों मे उत्पन्न होता है।

कृष्णलेशी, नीललेशी यावत् शुक्ललेशी जीव लेश्यास्थान मे संक्लिष्ट अथवा विशुद्ध होते होते नीललेश्या में परिणमन करता हुआ नीललेश्या मे परिणमन करके नीललेशी देव मे उत्पन्न होता है।

कृष्णलेशी, नीललेशी यावत् शुक्ललेशी जीव लेश्यास्थान मे संक्लिष्ट अथवा विशुद्ध होते-होते कापोतलेश्या में परिणमन करता हुआ कापोतलेश्या मे परिणमन करके कापोतलेशी देवों मे उत्पन्न होता है।

इसी प्रकार तेजोलेश्या, पद्मलेश्या तथा शुक्ललेश्या के संबंध में जानना। लेकिन इतनी विशेषता है कि लेश्यास्थान में विशुद्ध होते-होते शुक्ललेश्या मे परिणमन करता हुआ शुक्ललेश्या मे परिणमन करके शुक्ललेशी देवों मे उत्पन्न होता है।

६८ समय व संख्या की अपेक्षा सलेशी जीव की उत्पत्ति, मरण अवस्थिति :—

'६८'१ नरक पृथिवियो मे :—

गमक १—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु सखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं ××× केवइया काऊलेस्सा उववज्जंति ×× जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा काऊलेस्सा उवज्जंति ।

गमक २—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयस॰ संखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं ××× केवइया काऊलेस्सा उववट्टंति ? जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा नेरइया उववट्टंति, एवं सन्नी, असन्नी न उववट्टंति ।

गमक ३—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्ज वित्थडेसु नरएसु ××× केवइया काऊलेस्सा पन्नत्ता ? ××× गोयमा ! ××× संखेज्जा काऊलेस्सा पन्नत्ता ।

इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु असंखेज्ज-वित्थडेसु नरएसु ××× एवं जहेव संखेज्जवित्थडेसु तिन्नि गमगा तहा असंखेज्ज-वित्थडेसु तिन्नि गमगा । नवरं असंखेज्जा भाणियव्वा ××× नाणत्तं लेस्सासु लेस्साओ जहा पढमसए ।

सक्करप्पभाए णं भंते ! पुढवीए केवइया निरयावास० पुच्छा ? गोयमा ! पणवीसं निरयावाससयसहस्सा पन्नत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा ? एवं जहा रयणप्पभाए तहा सक्करप्पभाएवि, नवरं असन्नी तिसु वि गमएसु न भन्नइ, सेसं तं चेव ।

वालुयप्पभाए णं पुच्छा ? गोयमा ! पन्नरस निरयावाससयसहस्सा पन्नत्ता, सेसं जहा सक्करप्पभाए नाणत्तं लेस्सासु लेस्साओ जहा पढमसए ।

पंकप्पभाए णं पुच्छा ? गोयमा ! दस निरयावाससयसहस्सा पन्नत्ता, एवं जहा सक्करप्पभाए नवरं ओहिनाणी ओहिदंसणी य न उव्वट्टंति, सेसं तं चेव ।

धूमप्पभाए णं पुच्छा ? गोयमा ! तिन्नि निरयावाससयसहस्सा एवं जहा पंकप्पभाए ।

तमाए णं भंते ! पुढवीए केवइया निरयावास० पुच्छा ? गोयमा ! एगे पंचूणे निरयावाससयसहस्से पन्नत्ते, सेसं जहा पंकप्पभाए ।

अहेसत्तमाए णं भंते ! पुढवीए पंचसु अणुत्तरेसु महइमहालया जाव महानिरएसु संखेज्जवित्थडे नरए एगसमएणं केवइया उववज्जंति ? एवं जहा पंकप्पभाए नवरं तिसु नाणेसु न उववज्जंति न उव्वट्टंति, पन्नत्तएसु तहेव अत्थि, एवं असंखेज्जवित्थडेसु वि नवरं असंखेज्जा भाणियव्वा ।

—भग० श १३ । उ १ । प्र ४ से १८ । पृ० ६७६ से ६७८

रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नरकावासो मे जो सख्यात विस्तार वाले हे उनमे एक समय में जघन्य से एक, दो, अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से सख्यात कापोतलेशी नारकी उत्पन्न (गमक १) होते हैं , जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से सख्यात कापोतलेशी नारकी मरण (ग० २) को प्राप्त होते हैं , तथा सख्यात कापोतलेशी नारकी एक समय मे अवस्थित (ग० ३) रहते हैं।

रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नरकावासो मे जो असख्यात विस्तार वाले हैं उनमे एक समय में जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से असख्यात कापोतलेशी नारकी उत्पन्न (ग० १) होते हे , जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से असख्यात कापोतलेशी नारकी मरण (ग० २) को प्राप्त होते हैं , तथा असख्यात कापोतलेशी नारकी एक समय मे अवस्थित (ग० ३) रहते हैं।

शर्कराप्रभा पृथ्वी के पचीस लाख नरकावासो के सम्बन्ध मे रत्नप्रभा पृथ्वी की तरह तीन सख्यात व तीन असख्यात के गमक कहने ।

वालुकाप्रभा पृथ्वी के पन्द्रह लाख नरकावासो के सम्बन्ध मे, जैसा शर्कराप्रभा पृथ्वी के आवासो के सम्बन्ध मे कहा, वैसा ही कहना । लेकिन लेश्या—कापोत और नील कहनी ।

पकप्रभा पृथ्वी के दस लाख नरकावासो के सम्बन्ध मे, जैसा शर्कराप्रभा पृथ्वी के आवासो के सम्बन्ध मे कहा, वैसा ही कहना । लेकिन लेश्या—नील कहनी ।

धूमप्रभा पृथ्वी के तीन लाख नरकावासो के सम्बन्ध मे, जैसा पकप्रभा पृथ्वी के आवासों के सम्बन्ध मे कहा, वैसा ही कहना । लेकिन लेश्या—नील और कृष्ण कहनी ।

तमप्रभा पृथ्वी के पच न्यून एक लाख नरकावासों के सम्बन्ध मे, जैसा पकप्रभा पृथ्वी के आवासो के सम्बन्ध में कहा, वैसा ही कहना । लेकिन लेश्या—कृष्ण कहनी ।

तमतमाप्रभा पृथ्वी के पाँच नरकावासो मे जो अप्रतिष्ठान नाम का सख्यात विस्तार वाला नरकावास है उसमें एक समय मे जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से सख्यात परम कृष्णलेशी उत्पन्न (ग० १) होते हैं , जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से सख्यात परम कृष्णलेशी मरण (ग० २) को प्राप्त होते हैं , तथा सख्यात परम कृष्णलेशी नारकी एक समय मे अवस्थित (ग० ३) रहते हैं।

'६८ समय व संख्या की अपेक्षा सलेशी जीव की उत्पत्ति, मरण और अवस्थिति :—

'६८'१ नरक पृथिवियों में :—

गमक १—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं ××× केवइया काऊलेस्सा उववज्जंति ×× जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा काऊलेस्सा उववज्जंति ।

गमक २—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं ××× केवइया काऊलेस्सा उववट्टंति ××× जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा नेरइया उववट्टंति, एवं जाव सन्नी, असन्नी न उववट्टंति ।

गमक ३—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्ज वित्थडेसु नरएसु ××× केवइया काऊलेस्सा पन्नत्ता ? ××× गोयमा ! ××× संखेज्जा काऊलेस्सा पन्नत्ता ।

इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु असंखेज्ज-वित्थडेसु नरएसु ××× एवं जहेव संखेज्जवित्थडेसु तिन्नि गमगा तहा असंखेज्ज-वित्थडेसु तिन्नि गमगा । नवरं असंखेज्जा भाणियव्वा ××× नाणत्तं लेस्सासु लेस्साओ जहा पढमसए ।

सक्करप्पभाए णं भंते ! पुढवीए केवइया निरयावास० पुच्छा ? गोयमा ! पणवीसं निरयावाससयसहस्सा पन्नत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा ? एवं जहा रयणप्पभाए तहा सक्करप्पभाएवि, नवरं असन्नी तिसु वि गमएसु न भन्नइ, सेसं तं चेव ।

वालुयप्पभाए णं पुच्छा ? गोयमा ! पन्नरस निरयावाससयसहस्सा पन्नत्ता, सेसं जहा सक्करप्पभाए नाणत्तं लेस्सासु लेस्साओ जहा पढमसए ।

पंकप्पभाए णं पुच्छा ? गोयमा ! दस निरयावाससयसहस्सा पन्नत्ता, एवं जहा सक्करप्पभाए नवरं ओहिनाणी ओहिदंसणी य न उव्वट्टंति, सेसं तं चेव ।

धूमप्पभाए णं पुच्छा ? गोयमा ! तिन्नि निरयावाससयसहस्सा एवं जहा पंकप्पभाए ।

तमाए णं भंते ! पुढवीए केवइया निरयावास० पुच्छा ? गोयमा ! एगे पंचूणे निरयावाससयसहस्से पन्नत्ते, सेसं जहा पंकप्पभाए ।

अहेसत्तमाए णं भंते ! पुढवीए पंचसु अणुत्तरेसु महइमहालया जाव महानिरएसु संखेज्जवित्थडे नरए एगसमएण केवइया उववज्जंति ? एव जहा पंकप्पभाए नवरं तिसु नाणेसु न उववज्जंति न उव्वट्टंति, पन्नत्तएसु तहेव अत्थि, एवं असंखेज्जवित्थडेसु वि नवरं असंखेज्जा भाणियव्वा ।

—भग० श १३ । उ १ । प्र ८ से १८ । पृ० ६७६ से ६७८

रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नरकावासो मे जो सख्यात विस्तार वाले है उनमे एक समय में जघन्य से एक, दो, अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से सख्यात कापोतलेशी नारकी उत्पन्न (गमक १) होते हैं , जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से सख्यात कापोतलेशी नारकी मरण (ग० २) को प्राप्त होते हैं , तथा सख्यात कापोतलेशी नारकी एक समय मे अवस्थित (ग० ३) रहते हैं।

रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नरकावासो मे जो असख्यात विस्तार वाले हैं उनमे एक समय मे जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से असख्यात कापोतलेशी नारकी उत्पन्न (ग० १) होते है , जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से असख्यात कापोतलेशी नारकी मरण (ग० २) को प्राप्त होते हैं , तथा असख्यात कापोतलेशी नारकी एक समय मे अवस्थित (ग० ३) रहते हैं।

शर्कराप्रभा पृथ्वी के पचीस लाख नरकावासो के सम्बन्ध मे रत्नप्रभा पृथ्वी की तरह तीन सख्यात व तीन असख्यात के गमक कहने ।

वालुकाप्रभा पृथ्वी के पन्द्रह लाख नरकावासो के सम्बन्ध मे, जैसा शर्कराप्रभा पृथ्वी के आवासो के सम्बन्ध मे कहा, वैसा ही कहना। लेकिन लेश्या—कापोत और नील कहनी।

पकप्रभा पृथ्वी के दस लाख नरकावासो के सम्बन्ध मे, जैसा शर्कराप्रभा पृथ्वी के आवासो के सम्बन्ध मे कहा, वैसा ही कहना। लेकिन लेश्या—नील कहनी।

धूमप्रभा पृथ्वी के तीन लाख नरकावासो के सम्बन्ध मे, जैसा पकप्रभा पृथ्वी के आवासो के सम्बन्ध मे कहा, वैसा ही कहना। लेकिन लेश्या—नील और कृष्ण कहनी।

तमप्रभा पृथ्वी के पच न्यून एक लाख नरकावासो के सम्बन्ध मे, जैसा पकप्रभा पृथ्वी के आवासो के सम्बन्ध में कहा, वैसा ही कहना। लेकिन लेश्या—कृष्ण कहनी।

तमतमाप्रभा पृथ्वी के पॉच नरकावासो मे जो अप्रतिष्ठान नाम का सख्यात विस्तार वाला नरकावास है उसमे एक समय में जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से सख्यात परम कृष्णलेशी उत्पन्न (ग० १) होते हैं , जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से सख्यात परम कृष्णलेशी मरण (ग० २) को प्राप्त होते हैं , तथा सख्यात परम कृष्णलेशी नारकी एक समय मे अवस्थित (ग० ३) रहते हैं।

तमतमाप्रभा पृथ्वी के जो चार असंख्यात विस्तार वाले नरकावास हैं उनमें एक समय में जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से असंख्यात परम कृष्णलेशी नारकी उत्पन्न (गम० १) होते हैं ; जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से असंख्यात परम कृष्णलेशी नारकी मरण (गम० २) को प्राप्त होते हैं ; तथा एक समय में असंख्यात परम कृष्णलेशी नारकी अवस्थित (गम० ३) रहते हैं।

सातवीं नरक का अप्रतिष्ठान नरकावास एक लाख योजन विस्तार वाला है तथा बाकी चार नरकावास असंख्यात योजन विस्तार वाले हैं। देखो—जीवा० प्रति ३। उ २। सू ८२। पृ० १३८, तथा ठाण० स्था ४। उ ३। सू ३२६। पृ० २४६।

'६८ २ देवावासों में :—

चोसट्ठीए णं भंते ! असुरकुमारावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु असुरकुमारावासेसु एगसमएणं × × × केवइया तेऊलेस्सा उववज्जंति × × × एवं जहा रयणप्पभाए तहेव पुच्छा, तहेव वागरण। ××× उव्वट्टंतगा वि तहेव × × × तिसु वि गमएसु संखेज्जेसु चत्तारि लेस्साओ भाणियव्वाओ, एवं असंखेज्जवित्थडेसु वि नवरं तिसु वि गमएसु असंखेज्जा भाणियव्वा। प्र ४।

केवइया ण भंते! नागकुमारावास० एवं जाव थणियकुमारावास० नवरं जत्थ जत्तिया भवणा। प्र ५।

संखेज्जेसु ण भंते! वाणमंतरावाससयसहस्सेसु एगसमएण केवइया वाणमंतरा उववज्जंति? एवं जहा असुरकुमाराण संखेज्जवित्थडेसु तिन्नि गमगा तहेव भाणियव्वा, वाणमंतराण वि तिन्नि गमगा। प्र ७।

केवइया ण भंते! जोइसियविमाणावासयसहस्सा पन्नत्ता? गोयमा! असंखेज्जा जोइसियविमाणावाससयसहस्सा पन्नत्ता, ते ण भंते! किं संखेज्जवित्थडा०? एवं जहा वाणमंतराण तहा जोइसियाण वि तिन्नि गमगा भाणियव्वा नवरं एगा तेऊलेस्सा। प्र ८।

सोहम्मे ण भंते! कप्पे बत्तीसाए विमाणावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु विमाणेसु एगसमएण केवइया × × × तेऊलेस्सा उववज्जंति? × × × एवं जहा जोइसियाणं तिन्नि गमगा तहेव तिन्नि गमगा भाणियव्वा नवरं तिसु वि संखेज्जा भाणियव्वा। × × × असंखेज्जवित्थडेसु एवं चेव तिन्नि गमगा, नवरं तिसु वि गमएसु असंखेज्जा भाणियव्वा। ××× एवं जहा सोहम्मे वत्तव्वया भणिया तहा ईसाणे वि छ गमगा भाणियव्वा। सणकुमारे (वि) एवं चेव × × × एवं जाव सहस्सारे, नाणत्तं विमाणेसु लेस्सासु य, सेसं तं चेव। प्र १०।

(आणय-पाणएसु) एवं संखेज्जवित्थडेसु तिन्नि गमगा जहा सहस्सारे, असंखेज्जवित्थडेसु उववज्जंतेसु य चयंतेसु य एवं चेव संखेज्जा भाणियव्वा। पन्नत्तेसु असंखेज्जा, ××× आरणच्चुएसु एवं चेव जहा आणयपाणएसु नाणत्तं विमाणेसु एवं गेवेज्जगा वि। प्र ११।

पंचसु णं भंते! अणुत्तरविमाणेसु संखेज्जवित्थडे विमाणे एगसमएणं ××× केवइया सुक्कलेस्सा उववज्जंति पुच्छा तहेव, गोयमा! पंचसु णं अणुत्तरविमाणेसु संखेज्जवित्थडे अणुत्तरविमाणे एगसमएणं जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा अणुत्तरोववाइया देवा उववज्जंति, एवं जहा गेवेज्जविमाणेसु संखेज्जवित्थडेसु। ××× असंखेज्जवित्थडेसु वि एए न भन्नंति नवरं अचरिमा अत्थि, सेसं जहा गेवेज्जएसु असंखेज्जवित्थडेसु। प्र १३।

—भग० श १३। उ २। प्र ४-१३। पृ० ६८० ८१

असुरकुमार के चौंसठ लाख आवासों मे जो सख्यात विस्तार वाले है, उनमे एक समय में जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से सख्यात तेजोलेशी असुरकुमार उत्पन्न (ग० १) होते हैं, जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से सख्यात तेजो लेशी असुरकुमार मरण (ग० २) को प्राप्त होते हैं, तथा सख्यात तेजोलेशी असुरकुमार एक समय मे अवस्थित (ग० ३) रहते है।

ऐसे ही तीन-तीन गमक कृष्ण, नील तथा कापोत लेश्या के सम्बन्ध मे कहने।

असुरकुमार के चौंसठ लाख आवासों में जो असख्यात विस्तार वाले हैं, उनमें एक समय मे जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से असख्यात तेजोलेशी असुरकुमार उत्पन्न (ग० १) होते हैं, जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से असख्यात तेजोलेशी असुरकुमार मरण (ग० २) को प्राप्त होते हैं, तथा असख्यात तेजो लेशी एक समय में अवस्थित (ग० ३) रहते हैं।

ऐसे ही तीन-तीन गमक कृष्ण, नील तथा कापोत लेश्या के सम्बन्ध में कहने।

नागकुमार से स्तनितकुमार तक के देवावासों के सम्बन्ध में असुरकुमार के देवावासों की तरह तीन सख्यात के तथा तीन असख्यात के गमक, इस प्रकार चारों लेश्याओं पर छ छ गमक कहने। परन्तु जिसके जितने भवन होते हैं उतने समझने चाहिए।

वानव्यंतर के जो सख्यात लाख विमान हैं वे सभी सख्यात विस्तार वाले हैं। उनमें एक समय में जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से सख्यात तेजोलेशी वानव्यंतर उत्पन्न (ग० १) होते हैं, जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से सख्यात तेजोलेशी

वानव्यंतर मरण (ग० २) को प्राप्त होते हैं , तथा संख्यात तेजोलेशी वानव्यंतर एक समय मे अवस्थित (ग० ३) रहते हैं।

ऐसे ही तीन-तीन गमक कृष्ण, नील तथा कापोतलेश्या के सम्बन्ध मे कहने।

ज्योतिषी देवों के जो असंख्यात विमान हैं वे सभी सख्यात विस्तार वाले हैं। उनके सम्बन्ध मे तेजोलेश्या को लेकर उत्पत्ति, च्यवन (मरण) तथा अवस्थिति के तीन गमक वानव्यंतर देवों की तरह कहने।

सौधर्मकल्प देवलोक के बत्तीस लाख विमानो में जो सख्यात विस्तार वाले हैं उनमे उत्पत्ति, च्यवन तथा अवस्थिति के तीन गमक एक तेजोलेश्या को लेकर ज्योतिषी विमानों की तरह कहने।

सौधर्मकल्प देवलोक के बत्तीस लाख विमानों में जो असंख्यात विस्तार वाले हैं, उनमे उत्पत्ति, च्यवन तथा अवस्थिति के तीन गमक एक तेजोलेश्या को लेकर कहने। इन तीनो गमकी में उत्कृष्ट में असंख्यात कहना।

ईशानकल्प देवलोक के विमानो के सम्बन्ध में सौधर्मकल्प की तरह तीन संख्यात तथा तीन असंख्यात के, इस प्रकार छः गमक कहने।

इसी प्रकार सनत्कुमार से सहस्रार देवलोक तक के विमानो के सम्बन्ध में तीन संख्यात तथा तीन असंख्यात के, इस प्रकार छः गमक कहने। लेकिन लेश्या में नानात्व कहना अर्थात् सनत्कुमार से ब्रह्मलोक तक पद्म तथा लातक से सहस्रार तक शुक्ललेश्या कहनी।

आनत तथा प्राणत के जो संख्यात विस्तार वाले विमान हैं उनमें सहस्रार देवलोक की तरह शुक्ललेश्या को लेकर उत्पत्ति, च्यवन तथा अवस्थिति के तीन गमक कहने। जो असंख्यात विस्तारवाले विमान हैं, उनमे एक समय मे जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से सख्यात उत्पन्न (ग० १) होते हैं , एक समय में जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से संख्यात च्यवन (ग० २) को प्राप्त होते हैं , तथा एक समय मे असंख्यात अवस्थित (ग० ३) रहते हैं।

आरण तथा अच्युत विमानावासों में, जैसे आनत तथा प्राणत के विषय में कहा, वैसे ही छः छः गमक कहने।

इसी प्रकार ग्रैवेयक विमानावासों के सम्बन्ध में शुक्ललेश्या पर छः गमक आनत-प्राणत की तरह कहने।

पंच अनुत्तर विमानो में जो चार (विजय, वैजयंत, जयत, अपराजित) असंख्यात विस्तार वाले हैं उनमें एक समय में जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से संख्यात शुक्ललेशी अनुत्तर विमानावासी देव उत्पन्न (ग० १) होते हैं , जघन्य से एक,

दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से संख्यात शुक्ललेशी अनुत्तर विमानावासी देव च्यवन (ग० २) को प्राप्त होते हैं , तथा असंख्यात शुक्ललेशी अनुत्तर विमानावासी देव अवस्थित (ग० ३) रहते हैं।

सर्वार्थसिद्ध अनुत्तर विमान जो संख्यात विस्तार वाला है उसमें एक समय में जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से संख्यात शुक्ललेशी अनुत्तर विमानावासी देव उत्पन्न (ग० १) होते हैं , जघन्य से एक, दो अथवा तीन तथा उत्कृष्ट से संख्यात शुक्ललेशी अनुत्तर विमानावासी देव च्यवन (ग० २) को प्राप्त होते हैं , तथा संख्यात शुक्ललेशी अनुत्तर विमानावासी देव अवस्थित (ग० ३) रहते हैं।

अनुत्तर विमान का सर्वार्थसिद्ध विमान एक लाख योजन विस्तार वाला है तथा बाकी चार अनुत्तर विमान असंख्यात योजन विस्तार वाले हैं। देखो—जीवा० प्रति ३। उ २। सू २१३। पृ० २३७ तथा ठाण० स्था ४। उ ३। सू ३२६। पृ० २८६।

६६ सलेशी जीव और ज्ञान :—

६६ १ सलेशी जीव में कितने ज्ञान-अज्ञान :—

(क) सलेस्सा ण भंते। जीवा किं नाणी० ? जहा सकाइया (सकाइया ण भंते। जीवा किं नाणी अन्नाणी ? गोयमा। पंच नाणाणि तिन्नि अन्नाणाइं भय-णाए—प्र० ३८)। कण्हलेस्सा ण भंते। जहा सइंदिया एवं जाव पम्हलेस्सा (सइंदिया ण भंते। जीवा किं नाणी अन्नाणी ? गोयमा। चत्तारि नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए—प्र० ३५)। सुक्कलेस्सा जहा सलेस्सा। अलेस्सा जहा सिद्धा (सिद्धा ण भंते। पुच्छा, गोयमा। नाणी नो अन्नाणी, नियमा एगनाणी केवलनाणी —प्र०३०)।

—भग० श ८। उ २। प्र ६६-६७। पृ० ५४५

सलेशी जीव में पाँच ज्ञान तथा तीन अज्ञान की भजना होती है। कृष्णलेशी यावत पद्मलेशी जीव मे चार ज्ञान तथा तीन अज्ञान की भजना होती है। शुक्ललेशी जीव में पाँच ज्ञान तथा तीन अज्ञान की भजना होती है। अलेशी जीव में नियम से एक केवलज्ञान होता है।

(ख) कण्हलेसे णं भंते। जीवे कइसु नाणेसु होज्जा ? गोयमा। दोसु वा तिसु वा चउसु वा नाणेसु होज्जा, दोसु होमाणे आभिणिबोहियसुयनाणे होज्जा, तिसु होमाणे आभिणिबोहियसुयनाणओहिनाणेसु होज्जा, अहवा तिसु होमाणे आभिणिबोहिय-सुयनाणमणपज्जवनाणेसु होज्जा, चउसु होमाणे आभिणिबोहियसुयओहिमणपज्ज-वनाणेसु होज्जा, एवं जाव पम्हलेसे। सुक्कलेसे णं भंते। जीवे कइसु नाणेसु होज्जा ?

गोयमा ! दोसु वा तिसु वा चउसु वा होज्जा, दोसु होमाणे आभिणिबोहियनाण एवं जहेव कण्हलेसाणं तहेव भाणियव्वं जाव चउहिं। एगंमि नाणे होमाणे एगंमि केवलनाणे होज्जा।

—पण्ण० प १७। उ ३। सू ३०। पृ० ४४५

कृष्णलेशी जीव के दो, तीन अथवा चार ज्ञान होते हैं। दो ज्ञान होने से मति-ज्ञान और श्रुतज्ञान होता है। तीन ज्ञान होने से मति, श्रुत तथा अवधिज्ञान होता है अथवा मति, श्रुत तथा मनःपर्यव ज्ञान होता है। चार होने से मति, श्रुत, अवधि तथा मनःपर्यव ज्ञान होता है। इसी प्रकार यावत् पद्मलेशी जीव तक कहना। शुक्ललेशी जीव के एक, दो, तीन अथवा चार ज्ञान होते हैं। यदि दो, तीन अथवा चार ज्ञान हों तो कृष्णलेशी जीव की तरह होता है। एक ज्ञान हो तो केवलज्ञान होता है।

ननु मनःपर्यवज्ञानमतिविशुद्धस्योपजायते, कृष्णलेश्या च संक्लिष्टाध्यवसायरूपा ततः कथं कृष्णलेश्याकस्य मनःपर्यवज्ञानसम्भवः ? उच्यते, इह लेश्यानां प्रत्येका-संख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणान्यध्यवसायस्थानानि, तत्र कानिचित् मंदानुभावान्य-ध्यवसायस्थानानि प्रमत्तसंयतस्यापि लभ्यन्ते, अतएव कृष्णनीलकापोतलेश्या अन्यत्र प्रमत्तसंयतान्ता गीयन्ते, मनःपर्यवज्ञानं च प्रथमतोऽप्रमत्तसंयतस्योत्पद्यते ततः प्रमत्त-संयतस्यापि लभ्यते इति सम्भवति कृष्णलेश्याकस्यापि मनःपर्यवज्ञानं।

—पण्ण० प १७। उ ३। सू ३०। टीका

मनःपर्यवज्ञान अति विशुद्ध को होता है तथा कृष्णलेश्या संक्लिष्ट अध्यवसाय रूप है, तब कृष्णलेश्या में मनःपर्यवज्ञान कैसे सम्भव हो सकता है ? प्रत्येक लेश्या के असंख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाण अध्यवसाय स्थान होते हैं, उनमें कितने ही मंद रसवाले अध्यवसाय स्थान प्रमत्त संयत को भी होते हैं। अतः कृष्ण, नील, कापोत लेश्याएं प्रमत्तसंयत गुणस्थान तक होती हैं—ऐसा अन्य ग्रन्थकारों ने कहा है। मनःपर्यवज्ञान प्रथम अप्रमत्तसंयत को होता है तथा तत्पश्चात् प्रमत्तसंयत को भी होता है। अतः कृष्णलेश्यावाले को भी मनः-पर्यवज्ञान सम्भव है।

'६६'२ लेश्या-विशुद्धि से त्रिविध ज्ञान-समुत्पत्ति :—

'६६'२'१ लेश्या-विशुद्धि से जाति-स्मरण (मतिज्ञान) :—

(क) तए णं तव मेहा ! लेस्साहिं विसुज्झमाणीहिं अज्झवसाणेणं सोहणेणं सुभेणं परिणामेणं तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहापोहमग्गणगवेसणं करेमाणस्स सन्निपुव्वे जाइसरणे समुप्पज्जित्था।

(ख) तए ण तस्स मेहस्स अणगारस्स समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म सुभेहिं परिणामेहि पसत्थेहि अज्झवसाणेहि लेस्साहि विसुज्झमाणीहिं तयावरणिज्जाण कम्माण खओवसमेणं ईहापोहमग्गणगवेसण करेमाणस्स सन्निपुव्वे जाइसरणे समुप्पन्ने ।

—णाया० श्रु १ । अ १ । सू ३२, ३३ । पृ० ६७० ७२

(ग) तए ण तस्स सुदंसणस्स सेट्ठिस्स समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म सुभेण अज्झवसाणेणं सुभेण परिणामेण लेस्साहिं विसुज्झ-माणीहि तयावरणिज्जाण कम्माण खओवसमेणं ईहापोहमग्गणगवेसण करेमाणस्स सन्निपुव्वे जाइसरणे समुप्पन्ने ।

—भग० श ११ । उ ११ । प्र ३५ । पृ० ६४५

लेश्या का उत्तरोत्तर विशुद्ध होना जाति-स्मरण-ज्ञान की प्राप्ति मे एक आवश्यक अग है ।

९६ २.२ लेश्या-विशुद्धि से अवधिज्ञान :—

(क) आणंदस्स समणोवासगस्स अन्नया कयाइ सुभेण अज्झवसाणेण सुभेण परिणामेण लेस्साहि विसुज्झमाणीहि तयावरणिज्जाण कम्माण खओवसमेण ओहिनाणे समुप्पन्ने ।

—उवा० अ १ । सू १२ । पृ० ११३४

लेश्या का उत्तरोत्तर विशुद्ध होना अवधिज्ञान की प्राप्ति मे भी एक आवश्यक अग है ।

(ख) (सोच्चा केवलिस्स) तस्स ण अट्ठमंअट्ठमेण अनिक्खित्तेण तवोकम्मेण अप्पाण भावेमाणस्स पगइभद्दयाए, तहेव जाव (××× लेस्साहि विसुज्झमाणीहि विसुज्झमाणीहि ×××) गवेसण करेमाणस्स ओहिनाणे समुप्पज्जइ ।

—भग० श ९ । उ ३१ । प्र ३८ । पृ० ५८०

श्रुत्वाकेवली के अवधिज्ञान की प्राप्ति के समय लेश्या की भी उत्तरोत्तर विशुद्धि होती है ।

९६ २ ३ लेश्या-विशुद्धि से विभग अज्ञान —

तस्स ण (असोच्चा केवलीस्स ण) भंते ! छट्ठंछट्ठेण ××× अन्नया कयाइ सुभेण अज्झवसाणेण, सुभेण परिणामेण, लेस्साहि विसुज्झमाणीहि विसुज्झमाणीहि तया-वरणिज्जाण कम्माण खओवसमेण ईहापोहमग्गणगवेसण करेमाणस्स विभगे नाम अन्नाणे समुप्पज्जइ ।

—भग० श ९ । उ ३१ । प्र ११ । पृ० ५७८

लेश्या का उत्तरोत्तर विशुद्ध होना विभंग अज्ञान की प्राप्ति मे शुभ अध्यवसाय और शुभ परिणाम के साथ एक आवश्यक अग है।

६६ ३ सलेशी का सलेशी को जानना व देखना :—

'६६ ३'१ विशुद्ध-अविशुद्धलेशी देव का विशुद्ध-अविशुद्धलेशी देव देवी को जानना व देखना :—

अविसुद्धलेसे ण भंते ! देवे असम्मोहएण अप्पाणएण अविसुद्धलेसं देवं, देविं, अन्नयरं जाणइ, पासइ ? णो तिणट्ठे समट्ठे (१)।

एवं अविसुद्धलेसे देवे असम्मोहएणं अप्पाणेण विसुद्धलेसं देवं (२)।

अविसुद्धलेसे सम्मोहएणं अप्पाणेण अविसुद्धलेसं देवं (३)।

अविसुद्धलेसे देवे सम्मोहएण अप्पाणेण विसुद्धलेसं देवं (४)।

अविसुद्धलेसे सम्मोहयाऽसम्मोहएणं अविसुद्धलेसं देवं (५)।

अविसुद्धलेसे सम्मोहयाऽसम्मोहएण विसुद्धलेसं देवं (६)।

विसुद्धलेसे असम्मोहएण अविसुद्धलेसं देवं (७।

विसुद्धलेसे असम्मोहएणं विसुद्धलेसं देवं (८)।

विसुद्धलेसे ण भंते देवे सम्मोहएण अविसुद्धलेसं देवं जाणइ ? हंता, जाणइ (९)।

एवं विसुद्धलेसे सम्मोहएण विसुद्धलेसं देवं जाणइ ? हंता, जाणइ (१०)।

विसुद्धलेसे सम्मोहयाऽसम्मोहएण अविसुद्धलेसं देवं ? (११)।

विसुद्धलेसे सम्मोहयाऽसम्मोहएण विसुद्धलेस देवं ? (१२)।

एवं हेट्ठिल्लएहिं अट्ठहिं न जाणइ, न पासइ, उवरिल्लएहिं चउहि जाणइ, पासइ।

—भग० श ६। उ ९। प्र ७-१०। पृ० ५०६ ७

अविशुद्धलेशी देव अनुपयुक्त आत्मा द्वारा अविशुद्धलेशी देव व देवी को या दोनो में से किसी एक को नही जानता है, नही देखता है (१)। इसी प्रकार अविशुद्धलेश्यावाला देव अनुपयुक्त आत्मा द्वारा विशुद्धलेशी देव, देवी व अन्यतर को नही जानता है, नही देखता है (२)। अविशुद्धलेश्यावाला देव उपयुक्त आत्मा द्वारा अविशुद्धलेशी देव, देवी व अन्यतर को (३), अविशुद्धलेश्यावाला देव उपयुक्त आत्मा द्वारा विशुद्धलेशी देव, देवी वा अन्यतर को (४), अविशुद्धलेश्यावाला देव उपयुक्तानुपयुक्त आत्मा द्वारा अविशुद्धलेशी देव, देवी वा अन्यतर को (५), अविशुद्धलेश्यावाला देव उपयुक्तानुपयुक्त आत्मा द्वारा विशुद्धलेशी देव, देवी वा अन्यतर को (६), विशुद्धलेशी देव अनुपयुक्त आत्मा द्वारा अविशुद्धलेशी देव, देवी वा अन्यतर को (७) तथा विशुद्धलेशी देव अनुपयुक्त आत्मा द्वारा विशुद्धलेशी देव, देवी वा अन्यतर को नही जानता है, नही देखता है (८)।

विशुद्धलेशी देव उपयुक्त आत्मा द्वारा अविशुद्धलेशी देव, देवी वा अन्यतर को जानता है, देखता है (६)।

विशुद्धलेशी देव उपयुक्त आत्मा द्वारा विशुद्धलेशी देव, देवी वा अन्यतर को जानता है, देखता है (१०)।

विशुद्धलेशी देव उपयुक्तानुपयुक्त आत्मा द्वारा अविशुद्धलेशी देव, देवी व अन्यतर को जानता है, देखता है (११)।

विशुद्धलेशी देव उपयुक्तानुपयुक्त आत्मा द्वारा विशुद्धलेशी देव, देवी व अन्यतर को जानता है, देखता है (१२)।

प्रथम के आठ विकल्पों मे न जानता है, न देखता है , शेप के चार विकल्पों में जानता है, देखता है।

नोट :—अविशुद्धलेशी का टीकाकार ने 'अविशुद्धलेशी विभगज्ञानी देव' अर्थ किया है। अन्यतर का अर्थ 'दोनों में से एक' होता है। 'असम्मोहएण अप्पाएण' का अर्थ टीकाकार ने अनुपयुक्त आत्मा किया है।

टीका—एभि॰ पुनश्चतुर्भिर्विकल्पैः सम्यग्दृष्टित्वादुपयुक्तत्वानुपयुक्तत्वाच्च जानाति, उपयोगानुपयोगपक्षे उपयोगाशस्य सम्यग्ज्ञानहेतुत्वादिति।

शेप के चार विकल्पों मे विशुद्धलेशी देव सम्यग्दृष्टि होने के कारण उपयुक्तानुपयुक्त आत्मा होने पर भी जानता व देखता है , क्योंकि सम्यग्ज्ञान होने के कारण उपयोगानुपयोग मे उपयोग का अश अधिक होता है।

६६ ३·२ विशुद्ध-अविशुद्धलेशी अणगार का विशुद्ध-अविशुद्ध लेश्यावाले देव-देवी को जानना व देखना ·—

अविसुद्धलेस्से णं भंते ! अणगारे असमोहएण अप्पाणेण अविसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे। (१)

अविसुद्धलेस्से ण भंते ! अणगारे असमोहएण अप्पाणएण विसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे। (२)

अविसुद्धलेस्से (णं भंते !) अणगारे समोहएण अप्पाणेण अविसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे। (३)

अविसुद्धलेस्से (णं भंते !) अणगारे समोहएण अप्पाणेण विसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? (गोयमा !) नो इणट्ठे समट्ठे। (४)

अविसुद्धलेस्से ण भंते ! अणगारे समोहयासमोहएण अप्पाणेण अविसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? (गोयमा !) नो इणट्ठे समट्ठे। (५)

अविसुद्धलेसे णं भंते ! अणगारे समोहयासमोहएणं अप्पाणेणं विसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे । (६)

विसुद्धलेस्से णं भंते ! अणगारे असमोहएणं अप्पाणेणं अविसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? हंता जाणइ पासइ जहा अविसुद्धलेस्सेण (छ) आलावगा एवं विसुद्धलेस्सेण वि छ आलावगा भाणियव्वा जाव विसुद्धलेस्से णं भंते ! अणगारे समोहयासमोहएणं अप्पाणेणं विसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? हंता जाणइ पासइ । (१२)

—जीवा० प्रति ३ । उ २ । सू २०३ । पृ० १५८

अविशुद्धलेशी अणगार असमवहत आत्मा से अविशुद्धलेशी देव, देवी तथा अणगार को जानता व देखता नहीं है (१)। अविशुद्धलेशी अणगार असमवहत आत्मा से विशुद्धलेशी देव, देवी तथा अणगार को जानता व देखता नहीं है (२)। अविशुद्धलेशी अणगार समवहत आत्मा से अविशुद्धलेशी देव, देवी तथा अणगार को जानता व देखता नहीं है (३)। अविशुद्धलेशी अणगार समवहत आत्मा से विशुद्धलेशी देव, देवी तथा अणगार को जानता व देखता नहीं है (४)। अविशुद्धलेशी अणगार समवहतासमवहत आत्मा से अविशुद्धलेशी देव, देवी तथा अणगार को जानता व देखता नहीं है (५)। अविशुद्धलेशी अणगार समवहतासमवहत आत्मा से विशुद्धलेशी देव, देवी तथा अणगार को जानता व देखता नहीं है (६)।

इसी प्रकार विशुद्धलेशी अणगार के छः आलापक कहने लेकिन जानता है तथा देखता है—ऐसा कहना।

नोट :—टीकाकार श्री मलयगिरि ने असमवहत का अर्थ 'वेदनादिसमुद्घातरहित' तथा समवहत का अर्थ 'वेदनादिसमुद्घाते गत.' किया है। समवहतासमवहत का अर्थ किया है—'वेदनादिसमुद्घातक्रियाविष्टो न तु परिपूर्णं समवहतो नाप्यसमवहतः सर्वथा।' मलयगिरि ने किसी मूल टीकाकार की उक्ति दी है—"शोभनमशोभन वा वस्तु यथावद्विशुद्धलेश्यो जानाति, समुद्घातोऽपि तस्याप्रतिबन्धक एव।" लेकिन भगवती के टीकाकार श्री अभयदेव सूरि ने 'असमोहएणं अप्पाणेणं' का अर्थ 'अनुपयुक्तेनात्मना' किया है।

६६. ३·३ भावितात्मा अणगार का सकर्मलेश्या का जानना व देखना :—

अणगारे णं भंते ! भावियप्पा अप्पणो कम्मलेस्सं न जाणइ, न पासइ तं पुण-जीवं सरूविं सकम्मलेस्सं जाणइ, पासइ ? हंता गोयमा ! अणगारे णं भावियप्पा अप्पणो जाव पासइ।

—भग० श १४ । उ ६ । प्र १ । पृ० ७०६

विशुद्धलेशी देव उपयुक्त आत्मा द्वारा अविशुद्धलेशी देव, देवी वा अन्यतर को जानता है, देखता है (९)।

विशुद्धलेशी देव उपयुक्त आत्मा द्वारा विशुद्धलेशी देव, देवी वा अन्यतर को जानता है, देखता है (१०)।

विशुद्धलेशी देव उपयुक्तानुपयुक्त आत्मा द्वारा अविशुद्धलेशी देव, देवी व अन्यतर को जानता है, देखता है (११)।

विशुद्धलेशी देव उपयुक्तानुपयुक्त आत्मा द्वारा विशुद्धलेशी देव, देवी व अन्यतर को जानता है, देखता है (१२)।

प्रथम के आठ विकल्पों मे न जानता है, न देखता है , शेप के चार विकल्पो में जानता है, देखता है।

नोट :—अविशुद्धलेशी का टीकाकार ने 'अविशुद्धलेशी विभगज्ञानी देव' अर्थ किया है। अन्यतर का अर्थ 'दोनो में से एक' होता है। 'असम्मोहएण अप्पाएण' का अर्थ टीकाकार ने अनुपयुक्त आत्मा किया है।

टीका—एभि· पुनश्चतुर्भिर्विकल्पैः सम्यग्दृष्टित्वादुपयुक्तत्वानुपयुक्तत्वाच्च जानाति, उपयोगानुपयोगपक्षे उपयोगाशस्य सम्यग्ज्ञानहेतुत्वादिति।

शेप के चार विकल्पो मे विशुद्धलेशी देव सम्यग्दृष्टि होने के कारण उपयुक्तानुपयुक्त आत्मा होने पर भी जानता व देखता है , क्योंकि सम्यग्ज्ञान होने के कारण उपयोगानुपयोग मे उपयोग का अश अधिक होता है।

६९ ३·२ विशुद्ध-अविशुद्धलेशी अणगार का विशुद्ध-अविशुद्ध लेश्यावाले देव-देवी को जानना व देखना :—

अविसुद्धलेस्से णं भंते ! अणगारे असमोहएण अप्पाणेण अविसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे। (१)

अविसुद्धलेस्से ण भंते ! अणगारे असमोहएण अप्पाणएण विसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे। (२)

अविसुद्धलेस्से (णं भंते !) अणगारे समोहएण अप्पाणेण अविसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे। (३)

अविसुद्धलेस्से (णं भंते !) अणगारे समोहएण अप्पाणेण विसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? (गोयमा !) नो इणट्ठे समट्ठे। (४)

अविसुद्धलेस्से ण भंते ! अणगारे समोहयासमोहएण अप्पाणेण अविसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? (गोयमा !) नो इणट्ठे समट्ठे। (५)

अविसुद्धलेस्से (णं भंते !) अणगारे समोहयासमोहएणं अप्पाणेण विसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? (गोयमा !) नो इणट्ठे समट्ठे । (६)

विसुद्धलेस्से णं भंते ! अणगारे असमोहएण अप्पाणेण अविसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? हंता जाणइ पासइ जहा अविसुद्धलेस्सेण (छ) आलावगा एवं विसुद्धलेस्सेण वि छ आलावगा भाणियव्वा जाव विसुद्धलेस्से ण भंते ! अणगारे समोहयासमोहएण अप्पाणेण विसुद्धलेस्सं देवं देविं अणगारं जाणइ पासइ ? हंता जाणइ पासइ । (१२)

—जीवा० प्रति ३ । उ २ । सू १०३ । पृ० १५१

अविशुद्धलेशी अणगार असमवहत आत्मा से अविशुद्धलेशी देव, देवी तथा अणगार को जानता व देखता नहीं है (१)। अविशुद्धलेशी अणगार असमवहत आत्मा से विशुद्धलेशी देव, देवी तथा अणगार को जानता व देखता नही है (२)। अविशुद्धलेशी अणगार समवहत आत्मा से अविशुद्धलेशी देव, देवी तथा अणगार को जानता व देखता नही है (३)। अविशुद्धलेशी अणगार समवहत आत्मा से विशुद्धलेशी देव, देवी तथा अणगार को जानता व देखता नही है (४)। अविशुद्धलेशी अणगार समवहतासमवहत आत्मा से अविशुद्ध-लेशी देव, देवी तथा अणगार को जानता व देखता नही है (५)। अविशुद्धलेशी अणगार समवहतासमवहत आत्मा से विशुद्धलेशी देव, देवी तथा अणगार को जानता व देखता नही है (६)।

इसी प्रकार विशुद्धलेशी अणगार के छः आलापक कहने लेकिन जानता है तथा देखता है—ऐसा कहना।

नोट :—टीकाकार श्री मलयगिरि ने असमवहत का अर्थ 'वेदनादिसमुद्घातरहित' तथा समवहत का अर्थ 'वेदनादिसमुद्घाते गतः' किया है। समवहतासमवहत का अर्थ किया है—'वेदनादिसमुद्घातक्रियाविष्टो न तु परिपूर्ण समवहतो नाप्यसमवहतः सर्वथा।' मलयगिरि ने किसी मूल टीकाकार की उक्ति दी है—"शोभनमशोभन वा वस्तु यथावद्विशुद्धलेश्यो जानाति, समुद्घातोऽपि तस्याप्रतिबन्धक एव।" लेकिन भगवती के टीकाकार श्री अभयदेव सूरि ने 'असमोहएण अप्पाणेण' का अर्थ 'अनुपयुक्तेनात्मना' किया है।

'६६ ३'३ भावितात्मा अणगार का सकर्मलेश्या का जानना व देखना :—

अणगारे ण भंते ! भावियप्पा अप्पणो कम्मलेस्सं न जाणइ, न पासइ तं पुण-जीवं सरूवीं सकम्मलेस्सं जाणइ, पासइ ? हंता गोयमा ! अणगारे णं भावियप्पा अप्पण्णो जाव पासइ।

—भग० श १४ । उ ६ । प्र १ । पृ० ७०६

भावितात्मा अणगार अपनी कर्मलेश्या को न जानता है, न देखता है। परन्तु सरूपी सकर्मलेश्या को जानता है, देखता है।

टीकाकार कहते हैं—"भावितात्मा अणगार छद्मस्थ होने के कारण ज्ञानावरणीयादि कर्म के योग्य अथवा कर्म सम्बन्धी कृष्णादि लेश्याओं को नहीं जानता है, क्योंकि कर्मद्रव्य तथा लेश्याद्रव्य अति सूक्ष्म होने के कारण छद्मस्थ के ज्ञान द्वारा अगोचर हैं—परन्तु यह अणगार कर्म तथा लेश्या वाले तथा शरीर युक्त आत्मा को जानता है, क्योंकि शरीर चक्षु इन्द्रिय के द्वारा ग्रहण होता है तथा आत्मा का शरीर के साथ कथंचित् अभेद है। इसलिये उसको जानता है।"

६६.४ सलेशी जीव और ज्ञान तुलना :—

६६.४.१ सलेशी नारकी की ज्ञान तुलना :—

कण्हलेस्से णं भंते ! नेरइए कण्हलेसं नेरइयं पणिहाए ओहिणा सव्वओ समंता समभिलोएमाणे समभिलोएमाणे केवइयं खेत्तं जाणइ, केवइयं खेत्तं पासइ ? गोयमा ! णो बहुयं खेत्तं णो दूरं खेत्तं जाणइ, णो बहुयं खेत्तं पासइ, णो दूरं खेत्तं जाणई, णो दूरं खेत्तं पासइ, इत्तरियमेव खेत्तं जाणइ, इत्तरियमेव खेत्तं पासइ। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—'कण्हलेसे णं नेरइए तं चेव जाव इत्तरियमेव खेत्तं पासइ' ? गोयमा ! से जहानामए केइ पुरिसे बहुसमरमणिज्जंसि भूमिभागंसि ठिच्चा सव्वओ समंता समभिलोएज्जा, तए णं से पुरिसे धरणितलगयं पुरिसं पणिहाए सव्वओ समंता समभिलोएमाणे समभिलोएमाणे णो बहुयं खेत्तं जाव पासइ, जाव इत्तरियमेव खेत्तं पासइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—कण्हलेसे णं नेरइए जाव इत्तरियमेव खेत्तं पासइ। नीललेसे णं भंते ! नेरइए कण्हलेसं नेरइयं पणिहाय ओहिणा सव्वओ समंता समभिलोएमाणे समभिलोएमाणे केवइयं खेत्तं जाणइ, केवइयं खेत्तं पासइ ? गोयमा ! बहुतरागं खेत्तं जाणइ, बहुतरागं खेत्तं पासइ, दूरतरं खेत्तं जाणइ, दूरतरं खेत्तं पासइ, वितिमिरतरागं खेत्तं जाणइ, वितिमिरतरागं खेत्तं पासइ, विसुद्धतरागं खेत्तं जाणइ, विसुद्धतरागं खेत्तं पासइ। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—नीललेसे णं नेरइए कण्हलेसं नेरइयं पणिहाय जाव विसुद्धतरागं खेत्तं जाणइ विसुद्धतरागं खेत्तं पासइ ? गोयमा ! से जहानामए केइ पुरिसे बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ पव्वयं दुरुहित्ता सव्वओ समंता समभिलोएज्जा, तए णं से पुरिसे धरणितलगयं पुरिसं पणिहाय सव्वओ समंता समभिलोएमाणे समभिलोएमाणे बहुतरागं खेत्तं जाणइ जाव विसुद्धतरागं खेत्तं पासइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—नीललेसे नेरइए कण्हलेसं जाव विसुद्धतरागं खेत्तं पासइ। काउलेसे णं

भंते ! नेरइए नीललेस्सं नेरइयं पणिहाय ओहिणा सव्वओ समंता समभिलोएमाणे समभिलोएमाणे केवइयं खेत्तं जाणइ पासइ ? गोयमा ! बहुतरागं खेत्तं जाणइ पासइ, जाव विसुद्धतरागं खेत्तं पासइ। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ— काउलेस्से णं नेरइए जाव विसुद्धतरागं खेत्तं पासइ ? गोयमा ! से जहानामए केइ पुरिसे बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ पव्वयं दुरूहइ दुरूहित्ता दो वि पाए उच्चाविया, (वइत्ता) सव्वओ समंता समभिलोएज्जा, तए णं से पुरिसे पव्वयगयं धरणितलगयं च पुरिसं पणिहाय सव्वओ समंता समभिलोएमाणे समभिलोएमाणे बहुतरागं खेत्तं जाणइ, बहुतरागं खेत्तं पासइ जाव वितिमिरतरागं खेत्तं पासइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ – काउलेस्से णं नेरइए नीललेस्सं नेरइयं पणिहाय तं चेव जाव वितिमिरतरागं खेत्तं पासइ ॥ —पण्ण० प १७ | उ ३ | सू २६ | पृ० ४४४-५

कृष्णलेशी नारकी कृष्णलेशी नारकी की अपेक्षा अवधिज्ञान द्वारा चारों दिशाओं में तथा चारों विदिशाओं में बहुत (विस्तृत) क्षेत्र को नही जानता है, बहुत क्षेत्र को नही देखता है, दूर क्षेत्र को नही जानता है, दूर क्षेत्र को नही देखता है, कुछ कम-अधिक क्षेत्र को जानता है, कुछ कम-अधिक क्षेत्र को देखता है। जैसे—यदि कोई पुरुष बराबर समान तथा रमणीक भूमि भाग पर खड़ा होकर चारो तरफ देखता हो तो वह पुरुष पृथ्वीतल में रहनेवाले पुरुष की अपेक्षा चारो तरफ देखता हुआ बहुतर क्षेत्र तथा दूरतर क्षेत्र को जानता नही है, देखता नही है। कुछ अल्पाधिक क्षेत्र को जानता है, देखता है। इसी तरह कृष्णलेशी नारकी अन्य कृष्णलेशी नारकी की अपेक्षा कुछ अल्पाधिक क्षेत्र को जानता है, देखता है।

नीललेशी नारकी कृष्णलेशी नारकी की अपेक्षा अवधिज्ञान द्वारा चारों दिशाओं में तथा चारों विदिशाओं में देखता हुआ अधिकतर क्षेत्र को जानता है, देखता है। दूरतर क्षेत्र को जानता है, देखता है, विशुद्धतर क्षेत्र को जानता है, देखता है, जैसे—यदि कोई पुरुष बराबर बहुसम रमणीक भूमि-भाग से पर्वत पर चढकर चारों दिशाओं व चारों विदिशाओं में देखता हो तो वह पुरुष पृथ्वीतल के ऊपर रहे हुए पुरुष की अपेक्षा चारों तरफ अधिकतर क्षेत्र को जानता है, देखता है, दूरतर क्षेत्र को जानता है व देखता है, विशुद्धतर क्षेत्र को जानता है व देखता है।

कापोतलेशी नारकी नीललेशी नारकीकी अपेक्षा अवधिज्ञान द्वारा चारों दिशाओं व चारों विदिशाओं में देखता हुआ अधिकतर क्षेत्र को जानता है व देखता है ; दूरतर क्षेत्र को जानता है व देखता है ; विशुद्धतर क्षेत्र को जानता है व देखता है। जैसे—कोई पुरुष बराबर सम रमणीक भूमि से पर्वत पर चढकर तथा दोनों पैर ऊँचे उठाकर चारों दिशाओ में तथा चारों विदिशाओं में देखता हो तो वह पुरुष पर्वत पर चढ़े हुए तथा पृथ्वीतल पर खड़े हुए पुरुषो की

अपेक्षा चारों दिशाओं में तथा चारों विदिशाओ मे अधिकतर क्षेत्र को जानता है व देखता है, दूरतर क्षेत्र को जानता है, देखता है, विशुद्धतर क्षेत्र को जानता है व देखता है।

७० सलेशी जीव और अनन्तर भव में मोक्ष प्राप्ति :—

७० १ कापोतलेशी जीव की अनन्तर भव में मोक्ष प्राप्ति :—

से नूण भंते! काऊलेस्से पुढविकाइए काऊलेस्सेहिंतो पुढविकाइएहिंतो अणतरं उव्वट्टित्ता माणुसं विग्गहं लभइ माणुसं विग्गहं लभइत्ता केवलं बोहिं बुज्झइ केवलं बोहिं बुज्झइत्ता तओ पच्छा सिज्झइ जाव अंतं करेइ? हंता मागंदियपुत्ता! काऊलेस्से पुढविकाइए जाव अंतं करेइ।

से नूण भंते! काऊलेस्से आउकाइए काऊलेस्सेहिंतो आउकाइएहिंतो अणतरं उव्वट्टित्ता माणुसं विग्गहं लभइ माणुसं विग्गहं लभइत्ता केवलं बोहिं बुज्झइ, जाव अंतं करेइ? हंता मागंदियपुत्ता! जाव अंतं करेइ।

से नूण भंते! काऊलेस्से वणस्सइकाइए एवं चेव जाव अंतं करेइ।

—भग० श १८। उ ३। प्र० १ से ३। पृ० ७६६

कापोतलेशी पृथ्वीकायिक जीव कापोतलेशी पृथ्वीकायिक योनि से मरण को प्राप्त होकर तदनन्तर मनुष्य के शरीर को प्राप्त करता है, मनुष्य शरीर को प्राप्त करके केवलज्ञान को प्राप्त करता है तथा केवलबोधि को प्राप्त करने के बाद सिद्ध होता है, यावत सर्व दुःखों का अंत करता है।

कापोतलेशी अप्कायिक जीव कापोतलेशी अप्कायिक योनि से मरण को प्राप्त होकर तदनन्तर मनुष्य के शरीर को प्राप्त करता है, मनुष्य शरीर को प्राप्त करके, केवलज्ञान को प्राप्त करता है तथा केवलज्ञान को प्राप्त करने के बाद सिद्ध होता है, यावत सर्व दुःखों का अन्त करता है।

कापोतलेशी वनस्पतिकायिक जीव कापोतलेशी वनस्पतिकायिक योनि से मरण को प्राप्त होकर तदनन्तर मनुष्य के शरीर को प्राप्त करता है, मनुष्य शरीर को प्राप्त करके केवलज्ञान को प्राप्त करता है तथा केवलज्ञान को प्राप्त करने के बाद सिद्ध होता है, यावत सर्व दुःखों का अन्त करता है।

आर्यों के पूछने पर भगवान महावीर ने भी (अहंपि ण अज्जो! एवमाइक्खामि) माकन्दीपुत्र के उपर्युक्त कथन का समर्थन किया है।

७० २ कृष्णलेशी जीव की अनतर भव में मोक्ष प्राप्ति —

एवं खलु अज्जो! कण्हलेस्से पुढविकाइए कण्हलेस्सेहिंतो पुढविकाइएहिंतो जाव अंतं करेइ, एवं खलु अज्जो! नीललेस्से पुढविकाइए जाव अंतं करेइ एवं

काऊलेस्से वि, जहा पुढविकाइए × × × एवं आउकाइए वि, एवं वणस्सइकाइए वि सच्चे णं एसमट्ठे।

—भग० श १८। उ ३। प्र ३। पृ० ७६६-६७

कृष्णलेशी पृथ्वीकायिक जीव कृष्णलेशी पृथ्वीकायिक योनि से, कृष्णलेशी अप्-कायिक जीव कृष्णलेशी अप्कायिक योनि से तथा कृष्णलेशी वनस्पतिकायिक जीव कृष्ण-लेशी वनस्पतिकायिक योनि से मरण को प्राप्त होकर तदनतर मनुष्य के शरीर को प्राप्त करता है, मनुष्य के शरीर को प्राप्त करके केवलज्ञान को प्राप्त करता है तथा केवलज्ञान को प्राप्त करने के बाद सिद्ध होता है, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करता है।

·७० ३ नीललेशी जीव की अनन्तर भव में मोक्ष प्राप्ति :—

नीललेशी पृथ्वीकायिक जीव नीललेशी पृथ्वीकायिक योनि से, नीललेशी अप्कायिक जीव नीललेशी अप्कायिक योनि से तथा नीललेशी वनस्पतिकायिक जीव नीललेशी वनस्पतिकायिक योनि से मरण को प्राप्त होकर तदनतर मनुष्य के शरीर को प्राप्त करता है मनुष्य के शरीर को प्राप्त करके केवलज्ञान को प्राप्त करता है तथा केवलज्ञान को प्राप्त करने के बाद सिद्ध होता है, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करता है। (देखो पाठ ·७० २)

·७१ सलेशी जीव और आरम्भ-परारम्भ-उभयारम्भ अनारम्भ :—

जीवा णं भंते! किं आयारंभा, परारंभा, तदुभयारंभा, अनारंभा? गोयमा! अत्थेगइया जीवा आयारंभा वि परारंभा वि तदुभयारंभा, नो अणारंभा; अत्थे-गइया जीवा नो आयारंभा, नो परारंभा, नो तदुभयारंभा, अणारंभा। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ--अत्थेगइया जीवा आयारंभा वि एवं पडिउच्चारेयव्वं? गोयमा, जीवा दुविहा पण्णत्ता, तंजहा संसारसमावन्नगा य असंसारसमावन्नगा य, तत्थ णं जे ते असंसारसमावन्नगा ते ण सिद्धा, सिद्धा ण नो आयारंभा जाव अणारंभा, तत्थ णं जे ते संसारसमावन्नगा ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—संजया य असंजया य, तत्थ णं जे ते संजया ते दुविहा पण्णत्ता, तंजहा—पमत्तसंजया य अप्पमत्तसंजया य, तत्थ णं जे ते अप्पमत्तसंजया ते ण नो आयारंभा, नो परारंभा जाव अणारंभा, तत्थ णं जे ते पमत्तसंजया ते सुहं जोगं पडुच्च नो आयारंभा नो परारंभा जाव अणारंभा, असुभं जोगं पडुच्च आयारंभा वि जाव नो अणारंभा, तत्थ णं जे ते असंजया ते अविरतिं पडुच्च आयारंभा वि जाव नो अणारंभा, से तेणट्ठेण गोयमा! एवं वुच्चइ—अत्थेगइया जीवा जाव अणारंभा।

सलेस्सा जहा ओहिया, कण्हलेसस्स, नीललेसस्स, काऊलेसस्स जहा ओहिया

जीवा, नवरं पमत्त-अप्पमत्ता न भाणियव्वा, तेऊलेसस्स, पम्हलेसस्स सुक्कलेसस्स जहा ओहिया जीवा, नवरं सिद्धा न भाणियव्वा।

—भग० श १ । उ १ । प्र ४७, ४८, ५० । पृ० ३८८-८९

कोई एक जीव आत्मारंभी, परारंभी, उभयारंभी होता है अनारंभी नहीं होता है। कोई एक जीव आत्मारंभी परारंभी, उभयारंभी नहीं होता है, अनारंभी होता है। जीव दो प्रकार के होते है—यथा (१) समारम्भसमापन्नक तथा (२) असमारम्भसमापन्नक। इनमें से जो असमारम्भसमापन्नक जीव हैं वे सिद्ध हैं तथा सिद्ध आत्मारंभी, परारंभी, उभयारंभी नहीं होते हैं, अनारंभी होते हैं। जो समारम्भसमापन्नक जीव हैं, वे दो प्रकार के होते हैं, यथा—(१) संयत, (२) असंयत। जो संयत होते हैं वे दो प्रकार के होते हैं, यथा—(१) प्रमत्त संयत, (२) अप्रमत्त संयत। इनमें से जो अप्रमत्त संयत हैं वे आत्मारंभी, परारंभी, उभयारंभी नहीं होते हैं, अनारंभी होते हैं। इनमें जो प्रमत्त संयत हैं वे शुभयोग की अपेक्षा आत्मारंभी, परारंभी, उभयारंभी नहीं होते हैं, अनारंभी होते हैं तथा वे अशुभयोग की अपेक्षा आत्मारंभी परारंभी, उभयारंभी होते हैं, अनारंभी नहीं होते हैं। जो असंयत हैं वे अविरति की अपेक्षा आत्मारंभी, परारंभी, उभयारंभी होते हैं। इसलिए यह कहा गया है कि कोई एक जीव आत्मारंभी, परारंभी, उभयारंभी होता है, अनारंभी नहीं होता है तथा कोई एक जीव आत्मारंभी, परारंभी, उभयारंभी नहीं होता है, अनारंभी होता है।

औधिक जीवों की तरह सलेशी जीव भी कोई एक आत्मारम्भी, परारम्भी तथा उभयारम्भी है, अनारम्भी नहीं है, कोई एक आत्मारम्भी, परारम्भी, उभयारम्भी नहीं है, अनारम्भी है। सलेशी जीव सभी समारम्भसमापन्नक हैं अतः सिद्ध नहीं हैं।

कृष्णलेशी, नीललेशी तथा कापोतलेशी जीव मनुष्य को छोड़कर औधिक जीव दण्डक की तरह आत्मारम्भी, परारम्भी तथा उभयारम्भी हैं, अनारम्भी नहीं हैं। यह अविरति की अपेक्षा से कथन है। कृष्णलेशी, नीललेशी तथा कापोतलेशी मनुष्य कोई एक आत्मारम्भी, परारम्भी तथा उभयारम्भी हैं, अनारम्भी नहीं हैं, कोई एक आत्मारम्भी, परारम्भी तथा उभयारम्भी नहीं है, अनारम्भी है लेकिन इनमें प्रमत्तसंयत अप्रमत्तसंयत भेद नहीं करने, क्योंकि इन लेश्याओं में अप्रमत्तसंयतता सम्भव नहीं है।

यहाँ टीकाकार का कथन है कि इन लेश्याओं में प्रमत्तसंयतता भी सम्भव नहीं है।

टीका—कृष्णादिषु हि अप्रशस्तभावलेश्यासु संयतत्वं नास्ति × × × यद् द्रव्य-लेश्या प्रतीत्येति मन्तव्यं, ततस्तासु प्रमत्ताद्यभाव।

टीकाकार का भाव है कि कृष्ण-नील-कापोतलेशी मनुष्य में सत्त असत्त भेद भी नहीं करने क्योंकि इन लेश्याओं में प्रमत्तसंयतता भी सम्भव नहीं है।

लेकिन आगमो में कई स्थलो में सयत मे कृष्ण नील-कापात लेश्या होती है — ऐसा कथन पाया जाता है। (देखो — २८ तथा ६६·१)

तेजोलेशी, पद्मलेशी तथा शुक्ललेशी जीव औधिक जीवो की तरह कोई एक आत्मारम्भी, परारम्भी, उभयारम्भी है, अनारम्भी नही है, कोई एक आत्मारम्भी, परारम्भी तथा उभयारम्भी है, अनारभी नही है। इनमे सयत असयत भेद कहने तथा सयत में प्रमत्त-अप्रमत्त भेद कहने। अप्रमत्तसयत अनारम्भी होते हैं। प्रमत्तसंयत शुभयोग की अपेक्षा से अनारम्भी होते हैं तथा अशुभयोग की अपेक्षा से आत्मारम्भी, परारम्भी तथा उभयारम्भी हैं, अनारम्भी नही हैं। तथा इन लेश्याओ में जो असयती हैं वे अविरति की अपेक्षा से आत्मारम्भी, परारम्भी तथा उभयारम्भी हैं, अनारम्भी नही हैं।

७२ सलेशी जीव और कषाय :—

·७२ १ सलेशी नारकी में कषायोपयोग के विकल्प :—

इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए जाव (पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि निरयावासंसि नेरइयाण) काऊलेस्साए वट्टमाणा ? (नेरइया कि कोहोवउत्ता माणोवउत्ता मायोवउत्ता लोभोवउत्ता) गोयमा ! सत्तावीसं भंगा। × × × एव सत्तवि पुढवीओ नेयव्वाओ, नाणत्तं लेस्सासु।

गाहा **काऊ य दोसु, तइयाए मीसिया, नीलिया चउत्थीए।**
पंचमीयाए मीसा, कण्हा तत्तो परमकण्हा ॥

—भग० श १। उ ५। प्र १८१, १८६। पृ ४०१

रत्नप्रभापृथ्वी के तीस लाख नरकावासो के एक-एक नरकावास में बसे हुए कापोतलेशी नारकी क्रोधोपयोगवाले, मानोपयोगवाले, मायोपयोगवाले तथा लोभोपयोगवाले होते हैं। उनमे एकवचन तथा वहुवचन की अपेक्षा से क्रोधोपयोग आदि के निम्नलिखित २७ विकल्प होते हैं :—

(१) सर्वक्रोधोपयोगवाले।

(२) वहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, (३) वहु क्रोधोपयोगवाले, वहु मानोपयोगवाले, (४) वहु क्रोधोपयोगवाले, एक मायोपयोगवाला, (५) वहु क्रोधोपयोगवाले, वहु मायोपयोगवाले, (६) वहु क्रोधोपयोगवाले, एक लोभोपयोगवाला, (७) वहु क्रोधोपयोगवाले, वहु लोभोपयोगवाले।

(८) वहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, एक मायोपयोगवाला, (९) वहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, वहु मायोपयोगवाले, (१०) वहु क्रोधोपयोगवाले, वहु मानोपयोगवाले, एक मायोपयोगवाला, (११) वहु क्रोधोपयोगवाले, वहु मानोपयोग-

वाले, बहु मायोपयोगवाले, (१२) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, एक लोभोपयोगवाला, (१३) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, बहु लोभोपयोगवाले, (१४) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, एक लोभोपयोगवाला, (१५) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, बहु लोभोपयोगवाले, (१६) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मायोपयोगवाला, एक लोभोपयोगवाला, (१७) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मायोपयोगवाला, बहु लोभोपयोगवाले, (१८) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मायोपयोगवाले, एक लोभोपयोगवाला, (१९) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मायोपयोगवाले, बहु लोभोपयोगवाले।

(२०) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, एक मायोपयोगवाला, एक लोभोपयोगवाला, (२१) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, एक मायोपयोगवाला, बहु लोभोपयोगवाले, (२२) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, बहु मायोपयोगवाले, एक लोभोपयोगवाला, (२३) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, बहु मायोपयोगवाले, बहु लोभोपयोगवाले, (२४) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, एक मायोपयोगवाला, एक लोभोपयोगवाला (२५) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, एक मायोपयोगवाला, बहु लोभोपयोगवाले, (२६) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, बहु मायोपयोगवाले, एक लोभोपयोगवाला, तथा (२७) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, बहु मायोपयोगवाले, बहु लोभोपयोगवाले।

इसी प्रकार सातों नरकपृथ्वी के नरकावासों के एक-एक नरकावास में वर्ते हुए कापोतलेशी, नीललेशी तथा कृष्णलेशी नारकियों में क्रोधोपयोग आदि के २७ विकल्प कहने, लेकिन जिसमें जो लेश्या होती है वह कहनी तथा नरकावासों की भिन्नता जाननी।

७२·२ सलेशी पृथ्वीकायिक में कषायोपयोग के विकल्प :—

असंखेज्जेसु णं भंते। पुढविक्काइयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि पुढविकाइयावासंसि जहन्नियाए ठिइए (सव्वेसु वि ठाणेसु) वट्टमाणा पुढविकाइया किं कोहोवउत्ता माणोवउत्ता मायोवउत्ता लोभोवउत्ता ? गोयमा। कोहोवउत्ता वि माणोवउत्ता वि मायोवउत्ता वि लोभोवउत्ता वि, एवं पुढविकाइयाणं सव्वेसु वि ठाणेसु अभंगयं, नवरं तेऊलेस्साए असीइ भंगा। एवं आउक्काइया वि, तेऊकाइयवाउकाइयाणं सव्वेसु वि ठाणेसु अभंगयं। वणस्सइकाइया जहा पुढविकाइया।

—भग० श १। उ ५। प्र १९२। पृ० ४०२

पृथ्वीकायिक के असंख्यात लाख आवासों में एक-एक आवास में वर्ते हुए कृष्णलेशी, नीललेशी व कापोतलेशी पृथ्वीकायिक में कषायोपयोग के विकल्प नहीं कहने। तेजोलेशी

लेकिन आगमो में कई स्थलो मे सयत मे कृष्ण नील-कापोत लेश्या होती है —ऐसा कथन पाया जाता है। (देखो— २८ तथा ६६·१)

तेजोलेशी, पद्मलेशी तथा शुक्ललेशी जीव औधिक जीवो की तरह कोई एक आत्मारम्भी, परारम्भी, उभयारम्भी है, अनारम्भी नही है, कोई एक आत्मारम्भी, परारम्भी तथा उभयारम्भी है, अनारभी नही है। इनमे सयत असयत भेद कहने तथा सयत मे प्रमत्त-अप्रमत्त भेद कहने। अप्रमत्तसंयत अनारम्भी होते हैं। प्रमत्तसंयत शुभयोग की अपेक्षा से अनारम्भी होते हैं तथा अशुभयोग की अपेक्षा से आत्मारम्भी, परारम्भी तथा उभयारम्भी हैं, अनारम्भी नही हैं। तथा इन लेश्याओ में जो असयती हैं वे अविरति की अपेक्षा से आत्मारम्भी, परारम्भी तथा उभयारम्भी हैं, अनारम्भी नही हैं।

·७२ सलेशी जीव और कषाय :—

·७२ १ सलेशी नारकी में कषायोपयोग के विकल्प :—

इमीसे ण भंते। रयणप्पभाए जाव (पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि निरयावासंसि नेरइयाण) काऊलेस्साए वट्टमाणा ? (नेरइया कि कोहोवउत्ता माणोवउत्ता मायोवउत्ता लोभोवउत्ता) गोयमा ! सत्तावीसं भंगा। × × × एव सत्तवि पुढवीओ नेयव्वाओ, नाणत्तं लेस्सासु।

गाहा **काऊ य दोसु, तइयाए मीसिया, नीलिया चउत्थीए।**
पंचमीयाए मीसा, कण्हा तत्तो परमकण्हा॥

—भग० श १। उ ५। प्र १८१, १८६। पृ ४०१

रत्नप्रभापृथ्वी के तीस लाख नरकावासों के एक-एक नरकावास में बसे हुए कापोतलेशी नारकी क्रोधोपयोगवाले, मानोपयोगवाले, मायोपयोगवाले तथा लोभोपयोगवाले होते है। उनमें एकवचन तथा बहुवचन की अपेक्षा से क्रोधोपयोग आदि के निम्नलिखित २७ विकल्प होते हैं :—

(१) सर्वक्रोधोपयोगवाले।

(२) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, (३) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, (४) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मायोपयोगवाला, (५) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, (६) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक लोभोपयोगवाला, (७) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु लोभोपयोगवाले।

(८) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, एक मायोपयोगवाला, (९) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, बहु मायोपयोगवाले, (१०) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, एक मायोपयोगवाला, (११) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोग-

वाले, बहु मायोपयोगवाले, (१२) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, एक लोभोपयोगवाला, (१३) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, बहु लोभोपयोगवाले, (१४) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, एक लोभोपयोगवाला, (१५) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, बहु लोभोपयोगवाले, (१६) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मायोपयोगवाला, एक लोभोपयोगवाला, (१७) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मायोपयोगवाला, बहु लोभोपयोगवाले, (१८) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मायोपयोगवाले, एक लोभोपयोगवाला, (१९) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मायोपयोगवाले, बहु लोभोपयोगवाले।

(२०) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, एक मायोपयोगवाला, एक लोभोपयोगवाला, (२१) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, एक मायोपयोगवाला, बहु लोभोपयोगवाले, (२२) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, बहु मायोपयोगवाले, एक लोभोपयोगवाला, (२३) बहु क्रोधोपयोगवाले, एक मानोपयोगवाला, बहु मायोपयोगवाले, बहु लोभोपयोगवाले, (२४) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, एक मायोपयोगवाला, एक लोभोपयोगवाला, (२५) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, एक मायोपयोगवाला, बहु लोभोपयोगवाले, (२६) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, बहु मायोपयोगवाले, एक लोभोपयोगवाला, तथा (२७) बहु क्रोधोपयोगवाले, बहु मानोपयोगवाले, बहु मायोपयोगवाले, बहु लोभोपयोगवाले।

इसी प्रकार सातों नरकपृथ्वी के नरकावासों के एक-एक नरकावास में बसे हुए कापोतलेशी, नीललेशी तथा कृष्णलेशी नारकियों में क्रोधोपयोग आदि के २७ विकल्प कहने, लेकिन जिसमें जो लेश्या होती है वह कहनी तथा नरकावासों की भिन्नता जाननी।

७२ २ सलेशी पृथ्वीकायिक में कषायोपयोग के विकल्प :—

असंखेज्जेसु णं भंते ! पुढविक्काइयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि पुढविक्काइयावासंसि जहन्नियाए ठिइए (सव्वेसु वि ठाणेसु) वट्टमाणा पुढविक्काइया किं कोहोवउत्ता माणोवउत्ता मायोवउत्ता लोभोवउत्ता ? गोयमा ! कोहोवउत्ता वि माणोवउत्ता वि मायोवउत्ता वि लोभोवउत्ता वि, एवं पुढविक्काइयाण सव्वेसु वि ठाणेसु अभंगयं, नवरं तेऊलेस्साए असीइ भंगा। एवं आउक्काइया वि, तेऊक्काइयवाउक्काइयाण सव्वेसु वि ठाणेसु अभंगयं। वणस्सइकाइया जहा पुढविक्काइया।

—भग० स १ । उ ५ । प्र १९२ । पृ० ४०१

पृथ्वीकायिक के असंख्यात लाख आवासों में एक-एक आवास में बसे हुए कृष्णलेशी, नीललेशी व कापोतलेशी पृथ्वीकायिक में कषायोपयोग के विकल्प नहीं कहने। तेजोलेशी

पृथ्वीकायिक में चार कषायोपयोग के एकवचन तथा बहुवचन की अपेक्षा से क्रोधोपयोग आदि के अस्सी विकल्प नीचे लिखे अनुसार होते हैं :—

४ विकल्प एकवचन के, यथा—क्रोधोपयोगवाला,

४ विकल्प बहुवचन के, यथा—क्रोधोपयोगवाले,

२४ विकल्प द्विक संयोग से, यथा—एक क्रोधोपयोगवाला तथा एक मानोपयोगवाला,

३२ विकल्प त्रिक संयोग से, यथा—एक क्रोधोपयोगवाला, एक मानोपयोगवाला तथा एक मायोपयोगवाला,

१६ विकल्प चतुष्क संयोग से, यथा—एक क्रोधोपयोगवाला, एक मानोपयोगवाला, एक मायोपयोगवाला तथा एक लोभोपयोगवाला।

'७२'३ सलेशी अप्कायिक में कषायोपयोग के विकल्प :—

अप्कायिक के असंख्यात लाख आवासो में एक-एक आवास में बसे हुए कृष्णलेशी, नीललेशी व कापोतलेशी अप्कायिक में कषायोपयोग के विकल्प नही कहने। तेजोलेशी अप्कायिक में अस्सी विकल्प कहने (देखो पाठ '७२'२)।

'७२'४ सलेशी अग्निकायिक में कषायोपयोग के विकल्प :—

अग्निकायिक के असंख्यात लाख आवासो में एक एक आवास मे बसे हुए कृष्णलेशी, नीललेशी व कापोतलेशी अग्निकायिक में कषायोपयोग के विकल्प नही कहने (देखो पाठ ७२'२)।

'७२'५ सलेशी वायुकायिक में कषायोपयोग के विकल्प :—

वायुकायिक के असंख्यात लाख आवासो में एक एक आवास मे बसे हुए कृष्णलेशी, नीललेशी व कापोतलेशी वायुकायिक में कषायोपयोग के विकल्प नही कहने (देखो पाठ ७२'२)।

'७२'६ सलेशी वनस्पतिकायिक मे कषायोपयोग के विकल्प :—

वनस्पतिकायिक के असंख्यात लाख आवासो में एक-एक आवास में बसे हुए कृष्णलेशी, नीललेशी व कापोतलेशी वनस्पतिकायिक मे कषायोपयोग के विकल्प नही कहने। तेजोलेशी वनस्पतिकायिक में अस्सी विकल्प कहने (देखो पाठ '७२'२)।

'७२'७ सलेशी द्वीन्द्रिय में कषायोपयोग के विकल्प :—

बेइंदियतेइंदियचउरिंदियाण जेहिं ठाणेहिं नेरइयाणं असीइभंगा तेहिं ठाणेहिं असीइं चेव, नवरं अब्भहिया सम्मत्ते आभिणिवोहियनाणे, सुयनाणे य, एएहिं असीइभंगा, जेहिं ठाणेहिं नेरइयाण सत्तावीसं भंगा तेसु ठाणेसु सव्वेसु अभंगयं।

—भग० श १। उ ५। प्र १६२। पृ० ४०१

द्वीन्द्रिय के असंख्यात लाख आवासों में एक-एक आवास में बसे हुए कृष्णलेशी, नीललेशी व कापोतलेशी द्वीन्द्रिय में कषायोपयोग के विकल्प नहीं कहने।

·७२ ८ सलेशी त्रीन्द्रिय में कषायोपयोग के विकल्प :—

त्रीन्द्रिय के असंख्यात लाख आवासों में एक-एक आवास में बसे हुए कृष्णलेशी, नीललेशी व कापोतलेशी त्रीन्द्रिय में कषायोपयोग के विकल्प नहीं कहने (देखो पाठ ·७२ ७)।

·७२ ९ सलेशी चतुरिन्द्रिय में कषायोपयोग के विकल्प :—

चतुरिन्द्रिय के असंख्यात लाख आवासों में एक-एक आवास में बसे हुए कृष्णलेशी, नीललेशी व कापोतलेशी चतुरिन्द्रिय में कषायोपयोग के विकल्प नहीं कहने (देखो पाठ ·७२ ७)।

·७२ १० सलेशी तिर्यंच पंचेन्द्रिय में कषायोपयोग के विकल्प —

पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा नेरइया तहा भाणियव्वा, नवरं जेहिं सत्तावीसं भंगा तेहिं अभंगयं कायव्वं जत्थ असीइ तत्थ असीइ चेव।

—भग० श १। उ ५। प्र १९४। पृ० ४०१-२

तिर्यंच पंचेन्द्रिय के असंख्यात लाख आवासों में एक-एक आवास में बसे हुए कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी, तेजोलेशी, पद्मलेशी व शुक्ललेशी तिर्यंच पंचेन्द्रिय में कषायोपयोग के विकल्प नहीं कहने।

·७२ ११ सलेशी मनुष्य में कषायोपयोग के विकल्प :—

मणुस्साण वि जेहिं ठाणेहिं नेरइयाण असीइभंगा तेहिं ठाणेहिं मणुस्साण वि असीइभंगा भाणियव्वा, जेसु ठाणेसु सत्तावीसा तेसु अभंगयं, नवरं मणुस्साण अब्भहियं जहन्निया ठिई (ठिइए) आहारए य असीइभंगा।

—भग० श १। उ ५। प्र १९५। पृ० ४०२

मनुष्य के असंख्यात लाख आवासों में एक-एक आवास में बसे हुए कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी, तेजोलेशी, पद्मलेशी व शुक्ललेशी मनुष्य में कषायोपयोग के विकल्प नहीं कहने।

·७२ १२ सलेशी भवनपति देव में कषायोपयोग के विकल्प —

चउसट्ठीए णं भंते! असुरकुमारावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि असुरकुमारावासंसि असुरकुमाराणं केवइया ठिइट्ठाणा पन्नत्ता? गोयमा! असंखेज्जा ठिइट्ठाणा पन्नत्ता, जहण्णिया ठिइ जहा नेरइया तहा, नवरं - पडिलोमा भंगा भाणियव्वा।

सव्वे वि ताव होज्ज लोभोवउत्ता ; अहवा लोभोवउत्ता य, मायोवउत्तो य ; अहवा लोभोवउत्ता य, मायोवउत्ता य। एएणं गमेणं (कमेणं) नेयव्वं जाव थणियकुमाराणं नवरं नाणत्तं जाणियव्वं।

—भग० श १ । उ ५ । प्र १६० । पृ० ४०१

चउसट्ठीए णं भंते ! असुरकुमारावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि असुरकुमारावासंसि असुरकुमाराण × × × एवं लेस्सासु वि। नवरं कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! चत्तारि, तंजहा किण्हा, नीला, काऊ, तेऊलेस्सा। चउसट्ठीए णं जाव कण्हलेस्साए वट्टमाणा किं कोहोवउत्ता ? गोयमा ! सव्वे वि ताव होज्जा लोहोवउत्ता (इत्यादि) एवं नीला, काऊ, तेऊ वि।

—भग० श १ । उ ५ । प्र १६० की टीका

असुरकुमार के चौसठ लाख आवासों में एक-एक असुरकुमारावास में बसे हुए कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी व तेजोलेशी असुरकुमार में लोभोपयोग, मायोपयोग, मानोपयोग व क्रोधोपयोग के सत्ताईस विकल्प कहने। नारकियों में क्रोध को बिना छोड़े विकल्प होते हैं परन्तु देवों में लोभ को बिना छोड़े विकल्प बनते हैं। अतः प्रतिलोम भंग होते हैं, ऐसा कहा गया है। इसी प्रकार नागकुमार से स्तनितकुमार तक कहना परन्तु आवासों की भिन्नता जाननी।

·७२ १३ सलेशी वानव्यन्तर देव में कषायोपयोग के विकल्प :—

वाणमंतरजोइसवेमाणिया जहा भवणवासी, नवरं नाणत्तं जाणियव्वं जं जस्स, जाव अनुत्तरा।

—भग० श १ । उ ५ । प्र १६६ । पृ० ४०२

वानव्यन्तर के असंख्यात लाख आवासों में एक-एक आवास में बसे हुए कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी व तेजोलेशी वानव्यंतर में भवनवासी देवों की तरह लोभोपयोग, मायोपयोग, मानोपयोग व क्रोधोपयोग के सत्ताईस विकल्प कहने।

·७२·१४ सलेशी ज्योतिषी देव में कषायोपयोग के विकल्प :—

ज्योतिषी देव के असंख्यात लाख विमानावासों में एक-एक विमानावास में बसे हुए तेजोलेशी ज्योतिषी देव में भवनवासी देवों की तरह लोभोपयोग, मायोपयोग, मानोपयोग व क्रोधोपयोग के सत्ताईस विकल्प कहने। (देखो पाठ ·७२·१३)

·७२·१५ सलेशी वैमानिक देव में कषायोपयोग के विकल्प :—

वैमानिक देवों के भिन्न-भिन्न भेदों में भिन्न-भिन्न संख्यात विमानावासों के अनुसार एक-एक विमानावास में बसे हुए तेजोलेशी, पद्मलेशी व शुक्ललेशी वैमानिक देवों में भवनवासी देवों की तरह लोभोपयोग, मायोपयोग, मानोपयोग व क्रोधोपयोग के सत्ताईस विकल्प कहने। (देखो पाठ ·७२·१३)

७३ सलेशी जीव और त्रिविध बंध :—

कइविहे ण भते ! बंधे पन्नत्ते ? गोयमा ! तिविहे वंधे पन्नत्ते, तंजहा जीवप्पओगवंधे, अणतरवंधे, परंपरवधे। ××× दंसणमोहणिज्जस्स ण भंते ! कम्मस्स कइविहे बंधे पन्नत्ते ? एवं चेव, निरंतरं जाव वेमाणियाण, ××× एवं एएण कमेण ××× कण्हलेस्साए जाव सुक्कलेस्साए ××× एएसिं सव्वेसिं पयाण तिविहे बंधे पन्नत्ते। सव्वे एए चउव्वीसं दंडगा भाणियव्वा, नवरं जाणियव्वं जस्स जइ अत्थि।

—भग० श २० । उ ७ । प्र १, ८ । पृ० ८०३

कृष्णलेश्या यावत् शुक्ललेश्या का बध तीन प्रकार का होता है जैसे—जीवप्रयोगवध, अनन्तरबंध व परपरवन्ध। नारकी की कापोतलेश्या का बध भी तीन प्रकार का होता है। यथा—जीवप्रयोगवध, व अनतरवध, परपरवध। इसी प्रकार यावत् वैमानिक दडक तक तीन प्रकार का वध कहना तथा जिसके जितनी लेश्या हो उतने पद कहने।

जीवप्रयोगवध :—जीव के प्रयोग से अर्थात् मनप्रभृति के व्यापार से जो बध हो वह जीवप्रयोगवध है। अनतरबध :—जीव तथा पुद्गलों के पारस्परिक बध का जो प्रथम समय है वह अनतरवध है, तथा बध होने के बाद जो दूसरे, तीसरे आदि समय का प्रवर्तन है वह परम्परबध है।

७४ सलेशी जीव और कर्म बंधन :—

७४ १ सलेशी औधिक जीव-दण्डक और कर्म बधन :—

७४ १ १ सलेशी औधिक जीव-दडक और पाप कर्म वधन :—

सलेस्से णं भंते ! जीवे पावं कम्मं किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ (१), बंधी बधइ ण बंधिस्सइ (२), [बंधी ण बंधइ बंधिस्सइ (३), बंधी ण बंधइ ण बंधिस्सइ (४)] पुच्छा? गोयमा ! अत्थेगइए बंधी बंधइ बंधिस्सइ (१), अत्थेगइए० एवं चउभंगो। कण्हलेस्से णं भंते ! जीवे पावं कम्मं किं बंधी० पुच्छा ? गोयमा ! अत्थेगइए बंधी बंधइ बंधिस्सइ, अत्थेगइए बंधी बंधइ ण बंधिस्सइ, एवं जाव-पम्हलेस्से सव्वत्थ पढमबिइयाभंगा। सुक्कलेस्से जहा सलेस्से तहेव चउभंगो। अलेस्से णं भंते ! जीवे पावं कम्मं किं बंधी० पुच्छा ? गोयमा ! बंधी ण बंधइ ण बंधिस्सइ।

—भग० श २६ । उ १ । प्र २ से ४ । पृ० ८९८

जीव के पापकर्म का बधन चार विकल्पों से होता है, यथा—(१) कोई एक जीव बांधा है, बाधता है, बांधेगा, (२) कोई एक बाधा है, बाधता है, न बाधेगा, (३) कोई एक बांधा है, नहीं बाधता है, बाधेगा, (४) कोई एक बांधा है, न बाधता है, न बाधेगा।

कोई एक सलेशी जीव पापकर्म बाधा है, बाधता है, बांधेगा, कोई एक बांधा है, बाधता है, न बाधेगा, कोई एक बाधा है, नही बाधता है, बाधेगा, कोई एक बाधा है, न बाधता है, न बाधेगा।

कोई एक कृष्णलेशी जीव प्रथम भंग से, कोई एक द्वितीय भंग से पाप कर्म का बधन करता है। इसी प्रकार नीललेशी यावत् पद्मलेशी जीव के सम्बन्ध में जानना। कोई एक शुक्ललेशी जीव प्रथम विकल्प से, कोई एक द्वितीय विकल्प से, कोई एक तृतीय विकल्प से, कोई एक चतुर्थ विकल्प से पापकर्म का बंधन करता है। अलेशी जीव चतुर्थ विकल्प से पापकर्म का बधन करता है।

नेरइए णं भंते ! पावं कम्मं किं बंधी बंधइ बधिस्सइ ? गोयमा ! अत्थेगइए बंधी० पढमबिइया। सलेस्से णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं० ? एवं चेव। एवं कण्हलेस्से वि, नीललेस्से वि, काऊलेस्से वि। ××× एवं असुरकुमारस्स वि वत्तव्वया भाणियव्वा, नवरं तेऊलेस्सा। ××× सव्वथ पढमबिइया भंगा, एवं जाव थणिय-कुमारस्स, एवं पुढविकाइयस्स वि, आउकाइयस्स वि, जाव पंचिंदियतिरिक्ख-जोणियस्स वि सव्वत्थ वि पढमबिइया भंगा, नवरं जस्स जा लेस्सा। ××× मणूसस्स जच्चेव जीवपदे वत्तव्वया सच्चेव निरवसेसा भाणियव्वा। वाणमंतरस्स जहा असुरकुमारस्स। जोइसियस्स वेमाणियस्स एवं चेव, नवरं लेस्साओ जाणियव्वाओ।

—भग० श २६। उ १। प्र १४, १५। प्र० ८६६

कोई एक सलेशी नारकी प्रथम भंग से, कोई एक द्वितीय भंग से पाप कर्म का बंधन करता है। इसी प्रकार कृष्णलेशी, नीललेशी व कापोतलेशी नारकी के संबंध में जानना। इसी प्रकार सलेशी, कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी व तेजोलेशी असुरकुमार भी कोई प्रथम, कोई द्वितीय विकल्प से पाप कर्म का बंधन करता है। ऐसा ही यावत् स्तनितकुमार तक कहना। इसीप्रकार सलेशी पृथ्वीकायिक व अप्कायिक यावत् पचेन्द्रिय तिर्यंच योनिक कोई प्रथम, कोई द्वितीय विकल्प से पाप कर्म का बंधन करता है परन्तु जिसके जितनी लेश्या हो उतने पद कहने। मनुष्य में जीव पद की तरह वक्तव्यता कहनी। वान-व्यंतर असुरकुमार की तरह कोई प्रथम, कोई द्वितीय भग से पाप कर्म का बधन करता है। इसी तरह ज्योतिषी तथा वैमानिक देव कोई प्रथम, कोई द्वितीय भंग से पाप कर्म का बंधन करता है परन्तु जिसके जितनी लेश्या हो उतने पद कहने।

'७४'१'२ सलेशी औधिक जीव दंडक और ज्ञानावरणीय कर्म बधन :—

जीवे णं भंते ! नाणावरणिज्जं कम्मं किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ एवं जहेव पाव-कम्मस्स वत्तव्वया तहेव नाणावरणिज्जस्स वि भाणियव्वा, नवरं जीवपदे, मणुस्सपदे

य सकसाई, जाव लोभकसाइंमि य पढमबिइया भंगा अवसेसं तं चेव जाव वेमाणिया।

—भग० श २६ । उ १ । प्र १६ । पृ० ८९९

लेश्या की अपेक्षा ज्ञानावरणीय कर्म के बंधन की वक्तव्यता, पापकर्म-बंधन की वक्तव्यता की तरह औधिक जीव तथा नारकी यावत् वैमानिक देव के सम्बन्ध में कहनी। प्रत्येक में सलेशी पद तथा जिसके जितनी लेश्या हो उतने पद कहने। औधिक जीवपद तथा मनुष्यपद में अलेशी पद भी कहना।

७४ १ ३ सलेशी औधिक जीव-दंडक और दर्शनावरणीय कर्म बंधन :—

एवं दरिसणावरणिज्जेण वि दंडगो भाणियव्वो निरवसेसो।

—भग० श २६ । उ १ । प्र १६ । पृ० ८९९

ज्ञानावरणीय कर्म के बंधन की वक्तव्यता की तरह दर्शनावरणीय कर्म-बंधन की वक्तव्यता भी निरवशेष कहनी।

७४ १ ४ सलेशी औधिक जीव-दंडक और वेदनीय कर्म बंधन :—

जीवे णं भंते! वेयणिज्जं कम्मं किं बंधी० पुच्छा? गोयमा! अत्थेगइए बंधी बंधइ बंधिस्सइ (१), अत्थेगइए बंधी बंधइ न बंधिस्सइ (२), अत्थेगइए बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ (४), सलेस्से वि एवं चेव तइयविहूणा भंगा। कण्हलेस्से जाव पम्हलेस्से पढम-बिइया भंगा, सुक्कलेस्से तइयविहूणा भंगा, अलेस्से चरिमो भंगो।

नेरइए णं भंते! वेयणिज्जं कम्मं किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ०? एवं नेरइया, जाव वेमाणिय त्ति। जस्स जं अत्थि सव्वत्थ वि पढमबिइया, नवरं मणुस्से जहा जीवे।

—भग० श २६ । उ १ । प्र १७-१८ । पृ० ८९९-९००

कोई एक सलेशी जीव प्रथम विकल्प से, कोई एक द्वितीय विकल्प से, कोई एक चतुर्थ विकल्प से वेदनीय कर्म का बंधन करता है। तृतीय विकल्प से कोई भी सलेशी जीव वेदनीय कर्म का बंधन नहीं करता है। कृष्णलेशी यावत् पद्मलेशी जीव कोई प्रथम विकल्प से, कोई द्वितीय विकल्प से वेदनीय कर्म का बंधन करता है। शुक्ललेशी जीव कोई प्रथम विकल्प से, कोई द्वितीय विकल्प से, कोई चतुर्थ विकल्प से वेदनीय कर्म का बंधन करता है। अलेशी जीव चतुर्थ विकल्प से वेदनीय कर्म का बंधन करता है।

सलेशी नारकी यावत् वैमानिक देव तक मनुष्य को छोड़कर कोई प्रथम विकल्प से, कोई द्वितीय विकल्प से वेदनीय कर्म का बंधन करता है। जिसके जितनी लेश्या हो उतने पद कहने। मनुष्य में जीवपद की तरह वक्तव्यता कहनी।

·७४·१५ सलेशी औघिक जीव-दंडक और मोहनीय कर्म बन्धन :—

जीवेण भंते ! मोहणिज्जं कम्मं किं बंधी बंधइ० जहेव पावं कम्मं तहेव मोहणिज्ज वि निरवसेसं जाव वेमाणिए।

—भग० श २६ । उ १ । प्र १९ । पृ० ६००

मोहनीय कर्म के बंधन की वक्तव्यता निरवशेष उसी प्रकार कहनी, जिस प्रकार पाप-कर्म बंधन की वक्तव्यता कही है।

·७४·१·६ सलेशी औघिक जीव-दडक और आयु कर्म बन्धन :—

जीवे णं भंते! आउयं कम्मं किं बंधी बंधइ० पुच्छा ? गोयमा! अत्थेगइए बंधी० चउभंगो, सलेस्से जाव सुक्कलेस्से चत्तारि भंगा, अलेस्से चरिमो भंगो। ××× नेरइए णं भंते ! आउयं कम्मं किं बधी०-पुच्छा ? गोयमा ! अत्थेगइए चत्तारि भंगा, एवं सव्वत्थ वि नेरइयाण चत्तारि भंगा, नवरं कण्हलेस्से कण्हपक्खिए य पढम-ततिया भंगा ×××। असुरकुमारे एवं चेव, नवरं कण्हलेस्से वि चत्तारि भंगा भाणि-यव्वा, सेसं जहा नेरइयाण एवं जाव थणियकुमाराणं। पुढविक्काइयाणं सव्वत्थ वि चत्तारि भंगा, नवरं कण्हपक्खिए पढमतइया भंगा। तेऊलेस्से पुच्छा ? गोयमा! बंधी न बंधइ बंधिस्सइ, सेसेसु सव्वत्थ चत्तारि भंगा। एवं आउक्काइयवणस्सइ-काइयाणं वि निरवसेसं। तेउक्काइयवाउक्काइयाण सव्वत्थ वि पढमतइया भंगा। बेइंदियचउरिंदियाण वि सव्वत्थ वि पढमतइया भंगा। ××× पंचिंदिय-तिरिक्खजोणियाण ××× सेसेसु चत्तारि भंगा। मणुस्साणं जहा जीवाण। ××× सेस त चेव, वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा असुरकुमारा।

—भग० श २६ । उ १ । प्र २०, २४, २५ । पृ० ६००-६०१

सलेशी जीव कृष्णलेशी जीव यावत् शुक्ललेशी जीव कोई प्रथम विकल्प से, कोई द्वितीय विकल्प से, कोई तृतीय विकल्प से, कोई चतुर्थ विकल्प से आयुकर्म का बंधन करता है। अलेशी जीव चतुर्थ विकल्प से आयु कर्म का बन्धन करता है। सलेशी नारकी, नीललेशी नारकी व कापोतलेशी नारकी कोई प्रथम विकल्प से, कोई द्वितीय विकल्प से, कोई तृतीय विकल्प से, कोई चतुर्थ विकल्प से आयुकर्म का बन्धन करता है। लेकिन कृष्णलेशी नारकी कोई प्रथम विकल्प से, कोई तृतीय विकल्प से आयुकर्म का बन्धन करता है। सलेशी, कृष्णलेशी यावत् तेजोलेशी असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार कोई प्रथम विकल्प से, कोई द्वितीय विकल्प से, कोई तृतीय विकल्प से, कोई चतुर्थ विकल्प से आयु कर्म का बन्धन करता है। सलेशी, कृष्णलेशी, नीललेशी व कापोतलेशी पृथ्वीकायिक जीव कोई प्रथम विकल्प से, कोई द्वितीय विकल्प से, कोई तृतीय विकल्प से, कोई चतुर्थ विकल्प से आयु

कर्म का वन्धन करता है। तेजोलेशी पृथ्वीकायिक जीव तृतीय विकल्प से आयुकर्म का वन्धन करता है। सलेशी अप्कायिक यावत् वनस्पतिकाय की वक्तव्यता पृथ्वीकायिक की वक्तव्यता की तरह जाननी। सर्व पदों मे अग्निकायिक तथा वायुकायिक जीव कोई प्रथम व कोई तृतीय विकल्प से आयुकर्म का बधन करता है। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय व चतुरिन्द्रिय जीव सर्व लेश्या-पदो मे इसी प्रकार कोई प्रथम व कोई तृतीय विकल्प से आयुकर्म का वन्धन करता है। पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीव सर्व लेश्यापदों में चार विकल्पो से आयुकर्म का वन्धन करता है। मनुष्य के सम्बन्ध मे लेश्यापदों मे औधिक जीव की तरह वक्तव्यता कहनी। वानव्यतर, ज्योतिषी तथा वैमानिक देव के सम्बन्ध मे भी असुरकुमार की तरह वक्तव्यता कहनी।

७४ १ ७ सलेशी औधिक जीव-दडक और नामकर्म का वन्धन :—

नामं गोयं अंतरायं च एयाणि जहा नाणावरणिज्जं।

—भग० श २६। उ १। प्र २५। पृ० ६०१

ज्ञानावरणीय कर्म के वन्धन की वक्तव्यता की तरह नामकर्म-वन्धन की वक्तव्यता कहनी।

७४·१ ८ सलेशी औधिक जीव-दडक और गोत्रकर्म का वन्धन :—

ज्ञानावरणीय कर्म के वन्धन की वक्तव्यता की तरह गोत्रकर्म-वन्धन की वक्तव्यता कहनी। (देखो पाठ ७४ १ ७)

७४ १ ६ सलेशी औधिक जीव-दंडक और अतरायकर्म का वन्धन :—

ज्ञानावरणीय कर्म के वन्धन की वक्तव्यता की तरह अतरायकर्म-वन्धन की वक्तव्यता कहनी (देखो पाठ ७४ १ ७)।

'७४ २ सलेशी अनतरोपपन्न जीव और कर्मवन्धन :—

सलेस्से ण भंते! अणतरोववन्नए नेरइए पावं कम्मं किं बंधी० पुच्छा? गोयमा! पढम-बिइया भंगा। एवं खलु सव्वत्थ पढम-बिइया भंगा, नवरं सम्मामिच्छत्तं मणजोगो वइजोगो य न पुच्छिज्जइ। एवं जाव—थणियकुमाराण। बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदियाण वइजोगो न भन्नइ। पंचिंदियतिरिक्खजोणियाण वि सम्मामिच्छत्तं, ओहिनाण, विभंगनाण, मणजोगो, वइजोगो—एयाणि पंच पयाणि णं भन्नंति। मणुस्साण अलेस्स-सम्मामिच्छत्त-मणपज्जवनाण-केवलनाण-विभंगनाण-नोसन्नोवउत्त-अवेयग-अकसायी-मणजोग-वयजोग-अजोगी—एयाणि एक्कारस पदाणि ण भन्नंति। वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणियाण जहा नेरइयाण तहेव ते तिन्नि न भन्नंति। सव्वेसिं जाणि सेसाणि ठाणाणि सव्वत्थ पढम-बिइया भंगा। एगिंदियाण सव्वत्थ पढम-बिइया भंगा।

जहा पावे एवं नाणावरणिज्जेण वि दंडओ, एवं आउयवज्जेसु जाव अंतराइए दंडओ। अणतरोववन्नए ण भंते! नेरइए आउयं कम्मं किं बंधी० पुच्छा? गोयमा! बंधी न बंधइ बंधिस्सइ। सलेस्से णं भंते! अणंतरोववन्नए नेरइए आउयं कम्मं किं बंधी०? एवं चेव तइओ भंगो, एवं जाव अणागारोवउत्ते। सव्वत्थ वि तइओ भंगो। एवं मणुस्सवज्जं जाव वेमाणियाणं। मणुस्साण सव्वत्थ तइय-चउत्था भंगा, नवरं कण्हपक्खिएसु तइओ भंगो, सव्वेसिं नाणत्ताइं ताइं चेव।

—भग० श २६। उ २। प्र २-४। पृ० ६०१

सलेशी अनन्तरोपपन्न नारकी यावत् सलेशी अनतरोपपन्न वैमानिक देव पापकर्म का बधन कोई प्रथम भंग से तथा कोई द्वितीय भंग से करता है। जिसके जितनी लेश्या हो उतने पद कहने। अनतरोपपन्न अलेशी पृच्छा नही करनी, क्योंकि अनंतरोपपन्न अलेशी नही होता है।

आयु को छोडकर बाकी सातो कर्मों के सम्बन्ध में पापकर्म-बधन की तरह ही सब अनतरोपपन्न सलेशी दडकों का विवेचन करना।

अनंतरोपपन्न सलेशी नारकी तीसरे भंग से आयुकर्म का बंधन करता है। मनुष्य को छोड़कर दंडक मे वैमानिक देव तक ऐसा ही कहना। मनुष्य कोई तीसरे तथा कोई चौथे भग से आयुकर्म का बंधन करता है।

जिसमे जितनी लेश्या हो उतने पद कहने।

'७४ ३ सलेशी परपरोपपन्न जीव और कर्मबधन :—

परंपरोववन्नए ण भंते! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी० पुच्छा? गोयमा! अत्थेगइए पढम-बिइया। एवं जहेव पढमो उद्देसओ तहेव परंपरोववन्नएहि वि उद्देसओ भाणियव्वो, नेरइयाइओ तहेव नवदंडगसंगहिओ। अट्ठण्ह वि कम्मप्पगडीणं जा जस्स कम्मस्स वत्तव्वया सा तस्स अहीणमइरित्ता नेयव्वा जाव वेमाणिया अणागारोवउत्ता।

—भग० श २६। उ ३। प्र १। पृ० ६०१

परपरोपपन्न सलेशी जीव-दडक के सम्बन्ध मे वैसे ही कहना, जैसा बिना परपरोपपन्न विशेषण वाले सलेशी जीव दडक के सम्बन्ध मे पापकर्म तथा अष्टकर्म के बधन के विषय मे कहा है।

'७४ ४ सलेशी अनंतरावगाढ जीव और कर्मबधन —

अणंतरोगाढए णं भंते! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी० पुच्छा? गोयमा! अत्थेगइए० एवं जहेव अणंतरोववन्नएहिं नवदंडगसंगहिओ उद्देसो भणिओ तहेव अणं-

तरोगाढएहि वि अहीणमइरित्तो भाणियव्वो नेरइयादीए जाव वेमाणिए।

—भग० श २६। उ ४। प्र १। पृ० ९०१

सलेशी अनंतरावगाढ जीव-दंडक के सम्बन्ध में वैसे ही कहना, जैसा अनंतरोपपन्न विशेषण वाले सलेशी जीव दण्डक के सम्बन्ध में पापकर्म तथा अष्टकर्म के बंधन के विषय में कहा है। टीकाकार के अनुसार अनंतरोपपन्न तथा अनंतरावगाढ में एक समय का अन्तर होता है।

·७४ ५ सलेशी परंपरावगाढ जीव और कर्मबंधन :—

परंपरोगाढए णं भंते! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी० ? जहेव परंपरोववन्नएहिं उद्देसो सो चेव निरवसेसो भाणियव्वो।

— भग० श २६। उ ५। प्र १। पृ० ९०१-९०२

सलेशी परंपरावगाढ जीव-दंडक के सम्बन्ध में वैसे ही कहना, जैसा परंपरोपपन्न विशेषण वाले सलेशी जीव-दंडक के सम्बन्ध में पापकर्म तथा अष्टकर्म बंधन के विषय में कहा है।

·७४ ६ सलेशी अनंतराहारक जीव और कर्मबंधन :—

अणंतराहारए णं भंते! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी० पुच्छा ? गोयमा! एवं जहेव अणंतरोववन्नएहिं उद्देसो तहेव निरवसेसं।

—भग० श २६। उ ६। प्र १। पृ० ९०२

सलेशी अनंतराहारक जीव-दंडक के सम्बन्ध में वैसे ही कहना, जैसा अनंतरोपपन्न विशेषण वाले सलेशी जीव-दंडक के सम्बन्ध में पापकर्म तथा अष्टकर्म बंधन के विषय में कहा है।

·७४ ७ सलेशी परंपराहारक जीव और कर्मबंधन :—

परंपराहारए णं भंते! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी० पुच्छा ? गोयमा! एवं जहेव परंपरोववन्नएहिं उद्देसो तहेव निरवसेसो भाणियव्वो।

—भग० श २६। उ ७। प्र १। पृ० ९०२

सलेशी परंपराहारक जीव-दंडक के सम्बन्ध में वैसे ही कहना, जैसा परंपरोपपन्न विशेषण वाले सलेशी जीव-दंडक के सम्बन्ध में पापकर्म तथा अष्टकर्म बंधन के विषय में कहा है।

·७४ ८ सलेशी अनंतरपर्याप्त जीव और कर्मबंधन :—

अणंतरपज्जत्तए णं भंते! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी० पुच्छा ? गोयमा! जहेव अणंतरोववन्नएहिं उद्देसो तहेव निरवसेसं।

—भग० श २६। उ ८। प्र १। पृ० ९०२

सलेशी अनतरपर्याप्त जीव-दंडक के सम्बन्ध में वैसे ही कहना, जैसा अनंतरोपपन्न विशेषण वाले सलेशी जीव-दडक के सम्बंध मे पापकर्म तथा अष्टकर्म बंधन के विषय में कहा है।

'७४'६ सलेशी परंपरपर्याप्त जीव और कर्मबंधन :—

परंपरपज्जत्तए णं भंते। नेरइए पावं कम्मं किं बंधी० पुच्छा ? गोयमा ! एवं जहेव परंपरोववन्नएहिं उद्देसो तहेव निरवसेसो भाणियव्वो।

—भग० श २६ । उ ६ । प्र १ । पृ० ६०२

सलेशी परंपरपर्याप्त जीव-दंडक के सम्बन्ध में वैसे ही कहना, जैसा परंपरोपपन्न विशेषण वाले सलेशी जीव-दंडक के सम्बन्ध मे पापकर्म तथा अष्टकर्म बंधन के विषय मे कहा है।

'७४'१० सलेशी चरम जीव और कर्मबंधन :—

चरिमे णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी० पुच्छा ? गोयमा ! एवं जहेव परंपरोववन्नएहिं उद्देसो तहेव चरिमेहिं निरवसेसो।

—भग० श २६ । उ १० । प्र १ । पृ० ६०२

सलेश । जीव-दंडक के सम्बन्ध में वैसे ही कहना, जैसा परंपरोपपन्न विशेषण वाले सलेश' .-दंडक के सम्बन्ध मे पापकर्म तथा अष्टकर्म बधन के विषय में कहा है।

टीक। . . १ के अनुसार चरम मनुष्य के आयुकर्म के बधन की अपेक्षा से केवल चतुर्थ भंग ही घट सकता है ; क्योंकि जो चरम मनुष्य है उसने पूर्व में आयु बांधा है, लेकिन वर्तमान में बांधता नही है तथा भविष्यत् काल मे भी नही बांधेगा।

'७४'११ सलेशी अचरम जीव और कर्मबधन :—

अचरिमे णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी० पुच्छा ? गोयमा ! अत्थेगइए० एवं जहेव पढमोद्देसए, तहेव पढम-बिइया भंगा भाणियव्वा सव्वत्थ जाव पंचिंदिय-तिरिक्खजोणियाण।

सलेस्से णं भंते ! अचरिमे मणुस्से पावं कम्मं किं बंधी० ? एवं चेव तिन्नि भंगा चरिमविहूणा भाणियव्वा एवं जहेव पढमुद्देसे। नवरं जेसु तत्थ वीससु चत्तारि भंगा तेसु इह आदिल्ला तिन्नि भंगा भाणियव्वा चरिमभंगवज्जा। अलेस्से केवल-नाणी य अजोगी य ए ए तिन्नि वि न पुच्छिज्जंति, सेसं तहेव। वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिए जहा नेरइए। अचरिमे णं भंते ! नेरइए नाणावरणिज्जं कम्मं किं बंधी० पुच्छा ? गोयमा ! एवं जहेव पावं०। नवरं मणुस्सेसु सकसाईसु लोभकसाईसु य

पढम-बिइया भंगा, सेसा अट्ठारस चरिमविहूणा, सेसं तहेव जाव वेमाणियाण। दरिसणावरणिज्जं वि एवं चेव निरवसेसं। वेयणिज्जे सव्वत्थ वि पढम-बिइया भंगा जाव वेमाणियाण, नवरं मणुस्सेसु अलेस्से, केवली अजोगी य नत्थि। अचरिमे णं भन्ते। नेरइए मोहणिज्जं कम्मं किं बंधी० पुच्छा? गोयमा! जहेव पावं तहेव निरवसेसं जाव वेमाणिए।

अचरिमे ण भंते। नेरइए आउयं कम्मं किं बंधी० पुच्छा? गोयमा! पढम-बिइया (तइया) भंगा। एवं सव्वपदेसु वि। नेरइया वि पढम-तइया भंगा, नवर सम्मामिच्छत्ते तइओ भंगो, एवं जाव थणियकुमाराणं। पुढविकाइय-आउकाइय-वणस्सइकाइयाणं तेउलेस्साए तइओ भंगो, सेसेसु पदेसु सव्वत्थ पढम तइया भंगा, तेऊकाइय-वाउकाइयाण सव्वत्थ पढम-तइया भंगा? बेइंदिय तेइंदिय-चउरिंदियाण एवं चेव, नवरं सम्मत्ते ओहिनाणे आभिणिवोहियनाणे सुयनाणे एएसु चउसु वि ठाणेसु तइओ भंगो। पचिंदियतिरिक्खजोणियाण सम्मामिच्छत्ते तइओ भंगो, सेसेसु पदेसु सव्वत्थ पढम-तइया भंगा। मणुस्साण सम्मामिच्छत्ते अवेदए अकसाइम्मि य तइओ भगो। अलेस्स-केवलनाण-अजोगी य न पुच्छिज्जति। सेसपदेसु सव्वत्थ पढम-तइया भंगा, वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिया जहा नेरइया। नामं गोयं अंतराइयं च जहेव नाणावरणिज्ज तहेव निरवसेसं।

—भग० श २६। उ ११। प्र १-६। पृ० ६०२-६०३

सलेशी अचरम नारकी से दण्डक में सलेशी अचरम तिर्यंच पचेन्द्रिय जीवों तक के जीव पापकर्म का बंधन प्रथम और द्वितीय भग से करते हैं।

सलेशी अचरम मनुष्य प्रथम तीन भगों से पापकर्म का वन्धन करता है। अलेशी मनुष्य के सम्बन्ध में अचरमता का प्रश्न नही करना। क्योंकि अचरम अलेशी नहीं होता है। सलेशी अचरम वानव्यतर, ज्योतिपी तथा वैमानिक देव सलेशी अचरम नारकी की तरह प्रथम और दूसरे भग से पापकर्म का बन्धन करते हे।

सलेशी अचरम नारकी ज्ञानावरणीय कर्म का बन्धन प्रथम और द्वितीय भग से करता है, मनुष्य को छोडकर यावत् वैमानिक देवो तक इसी प्रकार जानना। सलेशी अचरम मनुष्य ज्ञानावरणीय कर्म का बन्धन प्रथम तीन भग से करता है। ज्ञानावरणीय कर्म की तरह दर्शनावरणीय कर्म का वर्णन करना। वेदनीय कर्म के बन्धन में सब दण्डकों में प्रथम और द्वितीय भग से बन्धन होता है लेकिन मनुष्य मे अलेशी का प्रश्न नहीं करना।

सलेशी अचरम नारकी मोहनीय कर्म का बन्धन प्रथम और द्वितीय भग से करता है बाकी सलेशी अचरम दण्डक मे जैसा पापकर्म के बन्धन के सम्बन्ध में कहा, वैसा ही निरवशेष कहना।

सलेशी अनंतरपर्याप्त जीव-दंडक के सम्बन्ध में वैसे ही कहना, जैसा अनंतरोपपन्न विशेषण वाले सलेशी जीव-दंडक के सम्बंध मे पापकर्म तथा अष्टकर्म बंधन के विषय में कहा है।

'७४'९ सलेशी परंपरपर्याप्त जीव और कर्मबंधन :—

परंपरपज्जत्तए णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं कि बंधी० पुच्छा ? गोयमा ! एवं जहेव परंपरोववन्नएहिं उद्देसो तहेव निरवसेसो भाणियव्वो।

—भग० श २६। उ ९। प्र १। पृ० ९०२

सलेशी परपरपर्याप्त जीव-दंडक के सम्बन्ध में वैसे ही कहना, जैसा परंपरोपपन्न विशेषण वाले सलेशी जीव-दंडक के सम्बन्ध मे पापकर्म तथा अष्टकर्म बंधन के विषय में कहा है।

'७४'१० सलेशी चरम जीव और कर्मबंधन :—

चरिमे णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी० पुच्छा ? गोयमा ! एवं जहेव परंपरोववन्नएहिं उद्देसो तहेव चरिमेहिं निरवसेसो।

—भग० श २६। उ १०। प्र १। पृ० ९०२

सलेश ।, जीव-दंडक के सम्बन्ध में वैसे ही कहना, जैसा परंपरोपपन्न विशेषण वाले सलेशी .-दंडक के सम्बन्ध में पापकर्म तथा अष्टकर्म बंधन के विषय में कहा है।

टीक। . .८ के अनुसार चरम मनुष्य के आयुकर्म के बधन की अपेक्षा से केवल चतुर्थ भंग ही घट सकता है ; क्योंकि जो चरम मनुष्य है उसने पूर्व में आयु बांधा है, लेकिन वर्तमान में बांधता नही है तथा भविष्यत् काल मे भी नही बांधेगा।

'७४'११ सलेशी अचरम जीव और कर्मबधन :—

अचरिमे णं भंते ! नेरइए पावं कम्मं किं बंधी० पुच्छा ? गोयमा ! अत्थेगइए० एवं जहेव पढमोद्देसए, तहेव पढम-बिइया भंगा भाणियव्वा सव्वत्थ जाव पंचिंदिय-तिरिक्खजोणियाण।

सलेस्से णं भंते ! अचरिमे मणुस्से पावं कम्मं किं बंधी० ? एवं चेव तिन्नि भंगा चरिमविहूणा भाणियव्वा एवं जहेव पढमुद्देसे। नवरं जेसु तत्थ वीससु चत्तारि भंगा तेसु इह आदिल्ला तिन्नि भंगा भाणियव्वा चरिमभंगवज्जा। अलेस्से केवलनाणी य अजोगी य ए ए तिन्नि वि न पुच्छिज्जंति, सेसं तहेव। वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिए जहा नेरइए। अचरिमे णं भंते ! नेरइए नाणावरणिज्जं कम्मं किं बंधी० पुच्छा ? गोयमा ! एवं जहेव पावं०। नवरं मणुस्सेसु सकसाईसु लोभकसाईसु य

सलेशी अचरम नारकी आयुकर्म का बन्धन प्रथम और तृतीय भंग से करता है। इसी प्रकार यावत् सलेशी अचरम स्तनितकुमार तक दण्डक के जीव प्रथम और तृतीय भंग से आयुकर्म का बन्धन करते हैं। अचरम तेजोलेशी पृथ्वीकायिक, अप्कायिक व वनस्पतिकायिक जीव केवल तृतीय भंग से आयुकर्म का बन्धन करता है। कृष्णलेशी, नीललेशी व कापोतलेशी अचरम पृथ्वीकायिक, अप्कायिक व वनस्पतिकायिक जीव प्रथम और तृतीय भंग से आयुकर्म का बन्धन करता है। सलेशी अचरम अग्निकायिक व वायुकायिक जीव प्रथम और तृतीय भंग से आयुकर्म का बन्धन करता है। इसी प्रकार सलेशी अचरम द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय व चतुरिन्द्रिय प्रथम और तृतीय भंग से आयुकर्म का बन्धन करता है। सलेशी अचरम तिर्यंच पंचेन्द्रिय प्रथम और तृतीय भंग से, सलेशी अचरम मनुष्य भी प्रथम और तृतीय भंग से, सलेशी अचरम वानव्यंतर, ज्योतिषी तथा वैमानिक देव नारकी की तरह प्रथम और तृतीय भंग से आयुकर्म का बन्धन करता है।

नाम, गोत्र, अन्तराय सम्बन्धी पद ज्ञानावरणीय कर्म की वक्तव्यता की तरह जानना।

अचरम विशेषण से अलेशी की पृच्छा नहीं करनी।

·७५ सलेशी जीव और कर्म का करना।

जीवे (जीवा) णं भंते ! पाव कम्मं किं करिंसु करेन्ति करिस्संति (१), करिंसु करेंति न करिस्संति (२), करिंसु न करेंति करिस्संति (३), करिंसु न करेंति न करिस्संति (४)? गोयमा! अत्थेगइए करिंसु करेंति करिस्संति (१), अत्थेगइए करिंसु करेंति न करिस्संति (२), अत्थेगइए करिंसु न करेंति करिस्संति (३), अत्थेगइए करिंसु न करेंति न करिस्संति (४)। सलेस्से णं भंते! जीवे पावं कम्मं-एवं एएणं अभिलावेणं बंधिसए वत्तव्वया सच्चेव निरवसेसा भाणियव्वा, तहेव नवदंडगसंगहिया एक्कारस उद्देसगा भाणियव्वा।

—भग० श २७। उ १। प्र १-२। पृ० ६०३

पापकर्म का करना चार विकल्प से होता है—(१) किया है, करता है, करेगा, (२) किया है, करता है, न करेगा, (३) किया है, नहीं करता है, करेगा, (४) किया है, नहीं करता है और न करेगा।

सलेशी जीव ने पापकर्म तथा अष्टकर्म किया है इत्यादि उसी प्रकार कहने जैसे बंधन शतक में (देखो ·७४) नवदंडक सहित एकादश उद्देशक कहे गए हैं।

७६ सलेशी जीव और कर्म का समर्जन-समाचरण:—

जीवा णं भंते। पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु, कहिं समायरिंसु ? गोयमा। सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा (१), अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य होज्जा (२), अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य होज्जा (३), अहवा तिरिक्खजोणिएसु य देवेसु य होज्जा (४), अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य मणुस्सेसु य होज्जा (५), अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइएसु य देवेसु होज्जा (६), अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य देवेसु य होज्जा (७) अहवा तिरिक्खजोणिएसु य नेरइसु य मणुस्सेसु य देवेसु य होज्जा (८)।

सलेस्सा ण भंते। जीवा पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु, कहिं समायरिंसु ? एवं चेव। एवं कण्हलेस्सा जाव अलेस्सा। × × × नेरइयाण भंते। पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु, कहिं समायरिंसु ? गोयमा। सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्ज त्ति—एवं चेव अट्ठ भंगा भाणियव्वा। एवं सव्वत्थ अट्ठ भंगा, एवं जाव अणागारोवउत्ता वि। एवं जाव वेमाणियाणं। एवं नाणावरणिज्जेण वि दंडओ, एवं जाव अंतराइएण। एवं एए जीवादीया वेमाणियपज्जवसाणा नव दंडगा भवंति।

—भग० श २८। उ १। पृ० ६०३

जीवों ने किस गति में पापकर्म का समर्जन किया—उपार्जन किया तथा किस गति में पापकर्म का समाचरण किया—पापकर्म की हेतुभूत पापक्रिया का आचरण किया। (१) व सर्व जीव तिर्यंचयोनि में थे, (२) अथवा तिर्यंचयोनि में तथा नारकियों में थे, (३) अथवा तिर्यंच योनि में तथा मनुष्यों में थे (४) अथवा तिर्यंच योनि में तथा देवों में थे, (५) अथवा तिर्यंच योनि में, नारकियों तथा मनुष्यों में थे, (६) अथवा तिर्यंच योनि में, नारकियों तथा देवों में थे, (७) अथवा तिर्यंच योनि में, मनुष्यों तथा देवों में थे, (८) अथवा तिर्यंच योनि में, नारकियों, मनुष्यों तथा देवों में थे। इन आठ अवस्थाओं में जीवों ने पापकर्म का समर्जन तथा समाचरण किया था।

सलेशी जीवों ने पापकर्म का समर्जन तथा समाचरण उपर्युक्त आठ विकल्पों में किया था। इसी प्रकार कृष्णलेशी यावत्, अलेशी शुक्ललेशी जीवों ने पापकर्म का समर्जन तथा समाचरण आठ विकल्पों में किया था। सलेशी नारकी जीवों ने भी पापकर्म का समर्जन तथा समाचरण आठ विकल्पों में किया था। इसी प्रकार यावत् वैमानिक देवों तक जानना। सलेशी यावत् अलेशी जीवों ने ज्ञानावरणीय यावत् अंतराय—अष्ट कर्मों का समर्जन तथा समाचरण आठ विकल्पों में किया था। इसी प्रकार नारकी यावत् वैमानिक जीवों ने

पापकर्म तथा अष्टकर्मों का समर्जन तथा समाचरण आठ विकल्पों में किया था। पापकर्म तथा अष्टकर्म के अलग-अलग नौ दंडक कहने।

अनंतरोववन्नगा णं भंते ! नेरइया पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु, कहिं समायरिंसु ? गोयमा ! सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा, एवं एत्थ वि अट्ठ भंगा। एवं अनंतरोववन्नगाणं नेरइया(ई)ण जस्स जं अत्थि लेस्सादीयं अणागारोवओगपज्जवसाणं तं सव्वं एयाए भयणाए भाणियव्वं जाव वेमाणियाणं। नवरं अनंतरेसु जे परिहरियव्वा ते जहा बंधिसए तहा इहं वि। एवं नाणावरणिज्जेण वि दंडओ, एवं जाव अंतराइएणं निरवसेसं। एसो वि नवदंडगसंगहिओ उद्देसओ भाणियव्वो।

एवं एएणं कमेण जहेव बंधिसए उद्देसगाण परिवाडी तहेव इहं वि अट्ठसु भंगेसु नेयव्वा। नवरं जाणियव्वं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं जाव अचरिमुद्देसो। सव्वे वि एए एक्कारस उद्देसगा।

—भग० श २८। उ २ से ११। पृ० ६०३-६०४

सलेशी अनंतरोपपन्न नारकी जीवों ने पापकर्म का समर्जन तथा समाचरण आठ विकल्पों में किया था। यावत् सलेशी अनंतरोपपन्न वैमानिक देवों ने पापकर्म का समर्जन तथा समाचरण आठ विकल्पों मे किया था। जिसमे जितनी लेश्या होती है उतने ही पद कहने। पापकर्म, ज्ञानावरणीय यावत् अंतराय कर्म के नौ दंडक निरवशेष कहने। इस प्रकार नव दंडक सहित उद्देशक कहने।

इस प्रकार क्रम से सलेशी परंपरोपपन्न यावत् सलेशी अचरम जीवों के नव उद्देशक (मोट ११ उद्देशक) कहने। जिस जीव मे जितनी लेश्या हो, उतने पद कहने।

·७७ सलेशी जीव और कर्म का प्रारंभ व अंत :--

जीवा णं भंते ! पावं कम्मं किं समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु (१), समायं पट्ठविंसु विसमायं निट्ठविंसु (२), विसमायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु (३), विसमायं पट्ठविंसु विसमायं निट्ठविंसु (४) ? गोयमा ! अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु, जाव अत्थेगइया विसमायं पट्ठविंसु विसमायं निट्ठविंसु। से केणट्ठे णं भंते ! एवं वुच्चइ—अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु० तं चेव ? गोयमा ! जीवा चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा—अत्थेगइया समाउया समोववन्नगा (१), अत्थेगइया समाउया विसमोववन्नगा (२), अत्थेगइया विसमाउया समोववन्नगा (३), अत्थेगइया विसमाउया विसमोववन्नगा (४) तत्थ णं जे ते समाउया समोववन्नगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु। तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववन्नगा ते ण

पावं कम्मं समायं पट्ठविंसु विसमायं निट्ठविंसु। तत्थ णं जे ते विसमाउया समोववन्नगा ते णं पावं कम्मं विसमायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु। तत्थ ण जे ते विसमाउया विसमोववन्नगा ते णं पावं कम्म विसमायं पट्ठविंसु विसमायं निट्ठविंसु। से तेणट्ठेण गोयमा। तं चेव।

सलेस्सा ण भंते। जीवा पावं कम्मं०? एवं चेव, एवं सव्वट्ठाणेसु वि जाव अणागारोवउत्ता। एए सव्वे वि पया एयाए वत्तव्वयाए भाणियव्वा।

नेरइया ण भंते। पावं कम्मं किं समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु० पुच्छा? गोयमा। अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु० एवं जहेव जीवाण तहेव भाणियव्वं जाव अणागारोवउत्ता। एवं जाव वेमाणियाणं जस्स जं अत्थि तं एएण चेव कमेणं भाणियव्वं। जहा पावेण (कम्मेण) दण्डओ, एएण कमेणं अट्ठसु वि कम्मप्पगडीसु अट्ठ दण्डगा भाणियव्वा जीवादीया वेमाणियपज्जवसाणा। एसो नवदण्डगसंगहिओ पढमो उद्देसो भाणियव्वो।

—भग० श २६। उ १। प्र १ से ४। पृ० ६०४

जीव पापकर्म के भोगने का प्रारम्भ तथा अंत एक काल या भिन्न काल में करते हैं। इस अपेक्षा से चार विकल्प बनते हैं :—(१) भोगने का प्रारम्भ समकाल में करते हैं तथा भोगने का अंत भी समकाल में करते हैं, (२) भोगने का प्रारम्भ समकाल में करते हैं तथा भोगने का अंत विषमकाल में करते हैं, (३) भोगने का प्रारम्भ विषमकाल में तथा भोगने का अंत समकाल में करते हैं, (४) भोगने का प्रारम्भ विषमकाल में तथा अंत भी विषमकाल में करते हैं।

क्योंकि जीव चार प्रकार के होते हैं। यथा—(१) कितने ही जीव सम आयु वाले तथा समोपपन्नक, (२) कितने ही जीव सम आयु वाले तथा विषमोपपन्नक, (३) कितने ही जीव विषम आयु वाले तथा समोपपन्नक तथा (४) कितने ही जीव विषम आयु वाले तथा विषमोपपन्नक होते हैं।

(१) जो जीव सम आयु वाले तथा समोपपन्नक हैं वे पापकर्म का वेदन समकाल में प्रारम्भ करते हैं तथा समकाल में अंत करते हैं, (२) जो जीव सम आयु वाले तथा विषमोपपन्नक हैं वे पापकर्म का वेदन समकाल में प्रारम्भ करते हैं तथा विषमकाल में अंत करते हैं, (३) जो जीव विषम आयु वाले तथा समोपपन्नक हैं वे पापकर्म के वेदन का प्रारम्भ विषमकाल में करते हैं तथा समकाल में पापकर्म का अंत करते हैं, तथा (४) जो जीव विषम आयु वाले हैं तथा विषमोपपन्नक हैं वे पापकर्म के वेदन का प्रारम्भ विषमकाल में करते हैं तथा विषमकाल में ही पापकर्म का अंत करते हैं।

सलेशी जीव सम्बन्धी वक्तव्य सर्व औधिक जीवो की तरह कहना। इसी प्रकार सलेशी नारकी यावत् वैमानिक देवों तक कहना। अलग-अलग लेश्या से, जिसके जितनी लेश्या हो, उतने पद कहने। पापकर्म के दंडक की तरह आठ कर्मप्रकृतियों के आठ दंडक औधिक जीव यावत् वैमानिक देव तक कहने।

अनंतरोववन्नगा णं भंते ! नेरइया पावं कम्मं किं समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु० पुच्छा ? गोयमा ! अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु, अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु विसमायं निट्ठविंसु। से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चइ— अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु० तं चेव ? गोयमा ! अनंतरोववन्नगा नेरइया दुविहा पन्नत्ता, तंजहा अत्थेगइया समाउया समोववन्नगा, अत्थेगइया समाउया विसमोववन्नगा, तत्थ णं जे ते समाउया समोववन्नगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्ठविंसु समायं निट्ठविंसु। तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववन्नगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्ठविंसु विसमायं निट्ठविंसु। से तेणट्ठेणं तं चेव। सलेस्सा णं भंते ! अनंतरोववन्नगा नेरइया पावं० ? एवं चेव, एवं जाव अनागारोवउत्ता। एवं असुरकुमाराणं। एवं जाव वेमाणिया(ण), नवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं। एवं नाणावरणिज्जेण वि दण्डओ, एवं निरवसेसं जाव अंतराइएण।

एवं एएणं गमएण जच्चेव बन्धिसए उद्देसगपरिवाडी सच्चेव इह वि भाणियव्वा जाव अचरिमो त्ति। अनंतरउद्देसगाण चउण्ह वि एक्का वत्तव्वया, सेसाणं सत्तण्हं एक्का।

—भग० श २६ । उ २ से ३ । पृ० ६०४-५

सलेशी अनंतरोपपन्नक नारकी दो प्रकार के होते हैं, यथा कितने ही समायु समोपपन्नक तथा कितने ही समायु विषमोपपन्नक होते हैं। उनमे जो समायु समोपपन्नक हैं वे पापकर्म का प्रारम्भ समकाल में करते हैं तथा अंत भी समकाल में करते हैं। तथा उनमें जो समायु-विषमोपपन्नक हैं वे पापकर्म का प्रारम्भ समकाल मे करते हैं तथा अन्त विषमकाल में करते हैं। इसी प्रकार असुरकुमार यावत् वैमानिक देवों तक कहना, जिसके जितनी लेश्या हो उतने पद कहने। इसी प्रकार आठ कर्मप्रकृति के आठ दण्डक कहने।

इस प्रकार के पाठों द्वारा जैसी बंधन शतक में उद्देशकों की परिपाटी कही, वैसी ही उद्देशकों की परिपाटी यहाँ भी यावत् अचरम उद्देशक तक कहनी। अनंतर सम्बन्धी चार उद्देशकों की एक जैसी वक्तव्यता कहनी। बाकी के सात उद्देशकों की एक जैसी वक्तव्यता कहनी।

७८ सलेशी जीव और कर्मप्रकृति का सत्ता—बन्धन—वेदन :—

७८ १ सलेशी एकेन्द्रिय और कर्मप्रकृति का सत्ता-बंधन-वेदन :—

कइविहा ण भंते ! कण्हलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता ? गोयमा ! पंचविहा कण्हलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता, तंजहा—पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया।

कण्हलेस्सा ण भंते ! पुढविकाइया कइविहा पन्नत्ता, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—सुहुमपुढविकाइया य बायरपुढविकाइया य।

कण्हलेस्सा ण भंते ! सुहुमपुढविकाइया कइ विहा पन्नत्ता ? गोयमा ! एवं एएण अभिलावेण चउक्कभेदो जहेव ओहिउद्देसए, जाव वणस्सइकाइय त्ति।

कण्हलेस्सअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइया ण भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पन्नत्ताओ ? एवं चेव एएण अभिलावेण जहेव ओहिउद्देसए तहेव पन्नत्ताओ तहेव बन्धन्ति, तहेव वेदेन्ति।

कइविहा ण भंते ! अणतरोववन्नगा कण्हलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता ? गोयमा ! पंचविहा अणतरोववन्नगा कण्हलेस्सा एगिंदिया, एवं एएण अभिलावेण तहेव दुयओ भेदो जाव वणस्सइकाइय त्ति।

अणतरोववन्नगा कण्हलेस्ससुहुमपुढविकाइयाण भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पन्नत्ताओ ? एवं एएण अभिलावेण जहा ओहिओ अणतरोववन्नगाण उद्देसओ तहेव जाव वेदेति।

कइविहा ण भंते ! परंपरोववन्नगा कण्हलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता ? गोयमा ! पंचविहा परंपरोववन्नगा कण्हलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता, तंजहा—पुढविकाइया, एवं एएण अभिलावेणं तहेव चउक्कओ भेदो जाव वणस्सइकाइया त्ति।

परंपरोववन्नगकण्हलेस्सअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाण भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पन्नत्ताओ ? एवं एएण अभिलावेण जहेव ओहिओ परंपरोववन्नगउद्देसओ तहेव जाव वेदेंति। एवं एएण अभिलावेणं जहेव ओहिएगिंदियसए एक्कारस उद्देसगा भणिया तहेव कण्हलेस्ससए वि भाणियव्वा जाव अचरिमचरिमकण्हलेस्सा एगिंदिया।

एवं कण्हलेस्सेहिं भणियं एवं नीललेस्सेहि वि सयं भाणियव्वं।

एवं काउलेस्सेहिं वि सयं भाणियव्वं, नवरं 'काउलेस्से'त्ति अभिलावो भाणियव्वो।

—भग० श ३३। श २ से ४। पृ० ६१४-१५

कृष्णलेशी एकेन्द्रिय पाँच प्रकार के होते हैं, यथा—पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक। कृष्णलेशी पृथ्वीकायिक दो प्रकार के होते है, यथा—सूक्ष्म तथा बादर पृथ्वीकायिक। कृष्णलेशी सूक्ष्म पृथ्वीकायिक दो प्रकार के होते हैं, यथा—पर्याप्त तथा अपर्याप्त पृथ्वीकायिक। इसीप्रकार कृष्णलेशी बादर पृथ्वीकायिक के पर्याप्त तथा अपर्याप्त दो भेद होते हैं। इसीप्रकार कृष्णलेशी वनस्पतिकायिक तक चार-चार भेद जानने।

कृष्णलेशी अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के आठ कर्मप्रकृतियाँ होती हैं। वह सात अथवा आठ कर्मप्रकृतियाँ बाधता है। चौदह कर्मप्रकृतियाँ वेदता है। इसीप्रकार यावत् पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक तक कहना। प्रत्येक के अपर्याप्त सूक्ष्म, पर्याप्त सूक्ष्म, अपर्याप्त बादर, पर्याप्त बादर इस प्रकार चार-चार भेद कहने।

अनन्तरोपपन्न कृष्णलेशी एकेन्द्रिय पाँच प्रकार के होते हैं, यथा—पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक। तथा प्रत्येक के सूक्ष्म और बादर दो-दो भेद होते हैं। अनंतरोपपन्न कृष्णलेशी एकेंद्रिय जीव के आठ कर्म प्रकृतियाँ होती है। वे आठ कर्मप्रकृतियाँ बाधते हैं और चौदह कर्मप्रकृतियाँ वेदते है।

परम्परोपपन्न कृष्णलेशी एकेन्द्रिय पाँच प्रकार के होते हैं—पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक। प्रत्येक के चार-चार भेद कहने। परम्परोपपन्न कृष्णलेशी एकेन्द्रिय के सर्व भेदों में आठ प्रकृतियाँ होती है। वे सात अथवा आठ कर्मप्रकृतियाँ बाँधते है तथा चौदह कर्मप्रकृतियाँ वेदते हैं।

अनंतरोपपन्न की तरह अनंतरावगाढ, अनतराहारक, अनतरपर्याप्त कृष्णलेशी एकेन्द्रिय के सम्बंध में भी जानना। परम्परोपपन्न की तरह परम्परावगाढ, परम्पराहारक, परम्परपर्याप्त, चरम तथा अचरम कृष्णलेशी एकेन्द्रिय के सम्बन्ध मे कहना।

जैसा कृष्णलेशी का शतक कहा वैसा ही नीललेशी एकेन्द्रिय तथा कापोतलेशी एकेन्द्रिय जीव का शतक कहना।

·७८ २ सलेशी भवसिद्धिक एकेन्द्रिय और कर्मप्रकृति का सत्ता-बंधन-वेदन :—

कइविहा णं भंते ! कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता ? गोयमा ! पंचविहा कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता, तंजहा—पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया। कण्हलेस्सभवसिद्धियपुढविकाइया णं भंते। कइविहा पन्नत्ता ? गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—सुहुमपुढविकाइया य बादरपुढविकाइया य। कण्हलेस्सभवसिद्धियसुहुमपुढविकाइया णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता ? गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य। एवं बायरा वि। एवं एएणं अभिलावेणं तहेव चउक्कओ भेदो भाणियव्वो।

कण्हलेस्सभवसिद्धियअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइया ण भंते! कइ कम्मप्पगडीओ पन्नत्ताओ? एवं एएण अभिलावेण जहेव ओहिउद्देसए तहेव जाव वेदेंति।

कइविहा ण भंते! अनंतरोववन्नगा कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता? गोयमा! पंचविहा अनंतरोववन्नगा० जाव वणस्सइकाइया। अनंतरोववन्नगा कण्हलेस्सभवसिद्धीयपुढविकाइया ण भंते! कइविहा पन्नत्ता? गोयमा! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—सुहुमपुढविकाइया--एवं दुयओ भेदो।

अनंतरोववन्नगकण्हलेस्सभवसिद्धियसुहुमपुढविकाइया ण भंते! कम्मप्पगडीओ पन्नत्ताओ? एवं एएण अभिलावेण जहेव ओहिओ अनंतरोववन्नगउद्देसओ तहेव जाव वेदेंति। एवं एएण अभिलावेण एक्कारस वि उद्देसगा तहेव भाणियव्वा जहा ओहियसए जाव 'अचरिमो' त्ति।

जहा कण्हलेस्सभवसिद्धिएहिं सयं भणियं एवं नीललेस्सभवसिद्धिएहिं वि सयं भाणियव्वं।

एवं काउलेस्सभवसिद्धिएहिं वि सयं।

—भग० श ३३। उ ६ से ८। पृ० ६१५-१६

कृष्णलेशी भवसिद्धिक एकेन्द्रिय के सम्बन्ध में भी ग्यारह उद्देशक वैसे ही कहने जैसे कृष्णलेशी एकेन्द्रिय के ग्यारह उद्देशक कहे, लेकिन 'कृष्णलेशी' के स्थान में 'कृष्णलेशीभवसिद्धिक' कहना।

'नीललेशी' के स्थान में 'नीललेशीभवसिद्धिक' कहना। 'कापोतलेशी' के स्थान में 'कापोतलेशीभवसिद्धिक' कहना।

७८ ३ सलेशी अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय और कर्मप्रकृति का सत्ता-बंधन-वेदन :—

कइविहा ण भंते! अभवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता? गोयमा! पंचविहा अभवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता, तंजहा—पुढविकाइया, जाव वणस्सइकाइया। एवं जहेव भवसिद्धियसयं भणियं, [एवं अभवसिद्धियसयं] नवरं नव उद्देसगा चरमअचरमउद्देसगवज्जा, सेसं तहेव। एवं कण्हलेस्सअभवसिद्धियएगिंदियसयं वि। नीललेस्सअभवसिद्धियएगिंदिएहिं वि सयं। काऊलेस्सअभवसिद्धियसयं, एवं चत्तारि वि अभवसिद्धियसयाणि, नव नव उद्देसगा भवंति, एवं एयाणि बारस एगिंदियसयाणि भवंति।

—भग० श ३३। श ९ से १२। पृ० ६१६

कृष्णलेशी अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय का शतक उसी प्रकार कहना, जिस प्रकार

कृष्णलेशी भवसिद्धिक एकेन्द्रिय का कहा ; लेकिन चरम-अचरम उद्देशको को वाद देकर नव उद्देशक कहने ।

इसी प्रकार नीललेशी अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय के नव उद्देशक कहने तथा कापोतलेशी अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय के भी नव उद्देशक कहने।

·७६ सलेशी जीव और अल्पकर्मतर-बहुकर्मतर :—

सिय भंते ! कण्हलेस्से नेरइए अप्पकम्मतराए, नीललेस्से नेरइए महाकम्मतराए ? हंता ! सिया । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—कण्हलेस्से नेरइए अप्पकम्मतराए, नीललेस्से नेरइए महाकम्मतराए ? गोयमा ! ठिइं पडुच्च, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव महाकम्मतराए। सिय भंते ! नीललेस्से नेरइए अप्पकम्मतराए, काऊलेस्से नेरइए महाकम्मतराए हंता ? सिया। से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चइ– नीललेस्से नेरइए अप्पकम्मतराए काऊलेस्से नेरइए महाकम्मतराए ? गोयमा ! ठिइं पडुच्च, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव महाकम्मतराए। एवं असुरकुमारे वि, नवरं तेऊलेस्सा अब्भहिया, एवं जाव वेमाणिया, जस्स जइ लेस्साओ तस्स तत्तिया भाणियव्वाओ, जोइसियस्स न भण्णइ, जाव सिय भंते ! पम्हलेस्से वेमाणिए अप्पकम्मतराए सुक्कलेस्से वेमाणिए महाकम्मतराए ? हंता ! सिया। से केणट्ठेणं० ? सेसं जहा नेरइयस्स जाव महाकम्मतराए।

—भग० श ७ । उ ३ । प्र ६, ७ । पृ० ५१५

कदाचित् कृष्णलेश्यावाला नारकी अल्पकर्मवाला तथा नीललेश्यावाला नारकी महाकर्मवाला होता है। कदाचित् नीललेश्यावाला नारकी अल्पकर्मवाला तथा कापोतलेश्यावाला नारकी महाकर्मवाला होता है। ऐसा स्थिति की अपेक्षा से कहा गया है। ज्योतिषी देवों को छोड़कर बाकी दंडक के सभी जीवों में ऐसा ही जानना ; लेकिन जिसके जितनी लेश्या हो उतनी ही लेश्या में तुलना करनी। ज्योतिषी देवों में केवल एक तेजोलेश्या ही होती है। अतः तुलनात्मक प्रश्न नहीं बनता। यावत् वैमानिक देवों में भी कदाचित् पद्मलेशी वैमानिक अल्पकर्मतर तथा शुक्ललेशी वैमानिक महाकर्मतर हो सकता है। टीकाकार ने उसे इस प्रकार स्पष्ट किया है :—

कृष्णलेश्या अत्यंत अशुभ परिणामरूप होने के कारण तथा उसकी अपेक्षा नीललेश्या कुछ शुभ परिणामरूप होने के कारण सामान्यतः कृष्णलेशी जीव बहुकर्मवाला तथा नीललेशी जीव अल्पकर्मवाला होता है। परन्तु कदाचित् आयुष्य की स्थिति की अपेक्षा से कृष्णलेशी अल्पकर्मवाला तथा नीललेशी महाकर्मवाला हो सकता है। जिस प्रकार कृष्णलेशी

नारकी जिसने अपनी आयुष्य की अधिक स्थिति क्षय कर ली हो तथा जिसके अधिक कर्मों का क्षय हुआ हो तो उसकी अपेक्षा पाँचवीं नरक पृथ्वी का सत्रह सागरोपम आयुष्यवाला नीललेशी नारकी जो अभी-अभी उत्पन्न हुआ है तथा जिसने अपनी आयुष्य की स्थिति को अधिक क्षय नहीं किया है वह अधिक कर्मवाला होगा। अतः उपर्युक्त कृष्णलेशी जीव से वह महाकर्मवाला होगा।

---

८० सलेशी जीव और अल्पऋद्धि-महाऋद्धि :—

एएसि णं भंते! जीवाणं कण्हलेसाणं जाव सुक्कलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पड्ढिया वा महड्ढिया वा? गोयमा! कण्हलेसेहिंतो नीललेसा महड्ढिया, नीललेसेहिंतो काऊलेसा महड्ढिया, एवं काऊलेसेहिंतो तेऊलेसा महड्ढिया, तेऊलेसेहिंतो पम्हलेस्सा महड्ढिया, पम्हलेसेहिंतो सुक्कलेसा महड्ढिया, सव्वप्पड्ढिया जीवा कण्हलेसा, सव्वमहड्ढिया सुक्कलेसा। एएसि णं भंते! नेरइयाणं कण्हलेस्साणं नीललेसाणं काऊलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पड्ढिया वा महड्ढिया वा? गोयमा! कण्हलेसेहिंतो नीललेसा महड्ढिया, नीललेसेहिंतो काऊलेसा महड्ढिया, सव्वप्पड्ढिया नेरइया कण्हलेसा, सव्वमहड्ढिया नेरइया काऊलेसा। एएसि णं भंते! तिरिक्खजोणियाणं, कण्हलेसाणं जाव सुक्कलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पड्ढिया वा महड्ढिया वा? गोयमा! जहा जीवाणं। एएसि णं भंते! एगिंदियतिरिक्खजोणियाणं कण्हलेस्साणं जाव तेऊलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पड्ढिया वा महड्ढिया वा? गोयमा! कण्हलेसेहिंतो एगिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो नीललेसा महड्ढिया, नीललेसेहिंतो तिरिक्खजोणिएहिंतो काऊलेसा महड्ढिया, काऊलेसेहिंतो तेऊलेसा महड्ढिया, सव्वप्पड्ढिया एगिंदियतिरिक्खजोणिया कण्हलेस्सा, सव्वमहड्ढिया तेऊलेसा। एवं पुढविकाइयाण वि। एवं एएणं अभिलावेणं जहेव लेस्साओ भावियाओ तहेव नेयव्वं जाव चउरिंदिया। पंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं तिरिक्खजोणिणीणं संमुच्छिमाणं गब्भवक्कंतियाण य सव्वेसिं भाणियव्वं जाव अप्पड्ढिया वेमाणिया देवा तेऊलेसा, सव्वमहड्ढिया वेमाणिया सुक्कलेसा। केई भणंति-चउवीसं दण्डएणं इड्ढी भाणियव्वा।

—पण्ण० प १७। उ २। सू २३ २५। पृ० ४४७

एएसि णं भंते! दीवकुमाराणं कण्हलेस्साणं जाव तेऊलेस्साण य कयरे कयरेहिंतो अप्पिड्ढिया वा महड्ढिया वा? गोयमा! कण्हलेस्साहिंतो नीललेस्सा महिड्ढिया जाव सव्वमहड्ढिया तेऊलेस्सा। ××× उदहिकुमाराणं ××× एवं चेव। एवं दिसाकुमारा वि। एवं थणियकुमारा वि।

—भग० श १६। उ ११-१४। पृ० ७५३

एएसि णं भंते ! एगिंदियाण कण्हलेस्साणं इड्ढि० जहेव दीवकुमाराणं। नागकुमारा णं भंते । सव्वे समाहारा जहा सोलसमसए दीवकुमारुद्देसए तहेव निरवसेसं भाणियव्वं जाव इड्ढी।

सुवण्णकुमारा णं भंते ! ××× एवं चेव। विज्जुकुमारा णं भंते ! ××× एवं चेव। वाउकुमारा ण भंते ! ××× एवं चेव। अग्गिकुमारा णं भंते ! ××× एवं चेव।

—भग० श १७ | उ १२-१७ | पृ० ७६१

कृष्णलेशी जीव से नीललेशी जीव महाऋद्धि वाला होता है, नीललेशी जीव से कापोतलेशी जीव महाऋद्धि वाला होता है। कापोतलेशी जीव से तेजोलेशी जीव महाऋद्धि वाला, तेजोलेशी जीव से पद्मलेशी जीव महाऋद्धि वाला तथा पद्मलेशी जीव से शुक्ललेशी जीव महाऋद्धि वाला होता है। सबसे अल्पऋद्धि वाला कृष्णलेशी जीव तथा सबसे महाऋद्धि वाला शुक्ललेशी जीव होता है।

कृष्णलेशी नारकी से नीललेशी नारकी महाऋद्धि वाला तथा नीललेशी नारकी से कापोतलेशी नारकी महाऋद्धि वाला होता है। कृष्णलेशी नारकी सबसे अल्पऋद्धि वाला तथा कापोतलेशी नारकी सबसे महाऋद्धि वाला होता है।

कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी तिर्यंचयोनिक जीवों में अल्पऋद्धि तथा महाऋद्धि के सम्बन्ध में वैसा ही कहना जैसा औधिक जीवों के सम्बन्ध में कहा गया है।

कृष्णलेशी एकेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीव से नीललेशी एकेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीव महाऋद्धि वाला, नीललेशी एकेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीव से कापोतलेशी एकेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीव महाऋद्धि वाला तथा कापोतलेशी एकेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीव से तेजोलेशी एकेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीव महाऋद्धि वाला होता है। कृष्णलेशी एकेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीव सबसे अल्पऋद्धि वाला तथा तेजोलेशी एकेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीव सबसे महाऋद्धि वाला होता है।

इसी प्रकार पृथ्वीकायिक जीवो के सम्बन्ध मे कहना। इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जीवो तक कहना परन्तु जिसके जितनी लेश्या हो उतनी लेश्या मे अल्पऋद्धि महाऋद्धि पद कहना।

पचेन्द्रिय तिर्यंच, पचेंद्रिय तिर्यंच स्त्री, समूर्च्छिम तथा गर्भज सब जीवों मे अल्पऋद्धि महाऋद्धि पद कहना। यावत् तेजोलेशी वैमानिक सबसे अल्पऋद्धि वाले तथा शुक्ललेशी वैमानिक सबसे महाऋद्धिवाले होते हैं। कोई आचार्य कहते हैं कि ऋद्धि के आलापक चौबीस दण्डकों में ही कहने चाहिए। ज्योतिषी देवों मे केवल एक तेजोलेश्या होने के कारण तुलनात्मक प्रश्न नहीं बनता है।

कृष्णलेशी द्वीपकुमार से नीललेशी द्वीपकुमार महाऋद्धिवाला, नीललेशी द्वीपकुमार से कापोतलेशी द्वीपकुमार महाऋद्धिवाला, कापोतलेशी द्वीपकुमार से तेजोलेशी द्वीपकुमार महाऋद्धिवाला होता है। कृष्णलेशी द्वीपकुमार सबसे अल्पऋद्धिवाला तथा तेजोलेशी द्वीपकुमार सबसे महाऋद्धिवाला होता है।

इसी प्रकार उदधिकुमार, दिशाकुमार, स्तनितकुमार, नागकुमार, सुवर्णकुमार, विद्युत्-कुमार, वायुकुमार तथा अग्निकुमार के विषय में वैसा ही कहना, जैसा द्वीपकुमार के विषय में कहा।

·८१ सलेशी जीव और बोधि :—

सम्मदंसणरत्ता, अनियाणा सुक्कलेसमोगाढा।
इय जे मरंति जीवा, तेसिं सुलहा भवे बोही॥
मिच्छादंसणरत्ता, सनियाणा कण्हलेसमोगाढा।
इय जे मरंति जीवा, तेसिं पुण दुल्लहा बोही॥

—उत्त० अ ३६। गा २५७, ५८। पृ० १०६

सम्यग्दर्शन में अनुरक्त, निदान रहित, शुक्ललेश्या में अवगाढ होकर जो जीव मरते हैं वे परभव में सुलभबोधि होते हैं।

मिथ्यादर्शन में रत, निदान सहित, कृष्णलेश्या में अवगाढ होकर जो जीव मरते हैं वे परभव में दुर्लभबोधि होते हैं।

·८२ सलेशी जीव और समवसरण :—

·८२·१ सलेशी जीव और मतवाद (दर्शन) :—

सलेस्सा णं भंते! जीवा किं किरियावाई० पुच्छा? गोयमा! किरियावाई वि, अकिरियावाई वि, अन्नाणियवाई वि, वेणइयवाई वि। एवं जाव सुक्कलेस्सा।

अलेस्सा णं भंते! जीवा० पुच्छा? गोयमा! किरियावाई। नो अकिरियावाई नो अन्नाणियवाई, नो वेणइयवाई।

सलेस्सा णं भंते! नेरइया किं किरियावाई०? एवं चेव। एवं जाव काउ-लेस्सा। ××× नवरं जं अत्थि तं भाणियव्वं सेसं न भन्नंति। जहा नेरइया एवं जाव थणियकुमारा। पुढविकाइया णं भंते! किं किरियावाई० पुच्छा? गोयमा! नो किरियावाई, अकिरियावाई वि, अन्नाणियवाई वि, नो वेणइयवाई। एवं पुढविकाइयाणं जं अत्थि तत्थ सव्वत्थ वि एयाइं दो मज्झिल्लाइं समोसरणाइं जाव

अणागारोवउत्ता वि। एवं जाव चउरिंदियाण। सव्वट्ठाणेसु एयाइं चेव मज्झिल्ल-गाइं दो समोसरणाइं ××× पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा जीवा। नवरं जं अत्थि तं भाणियव्वं। मणुस्सा जहा जीवा तहेव निरवसेसं। वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिया जहा असुरकुमारा।

—भग० श ३०। उ १। प्र ३, ४, ८, ६। पृ० ६०५-६०६

दर्शन की अपेक्षा से जीव, समास मे, चार मतवादों में विभक्त हैं, यथा—क्रियावादी, अक्रियावादी, अज्ञानवादी तथा विनयवादी। इन मतवादो के सम्बन्ध मे विशेष जानकारी हेतु आया० श्रु १। अ १। उ १। सू ३ की टीका देखें।

सलेशी जीव क्रियावादी भी, अक्रियावादी भी, अज्ञानवादी भी तथा विनयवादी भी होते है। कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी जीव चारों मतवादवाले होते हैं। अलेशी जीव केवल क्रियावादी होते हैं।

सलेशी नारकी भी चारों मतवादवाले होते हैं। कृष्णलेशी, नीललेशी तथा कापोत-लेशी नारकी भी चारो मतवादवाले होते हैं। सलेशी असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार चारों मतवादवाले होते हैं।

सलेशी पृथ्वीकायिक जीव अक्रियावादी तथा अज्ञानवादी होते हैं। इसी प्रकार यावत् सलेशी चतुरिन्द्रिय जीव अक्रियावादी तथा अज्ञानवादी होते हैं।

सलेशी पचेन्द्रिय तिर्यंच योनिवाले जीव चारों मतवादवाले होते हैं। सलेशी मनुष्य भी चारों मतवाद वाले हैं। अलेशी मनुष्य केवल क्रियावादी होते हैं। सलेशी वानव्यंतर, ज्योतिषी तथा वैमानिक देव भी चारों मतवादवाले होते हैं।

जिसके जितनी लेश्याएं हो उतने विवेचन करने।

'८२'२ सलेशी जीव के मतवाद (दर्शन) की अपेक्षा आयु का बंध :—

किरियावाई णं भंते! जीवा किं नेरइयाउयं पकरेंति, तिरिक्खजोणियाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं पकरेंति, देवाउयं पकरेंति? गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेंति, नो तिरिक्खजोणियाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं वि पकरेंति, देवाउयं वि पकरेंति।

जइ देवाउयं पकरेंति किं भवणवासिदेवाउयं पकरेंति, जाव वेमाणियदेवाउयं पकरेंति? गोयमा! नो भवणवासीदेवाउयं पकरेंति, नो वाणमंतरदेवाउयं पकरेंति, नो जोइसियदेवाउयं पकरेंति, वेमाणियदेवाउयं पकरेंति। अकिरियावाई णं भंते! जीवा किं नेरइयाउयं पकरेंति, तिरिक्ख० पुच्छा? गोयमा! नेरइयाउयं वि पकरेंति, जाव देवाउयं वि पकरेंति। एवं अन्नाणियवाई वि, वेणइयवाई वि।

सलेस्सा णं भंते! जीवा किरियावाई किं नेरइयाउयं पकरेंति० पुच्छा? गोयमा! नो नेरइयाउयं० एवं जहेव जीवा तहेव सलेस्सा वि चउहि वि समोसरणेहिं भाणियव्वा।

कण्हलेस्सा ण भंते। जीवा किरियावाई किं नेरइयाउयं पकरेंति० पुच्छा? गोयमा। नो नेरइयाउयं पकरेंति, नो तिरिक्खजोणियाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं पकरेंति, नो देवाउय पकरेंति। अकिरियावाई अन्नाणियवाई वेणइयवाई य चत्तारि वि आउयाइं पकरेंति। एवं नीललेस्सा वि। काऊलेस्सा वि। तेउलेस्सा णं भंते। जीवा किरियावाई किं नेरइयाउयं पकरेइ (रेंति)० पुच्छा? गोयमा। नो नेरइयाउयं पकरेइ, नो तिरिक्खजोणियाउयं पकरेइ, मणुस्साउयं पकरेइ, देवाउयं वि पकरेइ। जइ देवाउयं पकरेइ – तहेव। तेऊलेस्सा ण भंते। जीवा अकिरियावाई किं नेरइयाउयं० पुच्छा? गोयमा। नो नेरइयाउयं पकरेइ मणुस्साउयं वि पकरेइ, तिरिक्खजोणियाउयं वि पकरेइ, देवाउयं वि पकरेइ। एवं अन्नाणियावाई वि, वेणइयवाई वि। जहा तेऊलेस्सा एवं पम्हलेस्सा वि सुक्कलेस्सा वि नायव्वा।

अलेस्सा ण भंते। जीवा किरियावाई किं नेरइयाउयं० पुच्छा? गोयमा। नो नेरइयाउयं पकरेइ, नो तिरिक्खजोणियाउयं पकरेइ, नो मणुस्साउयं पकरेइ, नो देवाउयं पकरेइ (रेंति)।

—भग० श ३० । उ १ । प्र १० से १७ । पृ० ९०६-९०७

सलेशी क्रियावादी जीव नरकायु तथा तिर्यंचायु नही बाँधते है। वे मनुष्यायु तथा देवायु बाँधते हैं, देवायु मे भी वे सिर्फ वैमानिक देवों की आयु बाँधते है। सलेशी अक्रियावादी जीव नरकायु, तिर्यंचायु, मनुष्यायु तथा देवायु चारों प्रकार की आयु बाँधते हैं। इसी प्रकार सलेशी अज्ञानवादी तथा सलेशी विनयवादी भी चारों प्रकार की आयु बाँधते हैं। कृष्णलेशी क्रियावादी जीव केवल मनुष्यायु बाँधते हैं। कृष्णलेशी अक्रियावादी, अज्ञानवादी तथा विनयवादी चारो प्रकार की आयु बाँधते है। नीललेशी तथा कापोतलेशी क्रियावादी जीव केवल मनुष्यायु बाँधते हैं। नीललेशी तथा कापोतलेशी अक्रियावादी, अज्ञानवादी तथा विनयवादी जीव चारों प्रकार की आयु बाँधते हैं। तेजोलेशी क्रियावादी जीव केवल मनुष्यायु तथा देवायु बाँधते है। देवायु मे भी वे केवल वैमानिक देवायु बाँधते हैं। तेजोलेशी अक्रियावादी जीव नरकायु नही बाँधते, तिर्यंचायु, मनुष्यायु तथा देवायु बाँधते हैं। तेजोलेशी अज्ञानवादी तथा विनयवादी भी नरकायु नही बाँधते, तिर्यंचायु, मनुष्यायु तथा देवायु बाँधते हैं। तेजोलेशी चार मतवादियों के सम्बन्ध मे जैसा कहा वैसा ही पद्मलेशी और शुक्ललेशी चारों मतवादियों के सम्बन्ध में कहना। अलेशी क्रियावादी जीव चारों मे से कोई आयु नहीं बाँधते हैं। अलेशी केवल क्रियावादी होते हैं।

सलेस्सा ण भंते। नेरइया किरियावाई किं नेरइयाउयं०? एवं सव्वे वि नेरइया जे किरियावाई ते मणुस्साउयं एगं पकरेइ, जे अकिरियावाई, अन्नाणियवाई,

वेणइयवाई ते सव्वट्ठाणेसु वि नो नेरइयाउयं पकरेइ, तिरिक्खजोणियाउयं वि पकरेइ, मणुस्साउयं वि पकरेइ, नो देवाउयं पकरेइ। ××× एवं जाव थणियकुमारा जहेव नेरइया।

अकिरियावाई णं भंते। पुढविकाइया० पुच्छा? गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेइ, तिरिक्खजोणियाउयं पकरेइ, मणुस्साउयं पकरेइ, नो देवाउयं पकरेइ। एवं अन्नाणियवाई वि। सलेस्सा णं भंते०। एवं जं जं पदं अत्थि पुढविकाइयाणं तहिं तहिं मज्झिमेसु दोसु समोसरणेसु एवं चेव दुविहं आउयं पकरेइ। नवरं तेऊलेस्साए न किं वि पकरेइ। एवं आउक्काइयाण वि, एवं वणस्सइकाइयाण वि। तेउकाइया, वाउकाइया सव्वट्ठाणेसु मज्झिमेसु दोसु समोसरणेसु नो नेरइयाउयं पकरेइ, तिरिक्खजोणियाउयं पकरेइ, नो मणुस्साउयं पकरेइ, नो देवाउयं पकरेइ। बेइंदिय-तेइंदियचउरिंदियाणं जहा पुढविकाइयाण × × ×। किरियावाई ण भंते! पंचिंदियतिरिक्खजोणिया किं नेरइयाउयं पकरेइ० पुच्छा? गोयमा! जहा मण-पज्जवनाणी अकिरियावाई, अन्नाणियवाई, वेणइयवाई य चउव्विहं वि पकरेइ। जहा ओहिया तहा सलेस्सा वि। कण्हलेस्सा णं भंते! किरियावाई पंचिंदिय-तिरक्खजोणिया किं नेरइयाउयं० पुच्छा? गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेइ, नो तिरिक्खजोणियाउयं पकरेइ, नो मणुस्साउयं पकरेइ, नो देवाउयं पकरेइ। अकिरिया-वाई, अन्नाणियवाई, वेणइयवाई चउव्विहं वि पकरेइ। जहा कण्हलेस्सा एवं नील-लेस्सा वि, काऊलेस्सा वि, तेऊलेस्सा जहा सलेस्सा। नवरं अकिरियावाई, अन्नाणि-यवाई, वेणइयवाई य नो नेरइयाउयं पकरेइ, तिरिक्खजोणियाउयं वि पकरेइ, मणुस्साउयं वि पकरेइ, देवाउयं वि पकरेइ। एवं पम्हलेसा वि, एवं सुक्कलेस्सा वि भाणियव्वा। ××× जहा पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं वत्तव्वया भणिया एवं मणुस्साण वि (वत्तव्वया) भाणियव्वा × × × अलेस्सा केवलनाणी अवेदगा अकसाई अजोगी य एए एगं वि आउयं न पकरेइ। जहा ओहिया जीवा सेसं तं चेव। वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा असुरकुमारा।

—भग० श ३०। उ १। प्र २५ से २६। पृ० ६०७-६०८

सलेशी क्रियावादी नारकी सब केवल मनुष्यायु बाँधते हैं तथा अक्रियावादी, अज्ञान-वादी तथा विनयवादी नारकी सभी स्थानों में नरकायु तथा देवायु नही बाँधते हैं, तिर्यंचायु तथा मनुष्यायु बाँधते हैं। नारकी की तरह सलेशी असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार भवन-वासी देव जो क्रियावादी हैं वे केवल एक मनुष्यायु का बंधन करते हैं तथा जो अक्रियावादी, अज्ञानवादी तथा विनयवादी हैं वे तिर्यंचायु तथा मनुष्यायु का बंधन करते हैं।

सलेशी पृथ्वीकायिक जो अक्रियावादी तथा अज्ञानवादी होते हैं वे तिर्यंचायु तथा मनुष्यायु बाँधते है, नरकायु तथा देवायु नही बाँधते हैं। कृष्ण-नील-कापोतलेशी पृथ्वीकायिकों के सम्बन्ध मे ऐसा ही कहना। तेजोलेशी पृथ्वीकायिक किसी भी आयु का बंधन नही करते हैं। पृथ्वीकायिक जीवो की तरह अप्कायिक तथा वनस्पतिकायिक जीवों के सम्बन्ध मे जानना।

सलेशी अग्निकायिक तथा वायुकायिक जीव अक्रियावादी तथा अज्ञानवादी ही होते हैं तथा सर्व स्थानों में केवल तिर्यंचायु बाँधते हैं।

पृथ्वीकायिक जीवो की तरह द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय तथा चतुरिन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध मे जानना।

क्रियावादी सलेशी तिर्यंच पचेंद्रिय जीव मनःपर्यव ज्ञानी की तरह केवल देवायु बाँधते हैं तथा देवायु मे भी केवल वैमानिक देवो की आयु बाँधते हैं। अक्रियावादी, अज्ञानवादी तथा विनयवादी सलेशी पचेंद्रिय तिर्यंच चारों ही प्रकार की आयु बाँधते हैं। कृष्णलेशी क्रियावादी पचेंद्रिय तिर्यंच कोई भी आयु नही बाँधते है। अक्रियावादी, अज्ञानवादी तथा विनयवादी कृष्णलेशी पचेंद्रिय तिर्यंच चारों ही प्रकार की आयु बाँधते हैं। जैसा कृष्णलेशी पचेंद्रिय तिर्यंच के सम्बन्ध में कहा, वैसा ही नीललेशी तथा कापोतलेशी तिर्यंच पचेंद्रिय के सम्बन्ध में जानना। क्रियावादी तेजोलेशी तिर्यंच पचेंद्रिय क्रियावादी सलेशी तिर्यंच पचेंद्रिय की तरह केवल वैमानिक देवों की आयु बाँधते हैं। अक्रियावादी, अज्ञानवादी तथा विनयवादी तेजोलेशी तिर्यंच पचेंद्रिय नरकायु नही बाँधते हैं, परन्तु तिर्यंचायु, मनुष्यायु, देवायु बाँधते हैं। पद्मलेशी तथा शुक्ललेशी पचेंद्रिय तिर्यंच के सम्बध में जैसा तेजोलेशी तिर्यंच पचेंद्रिय के सम्बन्ध मे कहा, वैसा ही कहना।

जिस प्रकार सलेशी यावत् शुक्ललेशी पचेंद्रिय तिर्यंच के सम्बन्ध में कहा गया है वैसा ही सलेशी यावत् शुक्ललेशी मनुष्य के सम्बन्ध में भी कहना। अलेशी मनुष्य किसी भी प्रकार की आयु नही बाँधते है।

वाणव्यंतर ज्योतिषी वैमानिक देवो के सम्बन्ध मे वैसा ही कहना जैसा असुरकुमार देवों के सम्बन्ध मे कहा गया है। जिसमे जितनी लेश्या हो उतनी लेश्या का विवेचन करना।

'८२ ३ सलेशी जीव और मतवाद की अपेक्षा से भवसिद्धिकता-अभवसिद्धिकता —

सलेस्सा णं भंते। जीवा किरियावाई किं भवसिद्धिया पुच्छा? गोयमा! भवसिद्धिया, नो अभवसिद्धिया। सलेस्सा ण भंते! जीवा अकिरियावाई किं भवसिद्धिया पुच्छा? गोयमा! भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि। एवं अन्नाणियवाई

वि, वेणइयवाई वि। जहा सलेस्सा एवं जाव सुक्कलेस्सा। अलेस्सा णं भंते! जीवा किरियावाई किं भवसिद्धिया पुच्छा? गोयमा! भवसिद्धिया, नो अभवसिद्धिया। ××× एवं नेरइया वि भाणियव्वा नवरं नायव्वं जं अत्थि, एवं असुरकुमारा वि जाव थणियकुमारा, पुढविक्काइया सव्वट्ठाणेसु वि मज्झिल्लेसु दोसु वि समोसरणेसु भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि एवं जाव वणस्सइकाइया, बेइंदियतेइंदियचउरिंदिया एवं चेव नवरं सम्मत्ते ओहिनाणे आभिणिबोहियनाणे सुयनाणे एएसु चेव दोसु मज्झिमेसु समोसरणेसु भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया, सेसं तं चेव, पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा नेरइया, नवरं नायव्वं जं अत्थि, मणुस्सा जहा ओहिया जीवा, वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा असुरकुमारा।

—भग० श ३० । उ १ । प्र ३२ से ३४ । पृ० ६०८-६

क्रियावादी सलेशी जीव भवसिद्धिक होते हैं, अभवसिद्धिक नही होते हैं। अक्रियावादी, अज्ञानवादी तथा विनयवादी सलेशी जीव भवसिद्धिक भी होते हैं, अभवसिद्धिक भी होते हैं। कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी जीवों के सम्बन्ध में वैसा ही कहना जैसा सलेशी जीवों के सम्बन्ध में कहा है। क्रियावादी अलेशी जीव भवसिद्धिक होते हैं, अभवसिद्धिक नही होते हैं।

सलेशी यावत् कापोतलेशी नारकी के सम्बन्ध में वैसा ही कहना जैसा सलेशी जीव के सम्बन्ध में कहा है। इसीप्रकार सलेशी यावत् तेजोलेशी असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार के सम्बन्ध मे भी ऐसा ही कहना।

पृथ्वीकायिक यावत् चतुरिन्द्रिय के सर्वलेश्या स्थानो में मध्य के दो समवसरणों में भवसिद्धिक भी होते हैं, अभवसिद्धिक भी होते हैं।

सलेशी यावत् शुक्ललेशी तिर्यंच पंचेन्द्रिय के सम्बन्ध मे वैसा ही कहना जैसा नारकी के सम्बन्ध मे कहा है।

क्रियावादी सलेशी यावत् शुक्ललेशी तथा अलेशी मनुष्य भवसिद्धिक होते हैं, अभवसिद्धिक नही होते हैं। अक्रियावादी, अज्ञानवादी तथा विनयवादी सलेशी यावत् शुक्ललेशी मनुष्य भवसिद्धिक भी होते हैं, अभवसिद्धिक भी होते हैं।

वानव्यतर-ज्योतिषी-वैमानिक देवो के सम्बन्ध मे वैसा ही कहना जैसा असुरकुमार देवो के सम्बन्ध में कहा गया है। जिसमें जितनी लेश्या हो उतनी लेश्या का विवेचन करना।

·८२·४ सलेशी अनतरोपपन्न यावत् अचरम जीव तथा मतवाद की अपेक्षा से वक्तव्यता :—

अणंतरोववन्नगा णं भंते! नेरइया किं किरियावाई० पुच्छा? गोयमा! किरियावाई वि जाव वेणइयवाई वि। सलेस्सा णं भंते! अणंतरोववन्नगा नेरइया

किं किरियावाई० ? एवं चेव, एवं जहेव पढमुद्देसे नेरइयाणं वत्तव्वया तहेव इह वि भाणियव्वा, नवरं जं जस्स अत्थि अणंतरोववन्नगाणं नेरइयाणं तं तस्स भाणियव्वं, एवं सव्वजीवाणं जाव वेमाणियाणं, नवरं अणंतरोववन्नगाणं जं जहिं अत्थि तं तहिं भाणियव्वं।

सलेस्सा णं भंते! किरियावाई अणंतरोववन्नगा नेरइया किं नेरइयाउयं० पुच्छा ? गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेइ (रेंति) जाव नो देवाउयं पकरेइ, एवं जाव वेमाणिया। एवं सव्वट्ठाणेसु वि अणंतरोववन्नगा नेरइया न किंचि वि आउयं पकरेइ जाव अणागारोवउत्तत्ति। एवं जाव वेमाणिया नवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं।

सलेस्सा ण भंते! किरियावाई अणंतरोववन्नगा नेरइया किं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया ? गोयमा! भवसिद्धिया, नो अभवसिद्धिया, एवं एएणं अभिलावेण जहेव ओहिए उद्देसए नेरइयाण वत्तव्वया भणिया तहेव इह वि भाणियव्वा जाव अणागारोवउत्तत्ति, एवं जाव वेमाणियाण नवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं, इमं से लक्खण जे किरियावाई सुक्कपक्खिया सम्मामिच्छादिट्ठिया एए सव्वे भवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया, सेसा सव्वे भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि।

परंपरोववन्नगा ण भंते! नेरइया किं किरियावाई० एवं जहेव ओहिओ उद्देसओ तहेव परंपरोववन्नएसु वि नेरइयाईओ तहेव निरवसेसं भाणियव्वं, तहेव तियदंडगसंगहिओ।

एवं एएण कमेण जच्चेव बंधिसए उद्देसगाण परिवाडी सच्चेव इहं वि जाव अचरिमो उद्देसओ, नवरं अणतरा चत्तारि वि एक्कगमगा, परंपरा चत्तारि वि एक्कगमएण, एवं चरिमा वि, अचरिमा वि एवं चेव नवरं अलेस्सो केवली अजोगी व भन्नइ। सेसं तहेव।

—भग० श ३०। उ २ से ११। पृ० ६०६-१०

सलेशी अनतरोपपन्न नारकी चारों मतवाद वाले होते हे। प्रथम उद्देशक (८२ ·) मे नारकियों के सम्बन्ध मे जैसी वक्तव्यता कही वैसी ही वक्तव्यता यहाँ भी कहनी। लेकिन अनतरोपपन्न नारकियों मे जिसमे जो सम्भव हो उसमें वह कहना। इसी प्रकार यावत् वैमानिक देव तक सब जीवो के सम्बन्ध मे जानना। लेकिन अनतरोपपन्न जीवों में जिसमे जो सभव हो उसमे वह कहना।

क्रियावादी, अक्रियावादी, अज्ञानवादी तथा विनयवादी सलेशी अनतरोपपन्न नारकी किसी भी प्रकार की आयु नही बाँधते हैं। इसी प्रकार यावत् वैमानिक देवों तक कहना। लेकिन जिसमे जो सभव हो उसमे वह कहना।

[illegible] अनन्तरोपपन्नक नारकी भवसिद्धिक होते हैं, अभवसिद्धिक नहीं होते [illegible] इस प्रकार इस अभिलाप से औधिक उद्देशक ('८२·२) में नारकियों के सम्बन्ध में [illegible] वक्तव्यता कही वैसी वक्तव्यता यहाँ भी कहनी। इसी प्रकार यावत् वैमानिक देव तक जानना लेकिन जिसके जो संभव हो वह कहना। इस लक्षण से जो क्रियावादी, शुक्ल-पक्षी, सम्यग्मिथ्यादृष्टि होते हैं वे भवसिद्धिक होते हैं, अभवसिद्धिक नहीं। अवशेष सब जीव भवसिद्धिक भी होते हैं, अभवसिद्धिक भी होते हैं।

सलेशी परम्परोपपन्नक नारकी आदि (यावत् वैमानिक) जीवों के सम्बन्ध में जैसा औधिक उद्देशक में कहा वैसा ही तीनों दण्डकों (क्रियावादित्वादि, आयुबंध, भव्याभव्यत्वादि) के सम्बन्ध मे निरवशेष कहना।

इस प्रकार इसी क्रम से बंधक शतक (देखो '७४) में उद्देशकों की जो परिपाटी कही है उसी परिपाटी से यहाँ अचरम उद्देशक तक जानना। विशेषता यह है कि 'अनन्तर' शब्द घटित चार उद्देशको मे तथा 'परंपर' घटित चार उद्देशकों में एक-सा गमक कहना। इसी प्रकार 'चरम' तथा 'अचरम' शब्द घटित उद्देशको के सम्बन्ध मे भी कहना लेकिन अचरम में अलेशी, केवली, अयोगी के सम्बन्ध मे कुछ भी न कहना।

'८३ सलेशी जीव और आहारकत्व-अनाहारकत्व :—

सलेस्से णं भंते ! जीवे किं आहारए अणाहारए ? गोयमा ! सिय आहारए, सिय अणाहारए, एवं जाव वेमाणिए।

सलेस्सा णं भंते ! जीवा किं आहारगा अणाहारगा ? गोयमा ! जीवेगिंदिय-वज्जो तियभंगो, एवं कण्हलेस्सा वि नीललेस्सा वि काऊलेस्सा वि जीवेगिंदियवज्जो तियभंगो। तेऊलेस्साए पुढविआउवणस्सइकाइयाणं छब्भंगा, सेसाणं जीवाइओ तिय-भंगो जेसिं अत्थि तेऊलेस्सा, पम्हलेस्साए सुक्कलेस्साए य जीवाइओ तियभंगो।

अलेस्सा जीवा मणुस्सा सिद्धा य एगत्तेण वि पुहुत्तेण वि नो आहारगा अणाहारगा।

—पण्ण० प २८। उ २। सू ११। पृ० ५०६-५१०

सलेशी कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी जीव (एकवचन) कदाचित् आहारक, कदाचित् अनाहारक होते हैं। इस प्रकार दंडक के सभी जीवों के विषय में जानना। जिसके जितनी लेश्या हो उतने पद कहने।

सलेशी जीव (बहुवचन)—औधिक तथा एकेन्द्रिय जीव मे एक भग होता है, यथा—आहारक भी होते हैं, अनाहारक भी होते हैं। क्योंकि ये दोनो प्रकार के जीव

सदा अनेकों होते हैं। इनके सिवाय अन्यों में तीन भंग होते हैं। यथा—(१) सब आहारक, (२) अनेक आहारक तथा एक अनाहारक, (३) अनेक आहारक, अनेक अनाहारक होते हैं। कृष्णलेशी, नीललेशी तथा कापोतलेशी जीव (बहुवचन) को भी सलेशी जीव (बहुवचन) की तरह जानना। तेजोलेशी पृथ्वीकायिक, अप्कायिक तथा वनस्पतिकायिक जीव (बहुवचन) में छः भंग होते हैं। यथा —(१) सर्व आहारक, (२) सर्व अनाहारक, (३) एक आहारक तथा एक अनाहारक, (४) एक आहारक तथा अनेक अनाहारक, (५) अनेक आहारक तथा एक अनाहारक, (६) अनेक आहारक तथा अनेक अनाहारक। अवशेष तेजोलेशी जीव (बहुवचन) के तीन भंग जानना। पद्मलेशी, शुक्ललेशी जीवों—औधिक जीव, तीर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य, वैमानिक देवों में तीन भंग जानना।

अलेशी जीव, अलेशी मनुष्य, अलेशी सिद्ध (एकवचन तथा बहुवचन) आहारक नहीं हैं, अनाहारक होते हैं।

---

८४ सलेशी जीव के भेद :—

८४ १ दो भेद :—

सलेसे णं भंते। सलेस्सेत्ति पुच्छा ? गोयमा। सलेस्से दुविहे पन्नत्ते। तं-जहा—अणाइए वा अपज्जवसिए, अणाइए वा सपज्जवसिए।

—पण्ण० प १८। द्वा ८। सू ६। पृ० ४५६

सलेशी जीव सलेशीत्व की अपेक्षा से दो प्रकार के होते हैं—(१) अनादि अपर्यवसित, तथा (२) अनादि सपर्यवसित।

८४ २ छः भेद :—

कृष्णलेश्या की अपेक्षा सलेशी जीव के छः भेद भी होते हैं। यथा—कृष्णलेशी, नील-लेशी, कापोतलेशी, तेजोलेशी, पद्मलेशी तथा शुक्ललेशी।

---

८५ सलेशी क्षुद्रयुग्म जीव :—

[युग्म शब्द से टीकाकार अभयदेव सूरि ने 'राशि' अर्थ लिया है—'युग्मशब्देन राशयो विवक्षिताः'। राशि की समता-विषमता की अपेक्षा युग्म चार प्रकार का होता है, यथा—कृतयुग्म, त्र्योज, द्वापरयुग्म तथा कल्योज। जिस राशि में चार का भाग देने से शेष चार

बचे उस राशि को कृतयुग्म कहते हैं, जिस राशि मे चार का भाग देने से तीन बचे उसको त्र्योज कहते हैं, जिस राशि में चार का भाग देने से दो बचे उसको द्वापरयुग्म कहते हैं तथा जिस राशि में चार का भाग देने से एक बचे उसको कल्योज कहते हैं।

अन्य अपेक्षा से भगवती सूत्र मे तीन प्रकार के युग्मो का विवेचन है, यथा—क्षुद्रयुग्म, (श ३१, ३२), महायुग्म (श ३५ से ४०) तथा राशियुग्म (श ४१)। सामान्यतः छोटी संख्या वाली राशि को क्षुद्रयुग्म कहा जा सकता है। इसमे एक से लेकर असंख्यात तक की संख्या निहित है। महायुग्म बृहद् संख्या वाली राशि का द्योतक है तथा इसमे पाँच से लेकर अनंत तक की संख्या निहित है तथा इसमें गणना के समय और संख्या दोनो के आधार पर राशि का निर्धारण होता है। राशियुग्म इन दोनो को सम्मिलित करती हुई संख्या होनी चाहिए तथा इसमें एक से लेकर अनत तक की संख्या निहित है।

क्षुद्रयुग्म मे केवल नारकी जीवो का अट्ठारह पदों से विवेचन है। महायुग्म में इन्द्रियो के आधार पर सर्व जीवों (एकेन्द्रिय से पचेन्द्रिय) का तैतीस पदो से विवेचन है। राशि-युग्म में जीव-दंडक के क्रम से जीवों का तेरह पदो से विवेचन है।]

इस प्रकरण में क्षुद्रयुग्मराशि नारकी जीवो का नौ उपपात के तथा नौ उद्वर्तन (मरण) के पदो से विवेचन किया गया है; तथा विस्तृत विवेचन औघिक क्षुद्रकृतयुग्म नारकी के पद मे है। अवशेष तीन युग्मों में इसकी भुलावण है तथा जहाँ भिन्नता है वहाँ भिन्नता बतलाई गई है। इसमे भग० श २५। उ ८ की भी भुलावण है।

(१) कहाँ से उपपात, (२) एक समय मे कितने का उपपात, (३) किस प्रकार से उपपात, (४) उपपात की गति की शीघ्रता, (५) परभव-आयु के बध का कारण, (६) पर-भव-गति का कारण, (७) आत्मऋद्धि या परऋद्धि से उपपात, (८) आत्मकर्म या परकर्म से उपपात, (९) आत्मप्रयोग या परप्रयोग से उपपात।

इस प्रकार उद्वर्तन (मरण) के भी उपर्युक्त नौ अभिलाप समझने।

औघिक, भवसिद्धिक, अभवसिद्धिक, समदृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सममिथ्यादृष्टि, कृष्ण-पाक्षिक, शुक्लपाक्षिक नारकी जीवो का चार क्षुद्रयुग्मो से तथा चार-चार उद्देशक से विवेचन किया गया है। हमने यहाँ पर लेश्या विशेषण सहित पाठो का संकलन किया है।

'८५'१ सलेशी क्षुद्रयुग्म नारकी का उपपात :—

कण्हलेस्सखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते। कओ उववज्जंति० ? एवं चेव जहा ओहियगमो जाव नो परप्पओगेण उववज्जंति। नवरं उववाओ जहा वक्कंतीए। धूमप्पभापुढविनेरइया ण सेसं तं चेव (तहेव)। धूमप्पभापुढविकण्हलेस्सखुड्डागकड-

जुम्मनेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ? एवं चेव निरवसेसं, एवं तमाए वि, अहेसत्तमाए वि। नवरं उववाओ सव्वत्थ जहा वक्कंतीए। कण्हलेस्सखुड्डागतेओग-नेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति० ? एवं चेव, नवरं तिन्नि वा सत्त वा एक्कारस वा पन्नरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा, सेसं तं चेव। एवं जाव अहेसत्तमाए वि। कण्हलेस्सखुड्डागदावरजुम्मनेरइया णं भंते। कओ उववज्जंति० ? एवं चेव। नवरं दो वा छ वा दस वा चोद्दस वा, सेसं तं चेव, (एवं) धूमप्पभाए वि जाव अहेसत्तमाए। कण्हलेस्सखुड्डागकलिओगनेरइया णं भंते। कओ उववज्जंति० ? एवं चेव। नवरं एक्को वा पंच वा नव वा तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा, सेसं तं चेव। एवं धूमप्पभाए वि, तमाए वि, अहेसत्तमाए वि।

नीललेस्सखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते। कओ उववज्जंति० ? एवं जहेव कण्हलेस्सखुड्डागकडजुम्मा। नवरं उववाओ जो वालुयप्पभाए, सेसं तं चेव। वालुयप्पभापुढविनीललेस्सखुड्डागकडजुम्मनेरइया एवं चेव, एवं पंकप्पभाए वि, एवं धूमप्पभाए वि। एवं चउसु वि जुम्मेसु। नवरं परिमाणं जाणियव्वं। परिमाणं जहा कण्हलेस्सउद्देसए। सेसं तहेव।

काऊलेस्सखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते। कओ उववज्जंति० ? एवं जहेव कण्हलेस्सखुड्डागकडजुम्मनेरइया नवरं उववाओ जो रयणप्पभाए, सेसं तं चेव। रयणप्पभापुढविकाऊलेस्सखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते। कओ उववज्जंति० ? एवं चेव। एवं सक्करप्पभाए वि, एवं वालुयप्पभाए वि। एवं चउसु वि जुम्मेसु। नवरं परिमाणं जाणियव्वं, परिमाणं जहा कण्हलेस्सउद्देसए, सेसं तं चेव।

—भग० श ३१। उ २ से ४। पृ० ६११-१२

कृष्णलेशी क्षुद्रकृतयुग्म नारकी का उपपात प्रज्ञापना सूत्र के व्युत्क्रान्तिपद से जानना। वे एक समय में चार अथवा आठ अथवा बारह अथवा सोलह अथवा संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न होते हैं तथा वे किस प्रकार उत्पन्न होते हैं आदि अवशेष के सात पद से जहानामए पवए × × × जाव नो परप्पयोगेण उववज्जंति (भग० श २५। उ ८) से जानना। धूमप्रभा पृथ्वी, तमप्रभा पृथ्वी तथा तमतमाप्रभा पृथ्वी के कृष्णलेशी क्षुद्रकृतयुग्म नारकी के सम्बन्ध में कहाँ से उत्पन्न, एक समय में कितने उत्पन्न तथा किस प्रकार उत्पन्न आदि नौ पदों के सम्बन्ध में ऐसा ही कहना परन्तु उपपात सर्वत्र प्रज्ञापना के व्युत्क्रान्तिपद के अनुसार कहना।

कृष्णलेशी क्षुद्रत्र्योज नारकी के सम्बन्ध में नौ पदों में ऐसा ही कहना, परन्तु एक समय में तीन अथवा सात अथवा ग्यारह अथवा पन्द्रह अथवा संख्यात अथवा असंख्यात

उत्पन्न होते हैं। धूमप्रभा, तमप्रभा, तमतमाप्रभा पृथ्वी के कृष्णलेशी क्षुद्रत्र्योज नारकी के विषय में भी इसी प्रकार जानना।

कृष्णलेशी क्षुद्रद्वापरयुग्म नारकी के सम्बन्ध मे नौ पदो में ऐसा ही कहना परन्तु एक समय में दो अथवा छः अथवा दस अथवा चौदह अथवा संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न होते हैं। धूमप्रभा यावत् तमतमाप्रभा पृथ्वी के कृष्णलेशी क्षुद्रद्वापरयुग्म नारकी के विषय मे ऐसा ही कहना।

कृष्णलेशी क्षुद्रकल्योज नारकी के सम्बन्ध मे नौ पदो मे ऐसा ही कहना परन्तु एक समय मेंए क अथवा पॉच अथवा नौ अथवा तेरह अथवा सख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न होते है। इसी प्रकार धूमप्रभा, तमप्रभा, तमतमाप्रभा पृथ्वी के कृष्णलेशी क्षुद्रकल्योजयुग्म नारकी के सम्बन्ध मे कहना।

नीललेशी क्षुद्रकृतयुग्म नारकी के सम्बन्ध में जैसा कृष्णलेशी क्षुद्रकृतयुग्म नारकी के उद्देशक में कहा वैसा ही कहना, लेकिन उपपात वालुकाप्रभा मे जैसा हो वैसा कहना। वालुकाप्रभा पृथ्वी के नीललेशी क्षुद्रकृतयुग्म नारकी के सम्बन्ध में भी ऐसा ही कहना। इसी प्रकार पकप्रभा तथा धूमप्रभा पृथ्वी के नीललेशी क्षुद्रकृतयुग्म नारकी के सम्बन्ध में जानना। परन्तु उपपात की भिन्नता जाननी। इसी प्रकार बाकी तीनों युग्मों मे जानना। लेकिन परिमाण की भिन्नता कृष्णलेशी उद्देसक से जाननी।

कापोतलेशी क्षुद्रकृतयुग्म नारकी के सम्बन्ध में जैसा कृष्णलेशी क्षुद्रकृतयुग्म नारकी के उद्देशक में कहा वैसा ही कहना लेकिन उपपात रत्नप्रभा में जैसा हो वैसा ही कहना। रत्नप्रभा पृथ्वी के कापोतलेशी क्षुद्रकृतयुग्म नारकी के सम्बन्ध मे भी ऐसा ही कहना। इसी प्रकार शर्कराप्रभा तथा वालुकाप्रभा पृथ्वी के कापोतलेशी क्षुद्रकृतयुग्म नारकी के सम्बन्ध में भी कहना परन्तु उपपात की भिन्नता जाननी। इसी प्रकार बाकी तीनों युग्मों मे जानना लेकिन परिमाण की भिन्नता कृष्णलेशी उद्देशक से जाननी।

कण्हलेस्सभवसिद्धियखुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति० ? एवं जहेव ओहिओ कण्हलेस्सउद्देसओ तहेव निरवसेसं चउसु वि जुम्मेसु भाणियव्वो, जाव अहेसत्तमपुढविकण्हलेस्स(भवसिद्धिय)खुड्डागकलिओगनेरइया ण भंते। कओ उववज्जंति० ? तहेव।

नीललेस्सभवसिद्धिया चउसु वि जुम्मेसु तहेव भाणियव्वा जहा ओहिए नीललेस्सउद्देसए।

काऊलेस्सभवसिद्धिया चउसु वि जुम्मेसु तहेव उववाएयव्वा जहेव ओहिए काऊलेस्सउद्देसए।

जहा भवसिद्धिएहिं चत्तारि उद्देसगा भणिया एवं अभवसिद्धिएहिं वि चत्तारि उद्देसगा भाणियव्वा जाव काऊलेस्सा उद्देसओ त्ति।

एवं सम्मदिट्ठीहि वि लेस्सासंजुत्तेहिं चत्तारि उद्देसगा कायव्वा, नवरं सम्मदिट्ठी पढमबिइएसु वि दोसु वि उद्देसएसु अहेसत्तमापुढवीए न उववाएयव्वो, सेसं तं चेव।

मिच्छादिट्ठीहि वि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा जहा भवसिद्धियाणं।

एवं कण्हपक्खिएहि वि लेस्सासंजुत्तेहिं चत्तारि उद्देसगा कायव्वा जहेव भवसिद्धिएहिं।

सुक्कपक्खिएहिं एवं चेव चत्तारि उद्देसगा भाणियव्वा। जाव वालुयप्पभा-पुढविकाऊलेस्ससुक्कपक्खियखुड्डागकलिओगनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति० ? तहेव जाव नो परप्पयोगेण उववज्जंति।

—भग० श ३१। उ ६ से २८। पृ० ६९२

कृष्णलेशी भवसिद्धिक क्षुद्रकृतयुग्म नारकी के सम्बन्ध में जैसा औधिक कृष्णलेशी उद्देशक में कहा वैसा ही निरवशेष चारों युग्मों में कहना। कृष्णलेशी भवसिद्धिक क्षुद्रकृत युग्म धूमप्रभा नारकी यावत् कृष्णलेशी भवसिद्धिक कल्योज तमतमाप्रभा नारकी तक नौ पदों में कृष्णलेशी औधिक उद्देशक की तरह कहना।

नीललेशीभवसिद्धिक के चारों युग्म उद्देशक वैसे ही कहने जैसे औधिक नीललेशी युग्म उद्देशक कहे।

कापोतलेशी भवसिद्धिक के चारों युग्म उद्देशक वैसे ही कहने जैसे औधिक कापोत-लेशी युग्म उद्देशक कहे।

जैसे भवसिद्धिक के चार उद्देशक कहे वैसे ही अभवसिद्धिक के चार उद्देशक (औधिक, कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी) जानने।

इसी प्रकार समदृष्टि के लेश्या सयोग से चार उद्देशक जानने। लेकिन समदृष्टि के प्रथम-द्वितीय उद्देशक में तमतमाप्रभा पृथ्वी में उपपात न कहना।

मिथ्यादृष्टि के भी लेश्या सयोग से चार उद्देशक भवसिद्धिक की तरह जानने।

इसी प्रकार कृष्णपाक्षिक के लेश्या सयोग से चार उद्देशक भवसिद्धिक की तरह कहने।

इसी प्रकार शुक्लपाक्षिक के भी चार उद्देशक कहने। यावत वालुकाप्रभा पृथ्वी के कापोतलेशी शुक्लपाक्षिक क्षुद्रकल्योज नारकी कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं यावत परप्रयोग से उत्पन्न नहीं होते हैं—तक जानना।

८५.२ सलेशी क्षुद्रयुग्म नारकी का उद्वर्तन :—

खुड्डागकडजुम्मनेरइया णं भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छंति, कहिं उववज्जंति ? किं नेरइएसु उववज्जंति ? तिरिक्खजोणिएसु उववज्जंति० ? उव्वट्टणा जहा वक्कंतीए।

ते ण भंते ! जीवा एगसमएण केवइया उव्वट्टंति ? गोयमा ! चतारि वा अट्ठ वा बारस वा सोलस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उव्वट्टंति।

ते णं भंते ! जीवा कहं उव्वट्टंति ? गोयमा ! से जहा नामए पवए—एवं तहेव। एवं सो चेव गमओ जाव आयप्पओगेणं उव्वट्टंति, नो परप्पओगेणं उव्वट्टंति।

रयणप्पभापुढविखुड्डागकड० ? एवं रयणप्पभाए वि, एवं जाव अहेसत्तमाए (वि)। एवं खुड्डागतेओगखुड्डागदावरजुम्मखुड्डागकलिओगा। नवरं परिमाणं जाणियव्वं, सेसं तं चेव।

कण्हलेस्सकडजुम्मनेरइया—एवं एएणं कमेणं जहेव उववायसए अट्ठावीसं उद्देसगा भाणिया तहेव उव्वट्टणासए वि अट्ठावीसं उद्देसगा भाणियव्वा निरवसेसा। नवरं 'उव्वट्टंति' त्ति अभिलावो भाणियव्वो, सेसं तं चेव।

—भग० श ३२। पृ० ९१२-१३

८५.१ मे जैसे उपपात के २८ उद्देशक कहे उसी प्रकार उद्वर्तन के २८ उद्देशक कहने लेकिन उपपात के स्थान पर उद्वर्तन कहना।

---

८६ सलेशी महायुग्म जीव :—

[इस प्रकरण में महायुग्म राशि जीवों का विवेचन किया गया है। महायुग्म राशि के सोलह भेद होते हैं, यथा—(१) कृतयुग्म कृतयुग्म, (२) कृतयुग्म त्र्योज, (३) कृतयुग्म द्वापरयुग्म, (४) कृतयुग्म कल्योज, (५) त्र्योज कृतयुग्म, (६) त्र्योज त्र्योज, (७) त्र्योज द्वापरयुग्म, (८) त्र्योज कल्योज, (९) द्वापरयुग्म कृतयुग्म, (१०) द्वापरयुग्म त्र्योज, (११) द्वापरयुग्म द्वापरयुग्म, (१२) द्वापरयुग्म कल्योज, (१३) कल्योज कृतयुग्म, (१४) कल्योज त्र्योज, (१५) कल्योज द्वापरयुग्म तथा (१६) कल्योज कल्योज। महायुग्म के सोलह भेद राशि (सख्या) तथा अपहार समय की अपेक्षा से किये गये हैं। जिस राशि में से प्रति-समय चार-चार घटाते-घटाते शेष मे चार बाकी रहे तथा घटाने के समयो में से भी चार-

चार घटाते-घटाते चार बाकी रहे वह कृतयुग्म-कृतयुग्म कहलाता है क्योंकि घटानेवाले द्रव्य तथा समय की अपेक्षा दोनों रीति से कृतयुग्म रूप है। सोलह की संख्या जघन्य कृतयुग्म-कृतयुग्म राशि रूप है। उसमें से प्रति समय चार घटाते-घटाते शेष में चार बचते हैं तथा घटाने के समय भी चार होते हैं अथवा उन्नीस की संख्या में प्रति समय चार घटाते-घटाते शेष में तीन शेष रहते हैं तथा घटाने के समय चार लगते हैं। अतः १९ की संख्या जघन्य कृतयुग्म त्र्योज कहलाती है। इसी प्रकार अन्य भेद जान लेने चाहियें।]

यहाँ पर महायुग्म राशि एकेन्द्रिय यावत् पंचेन्द्रिय जीवों का निम्नलिखित ३३ पदों से विवेचन किया गया है तथा विस्तृत विवेचन कृतयुग्म कृतयुग्म एकेन्द्रिय के पद में है, अवशेष महायुग्म पदों में इसकी भुलावण है तथा जहाँ भिन्नता है वहाँ भिन्नता बतलाई गई है। स्थान-स्थान पर उत्पल उद्देशक (भग० श ११। उ १) की भुलावण है।

(१) कहाँ से उपपात, (२) उपपात संख्या, (३) जीवों की संख्या, (४) अवगाहना, (५) बंधक-अबन्धक, (६) वेदक-अवेदक, (७) उदय-अनुदय, (८) उदीरक-अनुदीरक (९) लेश्या, (१०) दृष्टि, (११) ज्ञानी-अज्ञानी, (१२) योगी, (१३) उपयोगी, (१४) शरीर के वर्ण-गंध-रस-स्पर्शों, आत्मा की अपेक्षा अवर्णों आदि, (१५) उच्छ्वासक-निःश्वासक, (१६) आहारक अनाहारक, (१७) विरत-अविरत, (१८) सक्रिय अक्रिय, (१९) कर्म-सप्ताबंधक, (२०) संज्ञोपयोगी, (२१) कषायी, (२२) वेदक (लिंग), (२३) वेदबन्धक, (२४) संज्ञी असंज्ञी, (२५) इन्द्रिय-अनिन्द्रिय, (२६) अनुबन्धकाल, (२७) आहार, (२८) संवेध, (२९) स्थिति, (३०) समुद्घात, (३१) समवहत, (३२) उद्वर्तन, (३३) अनन्तखुत्तो।

सोलह महायुग्मों में प्रत्येक महायुग्म के जीवों के सम्बन्ध में ११ अपेक्षाओं से ११ उद्देशक कहे गये हैं। प्रत्येक उद्देशक में उपर्युक्त ३३ पदों का विवेचन है। ११ अपेक्षाएं इस प्रकार हैं—

(१) औघिक रूप से, (२) प्रथम समय के, (३) अप्रथम समय के, (४) चरम समय के, (५) अचरम समय के, (६) प्रथम प्रथम समय के, (७) प्रथम-अप्रथम समय के, (८) प्रथम-चरम समय के, (९) प्रथम-अचरम समय के, (१०) चरम-चरम समय के तथा (११) चरम-अचरम समय के।

भवसिद्धिक तथा अभवसिद्धिक जीवों का उपर्युक्त सोलह महायुग्मों में तथा ग्यारह अपेक्षाओं से विवेचन किया गया है। हमने यहाँ पर लेश्या विशेषण सहित पाठों का ही संकलन किया है।

'८६'१ सलेशी महायुग्म एकेन्द्रिय जीव :—

(कडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया) ते ण भंते ! जीवा किं कण्हलेस्सा० पुच्छा ? गोयमा ! कण्हलेस्सा वा, नीललेस्सा वा, काऊलेस्सा वा, तेऊलेस्सा वा । × × × एवं एएसु सोलससु महाजुम्मेसु एक्को गमओ ।

—भग० श ३५ । श १ । उ १ । प्र ६, १६ । पृ० ६२६-२७

कृतयुग्मकृतयुग्म एकेन्द्रिय जीवों मे कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या—ये चार लेश्याएँ होती हैं। इसी प्रकार सोलह महायुग्मो में चार लेश्याएँ होती हैं।

एवं एए (ण कमेणं) एक्कारस उद्देसगा ।

—भग० श ३५ । श १ । उ ११ । प्र ६ । पृ० ६२६

इसी क्रम से निम्नलिखित ग्यारह उद्देशक कहने। ग्यारह उद्देशक इस प्रकार हैं—

(१) कृतयुग्मकृतयुग्म, (२) पढमसमयकृतयुग्मकृतयुग्म, (३) अपढमसमय०, (४) चरमसमय०, (५) अचरमसमय०, (६) प्रथम-प्रथमसमय०, (७) प्रथमअप्रथमसमय०, (८) प्रथमचरमसमय०, (६) प्रथमअचरमसमय०, (१०) चरमचरमसमय० तथा (११) चरमअचरमसमय० ।

इन ग्यारह उद्देशको मे प्रत्येक उद्देशक मे सोलह महायुग्म कहने।

पढमो तइओ पंचमओ य सरिसगमा, सेसा अट्ठ सरिसगमगा । नवरं चउत्थे छट्ठे अट्ठमे दसमे य देवा न उववज्जंति, तेऊलेस्सा नत्थि ।

—भग० श ३५ । श१ । उ ११ । प्र ६ । पृ० ६२६

पहले, तीसरे, पाँचवे उद्देशक का एक सरीखा गमक होता है तथा बाकी आठ का एक सरीखा गमक होता है। चौथे, छट्ठे, आठवें तथा दशवें गमक मे कृष्ण-नील-कापोतलेश्या होती है, तेजोलेश्या नही होती है। बाकी के उद्देशको में कृष्ण-नील-कापोत-तेजो ये चारो लेश्याएँ होती हैं।

नोट :—यद्यपि उपरोक्त पाठ से छट्ठे उद्देशक मे तेजोलेश्या नही ठहरती है छट्ठे उद्देशक मे जो भुलावण है उसके अनुसार [illegible] देशक में चारों ले[illegible] चाहियें। प्रवीण व्यक्ति इस पर विचार करें।

कण्हलेस्सकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया, [illegible] उववज्जंति० [illegible] उववाओ तहेव, एवं जहा ओहिउद्देसए [illegible] —ते ण [illegible] कण्हलेस्सा ? हंता कण्हलेस्सा ।

ते ण भंते ! [illegible] कालओ [illegible] गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्को[illegible] जाव अणंतखुत्तो । एवं सोलस वि जु[illegible]

पढमसमयकण्हलेस्सकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति० ? जहा पढमसमयउद्देसओ। नवरं ते णं भंते ! जीवा कण्हलेस्सा ? हंता कण्हलेस्सा, सेसं तं चेव।

एवं जहा ओहियसए एक्कारस उद्देसगा भणिया तहा कण्हलेस्ससए वि एक्कारस उद्देसगा भाणियव्वा। पढमो तइओ पंचमो य सरिसगमा, सेसा अट्ठ वि सरिसगमा। नवरं चउत्थ-छट्ठ-अट्ठम-दसमेसु उववाओ नत्थि देवस्स।

एवं नीललेस्सेहि वि सयं कण्हलेस्ससयसरिसं, एक्कारस उद्देसगा तहेव।

एवं काऊलेस्सेहि वि सयं कण्हलेस्ससयसरिसं।

—भग० श ३५ । श २ से ४ । पृ० ६२६

कृष्णलेशी कृतयुग्म-कृतयुग्म एकेन्द्रिय का उपपात औधिक उद्देशक (भग० श ३५ । श १ । उ १) की तरह जानना। लेकिन भिन्नता यह है कि वे कृष्णलेशी हैं। वे कृष्णलेशी नयुग्म एकेन्द्रिय जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक होते हैं। इसी प्रकार ... मे जानना। बाकी सब यावत् पूर्व मे अनंत बार उत्पन्न हुए हैं—यहाँ ... सोलह युग्म कहने।

...लेशी कृतयुग्म-कृतयुग्म एकेन्द्रिय का उपपात प्रथम समय के ... श १ । उ २) की तरह जानना। लेकिन वे कृष्णलेशी हैं बाकी ... प्रकार औधिक शतक मे ग्यारह उद्देशक कहे वैसे ही कृष्ण-... शक कहने। पहले, तीसरे, पाँचवे के गमक एक समान हैं। ... हैं। लेकिन चौथे, छट्ठे, आठवे, दसवें उद्देशक में देवों

महायुग्म शतक के कृष्णलेशी एकेन्द्रिय महायुग्म शतक के समान

... महायुग्म शतक के कृष्णलेशी एकेन्द्रिय महायुग्म शतक के ...

कडजु... कड... ...िंदिया णं भंते ! कओ (...िंतो)

... ...िंदिएहि वि सयं बिइयसयकण्हलेस्ससरिसं

...हि वि सयं।

...िंदिएहि वि तहेव एक्कारसउद्देसगसंजुत्तं सयं।

... । चउसु वि सएसु सव्वे पाणा जाव उववन्न-

'८६'१ सलेशी महायुग्म एकेन्द्रिय जीव :—

(कडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया) ते ण भंते। जीवा किं कण्हलेस्सा० पुच्छा ? गोयमा ! कण्हलेस्सा वा, नीललेस्सा वा, काऊलेस्सा वा, तेऊलेस्सा वा। ××× एवं एएसु सोलससु महाजुम्मेसु एक्को गमओ।

—भग० श ३५ । श १ । उ १ । प्र ६, १६ । पृ० ६२६-२७

कृतयुग्मकृतयुग्म एकेन्द्रिय जीवों मे कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या— ये चार लेश्याएँ होती हैं। इसी प्रकार सोलह महायुग्मो में चार लेश्याएँ होती हैं।

एवं एए (णं कमेणं) एक्कारस उद्देसगा।

—भग० श ३५ । श १ । उ ११ । प्र ६ । पृ० ६२६

इसी क्रम से निम्नलिखित ग्यारह उद्देशक कहने। ग्यारह उद्देशक इस प्रकार हैं—

(१) कृतयुग्मकृतयुग्म, (२) पढमसमयकृतयुग्मकृतयुग्म, (३) अपढमसमय०, (४) चरमसमय०, (५)अचरमसमय०,(६) प्रथम-प्रथमसमय०,(७)प्रथमअप्रथमसमय०, (८) प्रथमचरमसमय०, (६) प्रथमअचरमसमय०, (१०) चरमचरमसमय० तथा (११) चरमअचरमसमय०।

इन ग्यारह उद्देशकों में प्रत्येक उद्देशक मे सोलह महायुग्म कहने।

पढमो तइओ पंचमओ य सरिसगमा, सेसा अट्ठ सरिसगमगा। नवर चउत्थे छट्ठे अट्ठमे दसमे य देवा न उववज्जंति, तेऊलेस्सा नत्थि।

—भग० श ३५ । श१ । उ ११ । प्र ६ । पृ० ६२६

पहले, तीसरे, पाँचवे उद्देशक का एक सरीखा गमक होता है तथा बाकी आठ का एक सरीखा गमक होता है। चौथे, छट्ठे, आठवें तथा दशवें गमक मे कृष्ण-नील-कापोतलेश्या होती है, तेजोलेश्या नही होती है। बाकी के उद्देशको में कृष्ण-नील-कापोत-तेजो ये चारों लेश्याएँ होती हैं।

नोट :—यद्यपि उपरोक्त पाठ से छट्ठे उद्देशक मे तेजोलेश्या नही ठहरती है लेकिन छट्ठे उद्देशक मे जो भुलावण है उसके अनुसार इस उद्देशक में चारों लेश्याएँ होनी चाहियें। प्रवीण व्यक्ति इस पर विचार करें।

कण्हलेस्सकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया ण भंते ! कओ उववज्जंति० ? गोयमा ! उववाओ तहेव, एवं जहा ओहिउद्देसए। नवरं इमं नाणत्तं—ते णं भंते ! जीवा कण्हलेस्सा ? हंता कण्हलेस्सा।

ते ण भंते। 'कण्हलेस्सकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिय' त्ति कालओ केवच्चिरं होइ ? गोयमा। जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेण अंतोमुहुत्तं। एवं ठिईए वि। सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो। एवं सोलस वि जुम्मा भाणियव्वा।

पढमसमयकण्हलेस्सकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया ण भंते ! कओ उववज्जंति० ? जहा पढमसमयउद्देसओ। नवरं ते ण भते ! जीवा कण्हलेस्सा ? हंता कण्हलेस्सा, सेसं तं चेव।

एवं जहा ओहियसए एक्कारस उद्देसगा भणिया तहा कण्हलेस्ससए वि एक्कारस उद्देसगा भाणियव्वा। पढमो तइओ पंचमो य सरिसगमा, सेसा अट्ठ वि सरिस-गमा। नवरं चउत्थ-छट्ठ-अट्ठम-दसमेसु उववाओ नत्थि देवस्स।

एवं नीललेस्सेहि वि सयं कण्हलेस्ससयसरिसं, एक्कारस उद्देसगा तहेव।

एवं काऊलेस्सेहि वि सयं कण्हलेस्ससयसरिसं।

—भग० श ३५। श २ से ४। पृ० ६२६

कृष्णलेशी कृतयुग्म-कृतयुग्म एकेन्द्रिय का उपपात औघिक उद्देशक (भग० श ३५। श १। उ १) की तरह जानना। लेकिन भिन्नता यह है कि वे कृष्णलेशी हैं। वे कृष्णलेशी कृतयुग्म-कृतयुग्म एकेन्द्रिय जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक होते हैं। इसी प्रकार स्थिति के सम्बन्ध मे जानना। बाकी सब यावत् पूर्व मे अनत बार उत्पन्न हुए हैं—वहाँ तक जानना। इसी प्रकार सोलह युग्म कहने।

प्रथमसमय के कृष्णलेशी कृतयुग्म-कृतयुग्म एकेन्द्रिय का उपपात प्रथम समय के उद्देशक (भग० श ३५। श १। उ २) की तरह जानना। लेकिन वे कृष्णलेशी है बाकी सब वैसे ही जानना। जिस प्रकार औघिक शतक मे ग्यारह उद्देशक कहे वैसे ही कृष्ण-लेशी शतक मे भी ग्यारह उद्देशक कहने। पहले, तीसरे, पाँचवे के गमक एक समान हैं। बाकी आठ के गमक एक समान है। लेकिन चौथे, छट्टे, आठवे, दशवें उद्देशक में देवो का उपपात नही होता है।

नीललेशी एकेन्द्रिय महायुग्म शतक के कृष्णलेशी एकेन्द्रिय महायुग्म शतक के समान ग्यारह उद्देशक कहने।

कापोतलेशी एकेन्द्रिय महायुग्म शतक के कृष्णलेशी एकेन्द्रिय महायुग्म शतक के समान ग्यारह उद्देशक कहने।

कण्हलेस्सभवसिद्धियकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया ण भंते। कओ (हिंतो) उववज्जंति० ? एवं कण्हलेस्सभवसिद्धियएगिंदिएहि वि सयं बिइयसयकण्हलेस्ससरिसं भाणियव्वं।

एवं नीललेस्सभवसिद्धियएगिंदियएहि वि सयं।

एवं काऊलेस्सभवसिद्धियएगिंदियएहि वि तहेव एक्कारसउद्देसगसंजुत्तं सयं। एवं एयाणि चत्तारि भवसिद्धियसयाणि। चउसु वि सएसु सव्वे पाणा जाव उववन्न-पुव्वा ? नो इणट्ठे समट्ठे।

जहा भवसिद्धिएहिं चत्तारि सयाइं भणियाइं एवं अभवसिद्धिएहि वि चत्तारि सयाणि लेस्सासंजुत्ताणि भाणियव्वाणि। सव्वे पाणा० तहेव नो इणट्ठे समट्ठे। एवं एयाइं बारस एगिंदियमहाजुम्मसयाइं भवंति।

—भग० श ३५। श ६ से १२। पृ० ६२६-३०

कृष्णलेशी भवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्म एकेन्द्रिय के सम्बन्ध में भी दूसरे उद्देशक में वर्णित कृष्णलेशी शतक की तरह कहना।

इसी प्रकार नीललेशी भवसिद्धिक एकेन्द्रिय के सम्बन्ध में भी शतक कहना। तथा कापोतलेशी भवसिद्धिक एकेन्द्रिय के सम्बन्ध मे भी एकादश उद्देशक सहित—ऐसा ही शतक कहना। इसी प्रकार चार भवसिद्धिक शतक भी जानना। तथा चारो भवसिद्धिक शतको में—सर्व प्राणी यावत् पूर्व में अनंत वार उत्पन्न हुए हैं—इस प्रश्न के उत्तर में 'यह सम्भव नही'—ऐसा कहना।

जैसे भवसिद्धिक के चार शतक कहे वैसे ही अभवसिद्धिक के भी चार शतक लेश्या-सहित कहने। इनमें भी सर्व प्राणी यावत् सर्व सत्त्व पूर्व मे अनंत वार उत्पन्न हुए हैं—इस प्रश्न के उत्तर मे 'यह सम्भव नही' ऐसा कहना।

'८६'२ सलेशी महायुग्म द्वीन्द्रिय जीव :—

कडजुम्मकडजुम्मबेंदिया णं भंते। (कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ ?) ××× तिन्नि लेस्साओ। ××× एवं सोलससु वि जुम्मेसु।

—भग० श ३६। श १। उ १। प्र १-२। पृ० ६३०

कृतयुग्म-कृतयुग्म द्वीन्द्रिय में कृष्ण-नील-कापोत ये तीन लेश्याएँ होती हैं। इसी प्रकार सोलह महायुग्मों में कहना।

कण्हलेस्सकडजुम्मकडजुम्मबेइंदिया णं भते। कओ उववज्जंति० ? एवं चेव। कण्हलेस्सेसु वि एक्कारसउद्देसगसंजुत्तं सयं। नवरं लेस्सा, संचिट्ठणा, ठिई जहा एगिंदियकण्हलेस्साणं।

एवं नीललेस्सेहि वि सयं।

एवं काऊलेस्सेहि वि।

भवसिद्धियकडजुम्मकडजुम्मबेइंदिया ण भंते०। एवं भवसिद्धियसया वि चत्तारि तेणेव पुव्वगमएणं नेयव्वा। नवरं सव्वे पाणा० ? नो इणट्ठे समट्ठे। सेसं तहेव ओहियसयाणि चत्तारि।

जहा भवसिद्धियसयाणि चत्तारि एवं अभवसिद्धियसयाणि चत्तारि भाणिय-

व्वाणि। नवरं सम्मत्त-नाणाणि नत्थि, सेसं तं चेव। एवं एयाणि बारस बेइंदियमहा-जुम्मसयाणि भवंति।

—भग० श ३६। श २ से १२। पृ० ६३०-३१

कृष्णलेशी कृतयुग्म-कृतयुग्म द्वीन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध मे कृतयुग्म-कृतयुग्म औघिक द्वीन्द्रिय शतक की तरह ग्यारह उद्देशक सहित महायुग्म शतक कहना लेकिन लेश्या, कायस्थिति तथा आयु स्थिति एकेन्द्रिय कृष्णलेशी शतक की तरह कहने। इस प्रकार सोलह महायुग्म शतक कहने।

इसी प्रकार नीललेशी तथा कापोतलेशी शतक भी कहने।

भवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्म द्वीन्द्रिय के सम्बन्ध में भी पूर्व गमक की तरह अर्थात भवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्म एकेन्द्रिय शतक की तरह चार शतक कहने लेकिन सर्व प्राणी यावत् सर्व सत्त्व पूर्व में उत्पन्न हुए हैं—इस प्रश्न के उत्तर में 'यह सम्भव नहीं' ऐसा कहना।

भवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्म द्वीन्द्रिय के जैसे चार शतक कहे वैसे ही अभवसिद्धिक के भी चार शतक कहने। लेकिन सम्यक्त्व और ज्ञान नहीं होते हैं।

·८६ ३ सलेशी महायुग्म त्रीन्द्रिय जीव :—

कडजुम्मकडजुम्मतेइंदिया ण भंते! कओ उववज्जंति०? एवं तेइंदिएसु वि बारस सया कायव्वा बेइंदियसयसरिसा। नवरं ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेण तिन्नि गाउयाइं। ठिई जहन्नेण एक्कं समयं, उक्कोसेण एगूणवन्नं राइंदियाइं, सेसं तहेव।

—भग० श ३७। पृ० ६३१

महायुग्म द्वीन्द्रिय शतक की तरह औघिक, कृष्णलेशी, नीललेशी तथा कापोतलेशी महायुग्म त्रीन्द्रिय जीवों के भी औघिक, भवसिद्धिक तथा अभवसिद्धिक पदों मे बारह शतक कहने। लेकिन अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यात भाग की उत्कृष्ट तीन गाउ (क्रोश) प्रमाण की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट उनचास रात्रिदिवस की कहनी।

·८६ ४ सलेशी महायुग्म चतुरिन्द्रिय जीव —

चउरिंदिएहि वि एवं चेव बारस सया कायव्वा। नवरं ओगाहणा जहन्नेण अंगुलस्स असंखेज्जइभाग, उक्कोसेण चत्तारि गाउयाइं। ठिई जहन्नेण एक्कं समय, उक्कोसेण छम्मासा। सेस जहा बेइंदियाण।

—भग० श ३८। पृ० ६३२

महायुग्म द्वीन्द्रिय शतक की तरह महायुग्म चतुरिन्द्रिय के भी बारह शतक कहने लेकिन अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग की, उत्कृष्ट चारगाउ (कोश) प्रमाण की , स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट छः मास की कहनी। शेष पद सर्व द्वीन्द्रिय की तरह कहने।

·८६·५ सलेशी महायुग्म असज्ञी पंचेन्द्रिय जीव :—

कडजुम्मकडजुम्मअसन्निपंचिंदिया णं भंते! कओ उववज्जन्ति० ? जहा बेइंदियाणं तहेव असन्निसु वि बारस सया कायव्वा। नवरं ओगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं जोयणसहस्सं। संचिट्ठणा जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं पुव्वकोडिपुहुत्तं। ठिई जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं पुव्वकोडी, सेसं जहा बेइंदियाणं।

—भग० श ३६। पृ० ९३१

कृतयुग्म-कृतयुग्म द्वीन्द्रिय की तरह कृतयुग्म-कृतयुग्म असंज्ञी पंचेन्द्रिय के भी बारह शतक कहने। लेकिन अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग की, उत्कृष्ट एक हजार योजन की , कायस्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट प्रत्येक पूर्व क्रोड की तथा आयु-स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट पूर्व क्रोड की होती है। बाकी पद सर्व द्वीन्द्रिय शतक की तरह कहना।

·८६·६ सलेशी महायुग्म संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव :—

कडजुम्मकडजुम्मसन्निपंचिंदिया ण भंते! × × × (कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ)? कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा। × × × एवं सोलससु वि जुम्मेसु भाणियव्वं।

पढमसमयकडजुम्मकडजुम्मसन्निपंचिंदिया णं भंते! × × × (कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ)? कण्हलेस्सा वा जाव सुक्कलेस्सा वा। × × × एवं सोलससु वि जुम्मेसु।

एवं एत्थ वि एक्कारस उद्देसगा तहेव।

—भग० श ४०। श १। प्र २, ५, ६। पृ० ९३१,९३२

कृतयुग्म-कृतयुग्म संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों मे सोलह महायुग्मों में ही कृष्ण यावत् शुक्ल छः लेश्याएं होती हैं। प्रथमसमय कृतयुग्म-कृतयुग्म संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों में सोलह महायुग्मों में ही कृष्ण यावत् शुक्ल छः लेश्याएं होती हैं। इसी प्रकार प्रथमसमय यावत् चरम-अचरम समय उद्देशक तक छः लेश्याएं होती हैं ऐसा कहना।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

जहा तेऊलेसा सयं तहा पम्हलेस्सा सयं वि। नवरं संचिट्ठणा जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं। एवं ठिईए वि। नवरं अंतोमुहुत्तं न भन्नइ, सेसं तं चेव। एवं एएसु पंचसु सएसु जहा कण्हलेस्सा सए गमओ तहा नेयव्वो, जाव अणंतखुत्तो।

सुक्कलेस्ससयं जहा ओहियसयं। नवरं संचिट्ठणा ठिई य जहा कण्हलेस्ससए, सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो।

—भग० श ४०। श २ से ७। पृ० ६३२-३३

कृष्णलेशी कृतयुग्म-कृतयुग्म संज्ञी पंचेन्द्रिय कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं इत्यादि प्रश्न। जैसा कृतयुग्म-कृतयुग्म संज्ञी पंचेन्द्रिय उद्देशक मे कहा वैसा ही यहाँ जानना। लेकिन बंध, वेद, उदय, उदीरणा, लेश्या, बंधक, संज्ञा, कषाय तथा वेदबंधक—इन सबके सम्बन्ध में जैसा कृतयुग्म-कृतयुग्म द्वीन्द्रिय के पद में कहा वैसा ही कहना। कृष्णलेशी जीव तीनो वेद वाले होते हैं, अवेदी नहीं होते हैं। कायस्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट साधिक अन्तर्मुहूर्त तैंतीस सागरोपम की होती है। इसी प्रकार स्थिति के सम्बन्ध में जानना लेकिन स्थिति अन्तर्मुहूर्त अधिक न कहना। बाकी सब प्रथम उद्देशक में जैसा कहा वैसा ही यावत् 'अणंतखुत्तो' तक कहना। इसी प्रकार सोलह युग्मों में कहना।

प्रथम समय कृष्णलेशी कृतयुग्म-कृतयुग्म संज्ञी पचेन्द्रिय के सम्बन्ध में जैसा प्रथम समय के संज्ञी पंचेन्द्रिय के उद्देशक में कहा वैसा ही कहना लेकिन वे जीव कृष्णलेशी होते हैं। इसी प्रकार सोलह युग्मों में कहना। इस प्रकार कृष्णलेश्या शतक में भी ग्यारह उद्देशक कहना। पहला, तीसरा, पाँचवाँ—ये तीनउद्देशक एक समान गमक वाले हैं, शेष आठ उद्देशक एक समान गमक वाले हैं।

इसी प्रकार नीललेश्या वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवो के सम्बन्ध मे महायुग्म शतक कहना लेकिन कायस्थिति जघन्य एक समय, उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक दस सागरोपम की होती है। इसी प्रकार स्थिति के सम्बन्ध में जानना। पहला, तीसरा, पाँचवाँ—ये तीन उद्देशक एक समान गमक वाले हैं, शेप आठ उद्देशक एक समान गमक वाले हैं।

इसी प्रकार कापोतलेश्या वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में महायुग्म शतक कहना लेकिन कायस्थिति जघन्य एक समय, उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक तीन सागरोपम की होती है। इसी प्रकार स्थिति के सम्बन्ध में जानना। पहला, तीसरा, पाँचवाँ—ये तीन उद्देशक एक समान गमक वाले हैं शेष आठ उद्देशक एक समान गमक वाले हैं।

इसी प्रकार तेजोलेश्या वाले जीवों के सम्बन्ध में महायुग्म शतक कहना। कायस्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक दो सागरोपम की

होती है। इसी प्रकार स्थिति के सम्बन्ध में जानना। लेकिन नोसंज्ञाउपयोग वाले भी होते हैं। पहला, तीसरा, पाँचवा—ये तीन उद्देशक एक समान गमक वाले है शेष आठ उद्देशक एक समान गमक वाले हैं।

जैसा तेजोलेश्या का शतक कहा वैसा ही पद्मलेश्या का महायुग्म शतक कहना। लेकिन कायस्थिति जघन्य एक समय, उत्कृष्ट साधिक अन्तर्मुहूर्त दस सागरोपम की होती है। इसी प्रकार स्थिति के सम्बन्ध में जानना लेकिन स्थिति अन्तर्मुहूर्त अधिक न कहना। इस प्रकार पॉच (कृष्ण यावत् पद्मलेश्या) शतको मे जैसा कृष्णलेश्या शतक में पाठ कहा वैसा ही पाठ यावत् 'अणतखुत्तो' तक कहना।

जैसा औधिक शतक में कहा वैसा ही शुक्ललेश्या के सम्बन्ध मे महायुग्म शतक कहना लेकिन कायस्थिति और स्थिति के सम्बन्ध मे जैसा कृष्णलेश्या शतक मे कहा वैसा यावत् 'अणतखुत्तो' तक कहना। शेष सब औधिक शतक की तरह कहना।

कण्हलेस्सभवसिद्धियकडजुम्मकडजुम्मसन्निपंचिंदिया ण भंते! कओ उववज्जंति? एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहिय कण्हलेस्ससयं।

एवं नीललेस्सभवसिद्धिए वि सयं।

एवं जहा ओहियाणि सन्निपंचिदियाणं सत्त सयाणि भणियाणि, एवं भवसिद्धिएहि वि सत्त सयाणि कायव्वाणि। नवरं सत्तसु वि सएसु सव्वपाणा जाव नो इणट्ठे समट्ठे।

—भग० श ४०। श ६ से १४। पृ० ६३३

कृष्णलेशी भवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्म संज्ञी पचेन्द्रिय के सम्बन्ध मे—इसी प्रकार के अभिलापो से जिस प्रकार औधिक कृष्णलेश्या महायुग्म शतक मे कहा वैसा—कहना।

इसी प्रकार नीललेशी भवसिद्धिक महायुग्म शतक भी कहना।

इस प्रकार जैसे संज्ञी पचेन्द्रियो के सात औधिक शतक कहे वैसे ही भवसिद्धिक के सात शतक कहने लेकिन सातों शतको में ही सर्वप्राणी यावत् सर्वसत्त्व पूर्व में अनंत बार उत्पन्न हुए है—इस प्रश्न के उत्तर मे हैं 'यह सम्भव नही है' ऐसा कहना।

कण्हलेस्सअभवसिद्धियकडजुम्मकडजुम्मसन्निपंचिंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति०? जहा एएसि चेव ओहियसयं तहा कण्हलेस्ससय वि। नवर तेणं भंते! जीवा कण्हलेस्सा? हंता कण्हलेस्सा। ठिई॰ संचिट्ठणा य जहा कण्हलेस्सासए सेसं तं चेव।

एवं छहि वि लेस्साहि छ सया कायव्वा जहा कण्हलेस्ससयं। नवर संचिट्ठणा ठिई य जहेव ओहियसए तहेव भाणियव्वा। नवर सुक्कलेस्साए उक्कोसेण एक्कतीसं साग-

रोवमाइं अन्तोमुहुत्तमब्भहियाइं। ठिई एवं चेव। नवरं अन्तोमुहुत्तं नत्थि जहन्नगं[1], तहेव सव्वत्थ सम्मत्त-नाणाणि नत्थि। विरई विरयाविरई अणुत्तरविमाणोववत्ति—एयाणि नत्थि। सव्वपाणा० (जाव) नो इणट्ठे समट्ठे। ××× एवं एयाणि सत्त अभवसिद्धियमहाजुम्मसयाणि भवन्ति।

—भग० श ४०। श १६ से २१। पृ० ६३४

कृष्णलेशी अभवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्म सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय के सम्बन्ध में जैसा इनके औधिक (अभवसिद्धिक) शतको में कहा वैसा कृष्णलेश्या अभवसिद्धिक शतक में भी कहना लेकिन ये जीव कृष्णलेश्या वाले होते हैं। इनकी कायस्थिति तथा स्थिति के सम्बंध में जैसा औधिक कृष्णलेश्या शतक में कहा वैसा ही कहना।

कृष्णलेश्या शतक की तरह छः लेश्याओं के छः शतक कहने लेकिन कायस्थिति और स्थिति औधिक शतक की तरह कहनी। लेकिन शुक्ललेश्या मे उत्कृष्ट कायस्थिति साधिक अन्तर्मुहूर्त इकतीस सागरोपम की कहनी। इसी प्रकार स्थिति के सम्बन्ध में जानना लेकिन जघन्य अन्तर्मुहूर्त अधिक न कहना। सर्व स्थानो मे सम्यक्त्व तथा ज्ञान नहीं है। विरति, विरताविरति भी नही है तथा अनुत्तर विमान से आकर उत्पत्ति भी नही है। सर्व-प्राणी यावत् सर्वसत्त्व पूर्व में अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं—इस प्रश्न के उत्तर में 'यह सम्भव नही है' ऐसा कहना। इस प्रकार अभवसिद्धिक के सात महायुग्म शतक होते हैं।

महायुग्म सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय के इक्कीस शतक होते हैं। तथा सर्व महायुग्म शतक इक्यासी होते हैं।

---

८७ सलेशी राशियुग्म जीव :—

[राशियुग्म संख्या चार प्रकार की होती है यथा—(१) कृतयुग्म, (२) त्र्योज, (३) द्वापरयुग्म तथा (४) कल्योज। जिस संख्या में चार का भाग देने चार बचे वह कृतयुग्म संख्या कहलाती है, यदि तीन बचे तो वह त्र्योज संख्या कहलाती है, यदि दो बचे तो वह द्वापरयुग्म संख्या कहलाती है, यदि एक बचे तो वह कल्योज संख्या कहलाती है। क्षुद्रयुग्म तथा राशियुग्म की आगमीय परिभाषा समान हैं लेकिन विवेचन अलग-अलग है। अतः अन्तर अवश्य होना चाहिए। क्षुद्रयुग्म मे केवल नारकी जीवों का विवेचन है। राशियुग्म में दण्डक के सभी जीवो का विवेचन है।

यहाँ पर राशियुग्म जीवो का निम्नलिखित १३ बोलों से विवेचन किया गया है। विस्तृत विवेचन राशियुग्म कृतयुग्म नारकी मे किया गया है। बाकी में इसकी भुलावण है तथा यदि कहीं भिन्नता है तो उसका निर्देशन है।

१—यहाँ 'जहन्नग' शब्द का भाव समझ में नहीं आया।

१—कहाँ से उपपात, २—एक समय मे कितने का उपपात, ३—सान्तर या निरन्त उपपात, ४—एक ही समय में भिन्न-भिन्न युग्मो की अवस्थिति, ५—किस प्रकार से उपपात, ६—उपपात की गति की शीघ्रता, ७—परभव-आयुष के बध का कारण, ८—परभव-गति का कारण, ६—आत्म या परऋद्धि से उपपात १०—आत्मकर्म या परकर्म से उपपात ११—आत्म-प्रयोग या पर-प्रयोग से उपपात, १२—आत्मयश या आत्म-अयश से उपपात, १३—आत्मयश या आत्म-अयश से उपजीवन, आत्मयश या आत्म-अयश से उपजीवित जीव सलेशी या अलेशी, यदि सलेशी या अलेशी है तो सक्रिय या अक्रिय, यदि सक्रिय या अक्रिय है तो उसी भव में सिद्ध होता है या नही।

हमने यहाँ सिर्फ लेश्या सम्बन्धी पाठो का सकलन किया है।]

(रासीजुम्मकडजुम्मनेरइया ण भंते।) जइ आयअजसं उवजीवंति किं सलेस्सा अलेस्सा ? गोयमा। सलेस्सा, नो अलेस्सा। जइ सलेस्सा किं सकिरिया अकिरिया ? गोयमा। सकिरिया, नो अकिरिया। जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति, जाव अंतं करेंति ? नो इणट्ठे समट्ठे (प्र ११, १२, १३)।

रासीजुम्मकडजुम्मअसुरकुमारा णं भंते। कओ उववज्जंति० ? जहेव नेरइया तहेव निरवसेसं। एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिया। नवरं वणस्सइकाइया जाव असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति, सेसं एवं चेव (प्र १४)।

(मणुस्सा) जइ आयजस उवजीवंति किं सलेस्सा अलेस्सा ? गोयमा। सलेसा वि अलेस्सा वि। जइ अलेस्सा किं सकिरिया, अकिरिया ? गोयमा। नो सकिरिया, अकिरिया। जइ अकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति, जाव अंतं करेंति ? हंता सिज्झंति, जाव अंतं करेंति। जइ सलेस्सा किं सकिरिया, अकिरिया ? गोयमा। सकिरिया, नो अकिरिया। जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झन्ति, जाव अंतं करेंति ? गोयमा। अत्थेगइया तेणेव भवग्गहणेण सिज्झंति जाव अंतं करेन्ति, अत्थेगइया नो तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति, जाव अंतं करेन्ति। जइ आयअजसं उवजीवन्ति किं सलेस्सा अलेस्सा ? गोयमा। सलेस्सा, नो अलेस्सा जइ सलेस्सा किं सकिरिया, अकिरिया ? गोयमा। सकिरिया, नो अकिरिया। जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेण सिज्झंति, जाव अंतं करेन्ति ? नो इणट्ठे समट्ठे। (प्र १६ से २३)

वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा नेरइया।

—भग० श ४१। उ १। प्र ११ से २३। पृ० ६३५-३६

राशियुग्म में जो कृतयुग्म राशि रूप नारकी आत्म असंयम का आश्रय लेकर जीते हैं वे सलेशी हैं, अलेशी नहीं हैं तथा वे सलेशी नारकी क्रियावाले हैं, क्रिया रहित नहीं हैं। वे सक्रिय नारकी उसी भव में सिद्ध नही होते हैं यावत् सर्व दुःखों का अन्त नही करते हैं।

कृतयुग्म राशि असुरकुमारों के विषय में जैसा नारकी के विषय में कहा वैसा ही निरवशेष कहना। इसी प्रकार यावत् तिर्यंच पचेन्द्रिय तक समझना परन्तु वनस्पतिकायिक जीव असंख्यात अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं।

जो कृतयुग्म राशि रूप मनुष्य आत्मसंयम का आश्रय लेकर जीते हैं वे सलेशी भी हैं, अलेशी भी हैं। यदि वे अलेशी हैं तो वे क्रियावाले नही है, क्रियारहित हैं। तथा वे अक्रिय मनुष्य उसी भव में सिद्ध होते हैं यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं। यदि वे सलेशी हैं तो वे क्रिया वाले हैं, क्रियारहित नही है तथा उन सक्रिय जीवो मे कितने ही उसी भव में सिद्ध होते हैं यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं तथा कितने ही उसी भव में सिद्ध नही होते हैं यावत् सर्व-दुःखों का अन्त नही करते हैं। जो कृतयुग्म राशि रूप मनुष्य आत्म असंयम का आश्रय लेकर जीते हैं वे सलेशी हैं, अलेशी नही है तथा वे सलेशी मनुष्य क्रियावाले हैं, क्रियारहित नही है तथा वे सक्रिय मनुष्य उसी भव में सिद्ध नही होते हैं यावत् सर्व दुःखों का अन्त नही करते हैं।

वानव्यन्तर-ज्योतिषी-वैमानिक देवों के सम्बन्ध में जैसा नारकी के विषय मे कहा वैसा ही समझना।

रासीजुम्मतेओयनेरइया × × × एवं चेव उद्देसओ भाणियव्वो। × × × सेसं तं चेव जाव वेमाणिया। (उ २)

रासीजुम्मदावरजुम्मनेरइया × × × एवं चेव उद्देसओ × × × सेसं जहा पढमुद्देसए जाव वेमाणिया। (उ ३)

रासीजुम्मकलिओगनेरइया × × × एवं चेव × × × सेसं जहा पढमुद्देसए एवं जाव वेमाणिया। (उ ४)

—भग० श ४१। उ २ से ४। पृ० ६३६

राशि युग्म में त्र्योज राशि रूप नारकी यावत् वैमानिक देवों के सम्बन्ध मे जैसा राशियुग्म कृतयुग्म प्रथम उद्देशक मे कहा वैसा ही समझना।

राशियुग्म में द्वापरयुग्म रूप नारकी यावत् वैमानिक देवों के सम्बन्ध में जैसा प्रथम उद्देशक में कहा वैसा ही जानना।

राशियुग्म में कल्योज राशि रूप नारकी यावत् वैमानिक देवों के सम्बन्ध में जैसा प्रथम उद्देशक में कहा वैसा ही जानना।

कण्हलेस्सरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते। कओ उववज्जंति० ? उववाओ जहा धूमप्पभाए, सेसं जहा पढमुद्देसए। असुरकुमाराणं तहेव, एवं जाव वाणमंतराणं। मणुस्साण वि जहेव नेरइयाण 'आयअजसं उवजीवंति'। अलेस्सा, अकिरिया, तेणेव भवगहणेणं सिज्झंति एवं न भाणियव्वं। सेसं जहा पढमुद्देसए।

कण्हलेस्सतेओगेहिं वि एवं चेव उद्देसओ।

कण्हलेस्सदावरजुम्मेहिं एवं चेव उद्देसओ।

कण्हलेस्सकलिओगेहि वि एवं चेव उद्देसओ। परिमाणं संवेहो य जहा ओहिएसु उद्देसएसु।

जहा कण्हलेस्सेहिं एवं नीललेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा भाणियव्वा निरवसेसा। नवरं नेरइयाणं उववाओ जहा वालुयप्पभाए, सेसं तं चेव।

काऊलेस्सेहि वि एवं चेव चत्तारि उद्देसगा कायव्वा। नवरं नेरइयाणं उववाओ जहा रयणप्पभाए, सेसं तं चेव।

तेऊलेस्सरासीजुम्मकडजुम्मअसुरकुमारा णं भंते। कओ उववज्जंति० ? एवं चेव। नवरं जेसु तेऊलेस्सा अत्थि तेसु भाणियव्वं। एवं एए वि कण्हलेस्सासरिसा चत्तारि उद्देसगा कायव्वा।

एवं पम्हलेस्साए वि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा। पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं मणुस्साणं वेमाणियाण य एएसिं पम्हलेस्सा, सेसाणं नत्थि।

जहा पम्हलेस्साए एवं सुक्कलेस्साए वि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा। नवरं मणुस्साणं गमओ जहा ओहि(य)उद्देसएसु, सेसं तं चेव। एवं एए छसु लेस्सासु चउवीसं उद्देसगा, ओहिया चत्तारि।

—भग० श ४१। उ ५ से २८। पृ० ६३६-३७

कृष्णलेशी राशियुग्म कृतयुग्म नारकी का उपपात जैसा धूमप्रभा नारकी का कहा वैसा ही समझना। अवशेष प्रथम उद्देशक की तरह समझना। असुरकुमार यावत् वानव्यंतर देव तक ऐसा ही समझना। मनुष्यों के सम्बन्ध मे नारकियों की तरह जानना। वे यावत् आत्म-असंयम का आश्रय लेकर जीते हैं तथा उनके विषय में अलेशी, अक्रिय तथा उसी भव में सिद्ध होते हैं—ऐसा न कहना। अवशेष जैसा प्रथम उद्देशक में कहा वैसा ही कहना। कृष्णलेशी राशियुग्म त्र्योज, कृष्णलेशी राशियुग्म द्वापरयुग्म, कृष्णलेशी राशियुग्म कल्योज इन तीनों नारकी युग्मों के सम्बन्ध में कृष्णलेशी राशियुग्म कृतयुग्म के उद्देशक में जैसा कहा वैसा ही अलग-अलग उद्देशक कहना। लेकिन परिमाण तथा संवेध की भिन्नता जाननी।

नीललेशी राशियुग्म जीवों के भी कृतयुग्म, त्र्योज, द्वापरयुग्म, कल्योज चार उद्देशक कृष्णलेशी राशीयुग्म उद्देशक की तरह कहने लेकिन नारकी का उपपात वालुकाप्रभा की तरह कहना।

कापोतलेशी राशियुग्म जीवों के भी कृष्णलेशी राशियुग्म की तरह कृतयुग्म, त्र्योज, द्वापरयुग्म, कल्योज चार उद्देशक कहने। लेकिन नारकी का उपपात रत्नप्रभा की तरह कहना।

तेजोलेशी राशियुग्म जीवों के सम्बन्ध में कृष्णलेशी राशियुग्म की तरह चार उद्देशक कहने। लेकिन जिनके तेजोलेश्या होती है उनके ही सम्बन्ध मे ऐसा कहना।

पद्मलेशी राशियुग्म जीवों के सम्बन्ध मे कृष्णलेशी राशियुग्म की तरह ही चार उद्देशक कहने। तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य तथा वैमानिक देवो के ही पद्मलेश्या होती है, अवशेष के नही होती है।

जैसे पद्मलेश्या के विषय में चार उद्देशक कहे वैसे ही शुक्ललेश्या के भी चार उद्देशक कहने। लेकिन मनुष्य के सम्बन्ध मे जैसा औघिक उद्देशक मे कहा वैसा ही समझना तथा अवशेष वैसा ही जानना।

कण्हलेस्सभवसिद्धियरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति० ? जहा कण्हलेस्साए चत्तारि उद्देसगा भवंति तहा इमे वि भवसिद्धियकण्हलेस्सेहिं(वि) चत्तारि उद्देसगा कायव्वा।

एवं नीललेस्सभवसिद्धिएहि वि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा। एवं काऊलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा। तेऊलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा ओहियसरिसा। पम्हलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा। सुक्कलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा ओहियसरिसा।

—भग० श ४१। उ ३३ से ५६। पृ० ६३७

कृष्णलेशी भवसिद्धिक राशियुग्म कृतयुग्म नारकियों के विषय में जैसे कृष्णलेशी राशियुग्म के चार उद्देशक कहे वैसे ही चार उद्देशक कहने। इसी प्रकार नीललेशी भवसिद्धिक राशियुग्म तथा कापोतलेशी भवसिद्धिक राशियुग्म के चार-चार उद्देशक कहने।

तेजोलेशी भवसिद्धिक राशियुग्म जीवों के भी औघिक तेजोलेशी राशियुग्म जीवों की तरह चार उद्देशक कहने। पद्मलेशी भवसिद्धिक राशियुग्म जीवों के भी औघिक पद्मलेशी राशियुग्म जीवों की तरह चार उद्देशक कहने। शुक्ललेशी भवसिद्धिक राशियुग्म जीवों के भी औघिक शुक्ललेशी राशियुग्म जीवों की तरह चार उद्देशक कहने। जिसके जितनी लेश्या हो उतने विवेचन करने।

अभवसिद्धियरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति० ? जहा पढमो उद्देसगो। नवरं मणुस्सा नेरइया य सरिसा भाणियव्वा। सेसं तहेव × × × एवं चउसु वि जुम्मेसु चत्तारि उद्देसगा।

कण्हलेस्सअभवसिद्धियरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ? एवं चेव चत्तारि उद्देसगा। एवं नीललेस्सअभवसिद्धिय (रासीजुम्मकडजुम्मनेरइयाणं) चत्तारि उद्देसगा। एवं काऊलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा। तेऊलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा। पम्हलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा। सुक्कलेस्सअभवसिद्धिए वि चत्तारि उद्देसगा। एवं एएसु अट्ठावीसाए वि अभवसिद्धियउद्देसएसु मणुस्सा नेरइयगमेणं नेयव्वा।

—भग० श ४१ | उ ५७ से ८४ | पृ० ६३७

अभवसिद्धिक राशियुग्म जीवों के सम्बन्ध में जैसा प्रथम उद्देशक में कहा वैसा ही कहना लेकिन मनुष्य और नारकी का एक-सा वर्णन करना। चारों युग्मों के चार उद्देशक कहने।

इसी तरह कृष्णलेशी अभवसिद्धिक राशियुग्म जीवों के सम्बन्ध में चार उद्देशक कहने। इसी तरह नीललेशी अभवसिद्धिक राशियुग्म यावत् शुक्ललेशी अभवसिद्धिक राशियुग्म जीवों के सम्बन्ध में प्रत्येक के चार-चार उद्देशक कहने। लेकिन मनुष्यों के सम्बन्ध में सर्वत्र नारकी की तरह कहना। जिसके जितनी लेश्या हो उतने विवेचन करने।

सम्मदिट्ठीरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति० ? एवं जहा पढमो उद्देसओ। एवं चउसु वि जुम्मेसु चत्तारि उद्देसगा भवसिद्धियसरिसा कायव्वा। कण्हलेस्ससम्मदिट्ठीरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया ण भंते ! कओ उववज्जंति० ? एए वि कण्हलेस्ससरिसा चत्तारि वि उद्देसगा कायव्वा। एवं सम्मदिट्ठीसु वि भवसिद्धियसरिसा अट्ठावीसं उद्देसगा कायव्वा।

मिच्छादिट्ठीरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति० ? एवं एत्थ वि मिच्छादिट्ठिअभिलावेणं अभवसिद्धियसरिसा अट्ठावीसं उद्देसगा कायव्वा।

—भग० श० ४१ | उ ८५ से १४० | पृ० ६३७-३८

कृष्णलेशी सम्यग्दृष्टि राशियुग्म जीवों के सम्बन्ध में कृष्णलेशी राशियुग्म जीवों की तरह चार उद्देशक कहने। समदृष्टि राशियुग्म जीवों के भी भवसिद्धिक राशियुग्म जीवों की तरह अट्ठाईस उद्देशक कहने।

मिथ्यादृष्टि राशियुग्म जीवों के सम्बन्ध में अभवसिद्धिक राशियुग्म जीवों की तरह अट्ठाईस उद्देशक कहने।

कण्हपक्खियरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति० ? एवं एत्थ वि अभवसिद्धियसरिसा अट्ठावीसं उद्देसगा कायव्वा।

सुक्कपक्खियरासीजुम्मकडजुम्मनेरइया ण भंते ! कओ उववज्जंति० ? एवं एत्थ वि भवसिद्धियसरिसा अट्ठावीसं उद्देसगा भवंति। एवं एए सव्वे वि छन्नउयं उद्देसग-

सयं भवंति रासीजुम्मसयं। जाव सुक्कलेस्सा सुक्कपक्खियरासीजुम्मकलिओग-वेमाणिया जाव अंतं करेंति ? नो इणट्ठे समट्ठे।

भग० श ४१। उ १४१ से १९६। पृ० ६३८

कृष्णपाक्षिक राशियुग्म जीवों के सम्बन्ध में भी अभवसिद्धिक राशियुग्म जीवों की तरह अट्ठाईस उद्देशक कहने।

यावत् शुक्लपाक्षिक राशियुग्म जीवों के सम्बन्ध में भी भवसिद्धिक राशियुग्म जीवों की तरह अट्ठाईस उद्देशक कहने।

·८८ सलेशी जीव का आठ पदों से विवेचन :—

[यहाँ पर सलेशी जीव का निम्नलिखित आठ पदों की अपेक्षा से विवेचन हुआ है—यथा—(१) भेद, (२) उपभेद, (३) श्रेणी तथा क्षेत्र की अपेक्षा से विग्रह गति, (४) स्थान (उपपातस्थान, समुद्घातस्थान, स्वस्थान), (५) कर्म प्रकृति की सत्ता, बंधन, वेदन, (६) कहाँ से उपपात, (७) समुद्घात, (८) तुल्य अथवा भिन्न स्थिति की अपेक्षा तुल्य विशेषाधिक अथवा भिन्न विशेषाधिक कर्म का बधन। लेकिन भगवती सूत्र के ३४ वें शतक में केवल एकेन्द्रिय जीव का विवेचन है, अन्य जीवों का इन आठ पदों की अपेक्षा से विवेचन नहीं मिलता है।]

·८८·१ सलेशी एकेन्द्रिय जीव का आठ पदों से विवेचन :—

कइविहा णं भंते ! कण्हलेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता ? गोयमा ! पंचविहा कण्ह-लेस्सा एगिंदिया पन्नत्ता, भेदो चउक्कओ जहा कण्हलेस्सएगिंदियसए, जाव वणस्सइकाइय त्ति।

कण्हलेस्सअपज्जत्तसुहुमपुढविक्काइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले० ? एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिउद्देसओ जाव 'लोगचरिमंते' त्ति। सव्वत्थ कण्हलेस्सेसु चेव उववाएयव्वो।

कहि ण भंते ! कण्हलेस्सअपज्जत्तबायरपुढविक्काइयाण ठाणा पन्नत्ता ? (गोयमा !) एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहिउद्देसओ जाव तुल्लट्ठिय त्ति।

एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमं सेढिसयं तहेव एक्कारस उद्देसगा भाणियव्वा।

एवं नीललेस्सेहि वि तइयं सयं।

काउलेस्सेहि वि सयं। एवं चेव चउत्थं सयं।

भग० श ३४। श २ से ४। पृ० ६२४

कृष्णलेशी एकेन्द्रिय पाँच प्रकार के अर्थात् कृष्णलेशी पृथ्वीकायिक यावत् कृष्णलेशी वनस्पतिकायिक होते हैं। इनमें प्रत्येक के पर्याप्तसूक्ष्म, अपर्याप्तसूक्ष्म, पर्याप्तबादर, अपर्याप्त-बादर चार भेद होते हैं। (देखो भग० श ३३। श २)।

कृष्णलेशी अपर्याप्तसूक्ष्म पृथ्वीकायिक की श्रेणी तथा क्षेत्र की अपेक्षा विग्रहगति के पद आदि औधिक उद्देशक में जैसा कहा वैसा रत्नप्रभा नारकी के पूर्वलोकांत से यावत् लोक के चरमांत तक समझना। सर्वत्र कृष्णलेश्या में उपपात कहना।

कृष्णलेशी अपर्याप्तबादर पृथ्वीकायिकों के स्थान कहाँ कहे हैं? इस अभिलाप से औधिक उद्देशक मे जैसा कहा वैसा स्थान पद से यावत् तुल्यस्थिति तक समझना।

इस अभिलाप से जैसा प्रथम श्रेणी शतक में कहा वैसा ही द्वितीय श्रेणी शतक के ग्यारह उद्देशक (औधिक यावत् अचरम उद्देशक) कहना।

इसी प्रकार नीललेश्या वाले एकेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में तीसरा श्रेणी शतक कहना।

इसी प्रकार कापोतलेश्या वाले एकेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध मे चौथा श्रेणी शतक कहना।

कइविहा णं भंते! कण्हलेस्सभवसिद्धियएगिंदिया पन्नत्ता? एवं जहेव ओहियउद्देसओ।

कइविहा णं भंते! अणंतरोववन्ना कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पन्नत्ता? जहेव अणंतरोववन्नउद्देसओ ओहिओ तहेव।

कइविहा णं भंते! परंपरोववन्ना कण्हलेस्सभवसिद्धियएगिंदिया पन्नत्ता? गोयमा! पंचविहा परंपरोववन्ना कण्हलेस्सभवसिद्धियएगिंदिया पन्नत्ता, ओहिओ भेदो चउक्कओ जाव वणस्सइकाइय त्ति।

परंपरोववन्नकण्हलेस्सभवसिद्धियअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए० एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ उद्देसओ जाव 'लोय-चरिमंते' त्ति। सव्वत्थ कण्हलेस्सेसु भवसिद्धिएसु उववाएयव्वो।

कहिं णं भंते! परंपरोववन्नकण्हलेस्सभवसिद्धियपज्जत्तबायरपुढविकाइयाणं ठाणा पन्नत्ता? एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ उद्देसओ जाव 'तुल्लट्ठिइय' त्ति। एवं एएणं अभिलावेणं कण्हलेस्सभवसिद्धियएगिंदिएहि वि तहेव एक्कारस-उद्देसगसंजुत्तं छट्ठं सयं।

नीललेस्सभवसिद्धियएगिंदिएसु सयं सत्तमं।

एवं काउलेस्सभवसिद्धियएगिंदिएहि वि अट्ठमं सयं।

जहा भवसिद्धिएहिं चत्तारि सयाणि एवं अभवसिद्धिएहि वि चत्तारि सयाणि भाणियव्वाणि। नवरं चरम-अचरमवज्जा नव उद्देसगा भाणियव्वा, सेसं तं चेव। एवं एयाइं बारस एगिंदियसेढीसयाइं।

—भग० श० ३४। श ६ से १२। पृ० ६२४-२५

कृष्णलेशी भवसिद्धिक एकेन्द्रिय के सम्बन्ध में जैसा औधिक उद्देशक में कहा वैसा समझना।

अनंतरोपपन्न कृष्णलेशी भवसिद्धिक एकेन्द्रिय के सम्बन्ध में जैसा अनंतरोपपन्न औधिक उद्देशक में कहा वैसा समझना।

परंपरोपपन्न कृष्णलेशी भवसिद्धिक एकेन्द्रिय पाँच प्रकार के अर्थात् परंपरोपन्न कृष्ण-लेशी भवसिद्धिक पृथ्वीकायिक यावत् परंपरोपन्न कृष्णलेशी भवसिद्धिक वनस्पतिकायिक होते हैं। इनमें प्रत्येक के पर्याप्त सूक्ष्म, अपर्याप्त सूक्ष्म, पर्याप्त बादर, अपर्याप्त बादर चार भेद होते हैं। परंपरोपपन्न कृष्णलेशी भवसिद्धिक अपर्याप्तसूक्ष्म पृथ्वीकायिक की श्रेणी तथा क्षेत्र की अपेक्षा विग्रह गति के पद आदि औधिक उद्देशक मे जैसा कहा वैसा रत्नप्रभा पृथ्वी के नारकी के पूर्वलोकांत से यावत् लोक के चरमांत तक समझना। सर्वत्र कृष्णलेशी भवसिद्धिक मे उपपात कहना। परंपरोपपन्न कृष्णलेशी भवसिद्धिक पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिकों के स्थान कहाँ कहे हैं—इस अभिलाप से औधिक उद्देशक मे जैसा कहा वैसा स्थान पद से यावत् तुल्यस्थिति तक समझना। इस अभिलाप से जैसा प्रथम श्रेणी शतक में कहा वैसे ही छट्ठे श्रेणी शतक के ग्यारह उद्देशक कहने।

इसी प्रकार नीललेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में सप्तम श्रेणी शतक कहना।

इसी प्रकार कापोतलेश्यावाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में अष्टम श्रेणी शतक कहना।

जैसे भवसिद्धिक के चार शतक कहे वैसे ही अभवसिद्धिक के चार शतक कहने लेकिन अभवसिद्धिक में चरम-अचरम को छोड़कर नौ उद्देशक ही कहने।

·८९ सलेशी जीव और अल्पबहुत्व :—

·८९ १ औधिक सलेशी जीवों मे अल्पबहुत्व :—

(क) एएसि णं भंते! जीवाणं सलेस्साणं कण्हलेस्साणं जाव सुक्कलेस्साणं अलेस्साणं य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?

गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा सुक्कलेस्सा, पम्हलेस्सा संखेज्जगुणा, तेऊलेस्सा संखेज्ज-गुणा, अलेस्सा अणतगुणा, काऊलेस्सा अणतगुणा, नीललेस्सा विसेसाहिया, कण्ह-लेस्सा विसेसाहिया, सलेस्सा विसेसाहिया।

—पण्ण० प ३ । द्वार ८ । सू. ३६ । पृ० ३२८

—पण्ण० पद १७ । उ २ । सू. १४ । पृ० ४३८

—जीवा० प्रति ६ । सर्व जीव । सू. २६६ । पृ० २५८

सबसे कम शुक्ललेश्या वाले जीव होते हैं, उनसे पद्मलेश्यावाले जीव संख्यातगुणा हैं, उनसे तेजोलेश्यावाले जीव संख्यातगुणा हैं, उनसे लेश्या रहित (अलेशी) जीव अनन्त-गुणा हैं, उनसे कापोत लेश्यावाले जीव अनन्तगुणा हैं, उनसे नीललेश्यावाले जीव विशेषा-धिक हैं, उनसे कृष्णलेश्या वाले जीव विशेषाधिक हैं, तथा उनसे सलेशी जीव विशेषाधिक हैं।

(ख) सव्वथोवा अलेस्सा सलेस्सा अणतगुणा।

—जीवा० प्रति ६ । सर्व जीव । सू. २३५ । पृ० २५२

अलेशी जीव सबसे कम तथा सलेशी जीव उनसे अनन्त गुणा हैं।

८६. २ नारकी जीवों मे :—

एएसि ण भंते ! नेरइयाण कण्हलेस्साण नीललेस्साण काऊलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवा नेरइया कण्हलेसा, नीललेसा असंखेज्जगुणा, काऊलेसा असंखेज्जगुणा।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू. १५ । पृ० ४३८

सबसे कम कृष्णलेशी नारकी, उनसे असंख्यातगुणा नीललेशी नारकी, उनसे असंख्यात गुणा कापोतलेशी नारकी हैं।

८६. ३ तिर्यंचयोनि के जीवों मे :—

एएसि ण भंते ! तिरिक्खजोणियाण कण्हलेसाण जाव सुक्कलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवा तिरिक्खजोणिया सुक्कलेसा, एवं जहा ओहिया, नवरं अलेसवज्जा।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू. १५ । पृ० ४३८

सबसे कम शुक्ललेशी तिर्यंचयोनिक जीव हैं अवशेष (अलेशी को बाद देकर) औघिक जीव की तरह जानना।

८६. ४ एकेन्द्रिय जीवों में :—

एएसि णं भंते ! एगिंदियाणं कण्हलेस्साणं नीललेस्साणं काऊलेस्साणं तेऊलेस्साण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा जाव विसेसाहिया ? गोयमा ! सव्वत्थोवा एगिंदिया

तेऊलेस्सा, काऊलेस्सा अणंतगुणा, नीललेस्सा विसेसाहिया, कण्हलेस्सा विसेसाहिया।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १५ । पृ० ४३८

—भग० श १७ । उ १२ । प्र ३ । पृ० ७६१

सबसे कम एकेन्द्रिय तेजोलेशी जीव हैं, उनसे कापोतलेशी एकेन्द्रिय जीव अनन्तगुणा हैं, उनसे नीललेशी एकेन्द्रिय जीव विशेषाधिक हैं, उनसे कृष्णलेशी एकेन्द्रिय जीव विशेषाधिक हैं।

'८६'५ पृथ्वीकायिक जीवों में :—

एएसि णं भंते ! पुढविकाइयाणं कण्हलेस्साणं जाव तेऊलेस्साण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! जहा ओहिया एगिंदिया, नवरं काऊलेस्सा असंखेज्जगुणा।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १५ । पृ० ४३८-६

सबसे कम तेजोलेशी पृथ्वीकायिक जीव हैं, उनसे कापोतलेशी पृथ्वीकायिक जीव असंख्यातगुणा, उनसे नीललेशी विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी विशेषाधिक हैं।

'८६'६ अप्कायिक जीवों में :—

एवं आउकाइयाण वि।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १५ । पृ० ४३६

पृथ्वीकायिक जीवों की तरह अप्कायिक जीवों मे भी अल्पबहुत्व जानना।

'८६'७ अग्निकायिक जीवों मे :—

एएसि ण भंते ! तेउकाइयाण कण्हलेस्साणं नीललेस्साणं काऊलेस्साण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवा तेउकाइया काऊलेस्सा, नीललेस्सा विसेसाहिया, कण्हलेस्सा विसेसाहिया।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १५ । पृ० ४३६

सबसे कम कापोतलेशी अग्निकायिक जीव, उनसे नीललेशी अग्निकायिक विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी अग्निकायिक विशेषाधिक हैं।

'८६'८ वायुकायिक जीवों मे :—

एवं वायुकाइयाण वि।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १५ । पृ० ४३६

अग्निकायिक जीवों की तरह वायुकायिक जीवों में भी अल्पबहुत्व जानना। (देखो ८६'७)।

'८९'९ वनस्पतिकायिक जीवों में :—

एएसि णं भंते ! वणस्सइकाइयाण कण्हलेस्साणं जाव तेऊलेस्साण य जहा एगिंदियओहियाणं।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १५ । पृ० ४३९

सलेशी वनस्पतिकायिक जीवों में अल्पबहुत्व औधिक सलेशी एकेन्द्रिय जीवों की तरह जानना।

'८९ १० द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय तथा चतुरिन्द्रिय जीवों मे :—

वेइंदियाण तेइंदियाण चउरिंदियाण जहा तेउकाइयाण।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १५ । पृ० ४३९

सलेशी द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय तथा चतुरिन्द्रिय जीवों में अपने-अपने में अल्पबहुत्व अग्निकायिक जीवों की तरह जानना। (देखो ८८)

'८९ ११ पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीवों में :—

एएसि ण भंते ! पंचिंदियतिरिक्खजोणियाण कण्हलेस्साणं एवं जाव सुक्कलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! जहा ओहियाण तिरिक्खजोणियाण, नवरं काऊलेस्सा असंखेज्जगुणा।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १६ । पृ० ४३९

सलेशी पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीवों में अल्पबहुत्व औधिक तिर्यंचयोनिक जीवों की तरह जानना (देखो ८९ ३) लेकिन कापोतलेश्या को असख्यात गुणा कहना।

'८९ १२ समूर्छिम पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीवों में :—

संमुच्छिमपंचिदियतिरिक्खजोणियाण जहा तेउकाइयाण।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १६ । पृ० ४३९

समूर्छिम पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीवों में अल्पबहुत्व अग्निकायिक जीवों की तरह जानना (देखो '८९ ७)।

'८९ १३ गर्भज पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीवो में :—

गब्भवक्कंतियपंचिदियतिरिक्खजोणियाण जहा ओहियाण तिरिक्खजोणियाण, नवरं काऊलेस्सा संखेज्जगुणा।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १६ । पृ० ४३९

गर्भज पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीवों में अल्पबहुत्व औधिक तिर्यंचयोनिक की तरह जानना। लेकिन कापोतलेश्या में सख्यात गुणा कहना (देखो ८९ ३)। लेकिन टीकाकार कहते हैं कि कापोतलेश्या में 'असख्यात' गुणा कहना —

गर्भव्युत्क्रांतिकपंचेन्द्रियतिर्यग्योनिकसूत्रे तेजोलेश्याभ्यः कापोतलेश्या असंख्येयगुणा वक्तव्याः तावतामेव तेषां केवलवेदसोपलब्धत्वात् ।

'८६'१४ (गर्भज) पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक स्त्री जीवों में :—

एवं तिरिक्खिजोणिणीण वि ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १६ । पृ० ४३६

गर्भज पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक स्त्री जीवो मे अल्पबहुत्व गर्भज तिर्यंच पंचेन्द्रिय योनिक की तरह जानना ।

'८६ १५ संमूर्छिम तथा गर्भज पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीवों में :—

एएसि णं भंते ! संमुच्छिमपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं गब्भवक्कंतियपंचेंदिय-तिरिक्खजोणियाण य कण्हलेस्साणं जाव सुक्कलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४? गोयमा ! सव्वथोवा गब्भवक्कंतियपंचेंदियतिरिक्खजोणिया सुक्कलेस्सा, पम्हलेस्सा संखेज्जगुणा, तेऊलेस्सा संखेज्जगुणा, काऊलेस्सा संखेज्जगुणा, नीललेस्सा विसेसाहिया, कण्हलेस्सा विसेसाहिया, काऊलेस्सा संमुच्छिमपंचेंदियतिरिक्खजोणिया असंखेज्ज-गुणा, नीललेस्सा विसेसाहिया, कण्हलेस्सा विसेसाहिया ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १६ । पृ० ४३६

गर्भज पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक—शुक्ललेशी सबसे कम, पद्मलेशी उनसे संख्यात गुणा, तेजोलेशी उनसे संख्यातगुणा, कापोतलेशी उनसे संख्यातगुणा, नीललेशी उनसे विशेषाधिक तथा कृष्णलेशी उनसे विशेषाधिक होते हैं। इनसे संमूर्छिम पंचेन्द्रिय तिर्यंच-योनिक कापोतलेशी असंख्यातगुणा, नीललेशी उनसे विशेषाधिक तथा कृष्णलेशी उनसे विशेषाधिक होते हैं।

'८६'१६ समूर्छिम पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक तथा (गर्भज) पंचेन्द्रिय तिर्यंच स्त्री जीवों में :—

एएसि णं भंते । संमुच्छिमपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं तिरिक्खजोणिणीण य कण्हलेस्साणं जाव सुक्कलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! जहेव पंचमं तहा इमं छट्ठं भाणियव्वं ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १६ । पृ० ४३६

संमूर्छिम तिर्यंच पंचेन्द्रियों तथा गर्भज तिर्यंच पचेन्द्रिय स्त्रियों मे कौन-कौन अल्प, बहु, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं— इस सम्बन्ध मे '८६'१५ में जैसा कहा, वैसा कहना । गर्भज तिर्यंच पचेन्द्रिययोनिक की जगह गर्भज तिर्यंच पंचेन्द्रिययोनिक स्त्री कहना ।

'८६'१७ गर्भज पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों तथा तिर्यंच स्त्रियों में :—

एएसि ण भंते ! गब्भवक्कंतियपंचेंदियतिरिक्खजोणियाण तिरिक्खजोणिणीण य कण्हलेसाणं जाव सुक्कलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवा गब्भवक्कंतियपंचेंदियतिरिक्खजोणिया सुक्कलेसा, सुक्कलेसाओ तिरिक्खजोणिणीओ संखेज्जगुणाओ, पम्हलेसा गब्भवक्कंतियपंचेंदियतिरिक्खजोणिया संखेज्जगुणा, पम्हलेसाओ तिरिक्खजोणिणीओ संखेज्जगुणाओ, तेऊलेसा तिरिक्खजोणिया संखेज्जगुणा, तेऊलेसाओ तिरिक्खजोणिणीओ संखेज्जगुणाओ, काऊलेसा संखेज्जगुणा, नीललेसा विसेसाहिया, कण्हलेसा विसेसाहिया, काऊलेसाओ संखेज्जगुणाओ, नीललेसाओ विसेसाहियाओ, कण्हलेसाओ विसेसाहियाओ ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १६ । पृ० ४३६

गर्भज पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक शुक्ललेशी सबसे कम तिर्यंच स्त्री शुक्ललेशी उनसे सख्यातगुणा, ग० प० तिर्यंच पद्मलेशी उनसे सख्यातगुणा, तिर्यंच स्त्री पद्मलेशी उनसे सख्यातगुणा, ग० प० ति० तेजोलेशी उनसे सख्यातगुणा, तिर्यंच स्त्री तेजोलेशी उनसे सख्यातगुणा, ग० प० ति० कापोतलेशी उनसे सख्यातगुणा, ग० प० ति० नीललेशी उनसे विशेषाधिक, ग० प० ति० कृष्णलेशी उनसे विशेषाधिक, तिर्यंच स्त्री कापोतलेशी उनसे संख्यातगुणा, तिर्यंच स्त्री नीललेशी उनसे विशेषाधिक, तथा तिर्यंच स्त्री कृष्णलेशी उनसे विशेषाधिक होती हैं ।

'८६'१८ समूर्च्छिम पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों, गर्भज पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों तथा तिर्यंच स्त्रियों में :—

एएसि ण भंते ! संमुच्छिमपंचेंदियतिरिक्खजोणियाण गब्भवक्कंतियपंचेंदिय-(तिरिक्खजोणियाण) तिरिक्खजोणिणीण य कण्हलेसाण जाव सुक्कलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवा गब्भवक्कंतिया तिरिक्खजोणिया सुक्कलेसा, सुक्कलेसाओ तिरि० संखेज्जगुणाओ, पम्हलेसा गब्भवक्कंतिया तिरिक्ख-जोणिया संखेज्जगुणा, पम्हलेसाओ तिरिक्खजोणिणीओ संखेज्जगुणाओ, तेऊलेसा गब्भवक्कंतिया तिरिक्खजोणिया संखेज्जगुणा, तेऊलेसाओ तिरिक्खजोणिणीओ संखेज्जगुणाओ, काऊलेसाओ संखेज्जगुणाओ, नीललेसा विसेसाहिया, कण्हलेसा विसेसाहिया, काऊलेसा संखेज्जगुणा, नीललेसा विसेसाहिया, कण्हलेसाओ विसेसा-हियाओ, काऊलेसा संमुच्छिमपंचेंदियतिरिक्खजोणिया असंखेज्जगुणा, नीललेसा विसेसाहिया, कण्हलेसा विसेसाहिया ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १६ । पृ० ४३६

[इस पाठ में भूल मालूम होती है। यद्यपि हमको सभी प्रतियों में एक-सा ही पाठ मिला है, हमारे विचार मे इसमें गर्भज पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक तथा तिर्यंच स्त्री सम्बन्धी जितना पाठ है वह '८६'१७ की तरह होना चाहिए। गुणीजन इस पर विचार करें। हमने अर्थ '८६'१७ के अनुसार किया हैं।]

गर्भज पंचेन्द्रिय तिर्यचयोनिक शुक्ललेशी सबसे कम, तिर्यंच स्त्री शुक्ललेशी उनसे संख्यातगुणा, ग० पं० ति० पद्मलेशी उनसे संख्यातगुणा, तिर्यंच स्त्री पद्मलेशी उनसे संख्यातगुणा, ग० पं० ति० तेजोलेशी उनसे संख्यातगुणा, तिर्यंच स्त्री तेजोलेशी उनसे संख्यातगुणा, ग० पं० ति० कापोतलेशी उनसे संख्यातगुणा, ग० प० ति० नीललेशी उनसे विशेषाधिक, ग० पं० ति० कृष्णलेशी उनसे विशेषाधिक, तिर्यंच स्त्री कापोतलेशी उनसे संख्यातगुणा, तिर्यंच स्त्री नीललेशी उनसे विशेषाधिक तथा तिर्यंच स्त्री कृष्णलेशी उनसे विशेषाधिक होती हैं। इनसे संमूर्छिम पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक कापोतलेशी असंख्यातगुणा, नीललेशी उनसे विशेषाधिक तथा कृष्णलेशी उनसे विशेषाधिक होते हैं।

'८६'१६ पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों तथा तिर्यंच स्त्रियों में :—

एएसि णं भंते! पंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं तिरिक्खजोणिणीण य कण्हलेसाणं जाव सुक्कलेसाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४? गोयमा! सव्वत्थोवा पंचेंदिय-तिरिक्खजोणिया सुक्कलेसा, सुक्कलसाओ संखेज्जगुणाओ, पम्हलेसा संखेज्जगुणा, पम्हलेसाओ संखेज्जगुणाओ, तेऊलेसा संखेज्जगुणा, तेऊलेसाओ संखेज्जगुणाओ, काऊलेसा संखेज्जगुणा, 'नीललेसाओ विसेसाहियाओ, कण्हलेसा विसेसाहिया, काऊलेसा असंखेज्जगुणा, नीललेसा विसेसाहिया, कण्हलेसाओ विसेसाहियाओ।

—पण्ण० प १७। उ २। सू १६। पृ० ४४०

[इस पाठ में भूल मालूम होती है। यद्यपि हमें सभी प्रतियों मे एक-सा ही पाठ मिला है, हमारे विचार में शेष की तरफ का पाठ निम्न प्रकार से होना चाहिये क्योंकि यहाँ पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों में गर्भज पुरुष तथा समूर्छिम दोनों सम्मिलित हैं। गुणीजन इस पर विचार करें।

'काऊलेस्साओ संखेज्जगुणाओ, नीललेस्साओ विसेसाहियाओ, कण्हलेस्साओ विसेसाहियाओ, काऊलेस्सा असंखेज्जगुणा, नीललेस्सा विसेसाहिया, कण्हलेस्सा विसेसाहिया।'

'हमने अर्थ इसी आधार पर किया हैं।]

पचेंद्रिय तिर्यंचयोनिक शुक्ललेशी सबसे कम, तिर्यंच स्त्री शुक्ललेशी उनसे संख्यातगुणा, पं० ति० पद्मलेशी उनसे संख्यातगुणा, स्त्री तिर्यंच पद्मलेशी उनसे संख्यात-

गुणा, प० ति० तेजोलेशी उनसे सख्यातगुणा, तिर्यंच स्त्री तेजोलेशी उनसे सख्यातगुणा, तिर्यंच स्त्री कापोतलेशी उनसे सख्यातगुणा, तिर्यंच स्त्री नीललेशी उनसे विशेषाधिक, तिर्यंच स्त्री कृष्णलेशी उनसे विशेषाधिक, पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक कापोतलेशी उनसे असख्यातगुणा, प० ति० नीललेशी उनसे विशेषाधिक तथा प० ति० कृष्णलेशी उनसे विशेषाधिक होते हैं।

'८६'२० तिर्यंचयोनिको तथा पचेन्द्रिय तिर्यंच स्त्रियो मे :—

एएसि ण भंते। तिरिक्खजोणियाण, तिरिक्खजोणिणीण य कण्हलेसाण जाव सुक्कलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा। जहेव नवमं अप्पावहुगं तहा इम पि, नवरं काऊलेसा तिरिक्खजोणिया अणतगुणा। एवं एए दस अप्पावहुगा तिरिक्खजोणियाण।

—पण्ण० प १७। उ २। सू १६। पृ० ४४०

तिर्यंचयोनिक तथा गर्भज पचेंद्रिय तिर्यंच स्त्रियो मे कौन-कौन अल्प, वहु, तुल्य अथवा विशेषाधिक है—इस सम्बन्ध मे ८६ १६ मे जैसा कहा वैसा कहना लेकिन कापोतलेशी तिर्यंचयोनिक जीव अनतगुणा कहना।

टीकाकार ने पूर्वाचार्यों द्वारा उक्त दो संग्रह गाथाओ का उल्लेख किया है—

**(१) ओहियपणिंदि संमुच्छिमा य गब्भे तिरिक्ख इत्थिओ।
समुच्छगब्भतिरि या, मुच्छतिरिक्खी य गब्भंमि॥
(२) संमुच्छिमगब्भइत्थि पणिंदि तिरिगित्थीयाओ ओहित्थी।
दस अप्पबहुगभेआ तिरियाण होंति नायव्वा॥**

(१) औघिक सामान्य तिर्यंच पचेन्द्रिय, (२) समृछिम तिर्यंच पचेन्द्रिय, (३) गर्भज तिर्यंच पचेन्द्रिय, (४) गर्भज तिर्यंच पचेन्द्रिय स्त्री, (५) समूछिम तथा गर्भज तिर्यंच पचेन्द्रिय, (६) समूछिम पचेन्द्रिय तथा तिर्यंच स्त्री, (७) गर्भज तिर्यंच पचेन्द्रिय तथा तिर्यंच स्त्री, (८) समूछिम, गर्भज तिर्यंच पचेन्द्रिय तथा तिर्यंच स्त्री, (९) पचेन्द्रिय तिर्यंच तथा तिर्यंच स्त्री और (१०) औघिक-सामान्य तिर्यंच तथा तिर्यंच स्त्री। इस प्रकार तिर्यंचो के दस अल्पवहुत्व जानने।

'८६'२१

एवं मणुस्सा वि अप्पावहुगा भाणियव्वा, नवरं पच्छिमं (दसं) अप्पावहुग नत्थि।

—पण्ण० प १७। उ २। सूत्र १६

यह पाठ पण्णवणा सूत्र की प्रति (क) तथा (ग) मे नही है लेकिन (ख) मे है। टीका मे भी है।

'मनुष्याणामपि वक्तव्यानि, नवरं पश्चिमं दशममल्पबहुत्वं नास्ति, मनुष्याणामनन्तत्वाभावात्, तद्भावे काऊलेसा अणंतगुणा इति पदासम्भवात् ।'

मनुष्य का अल्पबहुत्व पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक की तरह जानना (देखो ८६·११ से ८६·१६ तक)। ८६·२० वाँ बोल नही कहना ; क्योंकि मनुष्यों में अनन्त का अभाव है। अतः 'कापोतलेशी अनन्तगुणा' यह पाठ सम्भव नही है।

·८६·२२ देवताओं में :—

एएसि णं भन्ते ! देवाणं कण्हलेसाण जाव सुक्कलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवा देवा सुक्कलेसा, पम्हलेसा असंखेज्जगुणा, काऊलेसा असंखेज्जगुणा, नीललेसा विसेसाहिया, कण्हलेसा विसेसाहिया, तेऊलेसा संखेज्जगुणा।

—पण्ण० प १७। उ २। सू १७। पृ० ४४०

शुक्ललेशी देवता सबसे कम, उनसे पद्मलेशी असंख्यातगुणा, उनसे कापोतलेशी असंख्यातगुणा, उनसे नीललेशी विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी विशेषाधिक तथा उनसे तेजोलेशी देवता संख्यातगुणा होते हैं।

·८६·२३ देवियों में :—

एएसि णं भंते। देवीणं कण्हलेसाणं जाव तेऊलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवाओ देवीओ काऊलेसाओ, नीललेसाओ विसेसाहियाओ, कण्हलेसाओ विसेसाहियाओ, तेऊलेसाओ संखेज्जगुणाओ।

—पण्ण० प १७। उ २। सू १७। पृ० ४४०

कापोतलेशी देवियाँ सबसे कम, उनसे नीललेशी विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी विशेषाधिक तथा उनसे तेजोलेशी देवियाँ संख्यातगुणी होती हैं।

·८६·२४ देवता और देवियो मे :—

एएसि णं भंते। देवाणं देवीणं य कण्हलेसाण जाव सुक्कलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवा देवा सुक्कलेसा, पम्हलेसा असंखेज्जगुणा, काऊलेसा असंखेज्जगुणा, नीललेसा विसेसाहिया, कण्हलेसा विसेसाहिया, काऊलेसाओ देवीओ संखेज्जगुणाओ, नीललेसाओ विसेसाहियाओ, कण्हलेसाओ विसेसाहियाओ, तेऊलेसा देवा संखेज्जगुणा, तेऊलेसाओ देवीओ संखेज्जगुणाओ।

—पण्ण० प १७। उ २। सू १७। पृ० ४४०

शुक्ललेशी देवता सबसे कम, उनसे पद्मलेशी असंख्यातगुणा, उनसे कापोतलेशी असंख्यातगुणा, उनसे नीललेशी विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी विशेषाधिक, उनसे कापोत-

लेशी देवियाँ सख्यातगुणी, उनसे नीललेशी देवियाँ विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी देवियाँ विशेषाधिक, उनसे तेजोलेशी देवता सख्यातगुणा तथा उनसे तेजोलेशी देवियाँ सख्यातगुणी होती हैं।

८६.२५ भवनवासी देवताओं में :—

एएसि ण भंते ! भवणवासीण देवाण कण्हलेसाण जाव तेऊलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवा भवणवासी देवा तेऊलेसा, काऊलेसा असंखेज्जगुणा, नीललेसा विसेसाहिया, कण्हलेसा विसेसाहिया।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १८ । पृ० ४४०

तेजोलेशी भवनवासी देवता सबसे कम, उनसे कापोतलेशी भ० असख्यातगुणा, उनसे नीललेशी भ० विशेषाधिक तथा उनसे कृष्णलेशी भ० विशेषाधिक होते हैं।

८६.२६ भवनवासी देवियों मे :—

एएसि ण भंते ! भवणवासिणीण देवीण कण्हलेसाणं जाव तेऊलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! एवं चेव।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १८ । पृ० ४४०-४१

तेजोलेशी भवनवासी देवियाँ सबसे कम, उनसे कापोतलेशी भ० असख्यातगुणी, उनसे नीललेशी भ० विशेषाधिक तथा उनसे कृष्णलेशी भ० देवियाँ विशेषाधिक होती हैं।

८६.२७ भवनवासी देवता तथा देवियो मे :—

एएसि ण भंते ! भवणवासीण देवाण देवीण य कण्हलेसाणं जाव तेऊलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४? गोयमा ! सव्वत्थोवा भवणवासी देवा तेऊलेसा, भवणवासिणीओ तेऊलेसाओ संखेज्जगुणाओ, काऊलेसा भवणवासीदेवा असंखेज्जगुणा, नीललेसा विसेसाहिया, कण्हलेसा विसेसाहिया, काऊलेसाओ भवणवासिणीओ देवीओ संखेज्जगुणाओ, नीललेसाओ विसेसाहियाओ, कण्हलेसाओ विसेसाहियाओ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १८ । पृ० ४४१

तेजोलेशी भवनवासी देवता सबसे कम, उनसे तेजोलेशी भ० देवियाँ सख्यात गुणी, उनसे कापोतलेशी भ० देवता असख्यात गुणा, उनसे नीललेशी भ० देवता विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी भ० देवता विशेषाधिक, उनसे कापोतलेशी भवनवासी देवियाँ सख्यातगुणी, उनसे नीललेशी भव० देवियाँ विशेषाधिक तथा उनसे कृष्णलेशी भ० देवियाँ विशेषाधिक होती हैं।

८६.२८ भवनवासी देवो के भेदो मे :—

(क) एएसि णं भंते ! दीवकुमाराणं कण्हलेस्साणं जाव तेऊलेस्साण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा दीवकुमारा तेऊलेस्सा, काऊलेस्सा असंखेज्जगुणा, नीललेस्सा विसेसाहिया, कण्हलेस्सा विसेसाहिया।

—भग० श १६ । उ ११ प्र ३ । पृ० ७५३

(ख) उदहिकुमाराण × × × एवं चेव।

—भग० श १६ । उ १२ । प्र १ । पृ० ७५३

(ग) एवं दिसाकुमारा वि।

—भग० श १६ । उ १३ । प्र १ । पृ० ७५३

(घ) एवं थणियकुमारा वि।

—भग० श १६ । उ १४ । प्र १ । पृ० ७५३

(ङ) नागकुमारा णं भंते ! × × × जहा सोलसमसए दीवकुमारुद्देसए तहेव निरविसेसं भाणियव्वं जाव इड्ढी (त्ति)।

—भग० श १७ । उ १३ । प्र १ । पृ० ७६१

(च) सुवन्नकुमाराणं × × × एवं चेव।

—भग० श १७ । उ १४ । प्र १ । पृ० ७६१

(छ) विज्जुकुमाराणं × × × एवं चेव।

—भग० श १७ । उ १५ । प्र १ । पृ० ७६१

(ज) वाउकुमाराणं × × × एवं चेव।

—भग० श १७ । उ १६ । प्र १ । पृ० ७६१

(झ) अग्गिकुमाराणं × × × एवं चेव।

—भग० श १७ । उ १७ । प्र १ । पृ० ७६१

तेजोलेशी द्वीपकुमार सबसे कम, उनसे कापोतलेशी असंख्यात गुणा, उनसे नीललेशी विशेषाधिक तथा उनसे कृष्णलेशी विशेषाधिक होते हैं।

इसी प्रकार नागकुमार, सुवर्णकुमार, विद्युतकुमार, अग्निकुमार, उदधिकुमार, दिशाकुमार, वायुकुमार, तथा स्तनितकुमार देवो में भी अल्पबहुत्व जानना।

'८६.२६ वानव्यंतर देवों मे :—

एवं वाणमंतराणं, तिन्नेव अप्पाबहुया जहेव भवणवासीणं तहेव भाणियव्वा।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १८ । पृ० ४४०

'८९'२९ १ वानव्यंतर देवों मे :—

तेजोलेशी वानव्यंतर देवता सवसे कम, उनसे कापोतलेशी असख्यातगुणा, उनसे नीललेशी विशेषाधिक तथा उनसे कृष्णलेशी विशेषाधिक होते हैं।

'८९ २९ २ वानव्यंतर देवियों मे :—

तेजोलेशी वानव्यतर देवियाँ सवसे कम, उनसे कापोतलेशी असख्यातगुणी, उनसे नीललेशी विशेषाधिक तथा उनसे कृष्णलेशी विशेषाधिक होती हैं।

'८९ २९ ३ वानव्यतर देव और देवियों मे :—

तेजोलेशी वानव्यतर देवता सवसे कम, उनसे तेजोलेशी वा० देवियाँ सख्यात गुणी, उनसे कापोतलेशी वानव्यतर देवता असख्यातगुणा, उनसे नीललेशी वा० देवता विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी वा० देवता विशेषाधिक, उनसे कापोतलेशी वानव्यतर देवियाँ सख्यातगुणी, उनसे नीललेशी वा० देवियाँ विशेषाधिक, तथा उनसे कृष्णलेशी वा० देवियाँ विशेषाधिक होती हैं।

'८९ ३० ज्योतिषी देव और देवियों मे :—

एएसि णं भंते ! जोइसियाण देवाण देवीण य तेऊलेसाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवा जोइसिया देवा तेऊलेस्सा, जोइसिणीओ देवीओ तेऊलेस्साओ संखेज्जगुणाओ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू १९ । पृ० ४४१

तेजोलेशी ज्योतिषी देवता सवसे कम तथा उनसे तेजोलेशी ज्योतिषी देवियाँ सख्यातगुणी हैं।

'८९ ३१ वैमानिक देवों मे :—

एएसि णं भंते ! वेमाणियाण देवाण तेऊलेसाण पम्हलेसाण सुक्कलेसाण य कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवा वेमाणिया देवा सुक्कलेसा, पम्हलेसा असंखेज्जगुणा, तेऊलेसा असंखेज्जगुणा।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू २० । पृ० ४४१

शुक्ललेशी वैमानिक देवता सवसे कम, उनसे पद्मलेशी असख्यातगुणा तथा उनसे तेजोलेशी असख्यातगुणा होते हैं।

'८९ ३२ वैमानिक देव और देवियो में :—

एएसि णं भंते ! वेमाणियाण देवाण देवीण य तेऊलेस्साणं पम्हलेस्साणं सुक्कलेस्साण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवा वेमाणिया देवा

सुक्कलेस्सा, पम्हलेस्सा असंखेज्जगुणा. तेऊलेस्सा असंखेज्जगुणा, तेऊलेसाओ वेमाणिणीओ देवीओ संखेज्जगुणाओ।

—पण्ण० प १७। उ २। सू २०। पृ० ४४१

शुक्ललेशी वैमानिक देवता सबसे कम, उनसे पद्मलेशी वै० देवता असंख्यातगुणा, उनसे तेजोलेशी वै० देवता असंख्यातगुणा तथा उनसे तेजोलेशी वैमानिक देवियाँ संख्यातगुणी होती हैं।

'८६'३३ भवनवासी, वानव्यंतर, ज्योतिषी तथा वैमानिक देवों में :—

एएसि णं भंते। भवणवासीदेवाणं वाणमंतराणं जोइसियाणं वेमाणियाण य देवाण य कण्हलेसाण जाव सुक्कलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४? गोयमा! सव्वत्थोवा वेमाणिया देवा सुक्कलेसा, पम्हलेसा असंखेज्जगुणा, तेऊलेसा असंखेज्जगुणा, तेऊलेसा भवणवासी देवा असंखेज्जगुणा, काऊलेसा असंखेज्जगुणा, नीललेसा विसेसाहिया, कण्हलेसा विसेसाहिया, तेऊलेसा वाणमंतरा देवा असंखेज्जगुणा, काऊलेसा असंखेज्जगुणा, नीललेसा विसेसाहिया, कण्हलेसा विसेसाहिया, तेऊलेसा जोइसिया देवा संखेज्जगुणा।

—पण्ण० प १७। उ २। सू २१। पृ० ४४१

शुक्ललेशी वैमानिक देव सबसे कम, उनसे पद्मलेशी वै० देव असंख्यातगुणा, उनसे तेजोलेशी वै० देव असंख्यातगुणा, उनसे तेजोलेशी भवनवासी देव असंख्यातगुणा, उनसे कापोतलेशी भ० देव असंख्यातगुणा, उनसे नीललेशी भ० देव विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी भ० देव विशेषाधिक, उनसे तेजोलेशी वानव्यंतर देव असंख्यातगुणा, उनसे कापोतलेशी वानव्यंतर देव असंख्यातगुणा, उनसे नीललेशी वा० देव विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी वा० देव विशेषाधिक तथा उनसे तेजोलेशी ज्योतिषी देव संख्यातगुणा होते हैं।

८६'३४ भवनवासी, वानव्यंतर, ज्योतिषी तथा वैमानिक देवियों में :—

एएसि णं भंते! भवणवासिणीणं वाणमंतरीणं जोइसिणीणं वेमाणिणीण य कण्हलेसाणं जाव तऊलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४? गोयमा! सव्वत्थोवाओ देवीओ वेमाणिणीओ तेऊलेसाओ, भवणवासिणीओ तेऊलेसाओ असंखेज्जगुणाओ, काऊलेसाओ असंखेज्जगुणाओ, नीललेसाओ विसेसाहियाओ, कण्हलेसाओ विसेसाहियाओ, तेऊलेसाओ वाणमंतरीओ देवीओ असंखेज्जगुणाओ, काऊलेसाओ असंखेज्जगुणाओ, नीललेसाओ विसेसाहियाओ, कण्हलेसाओ विसेसाहियाओ, तेऊलेसाओ जोइसिणीओ देवीओ संखेज्जगुणाओ।

—पण्ण० प १७। उ २। सू २१। पृ० ४४१

तेजोलेशी वैमानिक देवियाँ सबसे कम, उनसे तेजोलेशी भवनवासी देवियाँ असंख्यात गुणी, उनसे कापोतलेशी भ० देवियाँ असंख्यात गुणी, उनसे नीललेशी भ० देवियाँ विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी भ० देवियाँ विशेषाधिक, उनसे तेजोलेशी वानव्यन्तर देवियाँ असंख्यात गुणी, उनसे कापोतलेशी वा० देवियाँ असंख्यात गुणी, उनसे नीललेशी वा० देवियाँ विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी वा० देवियाँ विशेषाधिक तथा उनसे तेजोलेशी ज्योतिषी देवियाँ संख्यात गुणी होती हैं।

८६ ३५ चारों प्रकार के देव और देवियों में :—

एएसि णं भंते ! भवणवासीण जाव वेमाणियाण देवाण य देवणी य कण्हलेसाण जाव सुक्कलेसाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ? गोयमा ! सव्वत्थोवा वेमाणिया देवा सुक्कलेसा, पम्हलेसा असंखेज्जगुणा, तेऊलेसा असंखेज्जगुणा, तेऊलेसाओ वेमाणियदेवीओ संखेज्जगुणाओ, तेऊलेसा भवणवासी देवा असंखेज्जगुणा, तेऊलेसाओ भवणवासिणीओ देवीओ संखेज्जगुणाओ, काऊलेसा भवणवासी असंखेज्जगुणा, नीलल्लेसा विसेसाहिया, कण्हलेसा विसेसाहिया काऊलेसाओ भवणवासिणीओ संखेज्जगुणाओ नीललेसाओ विसेसाहियाओ, कण्हलेसाओ विसेसाहियाओ, तेऊलेसा वाणमंतरा संखेज्जगुणा, तेऊलेसाओ वाणमंतरीओ संखेज्जगुणाओ, काऊलेसा वाणमंतरा असंखेज्जगुणा, नीलल्लेसा विसेसाहिया, कण्हलेसा विसेसाहिया, काऊलेसाओ वाणमंतरीओ संखेज्जगुणाओ, नीललेसाओ विसेसाहियाओ, कण्हलेसाओ विसेसाहियाओ, तेऊलेसा जोइसिया संखेज्जगुणा, तेऊलेसाओ जोइसिणीओ संखेज्जगुणाओ।

—पण्ण० प १७ । उ २ । सू २२ । पृ० ४४१-४२

शुक्ललेशी वैमानिक देव सबसे कम, उनसे पद्मलेशी वै० देव असंख्यात गुणा, उनसे तेजोलेशी वै० देव असंख्यात गुणा, उनसे तेजोलेशी वै० देवियाँ संख्यात गुणी, उनसे तेजोलेशी भवनवासी देव असंख्यात गुणा, उनसे तेजोलेशी भ० देवियाँ संख्यात गुणी, उनसे कापोतलेशी भ० देव असंख्यात गुणा, उनसे नीललेशी भ० देव विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी भ० देव विशेषाधिक, उनसे कापोतलेशी भ० देवियाँ संख्यात गुणी, उनसे नीललेशी भ० देवियाँ विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी भ० देवियाँ विशेषाधिक, उनसे तेजोलेशी वानव्यंतर देव संख्यात गुणा, उनसे तेजोलेशी वा० देवियाँ संख्यात गुणी, उनसे कापोतलेशी वा० देव असंख्यात गुणा, उनसे नीललेशी वा० देव विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी वा० देव विशेषाधिक, उनसे कापोतलेशी वा० देवियाँ संख्यात गुणी, उनसे नीललेशी वा० देवियाँ विशेषाधिक, उनसे कृष्णलेशी वा० देवियाँ विशेषाधिक, उनसे तेजोलेशी ज्योतिषी देव संख्यात गुणा तथा उनसे तेजोलेशी ज्यो० देवियाँ संख्यात गुणी होती हैं।

·९० लेश्या और विविध विषय :—

·९१ लेश्याकरण :—

(कइविहे णं भंते ! लेस्साकरणे पन्नत्ते ? गोयमा !) लेस्साकरणे छव्विहे × × × एए सव्वे नेरइयादी दण्डगा जाव वेमाणियाणं जस्स जं अत्थि तं तस्स सव्वं भाणियव्वं ।

—भग० श १९ । उ ९ । प्र ४ । पृ० ७८९

२२ करणों में 'लेश्याकरण' भी एक है । लेश्याकरण छः प्रकार का है, यथा—कृष्ण-लेश्याकरण यावत् शुक्ललेश्याकरण । सभी जीव दण्डकों मे लेश्याकरण कहना लेकिन जिसमे जितनी लेश्या हो उतने लेश्याकरण कहने । टीकाकर ने 'करण' की इस प्रकार व्याख्या की है—

तत्र क्रियतेऽनेनेति करणं—क्रियायाः साधकतमं कृतिर्वा करण—क्रियामात्रं, नन्वस्मिन् व्याख्याने करणस्य निर्वृत्तेश्च न भेदः स्यात्, निर्वृत्तेरपि क्रियारूपत्वात्, नैवं, करणमारम्भक्रिया निर्वृत्तिस्तु कार्यस्य निष्पत्तिरिति ।

जिसके द्वारा किया जाय वह करण । क्रिया का साधन अथवा करना वह करण । इस दूसरी व्युत्पत्ति के प्रमाण से करण व निर्वृत्ति एक हो गई ऐसा नहीं समझना, क्योंकि करण आरंभिक क्रिया रूप है तथा निर्वृत्ति कार्य की समाप्ति रूप है ।

·९२ लेश्यानिर्वृत्तिः—

कइविहा णं भंते ! लेस्सानिव्वत्ती पन्नत्ता ? गोयमा ! छव्विहा लेस्सानिव्वत्ती पन्नत्ता, तंजहा—कण्हलेस्सानिव्वत्ती जाव सुक्कलेस्सानिव्वत्ती । एवं जाव वेमाणियाणं जस्स जइ लेस्साओ (तस्स तत्तिया भाणियव्वा) ।

—भग० श १९ । उ ८ । प्र १९ । पृ० ७८८

छः लेश्यानिर्वृत्ति होती हैं यथा कृष्णलेश्यानिर्वृत्ति यावत् शुक्ललेश्यानिर्वृत्ति । इसी प्रकार दण्डक के सभी जीवों के लेश्यानिर्वृत्ति होती हैं । जिस दण्डक में जितनी लेश्या होती है उसमें उतनी लेश्यानिर्वृत्ति कहना । टीकाकार ने निर्वृत्ति की व्याख्या इस प्रकार की है :—

निर्वर्तनं—निर्वृतिर्निष्पत्तिजीवस्यैकेन्द्रियादितया निर्वृत्तिजीवनिर्वृत्तिः ।

निर्वृत्ति-निर्वर्तन अर्थात् निष्पन्नता । यथा जीव का एकेन्द्रियादि रूप से निर्वृत्त होना जीवनिर्वृत्ति । लेश्यानिर्वृत्ति का अर्थ इस प्रकार किया जा सकता है—द्रव्यलेश्या

के द्रव्यों के ग्रहण की निष्पन्नता अथवा भावलेश्या के एक लेश्या से दूसरी लेश्या में परिणमन की निष्पन्नता लेश्यानिर्वृत्ति।

---

९३ लेश्या और प्रतिक्रमण :—

पडिक्कमामि छहि लेस्साहिं—कण्हलेस्साए, नीललेस्साए, काऊलेस्साए, तेऊ-लेस्साए, पम्हलेस्साए, सुक्कलेस्साए। × × × तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

—आव० अ ४। सू ६। पृ० ११६८

आदिल्ल तिण्णि एत्थं, अपसत्था उवरिमा पसत्थाउ।
अपसत्थासु वट्टियं, न वट्टियं ज पसत्थासु।
एसऽइयारो एया—सु होइ, तस्स य पडिक्कमामि त्ति।
पडिकूलं वट्टामी, जं भणियं पुणो न सेवेमि।

—आव० अ ४। सू ६। हारि० टीका मे उद्धृत

मैं छः लेश्याओं का प्रतिक्रमण करता हूँ—उनसे निवृत्त होता हूँ। मेरे लेश्या जनित दुष्कृत निष्फल हो।

यदि तीन अप्रशस्त लेश्या में वर्तना की हो तथा तीन प्रशस्त लेश्या में वर्तना न की हो तो इस कारण से सयम मे यदि किसी प्रकार का अतिचार लगा हो तो उसका मै प्रतिक्रमण करता हूँ। प्रतिकूल लेश्या मे यदि वर्तना की हो तो मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि फिर उसका सेवन नही करूंगा।

---

९४ लेश्या शाश्वत भाव है :—

'पुव्विं भंते। लोयंते, पच्छा अलोयंते? पुव्विं अलोयते पच्छा लोयंते? रोहा। लोयंते य, अलोयंते य, जाव—(पुव्विं एते, पच्छा एते—दुवेते सासया भावा), अणाणुपुव्वी एसा रोहा। × × × एवं लोयंते एक्केक्केण संजोएयव्वे इमेहिं ठाणेहिं, तंजहा—

उवास-वाय-घणउदहि-पुढवी-दीवा य सागरा वासा।
नेरइयाई अत्थिय समया कम्माइं लेसाओ॥ १॥
दिट्ठी-दंसण-णाणा-सण्णा-सरीरा य जोग-उवओगे।
दव्वपएसा पज्जव अद्धा किं पुव्विं लोयंते॥ २॥

—भग० श १। उ ६। प्र २१९, २२०। पृ० ४०३

लोक, अलोक, लोकान्त, अलोकान्त आदि शाश्वत भावो की तरह लेश्या भी शाश्वत भाव है। पहले भी है, पीछे भी है ; अनानुपूर्वी है, इनमें कोई क्रम नही है।

रोहक अणगार के प्रश्न करने पर मुर्गी और अण्डे का उदारहण देकर भगवान ने आगे-पीछे के प्रश्न को समझाया है।

'रोहा ! से ण अंडए कओ ?' 'भयवं ! कुक्कुडीओ ।' 'सा ण कुक्कुडी कओ ?' 'भंते । अंडयाओ ।'

—भग० श १ । उ ६ । प्र २१८ । पृ० ४०३

अण्डा कहॉ से आया ? मुर्गी से।

मुर्गी कहॉ से आयी ? अण्डे से।

दोनो पहले भी हैं, दोनो पीछे भी हैं। दोनो शाश्वत भाव हैं। दोनों अनानुपूर्वी हैं, आगे पीछे का क्रम नही है।

लेश्या भी शाश्वत भाव है , किसी अन्य शाश्वत भाव की अपेक्षा इसका पहिले-पीछे का क्रम नही है।

---

९५ लेश्या और ध्यान :—

'९५'१ रौद्र ध्यान :—

काओयनीलकाला, लेसाओ तीव्व संकिलिट्ठाओ।
रोद्दज्झाणोवगयस्स, कम्मपरिणामजणियाओ ॥

रौद्र ध्यान में उपगत जीवो मे तीव्र सक्लिष्ट परिणाम वाली कापोत, नील, कृष्ण लेश्याएँ होती हैं।

९५'२ आर्त्तध्यान :—

काओयनीलकाला, लेसाओ णाइसंकिलिट्ठाओ।
अट्टज्झाणोवगस्स, कम्मपरिणामजणियाओ ॥

टीका—कापोतनीलकृष्णलेश्याः। किं भूताः ? नातिसंक्लिष्टा रौद्रध्यान लेश्यापेक्षया नातीवाशुभानुभावाः, भवन्तीति क्रिया। कस्येत्यत आह –आर्तध्यानोपगतस्य, जन्तोरिति गम्यते। किं निबंधना एताः ? इत्यत आह—कर्मपरिणामजनिताः तत्र 'कृष्णादिद्रव्यसाचिव्यात्, परिणामो य आत्मनः। स्फटिकस्येव तत्रायं लेश्याशब्द. प्रयुज्यते ॥ एताश्च कर्मोदयायत्ता इति गाथार्थः।

—आव० अ ४। टीका

आर्त्तध्यान में उपगत जीवों में नातिसंक्लिष्ट परिणाम वाली कापोत, नील, कृष्ण लेश्याएँ होती हैं। यह रौद्रध्यान में उपगत जीवों के लेश्या परिणामों की अपेक्षा से कथन है अर्थात् रौद्रध्यान में उपगत जीव की अपेक्षा आर्त्तध्यान मे उपगत जीव के लेश्या परिणाम कम संक्लिष्ट होते हैं।

टीकाकार का कथन है कि लेश्या कर्मोदय परिणाम जनित है।

९५.३ धर्मध्यान :—

९५.४ शुक्लध्यान :—

धर्म और शुक्ल ध्यानों में वर्तता हुआ जीव किस-किस लेश्या मे परिणमन करता है—इनके सम्बन्ध मे पाठ उपलब्ध नहीं हुए हैं। ध्यान और लेश्या मे अविनाभावी सम्बन्ध है कि नही—यह कहा नही जा सकता है लेकिन चौदहवें गुणस्थान मे जब जीव अयोगी तथा अलेशी हो जाता है तब भी उसके शुक्ल ध्यान का चौथा भेद होता है। यहाँ लेश्या रहित होकर भी जीव के ध्यान का एक उपभेद रहता है।

निव्वाणगमणकाले केवलिणोद्धनिरुद्धजोगस्स।
सुहुमकिरियाऽनियट्टिं तइयं तणुकायकिरियस्स॥
तस्सेव य सेलेसीगयस्स सेलोव्व निप्पकंपस्स।
वोच्छिन्नकिरियमप्पडिवाई झाणं परमसुक्कं॥

—ठाण० स्था ४। उ १। सू २४७। टीका में उद्धृत

निर्वाण के समय केवली के मन और वचन योगों का सम्पूर्ण निरोध हो जाता है तथा काययोग का अर्ध निरोध होता है। उस समय उसके शुक्ल ध्यान का तीसरा भेद 'सुहुम-किरिए अनियट्टी' होता है और सूक्ष्म कायिकी क्रिया—उच्छ्वासादि के रूप में होती है।

उस निर्वाणगामी जीव के शैलेशत्व प्राप्त होने पर, सम्पूर्ण योग निरोध होने पर भी शुक्लध्यान का चौथा भेद 'समुच्छिन्नक्रियाऽप्रतिपाती' होता है, यद्यपि शैलेशत्व की स्थिति मात्र पांच ह्रस्व स्वराक्षर उच्चारण करने समय जितनी होती है।

ध्यान का लेश्या के परिणमन पर क्या प्रभाव पड़ता है यह भी विचारणीय विषय है। क्या ध्यान के द्वारा लेश्या द्रव्यों का ग्रहण नियन्त्रित या बंद किया जा सकता है? ध्यान का लेश्या-परिणमन के साथ क्या सीधा संयोग है या योग के द्वारा? इत्यादि अनेक प्रश्न विज्ञजनों के विचारने योग्य हैं।

·९६ लेश्या और मरण :—

बालमरणे तिविहे पन्नत्ते, तंजहा—ठिअलेस्से, संकिलिट्ठलेस्से, पज्जवजायलेस्से। पंडियमरणे तिविहे पन्नत्ते, तंजहा—ठिअलेस्से, असंकिलिट्ठलेस्से, पज्जवजायलेस्से। बालपंडियमरणे तिविहे पन्नत्ते, तंजहा—ठिअलेस्से, असंकिलिट्ठलेस्से, अपज्जवजायलेस्से।

—ठाण० स्था ३। उ ४। सू २२२। पृ० २२०

टीका—स्थिता—उपस्थिता अविशुध्यन्त्यसंक्लिश्यमाना च लेश्या कृष्णादिर्यस्मिन् तत्स्थितलेश्यः, संक्लिष्टा-संक्लिश्यमाना संक्लेशमागच्छन्तीत्यर्थः, सा लेश्या यस्मिंस्तत्तथा, तथा पर्यवाः—पारिशेष्याद्विशुद्धिविशेषाः प्रतिसमयं जाता यस्यां सा तथा, विशुद्ध्या वर्द्धमानेत्यर्थः, सा लेश्या यस्मिंस्तत्तथेति, अत्र प्रथमं कृष्णादिलेश्यः सन् यदा कृष्णादिलेश्येष्वेव नारकादिषूत्पद्यते तदा प्रथमं भवति, यदा तु नीलादिलेश्यः सन् कृष्णादिलेश्येषूत्पद्यते तदा द्वितीयं, यदा पुनः कृष्णलेश्यादिः सन् नीलकापोतलेश्येषूत्पद्यते तदा तृतीयम्, उक्तं चान्त्यद्वयसंवादि भगवत्याम् यदुक्तं—“से णूणं भंते! कण्हलेसे, नीललेसे जाव सुक्कलेसे भवित्ता काऊलेसेसु नेरइएसु उववज्जइ? हंता, गोयमा! से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ? गोयमा! लेसाठाणेसु संकिलिस्समाणेसु वा विसुज्झमाणेसु वा काऊलेस्सं परिणमइ परिणमइत्ता काऊलेसेसु नेरइएसु उववज्जइ” त्ति, एतदनुसारेणोत्तरसूत्रयोरपि स्थितलेश्यादिविभागो नेय इति। पण्डितमरणे संक्लिश्यमानता लेश्याया नास्ति, संयतत्वादेवेत्ययं बालमरणाद्विशेषः, बालपण्डितमरणे तु संक्लिश्यमानता विशुद्ध्यमानता च लेश्याया नास्ति, मिश्रत्वादेवेत्ययं विशेष इति। एवं च पण्डितमरणे वस्तुतो द्विविधमेव, संक्लिश्यमानलेश्यानिषेधे अवस्थितवर्द्धमानलेश्यत्वात् तस्य, त्रिविधत्वं तु व्यपदेशमात्रादेव, बालपण्डितमरणं त्वेकविधमेव, संक्लिश्यमानपर्यवजातलेश्यानिषेधे अवस्थितलेश्यत्वात् तस्येति, त्रैविध्यं त्वस्येतरव्यावृत्तितो व्यपदेशत्रयप्रवृत्तेरिति।

—ठाण० स्था ३। उ ४। सू २२२। टीका

मरण के समय में यदि लेश्या अवस्थित रहे तो वह स्थितलेश्यमरण, मरण के समय मे यदि लेश्या संक्लिश्यमान हो तो वह संक्लिष्टलेश्यमरण, तथा मरण के समय मे यदि लेश्या के पर्यायो की प्रतिसमय विशुद्धि हो रही हो तो वह पर्यवजातलेश्यमरण कहलाता है। मरण के समय मे यदि लेश्या की अविशुद्धि नही हो रही हो तो वह असंक्लिष्टलेश्यमरण तथा यदि मरण के समय में लेश्या की विशुद्धि नहीं हो रही हो तो अपर्यवजातलेश्यमरण कहलाता है।

लेश्या की अपेक्षा से वालमरण के तीन भेद होते हैं—स्थितलेश्य, संक्लिष्टलेश्य और पर्यवजातलेश्य वालमरण।

वालमरणके समय यदि जीव कृष्णादि लेश्या मे अविशुद्ध रूप मे अवस्थित रहे तो उसका वह मरण स्थितलेश्य वालमरण कहलाता है, यथा—कृष्णलेशी जीव मरणके समय कृष्ण लेश्या में अवस्थित रहकर कृष्णलेशी नारकी मे उत्पन्न होता है। वालमरण के समय यदि जीव लेश्या मे सक्लिश्यमान—कलुषित होता रहता है तो उसका वह मरण सक्लिष्ट-लेश्य वालमरण कहलाता है, यथा—नीलादिलेशी जीव मरण के समय लेश्यास्थानों में सक्लिश्यमान होते-होते कृष्णलेश्या में उत्पन्न होता है। वालमरण के समय यदि जीव की लेश्या के पर्याय विशुद्धि को प्राप्त हो रहे हों तो उसका वह मरण पर्यवजातलेश्य वालमरण कहलाता है, यथा—कृष्णलेशी जीव मरण के समय लेश्या के पर्यायों मे विशुद्धत्व को प्राप्त होता हुआ नील-कापोतादि लेश्या में उत्पन्न होता है।

यद्यपि मूल सूत्र मे पडितमरण के भी स्थितलेश्य, असक्लिष्टलेश्य तथा पर्यवजातलेश्य तीन भेद वताये गये हैं, तथापि टीकाकार का कथन है कि पडितमरण मे लेश्या की संक्लिष्टता—अविशुद्धि सम्भव नहीं है, वहाँ असक्लिष्टता—विशुद्धि ही होती है तथा पर्यवजातलेश्य पडितमरण मे भी लेश्या के पर्यायों की विशुद्धि ही होती है। अत॰ वास्तव में लेश्या की अपेक्षा से पडितमरण के दो ही भेद करने चाहियें। असक्लिष्टलेश्य भेद को पर्यवजातलेश्य भेद मे शामिल कर लेना चाहिये।

यद्यपि मूल पाठ मे वालपंडितमरण के भी स्थितलेश्य, असक्लिष्टलेश्य तथा अपर्यव-जातलेश्य तीन भेद किये गये हैं, तथापि टीकाकार का कथन है कि वालपंडितमरण का एक स्थितलेश्य भेद ही करना चाहिये, क्योंकि वालपडितमरण के समय में न तो लेश्या की अविशुद्धि ही होती है और न विशुद्धि, कारण उसमे वालत्व और पडितत्व का सम्मिश्रण है। अत॰ वहाँ असक्लिष्टलेश्य तथा अपर्यवजातलेश्य भेदों का निषेध किया गया है। सुधीजन इस पर गम्भीर चिन्तन करें।

---

९७ लेश्या परिमाणों को समझाने के लिये दृष्टान्त :—

९७ १ जम्बू खादक दृष्टान्त

(क) जह जंवुतरुवरेगो, सुपक्कफलभरियनमियसालग्गो।
दिट्ठो छहिं पुरिसेहिं, ते विंती जंवु भक्खेमो॥
किह पुण ? ते वेंतेक्को, आरुहमाणाण जीव संदेहो।
तो छिंदिऊण मूले, पाडेमु ताहे भक्खेमो॥
विति आह एद्दहेण, किं छिणेणं तरूण अम्हं ति ?
साहामहल्लछिंदह, तइओ वेती पसाहाओ॥

गोच्छे चउत्थओ उण, पंचमओ बेति गेण्हह फलाइं ?
छट्ठो बेंती पडिया, एए च्चिय खाह घेत्तुं जे ॥
दिट्ठंतस्सोवणओ, जो बेंति तरू विछिन्नमूलाओ ।
सो वट्टइ किण्हाए, साहमहल्ला उ नीलाए ॥
हवइ पसाहा काऊ, गोच्छा तेऊ फला य पम्हाए ।
पडियाए सुक्कलेसा, अहवा अण्णं उदाहरणं ॥

—आव० अ ४ । सू ६ । हारि० टीका

(ख) पहिया जे छप्पुरिसा परिभट्टारणमज्झ देसम्हि ।
फलभरियरुक्खमेगं पेक्खित्ता ते विचिंतं ति ॥
णिम्मूल खंध साहुवसाहुं छित्तुं चिणित्तु पडिदाइं ।
खाउं फलाइं इदि जं मणेण वयणं हवे कम्मं ॥

—गोजी० गा ५०६-७ । पृ० १८२

छः बंधु किसी उपवन में घूमने गये तथा एक फल से लदे भरे-पूरे अवनत शाखा वाले जामुन वृक्ष को देखा। सबके मन में फलाहार करने की इच्छा जाग्रत हुई। छओं बंधुओं के मन में लेश्या जनित अपने-अपने परिणामों के कारण भिन्न-भिन्न विचार जाग्रत हुए और उन्होंने फल खाने के लिये अलग-अलग प्रस्ताव रखे, उनसे उनकी लेश्या का अनुमान किया जा सकता है।

प्रथम बंधु का प्रस्ताव था कि कौन पेड पर चढ़कर तोडने की तकलीफ करे तथा चढने मे गिरने की आशका भी है। अतः सम्पूर्ण पेड को ही काट कर गिरा दो और आराम से फल खाओ।

द्वितीय बंधु का प्रस्ताव आया कि समूचे पेड को काटकर नष्ट करने से क्या लाभ ? बड़ी-बडी शाखायें काट डालो। फल सहज ही हाथ लग जायंगे तथा पेड भी बच जायगा।

तीसरा बंधु बोला कि बडी डालें काटकर क्या लाभ होगा ? छोटी शाखाओं मे ही फल बहुतायत से लगे हैं उनको तोड लिया जाय। आसानी से काम भी बन जायगा और पेड को भी विशेष नुकसान न होगा।

चतुर्थ बंधु ने सुझाव दिया कि शाखाओं को तोडना ठीक नही। फल के गुच्छे ही तोड़ लिये जाय। फल तो गुच्छों में ही हैं और हमे फल ही खाने हैं। गुच्छे तोडना ही उचित रहेगा।

पचम बधु ने धीमे से कहा कि गुच्छे तोडने की भी आवश्यकता नही है। गुच्छे में तो कच्चे-पक्के सभी तरह के फल होंगे। हमें तो पक्के मीठे फल खाने हैं। पेड को झकझोर दो परिपक्व रसीले फल नीचे गिर पडेंगे। हम मजे से खा लेंगे।

छठे बधु ने मृदुता भरी बोली में सबको समझाया क्यों विचारे पेड को काटते हो, बाढते हो, तोडते हो, झकझोरते हो। देखो। जमीन पर आगे से ही अनेक पके पकाये फल स्वयं निपतित होकर पडे हैं। उठाओ और खाओ। व्यर्थ में वृक्ष को कोई क्षति क्यों पहुँचाते हो।

·६७ २ ग्रामघातक दृष्टान्त

चोरा गामवहत्थं, विणिग्गया एगो वेंति घाएह।
जं पेच्छह सव्वं वा दुपयं च चउप्पयं वावि॥
बिइओ माणुस पुरिसे य, तइओ साउहे चउत्थे य।
पंचमओ जुज्झंते, छट्ठो पुण तत्थिमं भणइ॥
एक्कं ता हरह धणं, बीयं मारेह मा कुणह एयं।
केवल हरह धणंती, उवसंहारो इमो तेसिं॥
सव्वे मारेह त्ती, वट्टइ सो किण्हलेसपरिणामो।
एवं कमेण सेसा, जा चरमो सुक्कलेसाए॥

—आव० अ ४। सू ६। हारि० टीका

छः डाकू किसी ग्राम को लूटने के लिये जा रहे थे। छओं के मन में लेश्याजनित अपने-अपने परिणामों के अनुसार भिन्न-भिन्न विचार जाग्रत हुए। उन्होंने ग्राम को लूटने के लिए अलग-अलग विचार रखे—उनसे उनके लेश्या परिणामों का अनुमान किया जा सकता है।

प्रथम डाकू का प्रस्ताव रहा कि जो कोई मनुष्य या पशु अपने सामने आवे—उन सबको मार देना चाहिए।

द्वितीय डाकू ने कहा—पशुओं को मारने से क्या लाभ? मनुष्यों को मारना चाहिए जो अपना विरोध कर सकते हैं।

तृतीय डाकू ने सुझाया—स्त्रियों का हनन मत करो, दुष्ट पुरुषों का ही हनन करना चाहिए।

चतुर्थ डाकू का प्रस्ताव था कि प्रत्येक पुरुष का हनन नहीं करना चाहिए? जो पुरुष शस्त्र सज्जित हों उन्हीं को मारना चाहिए।

पंचम डाकू बोला—शस्त्र सहित पुरुष भी यदि अपने को देखकर भाग जाते हैं तो उन्हें नहीं मारना चाहिए। सशस्त्र पुरुष जो सामना करे उनको ही मारो।

छठे डाकू ने समझाया कि अपना मतलब धन लूटने से है तो धन लूटें, मारें क्यों? दूसरे का धन छीनना तथा किसी को जान से मारना—दोनों महादोष हैं। अत अपने लूट लें लेकिन मारें किसी को नहीं।

उपरोक्त दोनों दृष्टांत लेश्या परिणामो को समझने के लिये स्थूल दृष्टान्त हैं। ये दोनों दृष्टान्त दिगम्बर-श्वेताम्बर दोनो सम्प्रदायो में प्रचलित हैं। अतः प्रतीत होता है कि ये दृष्टान्त परम्परा से प्रचलित हैं।

'९८ जैनेतर ग्रन्थों में लेश्या के समतुल्य वर्णन :—

९८'१ महाभारत में :—

लेश्या से मिलती भावना महाभारत के शान्ति पर्व की "वृत्रगीता" मे मिलती है जहाँ जगत् के सब जीवों को वर्ण—रंग के अनुसार छः भेदों में विभक्त किया गया है।

षड् जीववर्णाः परमं प्रमाणं कृष्णो धूम्रो नीलमथास्य मध्यम्।
रक्तं पुनः सह्यतरं सुखं तु हारिद्रवर्णं सुसुखं च शुक्लम्॥

—महा० शा० पर्व। अ २८०। श्लो ३३

जीव छः प्रकार के वर्णवाले होते हैं, यथा—कृष्ण, धूम्र, नील, रक्त, हारिद्र तथा शुक्ल। कृष्ण वर्ण वाले जीव को सबसे कम सुख, धूम्र वर्ण वाले जीव को उससे अधिक सुख होता है तथा नील वर्ण वाले जीव को मध्यम सुख होता है। रक्त वर्ण वाले जीव का सुख-दुःख सहने योग्य होता है। हारिद्रवर्ण (पीले वर्ण) वाले जीव सुखी होते हैं तथा शुक्लवर्ण वाले परम सुखी होते हैं। इस प्रकार जीवों के छः वर्णों का वर्णन परम प्रमाणित माना जाता है।

× × × तत्र यदा तमस आधिक्यं सत्त्वरजसोर्न्यूनत्वसमत्वे तदा कृष्णो वर्णः। अन्त्ययोर्वैपरीत्ये धूम्रः। तथा रजस् आधिक्ये सत्त्वतमसोर्न्यूनत्वसमत्वे नीलवर्णः। अन्त्ययोर्वैपरीत्ये मध्यं मध्यमो वर्णः। तच्च रक्तं लोकानां सह्यतरं लोकानां प्रवृत्ति-कुशलानाममूढ़ाना साहसिकानां सत्त्वस्याधिक्ये रजसूतमसोर्न्यूनत्वसमत्वे हारिद्रः पीतवर्णस्तच्च सुखकरं। अन्त्ययोर्वैपरीत्ये शुक्लं तच्चात्यंतसुखकरं × × ×।

—महा० शा० पर्व। अ २८०। श्लो ३३ पर नील० टीका

जब तमोगुण की अधिकता, सत्त्वगुण की न्यूनता और रजोगुण की सम अवस्था हो तब कृष्णवर्ण होता है। तमोगुण की अधिकता, रजोगुण की न्यूनता और सत्त्वगुण की सम अवस्था होने पर धूम्र वर्ण होता है। रजोगुण की अधिकता, सत्त्वगुण की न्यूनता और तमो-गुण की सम अवस्था होने पर नील वर्ण होता है। इसी मे जब सत्त्वगुण की सम अवस्था और तमोगुण की न्यूनावस्था हो तो मध्यम वर्ण होता है। उसका रग लाल होता है। जब सत्त्वगुण की अधिकता, रजोगुण की न्यूनता और तमोगुण की सम अवस्था हो तो हरिद्रा के समान पीतवर्ण होता है। उसीमे जब रजोगुण की सम अवस्था और तमोगुण की न्यूनता हो तो शुक्लवर्ण होता है।

इसके बाद के श्लोक भी तुलनात्मक अध्ययन के लिए पठनीय हैं। जीव किस लेश्या मे कितने समय तक रहता है, इसका वर्णन जैन दर्शन में पल्योपम, सागरोपम आदि काल-गणना शब्दो मे बताया गया है (देखो ·६४) तथा ब्राह्मण ग्रन्थों मे जीव कितने 'विसर्ग' तक किस वर्ण मे रहता है इसका वर्णन महाभारतकार व्यासदेव ने किया है। उन्होंने विसर्ग को विस्तार से समझाया है, क्योंकि वैदिक परम्परा के लिए यह एक अज्ञात बात थी जब कि जैन साहित्य में पल्योपम, सागरोपम आदि काल-गणना की पद्धति सुप्रसिद्ध है।

संहार-विक्षेप-सहस्रकोटीस्तिष्ठंति जीवाः प्रचरन्ति चान्ये।
प्रजाविसर्गस्य च पारिमाण्यं वापीसहस्राणि बहूनि दैत्य ॥
वाप्यः पुनर्योजनविस्तृतास्ताः क्रोशं च गंभीरतयाऽवगाढा।
आयामतः पंचशताश्च सर्वाः प्रत्येकशो योजनत प्रवृद्धा ॥
वाप्या जलं क्षिप्यति वालकोट्या त्वह्ना सकृच्चाप्यथ न द्वितीयम्।
तासां क्षये विद्धि परं विसर्गं संहारमेकं च तथा प्रजानाम ॥

—महा० शा० पर्व। अ २८०। श्लो ३० ३२

सनत्कुमार वृत्र को कहते हैं, "हे दैत्य। प्रजाविसर्ग का परिमाण हजारो बावडी (तालाब) जितना होता है। यह बावडी एक योजन जितनी चौडी, एक कोश जितनी गहरी तथा पाँच सौ योजन जितनी लम्बी है तथा उत्तरोत्तर एक दूसरी से एक एक योजन बड़ी है। अब यदि एक केशाग्र (बाल के किनारे) से एक बावडी के जल को कोई दिन-भर मे एक ही बार उलीचे, दूसरी बार नही तो इस प्रकार उलीचने से उन सारी बावडियों का जल जितने समय में समाप्त हो सकता है, उतने ही समय मे प्राणियों की सृष्टि और सहार के क्रम की समाप्ति हो सकती है।"

समय की यह कल्पना जैनो के व्यवहार पल्योपम समय से मिलती-जुलती है।

जैन दर्शन के अनुसार परम कृष्णलेश्या वाले सप्तम पृथ्वी के नारकी जीव की उत्कृष्ट स्थिति तैतीस सागरोपम की होती है। महाभारत के अनुसार कृष्णवर्णवाले जीव अनेक प्रजाविसर्ग काल तक नरकवासी होते हैं।

कृष्णस्य वर्णस्य गतिर्निकृष्टा स सज्जते नरके पच्यमान।
स्थानं तथा दुर्गतिभिस्तु तस्य प्रजाविसर्गान् सुबहून् वदन्ति ॥

—महा० शा० पर्व। अ २८०। श्लो ३७

कृष्णवर्ण की गति निकृष्ट होती है और वह अनेको प्रजाविसर्ग (कल्प) काल तक नरक भोगता है।

'६८'२ अगुत्तरनिकाय मे :—

'६८'२ १—पूरणकाश्यप द्वारा प्रतिपादित :—

भारत की अन्य प्राचीन श्रमण परम्पराओं में भी 'जाति' नाम से लेश्या से मिलती-जुलती मान्यताओं का वर्णन है। पूरणकाश्यप के अक्रियावाद तथा मक्खलि गोशालक के संसार-विशुद्धिवाद में भी छः जीव भेदों का वर्णन है।

एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"पूरणेन, भंते, कस्सपेन छलभिजातियो पञ्ञत्ता—तण्हाभिजाति पञ्ञत्ता, नीलाभिजाति पञ्ञत्ता, लोहिताभिजाति पञ्ञत्ता, हलिद्दाभिजाति पञ्ञत्ता, सुक्काभिजाति पञ्ञत्ता, परमसुक्काभिजाति पञ्ञत्ता।

"तत्रिदं, भन्ते, पूरणेन कस्सपेन तण्हाभिजाति पञ्ञत्ता, ओरब्भिका सूकरिका साकुणिका मागविका लुद्दा मच्छघातका चोरा चोरघातका बन्धनागारिका ये वा पनञ्ञे पि केचि कुरूरकम्मन्ता।" "तत्रिदं, भन्ते, पूरणेन कस्सपेन नीलाभिजाति पञ्ञत्ता, भिक्खू कण्टकवुत्तिका ये वा पनञ्ञे पि केचि कम्मवादा किरियवादा।" "तत्रिदं, भन्ते, पूरणेन कस्सपेन लोहिताभिजाति पञ्ञत्ता, निगण्ठा एकसाटका।" "तत्रिदं, भन्ते, पूरणेन कस्सपेन हलिद्दाभिजाति पञ्ञत्ता, गिही ओदातवसना अचेलकसावका।" "तत्रिदं, भंते, पूरणेन कस्सपेन सुक्काभिजाति पञ्ञता, आजीवका आजीवकिनियो।" "तत्रिदं, भंते, पूरणेन कस्सपेन परमसुक्काभिजाति पञ्ञता, नन्दो वच्छो किसो सङ्किच्चो मक्खलि गोसालो। पूरणेन, भन्ते, कस्सपेन इमा छलभिजातियो पञ्ञता" त्ति।

—अगुत्तरनिकाय। ६ महावग्गो। ३ छलभिजातिसुत्त।

आनन्द भगवान् बुद्ध को पूछते हैं—"भदन्त! पूरणकाश्यप ने कृष्ण, नील, लोहित, हारिद्र, शुक्ल तथा परम शुक्ल वर्ण ऐसी छः अभिजातियाँ कही है। खाटकी (खटिक), पारधी इत्यादि मनुष्य का कृष्ण जाति में समावेश होता है। भिक्षुक आदि कर्मवादी मनुष्यो का नील जाति में, एक वस्त्र रखनेवाले निर्ग्रन्थो का लोहित जाति मे, सफेद वस्त्र धारण करने वाले अचेलक श्रावको का हारिद्र जाति मे, आजीवक साधु तथा साध्वियो का शुक्ल जाति में तथा नन्द, वच्छ, किस, संकिच्च और मक्खली गोशालक का परम शुक्ल जाति में समावेश होता है।"

'६८'२'२ भगवान् बुद्ध द्वारा प्रतिपादित छः अभिजातियाँ :—

"अहं खो पनानन्द, छलभिजातियो पञ्ञापेमि। तं सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो

पञ्चस्सोसि। भगवा एतदवोच—"कतमा चानन्द, छलभिजातियो? इधानन्द, एकच्चो कण्हाभिजातियो समानो कण्हं धम्मं अभिजायति। इध पनानन्द, एकच्चो कण्हाभिजातियो समानो सुक्कं धम्मं अभिजायति। इध पनानन्द एकच्चो कण्हाभिजातियो समानो अकण्हं असुक्कं निब्बानं अभिजायति। इध पनानन्द, एकच्चो सुक्काभिजातियो समानो कण्हं धम्मं अभिजायति। इध पनानन्द, एकच्चो सुक्काभिजातियो समानो सुक्कं धम्मं अभिजायति। इध पनानन्द, एकच्चो सुक्काभिजातियो समानो अकण्हं असुक्कं निब्बानं अभिजायति।

—अगुत्तरनिकाय। ६ महावग्गो। ३ छलाभिजाति सुत्त।

भगवान बुद्ध भी वर्ण की अपेक्षा से छ अभिजातियाँ बतलाते हैं किन्तु कृष्ण और शुक्ल वर्ण के आधार पर। यथा, (१) कृष्ण अभिजाति कृष्ण धर्म करने वाली, (२) कृष्ण अभिजाति शुक्ल धर्म करने वाली, (३) कृष्ण अभिजाति अकृष्ण-अशुक्ल निर्वाण धर्म करने वाली, (४) शुक्ल अभिजाति कृष्ण धर्म करने वाली, (५) शुक्ल अभिजाति शुक्ल धम करने वाली तथा (६) शुक्ल अभिजाति अकृष्ण-अशुक्ल निर्वाण धर्म करने वाली।

९८ ३ पातजल योगदर्शन मे :—

योगी के कर्म तथा दूसरो का चित्त कृष्ण, अशुक्ल-अकृष्ण तथा शुक्ल ऐसा त्रिविध प्रकार का होता है, ऐसा पातजल योगदर्शन मे वर्णित है :—

कर्माशुक्लाकृष्णं योगिनस्त्रिविधमितरेषा।

—पायो० पाद ४। सू ७

यह त्रिविध वर्ण षड्विध लेश्या, वर्ण अथवा जाति का सक्षिप्त रूपान्तर मालूम होता है।

---

९९ लेश्या सम्बन्धी फुटकर पाठ :—

९९ १ भिक्षु और लेश्या :—

गुत्तो वईए य समाहिपत्तो, लेसं समाहट्टु परिवएज्जा।

—सूय० श्रु १। अ १०। गा १५। पृ० १२५

भिक्षु वचन गुप्ति तथा समाधि को प्राप्त होकर लेश्या (परिणामो) को समाहित करके सयम मे विहरे।

तम्हा एयासि लेसाण, अणुभावे वियाणिया।
अप्पसत्थाओ वज्जित्ता, पसत्थाओऽहिट्ठिए मुणी॥

—उत्त० अ ३४। गा ६१। पृ० १०४८

लेश्याओ के अनुभावों को जानकर संयमी मुनि अप्रशस्त लेश्याओं को छोड़कर प्रशस्त लेश्या में अवस्थित हो—विचरे।

लेसासु छसु काएसु, छक्के आहारकारणे।
जे भिक्खू जयई निच्चं, से न अच्छइ मंडले॥

—उत्त० अ ३१। गा ८। पृ० १०३८

जो साधु छः लेश्या, छः काय तथा आहार करने के छः कारणों मे सदा सावधानी वरतता है वह भव भ्रमण नही करता। साधु को छ लेश्याओं मे कैसी सावधानी बरतनी चाहिए—यह एक विचारणीय विषय है।

'६६'२ देवता ओर उनकी दिव्य लेश्या :—

××× दिव्वेणं वन्नेणं दिव्वेणं गंधेणं दिव्वेण फासेण दिव्वेणं संघयणेणं दिव्वेणं संठाणेणं दिव्वाए इड्ढिए दिव्वाए जुईए दिव्वाए पभाए दिव्वाए छायाए दिव्वाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेसाए दस दिसाओ उज्जोवेमाणा पभासेमाणा ×××।

—पण्ण० प २। सू २८। पृ० २६६

दिव्य वर्ण आदि के साथ देवताओं की लेश्या भी दिव्य होती है तथा दसो दिशाओं मे उद्द्योतमान यावत् प्रभासमान होती है। ऐसा पाठ प्रज्ञापना पद २ में अनेक स्थलो पर है। टीकाकार ने दिव्य लेश्या का अर्थ देह तथा वर्ण की सुन्दरता रूप "लेश्या—देहवर्ण-सुन्दरतया"—किया है।

ऐसा पाठ देवताओं के वर्णन मे अनेक जगह है।

'६६'३ नारकी और लेश्या परिणाम :—

इमीसे ण भंते! रयणप्पभाए पुढवीए नेरइया केरिसयं पोग्गलपरिणामं पच्चणुभवमाणा विहरंति? गोयमा! अणिट्ठं जाव अमणामं, एवं जाव अहेसत्तमाए [एवं णेयव्वं]।

—जीवा० प्रति ३। उ ३। सू ६५। पृ० १४५-१४६

पोग्गलपरिणामे वेयणा य लेसा य नाम गोए य।
अरई भए य सोगे खुहापिवासा य वाही य॥
उस्सासे अणुतावे कोहे माणे य माया लोहे य।
चत्तारि य सण्णाओ नेरइयाण तु परिणामे॥

—जीवा० प्रति ३। उ ३। सू ६५। टीका। पृ० १४६

नारकियों का लेश्या परिणाम अनिष्टकर, अकंतकर, अप्रीतिकर, अमनोज्ञ तथा अनभावना होता है। मूल मे पुद्गल-परिणाम का पाठ है। टीकाकार ने उपर्युक्त संग्रहणीय गाथा देकर नारकी के अन्यान्य परिणामों को भी इसी प्रकार जानने को कहा है। अर्थात् पुद्गल-परिणाम की तरह लेश्या आदि परिणाम भी अनिष्टकर यावत् अनभावने होते हैं।

९९·४ निक्षिप्त तेजोलेश्या के पुद्गल अचित्त होते हैं —

कुद्धस्स अणगारस्स तेयलेस्सा निसट्ठा समाणी दूरं गता दूरं निपतइ, देसं गता, देसं निपतइ, जहिं जहिं च ण सा निपतइ, तहिं तहिं च ण ते अचित्ता वि पोग्गला ओभासंति, जाव पभासंति।

—भग० श ७। उ १०। प्र ११। पृ० ५३०

क्रोधित अणगार—साधु द्वारा निक्षिप्त तेजोलेश्या, दूर या निकट, जहाँ-जहाँ जाकर गिरती है, वहाँ-वहाँ तेजोलेश्या के अचित्त पुद्गल अवभासित यावत् प्रभासित होते हैं।

९९·५ परिहारविशुद्ध चारित्री और लेश्या :—

लेश्याद्वारे—तेजःप्रभृतिकासूत्तरासु तिसृषु विशुद्धासु लेश्यासु परिहारविशुद्धिकं कल्पं प्रतिपद्यते, पूर्वप्रतिपन्नः पुनः सर्वासु अपि कथंचिद् भवति, तत्रापीतरास्व-विशुद्धलेश्यासु नात्यन्तसंक्लिष्टासु वर्तते, तथाभूतासु वर्तमानो(ऽपि) न प्रभूत-कालमवतिष्ठते, किंतु स्तोकं, यतः स्ववीर्यवशात् झटित्येव ताभ्यो व्यावर्तते, अथ प्रथमत एव कस्मात् प्रवर्तते ? उच्यते, कर्मवशात्, उक्तं च—

"लेसासु विसुद्धासु पडिवज्जइ तीसु न उण सेसासु।
पुव्वपडिवन्नओ पुण होज्जा सव्वासु वि कहंचि॥
णऽच्चंतसंकिलिट्ठासु थोवं कालं स हंदि इयरासु।
चित्ता कम्माण गई तहा वि विरियं (विवरीयं) फलं देइ॥"

—पण्ण० प १। सू ७६। टीका

तेजोलेश्या प्रभृति पीछे की तीन विशुद्ध लेश्या में परिहारविशुद्धिक कल्प का स्वीकरण होता है। पूर्वप्रतिपन्न परिहारविशुद्धि को किसीने पूर्व मे प्राप्त किया हो तो उसका सब लेश्याओं में कथंचित् रहना हो सकता है, पर वह अत्यन्त संक्लिष्ट और अविशुद्ध लेश्या मे नहीं रहता है। यदि वैसी लेश्या में रहे भी तो अधिक लम्बे समय तक नहीं रहता है, थोड़े काल तक रहता है, क्योंकि निजकी सामर्थ्य से वह शीघ्र ही उससे निवृत्त हो जाता है। प्रश्न—तो पहले उस अविशुद्ध लेश्या में प्रवर्तन करना ही क्यों है ? कर्म के वशीभूत होकर करता है। कहा भी है—

"तीन विशुद्ध लेश्या में कल्प को स्वीकार करता है। लेकिन तीन अविशुद्ध लेश्या मे कल्प को स्वीकार नही करता है। यदि कल्प को पूर्व मे स्वीकार किया हुआ हो तो सर्व लेश्याओ में कथंचित् प्रवर्तन करता है लेकिन अत्यन्त संक्लिष्ट अविशुद्ध लेश्या मे प्रवर्तन नही करता है। अविशुद्ध लेश्या मे प्रवर्तन करता है तो थोडे समय के लिए करता है, क्योंकि कर्म की गति विचित्र होती है। फिर भी वीर्य—सामर्थ्य फल देता है।"

·९९ ६ लेसणाबंध :—

टीकाकारों ने 'लिश्यते—श्लिष्यते इति लेश्या' इस प्रकार लेश्या की व्याख्या की है। भगवतीसूत्र में 'अल्लियावणबंध' के भेदों में 'लेसणाबंध' एक भेद बताया गया है। आत्मप्रदेशों के साथ लेश्याद्रव्यों का किस प्रकार का बंध होता है सम्भवतः इसकी भावना 'लेसणाबंध' से हो सके।

से किं तं लेसणाबंधे ? लेसणाबंधे जन्नं कुड्डाणं कोट्टिमाणं खंभाणं पासायणं कट्ठाणं चम्माणं घडाणं पडाणं कडाण छुहाचिक्खिल्लसिलेसलक्खमहुसित्थमाइएहिं लेसणएहिं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, सेत्तं लेसणा-बंधे।

—भग० श ८। उ ९। प्र १३। पृ० ५६१-६२

टीका—**श्लेषणा—श्लथद्रव्येण द्रव्ययोः सम्बन्धनं तद्रूपो यो बन्धः स तथा।**

शिखर का, कुट्टिम का, स्तम्भ का, प्रासाद का, लकड़ी का, चमडे का, घडे का, वस्त्र का, कडी का, खडिया का, पक वा श्लेष—वज्रलेप का, लाख का, मोम आदि द्रव्यों का या इन द्रव्यों द्वारा श्लेषणाबंध होता है। यह बंध जघन्य मे अंतर्मुहूर्त तथा उत्कृष्ट मे संख्यात काल तक स्थायी रहता है।

·९९·७ नारकी और देवता की द्रव्य-लेश्या :—

से नूणं भंते! कण्हलेसा नीललेसं पप्प णो तारूवत्ताए जाव णो ताफासत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ ? हंता गोयमा! कण्हलेसा नीललेस्सं पप्प णो तारूवत्ताए, णो तावन्नत्ताए, णो तागंधत्ताए, णो तारसत्ताए, णो ताफासत्ताए भुज्जो २ परिणमइ। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ ? गोयमा! आगारभावमायाए वा से सिया, पलिभाग-भावमायाए वा से सिया। कण्हलेस्सा णं सा, णो खलु नीललेसा तत्थ गया ओसक्कइ उस्सक्कइ वा, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ—'कण्हलेसा नीललेसं पप्प णो तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ। से नूणं भंते! नीललेसा काउलेसं पप्प णो तारूवत्ताए जाव

भुज्जो भुज्जो परिणमइ ? हंता गोयमा ! नीललेसा काउलेसं पप्प णो तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ । से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चइ— 'नीललेसा काउलेसं पप्प णो तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ ? गोयमा ! आगारभावमायाए वा सिया, पलिभागभावमायाए वा सिया । नीललेसा ण सा, णो खलु काऊलेसा तत्थगया ओसक्कइ उस्सक्कइ वा, से एएणट्ठेण गोयमा ! एवं वुच्चइ – 'नीललेसा काऊलेसं पप्प णो तारूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमइ । एवं काऊलेसा तेऊलेसं पप्प, तेऊलेसा पम्हलेस पप्प, पम्हलेसा सुक्कलेसं पप्प । से नूण भंते ! सुक्कलेसा पम्हलेसं पप्प, णो तारूवत्ताए जाव परिणमइ ? हंता गोयमा ! सुक्कलेसा त चेव । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—'सुक्कलेसा जाव णो परिणमइ ? गोयमा ! आगारभावमायाए वा जाव सुक्कलेस्सा णं सा, णो खलु सा पम्हलेसा, तत्थगया ओसक्कइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—'जाव णो परिणमइ' ।

—पण्ण० प १७ । उ ५ । सू ५५ । पृ० ४५१

उपरोक्त सूत्र पर टीकाकार ने इस प्रकार विवेचन किया है '—

'से नूणं भंते !' इत्यादि, इह तिर्यङ्मनुष्यविषयं सूत्रमनन्तरमुक्त', इदं तु देवनैरयिक विषयमवसेयं, देवनैरयिका हि पूर्वभवगतचरमान्तर्मुहूर्त्तादारभ्य यावत् परभवगतमाद्यमन्तर्मुहूर्त्तं तावदवस्थितलेश्याका. ततोऽमीषा कृष्णादिलेश्याद्रव्याणा परस्परसम्पर्केऽपि न परिणम्यपरिणामकभावो घटते तत सम्यगधिगमाय प्रश्नयति—'से नूणं भंते !' इत्यादि, से शब्दोऽथशब्दार्थ', स च प्रश्ने, अथ नूनं– निश्चितं भदंत ! कृष्णलेश्या – कृष्णलेश्याद्रव्याणि नीललेश्या – नीललेश्याद्रव्याणि प्राप्य, प्राप्तिरिह प्रत्यासन्नत्वमात्रं गृह्यते न तु परिणम्यपरिणामकभावेनान्योऽन्यसंश्लेप, तद्रूपतया -- तदेव–नीललेश्याद्रव्यगतं रूपं– स्वभावो यस्य कृष्णलेश्यास्वरूपस्य तत्तद्रूपं तद्भावस्तद्रूपता तया, एतदेव व्याचष्टे—न तद्वर्णतया न तद्गन्धतया न तद्रसतया न तत्स्पर्शतया भूयो भूयः परिणमते, भगवानाह—हन्तेत्यादि, हन्त गौतम ! कृष्णलेश्येत्यादि, तदेव ननु यदि न परिणमते तर्हि कथं सप्तमनरकपृथिव्यामपि सम्यक्त्वलाभ', स हि तेजोलेश्यादिपरिणामे भवति सप्तमनरकपृथिव्या च कृष्णलेश्येति, कथं चेतत् वाक्यं घटते ? 'भावपरावत्तीए पुण सुरनेरइयाणंपि छल्लेसा' इति [भावपरावृत्ते पुन सुरनैरयिकाणामपि षड् लेश्या.] लेश्यान्तरद्रव्यसम्पर्कतस्तद्रूपतया परिणामासंभवेन भावपरावृत्तेरेवायोगात्, अत एव तद्विपये प्रश्ननिर्वचनसूत्रे आह—'से केणट्ठेणं भंते !' इत्यादि, तत्र प्रश्नसूत्रं सुगमं निर्वचनसूत्रं—आकार -तच्छायामात्र आकारस्य भाव — सत्ता आकारभावः स एव मात्रा आकारभावमात्रा तयाऽऽकारभावमात्रया मात्रा-

शब्द आकारभावातिरिक्तपरिणामान्तरप्रतिपत्तिव्युदासार्थः, 'से' इति सा कृष्णलेश्या नीललेश्यारूपतया स्यात् यदिवा प्रतिभागः—प्रतिबिम्बमादर्शादाविव विशिष्टः प्रतिबिम्ब्यवस्तुगत आकारः प्रतिभाग एव प्रतिभागमात्रा तया अत्रापि मात्राशब्दः प्रतिबिम्बातिरिक्त परिणामान्तरव्युदासार्थः स्यात् कृष्णलेश्या नीललेश्यारूपतया, परमार्थत पुनः कृष्णलेश्यैव नो खलु नीललेश्या सा, स्वस्वरूपापरित्यागात्, न खल्वादर्शादयो जपाकुसुमादिसन्निधानतस्तत्प्रतिबिम्बमात्रामादधाना नादर्शादय इति परिभावनीयमेतत्, केवलं सा कृष्णलेश्या तत्र—स्वस्वरूपे गता—अवस्थिता सती उत्ष्वष्कते तदाकार भावमात्रधारणतस्तत्प्रतिबिम्बमात्रधारणतो वोत्सर्प्पतीत्यर्थः, कृष्णलेश्यातो हि नीललेश्या विशुद्धा ततस्तदाकारभावं तत्प्रतिबिम्बमात्रं वा दधाना सती मनाक् विशुद्धा भवतीत्युत्सर्प्पतीति व्यपदिश्यते, उपसंहारवाक्यमाह—'से एएणट्ठे ण'मित्यादि, सुगमं। एवं नीललेश्यायाः कापोतलेश्यामधिकृत्य कापोतलेश्यायास्तेजोलेश्यामधिकृत्य तेजोलेश्यायाः पद्मलेश्यामधिकृत्य पद्मलेश्यायाः शुक्ललेश्यामधिकृत्य सूत्राणि भावनीयानि।

सम्प्रति पद्मलेश्यामधिकृत्य शुक्ललेश्याविषयं सूत्रमाह—'से नूणं भंते। सुक्कलेसा पम्हलेसं पप्प' इत्यादि, एतच्च प्राग्वद् भावनीयं, नवरं शुक्ललेश्यापेक्षया पद्मलेश्या हीनपरिणामा ततः शुक्ललेश्या पद्मलेश्याया आकारभावं तत्प्रतिबिम्बमात्रं वा भजन्ती मनागविशुद्धा भवति ततोऽवष्वष्कते इति व्यपदिश्यते, एवं तेजः कापोतनीलकृष्णलेश्याविषयाण्यपि सूत्राणि भावनीयानि, ततः पद्मलेश्यामधिकृत्य तेजः कापोतनीलकृष्णलेश्याविषयाणि तेजोलेश्यामधिकृत्य कापोतनीलकृष्णविषयाणि कापोतलेश्यामधिकृत्य नीलकृष्णलेश्याविषये नीललेश्यामधिकृत्य कृष्णलेश्याविषयमिति, अमूनि च सूत्राणि साक्षात् पुस्तकेषु न दृश्यन्ते केवलमर्थतः प्रतिपत्तव्यानि, तथा मूलटीकाकारेण व्याख्यानात्, तदेवं यद्यपि देवनैरयिकाणामवस्थितानि लेश्याद्रव्याणि तथापि तत्तदुपादीयमानलेश्यान्तरद्रव्यसम्पर्कतः तान्यपि तदाकारभावमात्रां भजन्ते इति भावपरावृत्तियोगतः षडपि लेश्या घटन्ते, ततः सप्तमनरकपृथिव्यामपि सम्यक्त्वलाभ इति न कश्चिद्दोषः।

यह सूत्र देव तथा नारकी के सम्बन्ध में जानना क्योंकि देव तथा नारकी पूर्वभव के शेष अन्तर्मुहूर्त्त से आरम्भ करके परभव के प्रथम अन्तर्मुहूर्त्त तक अवस्थित लेश्यावाले होते हैं। इससे इनके कृष्णादिलेश्या द्रव्यों का परस्पर में सम्बन्ध होते हुए भी परिणमन—परिणामक भाव नहीं घटता है, इसलिए यथार्थ परिज्ञान के लिए प्रश्न किया गया है। हे भगवन्! क्या यह निश्चित है कि कृष्णलेश्या के द्रव्य नीललेश्या के द्रव्यों को प्राप्त करके [यहाँ प्राप्ति का अर्थ समीप मात्र है—लेकिन परिणमन—परिणामक भाव द्वारा परस्पर

सम्बन्ध रूप अर्थ नही है] 'तद्रूपतया'—'नीललेश्या के रूप में, 'तद्वर्णतया' नीललेश्या के वर्ण मे, 'तद्गन्धतया' नीललेश्या की गन्ध मे, 'तद्रसतया' नीललेश्या के रस में, 'तद्स्पर्शतया' नीललेश्या के स्पर्श मे, वारम्बार परिणमन नही करते हैं।

भगवान् उत्तर देते हैं—हे गौतम। 'अवश्य कृष्णलेश्या नीललेश्या मे परिणमन नही करती है।' अब प्रश्न उठता है कि सातवीं नरक पृथ्वी मे तब सम्यक्त्व की प्राप्ति कैसे होती है ? क्योंकि जब तेजोलेश्यादि शुभ लेश्या के परिणाम होते हैं, तब सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है तथा सातवी नरक पृथ्वी मे कृष्णलेश्या ही होती है। तथा 'भाव की परावृत्ति होने से देव तथा नारकियों के भी छः लेश्याएँ होती हैं', यह वाक्य कैसे घटेगा ? क्योंकि अन्य लेश्या द्रव्यों के सम्बन्ध से यदि तद्रूप परिणमन असभव है तो भाव की परावृत्ति नही हो सकती। अतः गौतम फिर से प्रश्न करते हैं—भगवन्! आप यह किस अर्थ में कहते हैं ? भगवान उत्तर देते हैं कि उक्त स्थिति में आकारभावमात्र—छायामात्र परिणमन होता है अथवा प्रतिभाग-प्रतिविम्ब मात्र परिणमन होता है। वहाँ कृष्णलेश्या प्रतिबिम्ब मात्र में नीललेश्या रूप होती है। लेकिन वास्तविक रूप में तो वह कृष्णलेश्या ही है, नीललेश्या नहीं है, क्योंकि वह स्व स्वरूप का त्याग नही करती है। जिस प्रकार दर्पण में जवाकुसुम आदि का प्रतिबिम्ब पडता है, वह दर्पण जवाकुसुम रूप नही होता, केवल उसमे जवाकुसुम का प्रतिविम्ब दिखाई देता है। इसी प्रकार लेश्या के सम्बन्ध में जानना।

इसी प्रकार अवशेष पाठ जानने।

यह सूत्र पुस्तकों मे साक्षात् नही मिलता, लेकिन केवल अर्थ से जाना जाता है, क्योंकि इस रीति से मूल टीकाकार ने व्याख्या की है। इस प्रकार देव और नारकियों के लेश्या द्रव्य अवस्थित हैं। फिर भी उनकी लेश्या अन्यान्य लेश्याओं को ग्रहण करने से अथवा दूसरी-दूसरी लेश्या के द्रव्यों से सम्बन्ध होने से उस लेश्या का आकारभावमात्र धारण करती है। अतः प्रतिविम्ब भावमात्र भाव की परावृत्ति होने से छः लेश्या घटती है, उससे सातवी नरक पृथ्वी मे सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है—इस कथन मे कोई दोष नही आता है।

९९ ८ चन्द्र-सूर्य-ग्रह-नक्षत्र-तारा की लेश्याएँ :—

बहिया णं भंते। मणुस्सखेत्तस्स ते चंदिमसूरियगहणक्खत्ततारारूवा ते णं भंते। देवा किं उड्ढोववण्णगा × × × दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा सुहलेस्सा सीयलेस्सा मन्दलेस्सा मदायवलेस्सा चित्तंतरलेसागा कूडा इव ठाणाद्विता अण्णोण्णसमोगाढाहिं लेसाहिं ते पदेसे सव्वओ समंता ओभासेंति उज्जोवेंति तवंति पभासेंति।

—जीवा० प्रति ३। उ २। सू १७९। पृ० २१९-२२०

शुभलेश्याः, एतच्च विशेषणं चन्द्रमसः प्रति, तेन नातिशीततेजसः किन्तु सुखोत्पादहेतुपरमलेश्याका इत्यर्थः, मन्दलेश्या, एतच्च विशेषणं सूर्यान् प्रति, तथा च एतदेव व्याचष्टे —'मन्दातपलेश्याः' मन्दा नात्युष्णस्वभावा आतपरूपा लेश्या-रश्मि संघातो येषा ते तथा, पुनः कथम्भूताश्चन्द्रादित्याः ? इत्याह—'चित्रान्तरलेश्याः' चित्रमन्तरं लेश्या च येषा ते तथा, भावार्थश्चास्य पदस्य प्रागेवोपदर्शितः, ['चित्रान्तर-लेश्याका.' चित्रमन्तरं लेश्या च प्रकाशरूपा येषा ते तथा, तत्र चित्रमन्तरं चन्द्राणा सूर्यान्तरितत्वात् सूर्याणा चन्द्रान्तरितत्वात्, चित्रा लेश्या चन्द्रमसा शीतरश्मित्वात् सूर्याणामुष्णरश्मित्वात्'—सू० १७७ टीका] त इत्थम्भूताश्चन्द्रादित्याः परस्परम-वगाढाभिर्लेश्याभिः, तथाहि--चन्द्रमसा सूर्याणा च प्रत्येकं लेश्या योजनशतसहस्र-प्रमाणविस्तारा, चंद्रसूर्याणा च सूचीपङ्क्त्या व्यवस्थिताना परस्परमन्तरं पंचाशद् योजनसहस्राणि, ततश्चन्द्रप्रभासम्मिश्रा सूर्यप्रभाः सूर्यप्रभासम्मिश्राश्च चन्द्रप्रभाः इतीत्थं परस्परमवगाढाभिर्लेश्याभिः। 'कूटानीव'—पर्वतोपरिव्यवस्थितशिखराणीव 'स्थानस्थिताः सदैवैकत्र स्थाने स्थितास्तान् तान् प्रदेशान् स्वस्वप्रत्यासन्नान् उद्द्योतयन्ति अवभासयन्ति तापयन्ति प्रकाशयन्ति।

—जीवा० प्रति ३। उ २। सू १७६ टीका

मनुष्य क्षेत्र के बाहर जो चन्द्र-सूर्य-ग्रह-नक्षत्र-तारा हैं वे ज्योतिषी देव ऊर्ध्वोत्पन्न हैं यावत् दिव्य भोगोपभोगों को भोगते हुए विचरते हैं यावत् शुभलेश्या, शीतलेश्या, मन्द-लेश्या, मन्दातपलेश्या तथा चित्रान्तरलेश्या वाले हैं। वे शीर्ष स्थान मे स्थित रहते हैं तथा उनकी लेश्याएँ परस्पर में अवगाहित होकर मनुष्य क्षेत्र के बाहर के प्रदेश को सर्वतः चारों तरफ से अवभासित, उद्योतित, आतप्त तथा प्रभासित करती हैं।

लेश्या विशेषणों सहित ज्योतिषी देवो के सम्बन्ध मे ऐसे पाठ अनेक स्थलो पर मिलते हैं। हमने उनकी लेश्याओ की भिन्नता तथा विशेषताओं को दिखाने के लिए उनमे से एक पाठ ग्रहण किया है।

टीकाकार के अनुसार चन्द्रमा की लेश्या को शुभलेश्या कहा गया है। टीकाकार ने अन्यत्र 'सुहलेस्सा' का सुखलेश्या अर्थात् सुखदायक लेश्या अर्थ भी किया है। यह शुभलेश्या न अधिक शीतल होती है, न अधिक तप्त। सुख उत्पन्न करने वाली वह परम-लेश्या होती है।

'सीयलेस्सा' का टीकाकार ने कोई अर्थ नही किया है।

सूर्य की लेश्या को मन्द विशेषण दिया जाता है। अतः सूर्य की लेश्या को मन्दलेश्या कहा गया है।

जो लेश्या मन्द तो है, अति उष्ण स्वभाववाली आतपरूपा नही है उसे मन्दातप लेश्या कहा गया है। इस लेश्या मे रश्मियो का सघात होता है।

चित्रान्तर लेश्या प्रकाशरूपा होती है। चन्द्रमा की लेश्या सूर्यान्तर तथा सूर्य की लेश्या चन्द्रमान्तर होकर जो लेश्या बनती है वह चित्रान्तर लेश्या कहलाती है। चित्रालेश्या चन्द्रमा की शीत रश्मि तथा सूर्य की उष्ण रश्मि के मिश्रण से बनती है। चन्द्र तथा सूर्य की लेश्याएँ प्रत्येक लाख योजन विस्तृत होती हैं तथा ऋजु (सीधी) श्रेणी मे व्यवस्थित एक दूसरे में पचास हजार योजन परस्पर मे अवगाहित होती हैं। वहाँ चन्द्र की प्रभा सूर्य की प्रभा से मिश्रित होती है तथा सूर्य की प्रभा चन्द्र की प्रभा से मिश्रित होती है। इसीलिए उनकी लेश्या परस्पर मे अवगाहित होती है ऐसा कहा गया है। और इस प्रकार शीघ स्थान मे सदैव स्थित चन्द्र-सूर्य-ग्रह-नक्षत्र-तारा की लेश्याएँ परस्पर में अवगाहित होकर उस मनुष्य क्षेत्र के बाहर अपने-अपने निकटवर्ती प्रदेश को उद्द्योतित, अवभासित, आतप्त तथा प्रकाशित करती है।

'९९ ९ गर्भ मे मरनेवाले जीव की गति में लेश्या का योग :—

'९९ ९ १ नरकगति मे :—

जीवे णं भंते। गब्भगए समाणे नेरइएसु उववज्जेज्जा? गोयमा। अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा। से केणट्ठेण? गोयमा। से ण सन्नि-पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहि पज्जत्तए वीरियलद्धीए × × × संगामं संगामेइ। से ण जीवे अत्थकामए, रज्जकामए × × × कामपिवासिए, तच्चित्ते, तम्मणे, तल्लेसे तदज्झवसिए × × × एयंसि ण अंतरंसि कालं करेज्ज नेरइएसु उववज्जइ।

—भग० श० १। उ ७। प्र २५४-५५। पृ० ४०६ ७

सर्व पर्याप्तियो मे पूर्णता का प्राप्त गर्भस्थ सज्ञी पचेन्द्रिय जीव वीर्यलब्धि आदि द्वारा चतुरगिणी सेना की विकुर्वणा करके शत्रु की सेना के साथ सग्राम करता हुआ, धन का कामी, राज्य का कामी यावत् काम का पिपासु जीव, उस तरह के चित्तवाला, मन वाला, लेश्या वाला, अध्यवसाय वाला होकर वह गर्भस्थ जीव यदि उस काल मे मरण को प्राप्त हो तो नरक मे उत्पन्न होता है।

गर्भस्थ जीव गर्भ मे मरकर यदि नरक मे उत्पन्न हो तो मरणकाल मे उस जीव के लेश्या परिणाम भी तदुपयुक्त होते हैं।

९९ ९ २ देवगति मे :—

जीवे ण भंते। गब्भगए समाणे देवलोगेसु उववज्जेज्जा? गोयमा। अत्थेगइए

उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा। से केणट्ठेणं ? गोयमा। से ण सन्नि-पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए तहारूवस्स समणस्स वा, माहणस्स वा अंतिए × × × तिव्वधम्माणुरागरत्ते, से ण जीवे धम्मकामए × × × मोक्खकामए × × × पुणसग्गमोक्खपिवासिए तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसिए × × × एयंसि ण अंतरंसि कालं करेज्ज देवलोगेसु उववज्जइ।

—भग० श १। उ ७। प्र २५६-५७। पृ० ४०७

सर्व पर्याप्तियों में पूर्णता को प्राप्त गर्भस्थ संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव तथारूप श्रमण-माहण के पास आर्यधर्म के एक भी वचन को सुनकर आदि, धर्म का कामी होकर यावत् मोक्ष का पिपासु होकर, उस तरह के चित्तवाला, मनवाला, लेश्यावाला, अध्यवसायवाला होकर गर्भस्थ जीव यदि उस काल में मरण को प्राप्त हो तो वह देवलोक में उत्पन्न होता है।

गर्भस्थ जीव गर्भ मे मरकर यदि देवलोक में उत्पन्न हो तो मरणकाल मे उस जीव के लेश्या परिणाम भी तद्रुपयुक्त होते हैं।

'६६'१० लेश्या में विचरण करता हुआ जीव और जीवात्मा :—

अन्नउत्थियाण भंते। एवमाइक्खंति जाव परूवेंति—एवं खलु पाणाइवाए, मुसावाए, जाव मिच्छादंसणसल्ले वट्टमाणस्स अन्ने जीवे अन्ने जीवाया, पाणाइवाय वेरमणे जाव परिग्गहवेरमणे, कोहविवेगे जाव मिच्छादसणसल्लविवेगे वट्टमाणस्स अन्ने जीवे अन्ने जीवाया , उप्पत्तियाए जाव परिणामियाए वट्टमाणस्स अन्ने जीवे अन्ने जीवाया , उग्गहे ईहा अवाए धारणाए वट्टमाणस्स जाव जीवाया , उट्ठाणे जाव परक्कमे वट्टमाणस्स जाव जीवाया , नेरइयत्ते, तिरिक्खमणुस्सदेवत्ते वट्टमाणस्स जाव जीवाया , नाणावरणिज्जे जाव अंतराइए वट्टमाणस्स जाव जीवाया, एवं कण्हलेस्साए जाव सुक्कलेस्साए , सम्मदिट्ठीए ३, एवं चक्खुदंसणे ४, आभिणिवोहियनाणे ५, मइ-अन्नाणे ३, आहारसन्नाए ४ एवं ओरालियसरीरे ५ एवं मणजोए ३ सागारोवओगे अणागारोवओगे वट्टमाणस्स अण्णे जीवे अण्णे जीवाया , से कहमेयं भंते। एवं ? गोयमा। जं णं ते अन्नउत्थिया एवमाइक्खंति, जाव मिच्छं ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा। एवमाइक्खामि जाव परूवेमि—एवं खलु पाणाइवाए जाव मिच्छादंसण-सल्ले वट्टमाणस्स सच्चेव जीवे सच्चेव जीवाया जाव अणागारोवओगे वट्टमाणस्स सच्चेव जीवे सच्चेव जीवाया।

—भग० श० १७। उ २। प्र ६। पृ० ७५६

प्राणातिपातादि १८ पापो मे, प्राणातिपातविरमणादि १८ पाप-विरमणो मे, औत्पातिकी आदि ४ बुद्धियों मे, अवग्रह-ईहा-अवाय-धारणा मे, उत्थान यावत् पुरुषाकार पराक्रम

में, नैरयिकादि ४ गतियों में, ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मों मे, कृष्णादि छओं लेश्याओं मे, सम्यग्दृष्टि आदि तीन दृष्टियों मे, चक्षुदर्शनादि चार दर्शनों मे, आभिनिबोधिकज्ञानादि ५ ज्ञानों मे, मतिअज्ञान आदि ३ अज्ञानों में, आहारादि ४ संज्ञाओं मे, औदारिकादि ५ शरीरों मे, मनोयोग आदि ३ योगों मे, साकारोपयोग, अनाकारोपयोग में वर्तता हुआ जीव तथा जीवात्मा एक ही है—भिन्न-भिन्न नहीं है।

इसके विपरीत अन्यतीर्थियों की जो प्ररूपणा है उसका भगवान् ने यहाँ निराकरण किया है।

प्राणातिपात आदि भाव विभावों, छओं लेश्याओं यावत् अनाकार उपयोग मे विचरण करता हुआ जीव अन्य है, जीवात्मा अन्य है—अन्य तीर्थियों का यह कथन गलत है। भगवान् महावीर कहते है कि वास्तविक सत्य यह है कि प्राणातिपात यावत् छओं लेश्याओं यावत् अनाकार उपयोग आदि भाव-विभावों में विचरण करता हुआ जीव वही है, जीवात्मा वही है। दोनों अभिन्न हैं।

साख्यादि मतों के अनुसार भाव-विभावों मे विचरण करता हुआ जीव (प्रकृति) अन्य है तथा जीवात्मा (पुरुष) अन्य है—इसका निराकरण करते हुए भगवान् कहते हैं कि दोनो अन्य-अन्य नहीं हैं।

९९·११ (सलेशी) रूपी जीव का अरूपत्व मे तथा (अलेशी) अरूपी जीव का रूपत्व में विकुर्वणः—

देवे णं भंते! महिड्ढिए, जाव महेसक्खे पुव्वामेव रूवी भवित्ता पभू अरूविं विउव्वित्ता णं चिट्ठित्तए? नो इणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ– देवेणं जाव नो पभू अरूविं विउव्वित्ता णं चिट्ठित्तए? गोयमा! अहमेयं जाणामि, अहमेयं पासामि, अहमेयं बुज्झामि, अहमेयं अभिसमन्नागच्छामि, मए एयं नायं, मए एयं दिट्ठं, मए एयं बुद्धं, मए एयं अभिसमन्नागयं– जण्णं तहागयस्स जीवस्स सरूविस्स, सकम्मस्स, सरागस्स, सवेयस्स, समोहस्स, सलेसस्स, ससरीरस्स, ताओ सरीराओ अविप्पमुक्कस्स एवं पन्नायइ, तं जहा– कालत्ते वा, जाव—सुक्किलत्ते वा, सुब्भिगंधत्ते वा, दुब्भिगंधत्ते वा, तित्ते वा, जाव—महुरत्ते वा, कक्खडत्ते वा, जाव लुक्खत्ते वा से तेणट्ठेणं गोयमा! जाव चिट्ठित्तए।

—भग० श १७। उ २। प्र १०। पृ० ७५९-५०

महर्द्धिक यावत् महाक्षमतावाले देव भी रूपत्व अवस्था में अरूपी रूप (अमूर्तरूप) का निर्माण करने में समर्थ नहीं है, क्योंकि रूपवाला, कर्मवाला, रागवाला, वेदवाला,

मोहवाला, लेश्यावाले, शरीरवाला तथा शरीर से जो मुक्त नही हुआ हो ऐसे शरीरयुक्त देव जीव में कृष्णत्व यावत् शुक्लत्व, सुगधत्व, दुर्गन्धत्व, तिक्तत्व यावत् मधुरत्व, कर्कशत्व यावत् रूक्षत्व होता है। इसी हेतु से देव अरूपी (अमूर्तरूप) विकुर्वण करने में असमर्थ हैं।

सच्चेव णं भंते ! से जीवे पुव्वामेव अरूवी भवित्ता पभू रूविं विउव्वित्ताणं चिट्ठित्तए ? नो इणट्ठे समट्ठे (से केणट्ठेण) जाव चिट्ठित्तए ? गोयमा ! अहं एयं जाणामि जाव जण्णं तहागयस्स, जीवस्स अरूवस्स, अकम्मस्स, अरागस्स, अवेयस्स, अमोहस्स, अलेसस्स, असरीरस्स, ताओ सरीराओ विप्पमुक्कस्स नो एवं पन्नायइ, तंजहा—कालत्ते वा जाव—लुक्खत्ते वा, से तेणट्ठेणं जाव—चिट्ठित्तए वा।

—भग० श० १७ । उ २ । प्र ११ । पृ० ७५७

महर्द्धिक यावत् महाक्षमतावाले देव भी यदि अरूपत्व को प्राप्त हो गये हो तो वे मूर्त्तरूप का निर्माण करने मे समर्थ नही हैं, क्योंकि अरूपवाला, अकर्मवाला, अवेदवाला, मोहरहित, अलेश्यावाला, शरीरवाला तथा शरीर से जो मुक्त हुआ हो—ऐसे अशरीरी जीव (देव) में कृष्णत्व यावत् शुक्लत्व, सुगंधत्व, दुर्गन्धत्व, तिक्तत्व यावत् मधुरत्व, कर्कश यावत् रूक्षत्व नही होता हे। इस हेतु से अरूपत्व को प्राप्त जीव मूर्त्तरूप विकुर्वण करने में असमर्थ होता है।

९९·१२ वैमानिक देवों के विमानों का वर्ण, शरीरों का वर्ण तथा लेश्या :—

सोहम्मीसाणेसु ण भंते ! विमाणा कइवण्णा पन्नता ? गोयमा ! पंचवण्णा पन्नत्ता, तंजहा कण्हा नीला लोहिया हालिद्दा सुक्किल्ला, सणंकुमारमाहिंदेसु चउवण्णा नीला जाव सुक्किला, बंभलोगलंतएसुवि तिवण्णा लोहिया जाव सुक्किल्ला, महासुक्कसहस्सारेसु दुवण्णा—हालिद्दा य सुक्किल्ला य, आणयपाणयारणच्चुएसु सुक्किल्ला, गेविज्जविमाणा सुक्किल्ला अणुत्तरोववाइयविमाणा परमसुक्किल्ला वण्णेणं पन्नत्ता।

—जीवा० । प्रति ३ । उ १ । सू २१३ । पृ० २३७

टीका—सौधर्मेशानयोर्भदन्त ! कल्पयोर्विमानानि कति वर्णानि प्रज्ञप्तानि ? भगवानाह गौतम ! पंच वर्णानि, तद्यथा—कृष्णानि नीलानि लोहितानि हारिद्राणि शुक्लानि, एवं शेषसूत्राण्यपि भावनीयानि, नवरं सनत्कुमारमाहेन्द्रयोश्चतुर्वर्णानि कृष्णवर्णाभावात्, ब्रह्मलोकलान्तकयोस्त्रिवर्णानि कृष्णनीलवर्णाभावात्, महाशुक्र-

सहस्रारयोर्द्विवर्णानि कृष्णनीलहारिद्रवर्णाभावात्, आनतप्राणतारणच्युतकल्पेषु एक वर्णानि, शुक्लवर्णस्यैकस्य भावात्। ग्रैवेयकविमानानि अनुत्तरविमानानि च परम शुक्लानि।

सोहम्मीसाणेसु देवा केरिसया वण्णेण पन्नत्ता? गोयमा! कणगत्तयरत्ताभा वण्णेण पण्णत्ता। सणंकुमारमाहिंदेसु ण पउमपम्हगोरा वण्णेणं पण्णत्ता। बंभलोगे ण भंते! गोयमा! अल्लमधुगवण्णाभा वण्णेण पण्णत्ता, एवं जाव गेवेज्जा, अणुत्तरोववाइया परमसुक्किल्ला वण्णेण पण्णत्ता।

—जीवा०। प्रति ३। उ १। सू २१५। पृ० २३८

टीका—अधुना वर्णप्रतिपादनार्थमाह—'सोहम्मी'त्यादि, सौधर्मेशानयोर्भदन्त! कल्पयोर्देवाना शरीरकाणि कीदृशानि वर्णेन प्रज्ञप्तानि? भगवानाह—गौतम! कनकत्वग्युक्तानि, कनकत्वगिव रक्ता आभा—छाया येपा तानि तथा वर्णेन प्रज्ञप्तानि, उत्तप्तकनकवर्णानीति भाव। एवं शेषसूत्राण्यपि भावनीयानि, नवरं सनत्कुमारमाहेन्द्रयोर्ब्रह्मलोकेऽपि च पद्मपक्ष्मगौराणि, पद्मकेसरतुल्यावदातवर्णानीति भावः, ततः परं लान्तकादिषु यथोत्तरं शुक्लशुक्लतरशुक्लतमानि, अनुत्तरोपपातिना परमशुक्लानि, उक्तञ्च—

कणगत्तयरत्ताभा सुरवसभा दोसु होंति कप्पेसु।
तिसु होंति पम्हगोरा तेण परं सुक्किला देवा॥

सोहम्मीसाणदेवाणं कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा! एगा तेउलेस्सा पन्नत्ता। सणकुमारमाहिंदेसु एगा पम्हलेस्सा, एवं बंभलोगे वि पम्हा, सेसेसु एका सुक्कलेस्सा, अणुत्तरोववाइयाण एका परमसुक्कलेस्सा।

—जीवा० प्रति ३। उ १। सू २१५। पृ० २३६

टीका—सौधर्मेशानयोर्भदन्त! कल्पयोर्देवाना कति लेश्या प्रज्ञप्ता? भगवानाह—गौतम! एका तेजोलेश्या, इदं प्राचुर्यमङ्गीकृत्य प्रोच्यते। यावता पुन कथंचित्तथाविधद्रव्यसम्पर्कतोऽन्याऽपि लेश्या यथासम्भवं प्रतिपत्तव्या, सनत्कुमारमाहेन्द्रविषयं प्रश्नसूत्रं सुगमं, भगवानाह—गौतम! एका पद्मलेश्या प्रज्ञप्ता, एवं ब्रह्मलोकेऽपि, लान्तके प्रश्नसूत्रं सुगमं, निर्वचनं—गौतम! एका शुक्ललेश्या प्रज्ञप्ता, एवं यावदनुत्तरोपपातिका देवा।

वैमानिको के विमानो के वर्णों, शरीर के वर्णों तथा लेश्या का तुलनात्मक चार्ट :—

	विमान	शरीर	लेश्या
सौधर्म	पाँचों वर्ण	तप्तकनकरक्तआभा	तेजो
ईशान	"	"	"
सनत्कुमार	कृष्ण बाद चार	पद्मपद्मगौर	पद्म
माहेन्द्र	"	"	"
ब्रह्मलोक	लाल-पीत-शुक्ल	'अल्ल' मधूकवर्ण	"
लान्तक	"	"	शुक्ल
महाशुक्र	पीत-शुक्ल	"	"
सहस्रार	"	"	"
आनत यावत् अच्युत	शुक्ल	"	"
ग्रैवेयक	"	"	"
अनुत्तरौपपातिक	परम शुक्ल	परम शुक्ल	परम शुक्ल

टीकाकार ने सौधर्म तथा ईशान देवों के शरीर का वर्ण उत्तप्त कनक की रक्त आभा के समान बताया है। सनत्कुमार माहेन्द्र देवों के शरीर का वर्ण पद्मपद्मगौर अथवा पद्मकेशर तुल्य शुभ्र वर्ण कहा है। ब्रह्मलोक देवों के शरीर का वर्ण मूल पाठ में 'अल्लमधुग-वण्णाभा' है लेकिन टीकाकार ने उसे सनत्कुमार—माहेन्द्र के वर्ण की तरह, 'पद्मपद्म-गौर' ही कहा है। तथा लातक से ग्रैवेयक तक उत्तरोत्तर शुक्ल, शुक्लतर, शुक्लतम कहा है। अनुत्तरौपपातिक देवों के शरीर का वर्ण परम शुक्ल कहा है। टीकाकार ने एक प्राकृत गाथा उद्धृत की है—"दो कल्पों मे कनकतप्तरक्त आभा के समान शरीर का वर्ण होता है पश्चात् के तीन कल्पों के शरीर का वर्ण पद्मपद्मगौर वर्ण होता है, तत्पश्चात् देवों के शरीर का वर्ण शुक्ल होता है।"

'९६'१३ नारकियो के नरकावासों का वर्ण, शरीरो का वर्ण तथा उनकी लेश्या :—

इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए नेरया केरिसिया वण्णेण पन्नत्ता? गोयमा! काला कालोभासा गंभीरलोमहरिसा भीमा उत्तासणया परमकण्हा वण्णेणं पन्नत्ता, एवं जाव अहेसत्तमाए।

—जीवा० प्रति ३। उ १ (नरक)। सू ८३। पृ० १३८-३९

टीका—रत्नप्रभाया पृथिव्या नरका: कीदृशा वर्णेन प्रज्ञप्ता:? भगवानाह—गौतम! काला: तत्र कोऽपि निष्प्रतिभतया मंदकालोऽप्याशंकयेत् ततस्तदाशंकाव्यव-

च्छेदार्थं विशेषणान्तरमाह—'कालावभासा.' काल—कृष्णोऽवभास —प्रतिभा-विनिर्गमो येभ्यस्ते कालावभासा., कृष्णप्रभापटलोपचिता इति भाव × × × वर्णमधिकृत्य परमकृष्णाः प्रज्ञप्ताः।

इमीसे ण भंते। रयणप्पभाए पुढवीए नेरइयाण सरीरगा केरसिया वण्णेण पन्नत्ता, गोयमा। काला कालोभासा जाव परमकण्हा एव जाव अहेसत्तमाए।

—जीवा० प्रति ३। उ २ (नरक)। सू ८७। पृ० १४१

टीका—रत्नप्रभापृथ्वीनैरयिकाणा भदन्त। शरीरकानि कीदृशानि वर्णेन प्रज्ञप्तानि? भगवानाह गौतम। 'काला-कालोभासा' इत्यादि प्राग्वत, एवं प्रति-पृथिवि तावद्वक्तव्यं यावदधःसप्तमपृथिव्याम्।

इमीसे ण भंते। रयणप्पभाए पुढवीए नेरइयाण कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा। एक्का काऊलेस्सा पन्नत्ता, एवं सक्करप्पभाए वि। वालुयप्पभाए पुच्छा, गोयमा। दो लेस्साओ पन्नत्ताओ, तं जहा—नीललेस्सा य काऊलेस्सा य, × × × पंकप्पभाए पुच्छा, एक्का नीललेस्सा पन्नत्ता, धूमप्पभाए पुच्छा, गोयमा। दो लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—कण्हलेस्सा य नीललेस्सा य, × × × तमाए पुच्छा, गोयमा। एक्का कण्हलेस्सा, अहेसत्तमाए एक्का परमकण्हलेस्सा।

—जीवा० प्रति ३। उ २ (नरक)। सू ८८। पृ० १४१

नारकियों के नरकावास के वर्णो, शरीर के वर्णो तथा लेश्या का तुलनात्मक चार्ट

	नरकावास	शरीर	लेश्या
रत्नप्रभापृथ्वी	काला-कालावभास-परमकृष्ण	काला-कालावभास-परमकृष्ण	कापोत
शर्कराप्रभापृथ्वी	"	"	"
वालुकाप्रभापृथ्वी	"	"	कापोत, नील
पंकप्रभापृथ्वी	"	"	नील
धूमप्रभापृथ्वी	"	"	नील, कृष्ण
तमप्रभापृथ्वी	"	"	कृष्ण
तमतमाप्रभापृथ्वी	"	"	परमकृष्ण

९६·१४ देवता और तेजोलेश्या-लब्धि —

तए ण सा बलिचंचा रायहाणी ईसाणेणं देविंदेण देवरन्ना अहे सपक्खिं सपडिदिसिं समभिलोइया समाणी तेण दिव्वप्पभावेणं इंगालब्भूया मुम्मुरब्भूया

छारियब्भूया तत्तकवेल्लकब्भूया तत्ता समजोइ० भूया जाया यावि होत्था, तए णं ते बलिचंचारायहाणिवत्थव्वया बहवे असुरकुमारा देवा य, देवीओ य तं बलिचंचा-रायहाणि इङ्गालब्भूयं, जाव—समजोइब्भूयं पासति, पासित्ता भीया,उतत्था सुसिया, उव्विग्गा, संजायभया, सव्वओ समंता आधावेंति, परिधावेंति, अन्नमन्नस्स कायं समतुरंगेमाणा चिट्ठंति, तए ण ते बलिचंचारायहाणिवत्थव्वया बहवे असुरकुमारा देवा य, देवीओ य ईसाणं देविंदं, देवरायं परिकुव्वियं जाणित्ता, ईसाणस्स देविंदस्स, देवरन्नो तं दिव्वं देविड्ढि, दिव्वं देवज्जुइं, दिव्वं देवाणुभागं, दिव्वं तेयलेस्सं असह-माणा सव्वे सपक्खि सपडिदिसि ठिच्चा करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलि कट्टु जएणं विजएण वद्धाविंति, एवं वयासी :—अहो ण देवाणुप्पिएहिं दिव्वा देविड्ढी, जाव अभिसमन्ना गया तं दिव्वा ण देवाणुप्पियाण दिव्वा देविड्ढी, जाव लद्धा, पत्ता, अभिसमन्नागया, तं खामेमो देवाणुप्पिया। खमंतु देवाणुप्पिया! [खमंतु]मरिहंतु ण देवाणुप्पिया। णाइ भुज्जो २ एवंकरणयाएणंत्ति कट्टु एयमट्ठं सम्मं विणएणं भुज्जो २ खामेति, तए ण से ईसाणे देविंदे देवराया तेहिं बलिचंचारायहाणि-वत्थव्वेहिं बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहि देवीहि य एयमट्ठं सम्मं विणएण भुज्जो २ खामिए समाणे तं दिव्वं देविड्ढि, जाव तेयलेस्सं पडिसाहरइ।

—भग० श ३ । उ १ । प्र १७ । पृ० ४४६

जब ईशान देवेन्द्र देवराज ने नीचे, समक्ष, सप्रतिदिशा में बलिचचा राजधानी की तरफ देखा तब उसके दिव्य प्रभाव से वह बलिचचा राजधानी अगार जैसी, अग्निकण जैसी, राख जैसी, तपी हुई वालुका जैसी तथा अत्यन्त तप्त लपट जैसी हो गई। उससे बलिचचा राजधानी मे रहनेवाले अनेक असुरकुमार देव देवी बलिचचा को अंगार यावत् तप्त लपट जैसी हुई देखकर, भयभीत हुए, त्रस्त हुए, उद्विग्न हुए, भयप्राप्त हुए, चारो तरफ दौडने लगे, भागने लगे आदि। और उन देव-देवियों ने यह जान लिया कि ईशान देवेन्द्र देवराज कुपित हो गया हैं और वे उस ईशान देवेन्द्र देवराज की दिव्य देवऋद्धि, दिव्य देवकान्ति, दिव्य देवप्रभाव तथा दिव्यतेजोलेश्या सह नही सके। तब वे ईशान देवेन्द्र देवराज के सामने, ऊपर, समक्ष, सप्रतिदिशा मे बैठकर करबद्ध होकर नतमस्तक होकर ईशान देवेन्द्र देवराज की जय-विजय बोलने लगे तथा क्षमा मागने लगे। तब उस ईशानेन्द्र ने दिव्य देवऋद्धि यावत् निक्षिप्त तेजोलेश्या को वापस खींच लिया।

नोट :—जैसे साधु की तपोलब्धि से प्राप्त तेजोलेश्या अग-बंगादि १६ दशो को भस्मीभूत करने में समर्थ होती है (देखो ·२५ ४) वैसे ही देवताओं की तेजोलेश्या भी प्रखर, तेज वा तापवाली होती है। ऐसा उपर्युक्त वर्णन से प्रतीत होता है।

'९६ १५ तैजससमुद्घात और तेजोलेश्या-लब्धि :—

तैजससमुद्घातस्तेजोलेश्याविनिर्गमकाले तैजसनामकर्म पुद्गलपरिशातहेतु ।

—पण्ण० प ३६ । गा १ । टीका

असुरकुमारादीना दशानामपि भवनपतिनां तेजोलेश्यालब्धिभावात् आद्याः पंच समुद्घाताः। ××× पंचेन्द्रियतिर्यग्योनिकानामाद्याः पच, केषाञ्चित्तेषा तेजोलब्धेरपि भावात्, मनुष्याणाम् सप्त, मनुष्येषु सर्वसम्भवात्, व्यन्तरज्योतिष्क-वैमानिकानामाद्याः पंच, वैक्रियतेजोलब्धिभावात् ।

—पण्ण० प ३६ । सू १ । टीका

तेजोलेश्या लब्धि वाला जीव ही तैजससमुद्घात करने मे समर्थ होता है। तिर्यंच पचेन्द्रिय, मनुष्य तथा देवो मे तेजोलेश्या-लब्धि होती है। तैजससमुद्घात करने के समय तेजोलेश्या निकलती है तथा उसके निर्गमन काल मे तैजस नामकर्म का क्षय होता है।

९६ १६ लेश्या और कषाय :—

कषायपरिणामश्चावश्यं लेश्यापरिणामाविनाभावी, तथाहि—लेश्यापरिणाम सयोगिकेवलिनमपि यावद् भवति, यतो लेश्याना स्थितिनिरूपणावसरे लेश्याध्ययने शुक्ललेश्याया जघन्या उत्कृष्टा च स्थिति प्रतिपादिता—

मुहुत्तद्ध तु जहन्ना उक्कोसा होइ पुव्वकोडी उ।
नवहिं वरिसेहिं ऊणा नायव्वा सुक्कलेसाए ॥ इति

सा च नववर्षोनपूर्वकोटिप्रमाणा उत्कृष्टा स्थिति शुक्ललेश्याया सयोगि-केवलिन्युपपद्यते, नान्यत्र, कषायपरिणामस्तु सूक्ष्मसंपरायं यावद् भवति, तत. कषायपरिणामो लेश्यापरिणामाऽविनाभूतो लेश्यापरिणामश्च कषायपरिणामं विनापि भवति, तत. कषायपरिणामानन्तरं लेश्यापरिणाम उक्त, न तु लेश्यापरिणामानन्तरं कषायपरिणामः।

—पण्ण० प १३ । सू० २ । टीका

कषाय और लेश्या का अविनाभावी सम्बन्ध नही है। जहाँ कषाय है वहाँ लेश्या अवश्य है लेकिन जहाँ लेश्या है (अन्तत. जहाँ शुक्ललेश्या है) वहाँ कषाय नहीं भी हो सकता है। यथा—केवलज्ञानी के कषाय नहीं होता है तो भी उसके लेश्या के परिणाम होते हैं, यद्यपि वह शुक्ललेश्या ही होती है। यह शुक्ललेश्या की उत्कृष्ट स्थिति—नव वर्ष कम पूर्व कोटि प्रमाण से प्रतिपादित होती है क्योकि यह स्थिति सयोगी केवली मे ही सम्भव है, अन्यत्र नहीं, और सयोगी केवली अकषायी होते हैं। अत यह कहा जाता है कि लेश्या-परिणाम कषाय-परिणाम के बिना भी होता है।

अब प्रश्न उठता है कि लेश्या और कषाय जब सहभावी होते हैं तब एक दूसरे पर क्या प्रभाव डालते है। कई आचार्य कहते है कि लेश्या-परिणाम कषाय-परिणाम से अनुरंजित होते हैं—

कषायोदयाऽनुरंजिता लेश्या।

कषाय और लेश्या के पारस्परिक सम्बन्ध मे अनुसंधान की आवश्यकता है।

'९६'१७ लेश्या और योग :—

लेश्या और योग मे अविनाभावी सम्बन्ध है। जहाँ योग है वहाँ लेश्या है। जो जीव सलेशी है वह सयोगी है तथा जो अलेशी है वह अयोगी भी है। जो जीव सयोगी है वह सलेशी है तथा जो अयोगी है वह अलेशी भी है।

कई आचार्य योग-परिणामों को ही लेश्या कहते हैं।

यत उक्तं प्रज्ञापनावृत्तिकृता :—

योगपरिणामो लेश्या, कथं पुनर्योगपरिणामो लेश्या ?, यस्मात् सयोगी केवली शुक्ललेश्यापरिणामेन विहृत्यान्तर्मुहूर्त्ते शेषे योगनिरोधं करोति ततोऽयोगीत्वमलेश्यत्वं च प्राप्नोति अतोऽवगम्यते 'योगपरिणामो लेश्ये'ति, स पुनर्योगः शरीरनामकर्मपरिणतिविशेषः, यस्मादुक्तम्—"कर्म हि कार्मणस्य कारणमन्येषा च शरीराणामिति," तस्मादौदारिकादिशरीरयुक्तस्यात्मनो वीर्यपरिणतिविशेषः काययोग', तथौदारिकवैक्रियाहारकशरीरव्यापाराहृतवाग्द्रव्यसमूहसाचिव्यात् जीवव्यापारो यः स वाग्योगः, तथौदारिकादिशरीरव्यापाराहृतमनोद्रव्यसमूहसाचिव्यात् जीवव्यापारो यः स मनोयोग इति, ततो तथैव कायादिकरणयुक्तस्यात्मनो वीर्यपरिणतिर्योग उच्यते तथैव लेश्यापीति।

—ठाण० स्था १। सू ५१। टीका

प्रज्ञापना के वृत्तिकार कहते हैं :—

योग-परिणाम ही लेश्या है। क्योंकि सयोगी केवली शुक्ललेश्या परिणाम मे विहरण करते हुए अवशिष्ट अन्तर्मुहूर्त मे योग का निरोध करते हैं तभी वे अयोगीत्व और अलेश्यत्व को प्राप्त होते हैं। अतः यह कहा जाता है कि योग-परिणाम ही लेश्या है। वह योग भी शरीर नामकर्म की विशेष परिणति रूप ही है। क्योंकि कर्म कार्मण शरीर का कारण है और कार्मण शरीर अन्य शरीरो का। इसलिए औदारिक आदि शरीर वाले आत्मा की वीर्य परिणति विशेष ही काययोग है। इसी प्रकार औदारिकवैक्रियाहारक शरीर व्यापार से ग्रहण किये गए वाक् द्रव्यसमूह के सन्निधान से जीव का जो व्यापार होता है वह वाक् योग है। इसी तरह औदारिकादि शरीर व्यापार से गृहीत मनोद्रव्य समूह के सन्निधान से

जीव का जो व्यापार है वह मनोयोग है। अत कायादिकरणयुक्त आत्मा की वीर्य परिणति विशेष को योग कहा जाता है और उसीको लेश्या कहते हैं।

तेरहवें गुणस्थान के शेष अन्तर्मुहूर्त के प्रारम्भ में योग का निरोध प्रारम्भ होता है। मनोयोग तथा वचनयोग का सम्पूर्ण निरोध हो जाता है तथा काययोग का अर्ध निरोध होता है (देखो ६५.४)। उस समय मे लेश्या का कितना निरोध या परित्याग होता है इसके सम्बन्ध मे कोई तथ्य या पाठ उपलब्ध नही हुआ है। अवशेष अर्ध काययोग का निरोध होकर जब जीव अयोगी हो जाता है तब वह अलेशी भी हो जाता है। अलेशी होने की क्रिया योग निरोध के प्रारम्भ होने के साथ-साथ होती है या अर्ध काययोग के निरोध के प्रारम्भ के साथ-साथ होती है—यह कहा नहीं जा सकता। लेकिन यह निश्चित है कि जो सयोगी है वह सलेशी है तथा जो अयोगी है वह अलेशी है। जो सलेशी है वह सयोगी है तथा जो अलेशी है वह अयोगी है। योग और लेश्या का पारस्परिक सम्बन्ध क्या है—आगमों के आधार पर यह निश्चित रूप मे कहा नहीं जा सकता है।

द्रव्यलेश्या के पुद्गल कैसे ग्रहण किये जाते हैं, यह भी एक विवेचनीय विषय है। द्रव्य मनोयोग तथा द्रव्य वचनयोग के पुद्गल काययोग के द्वारा ग्रहण किये जाते हैं। क्या यह कहा जा सकता है कि द्रव्य लेश्या के पुद्गल भी काययोग के द्वारा ग्रहण किये जाते है।

जब जीव मन-अयोगी तथा वचन-अयोगी होता है उस समय वह कियद्क्षण में भी अलेश्यत्व को प्राप्त होता है या नहीं—यह विचारणीय विषय है। यदि नहीं हो तो यह सिद्ध हो जाता है कि लेश्या का काययोग के साथ सम्बन्ध है और जब अर्धकाय योग का निरोध होता है तभी जीव अलेश्यत्व को प्राप्त होता है।

लेश्या की दो प्रक्रियायें हैं—(१) द्रव्यलेश्या के पुद्गलों का ग्रहण तथा (२) उनका प्रायोगिक परिणमन। जब योग का निरोध प्रारम्भ होता है उस समय मे लेश्या द्रव्यों का ग्रहण भी बंद हो जाना चाहिये तथा योग निरोध की सम्पूर्णता के साथ-साथ पूर्वकाल में गृहीत तथा अपरित्यक्त द्रव्य लेश्या के पुद्गलों का प्रायोगिक परिणमन भी सम्पूर्णत बन्द हो जाना चाहिये।

९९.१८ लेश्या और कर्म —

कर्म और लेश्या शाश्वत भाव हैं। कर्म और लेश्या पहले भी हैं, पीछे भी है अनानुपूर्वी हैं। इनका कोई क्रम नही है। न कर्म पहले है, न लेश्या पीछे है, न लेश्या पहले है, न कर्म पीछे। दोनों पहले भी हैं, पीछे भी हैं, दोनों शाश्वत भाव हैं, दोनों अनानुपूर्वी है। दोनों में आगे पीछे का क्रम नहीं है (देखो ६४)। भावलेश्या जीवोदयनिष्पन्न है (देखो ५२.५)।

द्रव्यलेश्या अजीवोदयनिष्पन्न है (देखो '५१ १० । यह जीवोदय-निष्पन्नता तथा अजीवोदयनिष्पन्नता किस-किस कर्म के उदय से है—यह पाठ उपलब्ध नही हुआ है। तेरापंथ के चतुर्थ आचार्य जयाचार्य का कहना है कि कृष्णादि तीन अप्रशस्त लेश्या—मोहकर्मोदय-निष्पन्न हैं तथा तेजो आदि तीन प्रशस्त लेश्या नामकर्मोदयनिष्पन्न हैं। विशुद्ध होती हुई लेश्या कर्मों की निर्जरा मे सहायक होती है (देखो ६६ २)। टीकाकारों का कहना है—

"कर्मनिस्यन्दो लेश्येति सा च द्रव्यभावभेदात् द्विधा, तत्र द्रव्यलेश्या कृष्णादिद्रव्याण्येव. भावलेश्या तु तज्जन्यो जीवपरिणाम इति।"

"लिश्यते प्राणी कर्मणा यया सा लेश्या।" यदाह –"श्लेष इव वर्णबन्धस्य कर्मबंधस्थितिविधात्र्यः।"

—अभयदेवसूरि (देखो '०५३'१)

अष्टानामपि कर्मणां शास्त्रे विपाका वर्ण्यन्ते, न च कस्यापि कर्म्मणो लेश्यारूपो विपाक उपदर्शितः।

— मलयगिरि (देखो ०५३'२)

यद्यपि लेश्या कर्मनिष्यंदन रूप है तो भी अष्टकर्मों के विपाकों के वर्णन में आगमों में कही लेश्यारूपी विपाक का वर्णन नही है।

लेश्यास्तु येषां भंते कषायनिष्यन्दो लेश्याः तन्मतेन कषायमोहनीयोदयजत्वाद् औदयिक्यः, यन्मतेन तु योगपरिणामो लेश्याः तदभिप्रायेण योगत्रयजनककर्मोदय-प्रभवाः, येषां त्वष्टकर्मपरिणामो लेश्यास्तन्मतेन संसारित्वासिद्धत्ववद् अष्टप्रकार-कर्मोदयजा इति ॥

—चतुर्थ कर्म० गा ६६ । टीका

जिनके मत में लेश्या कषायनिस्यद रूप है उनके अनुसार लेश्या कषायमोहनीय कर्म के उदय जन्य औदयिक्य भाव है। जिनके मत में लेश्या योगपरिणाम रूप है उनके अनुसार जो कर्म तीनों योगों के जनक हैं वह उन कर्मों के उदय से उत्पन्न होनेवाली है। जिनके मत मे लेश्या आठो कर्मो के परिणाम रूप है उनके मतानुसार वह संसारित्व तथा असिद्धत्व की तरह अष्ट प्रकार के कर्मोदय से उत्पन्न होनेवाली है।

कई आचार्यों का कथन है कि लेश्या कर्मबधन का कारण भी है, निर्जरा का भी। कौन लेश्या कब बधन का कारण तथा कब निर्जरा का कारण होती है, यह विवेचनीय प्रश्न है।

'६६'१६ लेश्या और अध्यवसाय '—

लेश्या और अध्यवसाय का घनिष्ठ सम्बन्ध मालूम पडता है, क्योंकि जातिस्मरण आदि

ज्ञानों की प्राप्ति में अध्यवसायों के शुभतर होने के साथ लेश्या परिणाम भी विशुद्धतर होते हैं। इसी प्रकार अध्यवसाय के अशुभतर होने के साथ लेश्या की अविशुद्धि घटती है।

ऐसा मालूम पड़ता है कि छओं लेश्याओं में प्रशस्त-अप्रशस्त दोनों प्रकार के अध्यवसाय होते हे।

पज्जत्ता असन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणिए ण भंते! जे भविए रयणप्पभाए पुढवीए नेरइएसु उववज्जित्तए × × × तेसि ण भंते! जीवाण कइ लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा! तिन्नि लेस्साओ पन्नत्ताओ, तं जहा-- कण्हलेस्सा, नील-लेस्सा, काउलेस्सा। × × × तेसि ण भंते! जीवाण केवइया अज्झवसाणा पन्नत्ता? गोयमा! असंखेज्जा अज्झवसाणा पन्नत्ता। ते ण भंते! किं पसत्था अपसत्था? गोयमा! पसत्था वि अपसत्था वि।

—भग० श २४। उ १। प्र ७, १०, २४, २५। पृ० ८१५ १६

सव्वट्ठसिद्धगदेवे ण भंते! जे भविए मणुस्सेसु उववज्जित्तए०? सा चेव विज-यादिदेव वत्तव्वया भाणियव्वा। नवरं ठिई अजहन्नमनुक्कोसेण तेत्तीसं सागरोवमाइं। एवं अणुबंधो वि। सेसं तं चेव।

—भग० श २४। उ २१। प्र १७। पृ० ८४६

उपरोक्त पाठों मे यह स्पष्ट है कि कृष्ण, नील तथा कापोत लेश्या वाले जीवों में प्रशस्त तथा अप्रशस्त दोनों अध्यवसाय होते हैं तथा शुक्ललेश्या में भी दोनो अध्यवसाय होते हैं। अतः छओं लेश्याओ में दोनो अध्यवसाय होने चाहिये।

९६·२० किस और कितनी लेश्या मे कौन से जीव :—

·९६·२०·१ एक लेश्या वाले जीव —

कृष्णलेश्या वाले जीव—(१) तमप्रभा नारकी, (२) तमतमाप्रभा नारकी।

नीललेश्या वाले जीव—(१) पंकप्रभा नारकी।

कापोतलेश्या वाले जीव—(१) रत्नप्रभा नारकी, (२) शर्कराप्रभा नारकी।

तेजोलेश्या वाले जीव—(१) ज्योतिषी देव, (२) सौधर्म देव, (३) ईशान देव, (४) प्रथम किल्विषी देव।

पद्मलेश्या वाले जीव—(१) सनत्कुमारदेव, (२) माहेन्द्रदेव (३) ब्रह्मलोकदेव, (४) द्वितीय किल्विषी देव।

शुक्ललेश्या वाले जीव—(१) लान्तक देव, (२) महाशुक्रदेव, (३) सहस्रार देव, (४) आनत देव, (५) प्राणत देव, (६) आरण देव (७) अच्युत देव, (८) नव ग्रैवेयक देव,

(६) विजय-अनुत्तरौपपातिक देव, (१०) वैजयन्त अनुत्तरौ-पपातिक देव, (११) जयन्त अनुत्तरौपपातिक देव, (१२) अपराजित अनुत्तरौपपातिक देव, (१३) सर्वार्थसिद्धअनुत्तरौप-पातिक देव।

'६६'२०'२ दो लेश्या वाले जीव :—

कृष्ण तथा नील लेश्या वाले जीव—(१) धूमप्रभा नारकी।

नील तथा कापोत लेश्या वाले जीव—(१) वालुकाप्रभा नारकी।

'६६'२०'३ तीन लेश्या वाले जीव :—

कृष्ण-नील-कापोत लेश्यावाले जीव—(१) नारकी, (२) अग्निकाय, (३) वायुकाय, (४) द्वीन्द्रिय, (५) त्रीन्द्रिय, (६) चतुरिन्द्रिय, (७) असंज्ञी तिर्यंच पचेंद्रिय, (८) असज्ञी मनुष्य, (६) सूक्ष्म स्थावर जीव, (१०) वादर निगोद जीव।

तेजो-पद्म-शुक्ललेश्या वाले जीव—(१) वैमानिक देव, (२) पुलाक निर्ग्रन्थ, (३) बकुस निर्ग्रन्थ, (४) प्रतिसेवनाकुशील निर्ग्रन्थ, (५) परिहारविशुद्ध संयती, (६) अप्रमादी साधु।

'६६'२०'४ चार लेश्या वाले जीव :—

कृष्ण-नील-कापोत-तेजोलेश्या वाले जीव—(१) पृथ्वीकाय, (२) अप्काय, (३) वनस्पतिकाय, (४) भवनपति देव, (५) वानव्यंतर देव, (६) युगलिया, (७) देवियाँ।

'६६'२०'५ पाच लेश्या वाले जीवः—

कृष्ण यावत् पद्मलेश्यावाले जीव :—(१) अपनी जघन्यस्थितिवाले पर्याप्त सख्यात वर्ष की आयुवाले सज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीव जो सनत्कुमार, माहेन्द्र तथा ब्रह्मलोक देवो में उत्पन्न होने योग्य हैं।

'६६'२०'६ छः लेश्या वाले जीव :—

कृष्ण यावत् शुक्ललेश्यावाले जीव :—(१) तिर्यंच पचेन्द्रिय, (२) मनुष्य, (३) देव, (४) सामायिक संयत, (५) छेदोपस्थानीय सयत, (६) कषाय कुशील निर्ग्रन्थ, (७) संयत।

'६६'२०'७ अलेशी जीव :—(१) मनुष्य, (२) सिद्ध।

'६६'२१ भुलावण (प्रति सन्दर्भ) के पाठ :—

(क) कइ णं भंते ! लेस्साओ पण्णत्ताओ ? गोयमा ! छ लेस्साओ पण्णत्ता(ओ), तं जहा, लेस्साणं बिइओ उद्देसो भाणियव्वो, जाव—इड्ढी।

—भग० श १ । उ २ । प्र ६८ । पृ० ३६३

प्रज्ञापना लेश्या पद १७ उद्देशक २ की भुलावण।

(ख) नेरइए णं भंते! नेरइएसु उववज्जइ अनेरइए नेरइएसु उववज्जइ? पन्नवणाए लेस्सापए तइओ उद्देसओ भाणियव्वो जाव नाणाइं।

—भग० श ४। उ ६। पृ० ४६८

प्रज्ञापना लेश्या पद १७, उद्देशक ३ की भुलावण।

(ग) से नूणं भंते! कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प तारूवत्ताए तावण्णत्ताए एवं चउत्थो उद्देसओ पन्नवणाए चेव लेस्सापए नेयव्वो जाव—

परिणामवण्णरसगंध सुद्ध अपसत्थ संकिलिट्ठुण्हा।
गइपरिणामपदेसोगाहणवग्गणा ठाणमप्पबहु॥

—भग० श ४। उ १०। पृ० ४६८

प्रज्ञापना लेश्या पद १७, उद्देशक ४ की भुलावण।

(घ) इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु असंखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं केवइया नेरइया उववज्जंति जाव केवइया अणागारोवउत्ता उववज्जंति। ××× नाणत्तं लेस्सासु लेस्साओ जहा पढमसए।

—भग० श १३। उ १। प्र ७। पृ० ६७८

भगवती श १। उ २। प्र ९८ की भुलावण। उसमें प्रज्ञापना लेश्या पद १७, उद्देशक २ की भुलावण।

(च) कइ णं भंते! लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा! छल्लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा—एवं जहा पण्णवणाए चउत्थो लेसुद्देसओ भाणियव्वो निरवसेसो।

—भग० श १६। उ १। पृ० ७८१

प्रज्ञापना लेश्यापद १७ के चतुर्थ उद्देशक की भुलावण।

(छ) कइ णं भंते! लेस्साओ प०? एवं जहा पन्नवणाए गब्भुद्देसो सो चेव निरवसेसो भाणियव्वो।

—भग० श १६। उ २। पृ० ७८१

प्रज्ञापना लेश्यापद १७ के गर्भ उद्देशक की भुलावण।

(ज) तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे जाव एवं वयासी—कइ णं भंते! लेस्साओ पन्नत्ताओ? गोयमा! छ लेस्साओ पन्नत्ताओ, तं जहा—कण्हलेस्सा जहा पढमसए बिइए उद्देसए तहेव लेस्साविभागो। अप्पाबहुगं च जाव चउव्विहाणं देवाणं चउव्विहाणं देवीणं मीसगं अप्पाबहुगंति।

—भग० श २५। उ १। प्र १। पृ० ८४१

भग० श १। उ २। प्र ९८ की भुलावण।

(झ) से नूनं भंते ! कण्हलेस्सं पप्प तारूवत्ताए तावन्नत्ताए तागंधत्ताए तारसत्ताए ताफासत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ ? इत्तो आढत्तं जहा चउत्थओ उद्देसओ तहा भाणियव्वं जाव वेरुलियमणिदिट्ठंतो त्ति।

—पण्ण० प १७ । उ ५ । सू ५४ । पृ० ४५०

प्रज्ञापना लेश्या पद १७ । उद्देशक ४ की भुलावण ।

(ञ) कइ णं भंते ! लेस्साओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! छ लेस्साओ पन्नत्ताओ, तं जहा—कण्हा, नीला, काऊ, तेऊ, पम्हा, सुक्का, एवं लेस्सापयं भाणियव्वं।

—सम० पृ० ३७५

प्रज्ञापना लेश्या पद १७ की भुलावण।

'९६'२२ सिद्धांत ग्रन्थों से लेश्या सम्बन्धी पाठ :—

'९६'२२'१ देवेन्द्रसूरि विरचित कर्म ग्रन्थों से :—

(क) लेश्या और कर्म प्रकृतियों का बंध :—

ओहे अट्ठारसयं आहारदुगूण आइलेसतिगे।
तं तित्थोणं मिच्छे साणाइसु सव्वहिं ओहो ॥
तेऊ नरयनवूणा, उज्जोयचउ नरयबार विणु सुक्का।
विणुनरयबार पम्हा, अजिणाहारा इमा मिच्छे ॥

—तृतीय कर्म० गा २१,२२

(ख) लेश्या और गुणस्थान :—

तिसु दुसु सुक्काइ गुणा, चउ सग तेरत्ति बंध सामित्तं।
देविंदसूरिलिहियं, नेयं कम्मत्थयं सोउं॥

—तृतीय कर्म० गा २४

तथाहि—

लेसा तिन्नि पमत्तं, तेऊपम्हा उ अप्पमत्तंता।
सुक्का जाव सजोगी, निरुद्धलेसो अजोगि त्ति॥

—जिनवल्लभीय षडशीति गा० ७३

छसु सव्वा तेउतिगं, इगि छसु सुक्का अजोगि अल्लेसा।

—चतुर्थ कर्म० गा ५०।पूर्वार्ध

(ग) विभिन्न जीवों मे कितनी लेश्या :—

(१) सन्निदुगि छलेस अपज्जबायरे पढम चउ ति सेसेसु ।

—चतुर्थ कर्म० गा ७ । पूर्वार्ध

(२) अहखाय सुहुम केवलदुगि सुक्का छावि सेसठाणेसु ।

—चतुर्थ कर्म० गा ३७ । पूर्वार्ध

टीका—यथाख्यातसंयमे सूक्ष्मसंपरायसंयमे च 'केवलद्विके' केवलज्ञानकेवल-दर्शनरूपे शुक्ललेश्यैव न शेषलेश्या', यथाख्यातसंयमादौ एकांतविशुद्धपरिणाम-भावात् तस्य च शुक्ललेश्याऽविनाभूतत्वात्। 'शेषस्थानेषु' सुरगतौ तिर्यग्गतौ मनुष्य-गतौ पंचेन्द्रियत्रसकाययोगत्रयवेदत्रयकषायचतुष्टयमतिज्ञानश्रुतज्ञानावधिज्ञानमन-पर्यायज्ञानमत्यज्ञानश्रुताज्ञानविभंगज्ञानसामायिकच्छेदोपस्थापन-परिहारविशुद्धिदेश-विरताविरतचक्षुर्दर्शनाचक्षुर्दर्शनावधिदर्शनभव्याभव्यक्षायिकक्षायोपशमिकोपशमिक-सास्वादनमिश्रमिथ्यात्वसंज्ञ्याहारकानाहारकलक्षणैकचत्वारिंशत्सु शेषमार्गणास्थानकेषु षडपि लेश्याः।

(३) भव्य-अभव्य जीवो में कितनी लेश्या :—

किण्हा नीला काऊ, तेऊ पम्हा य सुक्क भव्वियरा ।

—चतुर्थ कर्म० गा १३ । पूर्वार्ध

(घ) लेश्या और सम्यक्त्व चारित्र :—

सम्यक्त्वदेशविरतिसर्वविरतीना प्रतिपत्तिकाले शुभलेश्यात्रयमेव भवति । उत्तरकालं तु सर्वा अपि लेश्या. परावर्तन्तेऽपि इति । श्रीमदाराध्यपादा अप्याहु —

सम्मत्तसुयं सव्वासु लहइ सुद्धासु तीसु य चरित्तं ।
पुव्वपडिवन्नओ पुण, अन्नयरीए उ लेसाए ॥

—आव० नि० गा ८२२

—चतुर्थ कर्म० गा १२ की टीका

६६ २३ अभिनिष्क्रमण के समय भगवान् महावीर की लेश्या की विशुद्धि —

छट्ठेण उ भत्तेणं अज्झवसाणेण सोहणेण जिणो ।
लेसाहिं विसुज्झतो आरुहई उत्तमं सीयं ॥

—आया० श्रु २ । अ १५ । गा १२१ । पृ० ६२

अभिनिष्क्रमण के समय भगवान् ने जब श्रेष्ठ पालकी में आरोहण किया उस समय उनके दो दिन का उपवास था, उनके अध्यवसाय शुभ थे तथा लेश्या विशुद्धमान थी।

'६६'२४ वेदनीय कर्म का वन्धन तथा लेश्या :—

जीवे णं भंते ! वेयणिज्जं कम्मं किं बंधी० पुच्छा ? गोयमा ! अत्थेगइए बंधी बंधइ बंधिस्सइ १, अत्थेगइए बंधी बंधइ न बंधिस्सइ २, अत्थेगइए बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ४, सलेस्से वि एवं चेव तइयविहूणा भंगा। कण्हलेस्से जाव—पम्हलेस्से पढम-बिइया भंगा, सुक्कलेस्से तइयविहूणा भंगा, अल्लेसे चरिमो भंगो। कण्ह-पक्खिए पढमबिइया। सुक्कपक्खिया तइयविहूणा। एवं सम्मदिट्ठिस्स वि, मिच्छादिट्ठिस्स सम्मामिच्छादिट्ठिस्स य पढमबिइया। णाणिस्स तइयविहूणा, आभिणिबोहिय, जाव मणपज्जवणाणी पढमबिइया, केवलनाणी तइयविहूणा। एवं नो सन्नोवउत्ते, अवेदए, अकसायी। सागारोवउत्ते अणागारोवउत्ते एएसु तइयविहूणा। अजोगिम्मि य चरिमो, सेसेसु पढमबिइया।

—भग० श २६। उ १। प्र १७। पृ० ८६६-६००

वेदनीय कर्म ही एक ऐसा कर्म है जो अकेला भी बंध सकता है। यह स्थिति ग्यारहवें, बारहवें, तेरहवें गुणस्थान के जीवो में होती है। इन गुणस्थानो में वेदनीय कर्म के अतिरिक्त अन्य कर्मों का वन्धन नही होता है। इनमें से ग्यारहवें गुणस्थान वाले को चतुर्थ भग लागू नही हो सकता है। चौदहवें गुणस्थान के जीव के निर्विवाद चतुर्थ भंग लागू होता है। उपरोक्त पाठ से यह ज्ञात होता है कि सलेशी—शुक्ललेशी जीवो मे कोई एक जीव ऐसा होता है जिसके चतुर्थ भंग से वेदनीय कर्म का वन्धन होता है अर्थात् वह शुक्ललेशी जीव वर्तमान में न तो वेदनीय कर्म का वन्धन करता है और न भविष्यत् मे करेगा। चौदहवें गुण स्थान का जीव सलेशी—शुक्ललेशी नही हो सकता है। अतः उपरोक्त शुक्ललेशी जीव बारहवें तथा तेरहवे गुणस्थान वाला ही होना चाहिए। लेकिन बारहवें तथा तेरहवे गुण-स्थान के जीव के साता वेदनीय कर्म का वन्धन ईर्यापथिक के रूप में होता रहता है। बारहवे तथा तेरहवें गुणस्थान का जीव वेदनीय कर्म का अवन्धक नही होता है।

टीकाकार का कहना है, "सलेशी जीव पूर्वोक्त हेतु से तीसरे भग को बाद देकर—अन्य भगो से वेदनीय कर्म का वन्धन करता है लेकिन उसमे चतुर्थ भग नहीं घट सकता है क्योंकि चतुर्थ भग लेश्या रहित अयोगी को ही घट सकता है। लेश्या तेरहवें गुणस्थान तक होती है तथा वहाँ तक वेदनीय कर्म का वन्धन होता रहता है। कई आचार्य इसका इस प्रकार समाधान करते हैं कि इस सूत्र के वचन से अयोगीत्व के प्रथम समय में घण्टालाला न्याय से परम शुक्ललेश्या सभव है तथा इसी अपेक्षा से सलेशी—शुक्ललेशी जीव के चतुर्थ भग घट सकता है। तत्त्व बहुश्रुतगम्य है।"

हमारे विचार मे इसका एक यह समाधान भी हो सकता है कि लेश्या परिणामो की अपेक्षा अलग से वेदनीय कर्म का वन्धन होता है तथा योग की अपेक्षा अलग से वेदनीय कर्म

का वन्धन होता है। तव वारहवें तथा तेरहवें गुणस्थान में कोई एक जीव ऐसा हो सकता है जिसके लेश्या की अपेक्षा से वेदनीय कर्म का वन्धन रुक जाता है लेकिन योग की अपेक्षा से चालू रहता है।

६६ २५ छूटे हुए पाठ :—

०४ सविशेषण-ससमास लेश्या शब्द :—

४७ सूरियसुद्धलेसे —सूय० श्रु १ । अ ६ । गा १३ । पृ० ११६

४८ अत्तपसन्नलेसे —उत्त० अ १२ । गा ४६ । पृ० ६६६

४६ सोमलेसा —कप्पसु० सू. ११७, ओव० सू. १७ । पृ० ८

५० अप्पडिलेस्सा —ओव० सू १६ । पृ० ७

अध्ययन, गाथा, सूत्र आदि की संकेत सूची

अ	अध्ययन, अध्याय
अधि	अधिकार
उ	उद्देश, उद्देशक
गा	गाथा
च	चरण
चू	चूर्णी
चूलि	चूलिका
टी	टीका
द	दशा
द्वा	द्वार
नि	निर्युक्ति
प	पद
प	पंक्ति
पृ०	पृष्ठ
पै	पैरा
प्र	प्रश्न
प्रति	प्रतिपत्ति
प्रा	प्राभृत
प्रप्रा	प्रतिप्राभृत
भा	भाष्य
भाग	भाग
ला	लाइन
व	वर्ग
वा	वार्तिक
वृ	वृत्ति
श	शतक
श्रु	श्रुतस्कध
श्लो	श्लोक
सम	समवाय
सू.	सूत्र
स्था	स्थान

संकलन-सम्पादन-अनुसंधान में प्रयुक्त ग्रन्थो की सूची

१—आयारांग प्रथम श्रुतस्कन्ध—संकेत—आया० श्रु १

(प्रति क) सनिर्युक्ति तथा सशीलांकाचार्यवृत्ति—प्रकाशक—सिद्धचक्र साहित्य प्रचारक समिति, बम्बई। (प्रति ख) प्रकाशक—जैन साहित्य समिति, उज्जैन। (प्रति ग) सुत्तागमे प्रथम भाग पृष्ठ १-३२।

२—आयारांग द्वितीय श्रुतस्कन्ध—संकेत—आया० श्रु २

(प्रति क) सशीलांकाचार्यवृत्ति—प्रकाशक—सिद्धचक्र साहित्य प्रचारक समिति, बम्बई। (प्रति ख) प्रकाशक—रवजी भाई देवराज, राजकोट। (प्रति ग) सुत्तागमे प्रथम भाग—पृ० ३३ से ६६।

३—सूयगडांग—संकेत—सूय०

(प्रति क) सशीलाकाचार्यवृत्ति—प्रथम खंड—प्रकाशक—शा० छगनमल मुहता, बंगलोर, द्वितीय खंड—प्रकाशक—शा० छगनमल मुहता, बंगलोर ; तृतीय खंड—प्रकाशक—महावीर जैन ज्ञानोदय सोसाइटी, चतुर्थ खंड—शम्भूमल गंगाराम मुहता, बंगलोर। (प्रति ख) सनिर्युक्ति-प्रकाशक—श्रेष्ठि मोतीलाल, पूना। (प्रति ग) सुत्तागमे प्रथम भाग—पृ० १०१ से १८२।

४—ठाणांग—संकेत—ठाण०

(प्रति क) साभयदेवसूरिकृत वृत्ति—प्रकाशक-अष्टकोटीय बृहद्पक्षीय सघ, मुद्रा (कच्छ) भाग ४। (प्रति ख) साभयदेवसूरिकृत वृत्ति—प्रकाशक—माणेकलाल चुन्नीलाल, अहमदाबाद। (प्रति ग) सुत्तागमे प्रथम भाग पृ० १८३ से ३१५।

५—समवायांग—संकेत—सम०

(प्रति क) साभयदेवसूरिकृत वृत्ति—प्रकाशक—माणेकलाल चुन्नीलाल, अहमदाबाद। (प्रति ख) साभयदेवसूरिकृत वृत्ति—प्रकाशक—जैन धर्म प्रसारक सभा, भावनगर। (प्रति ग) सुत्तागमे प्रथम भाग पृ० ३१६ से ३८३।

६—भगवई—संकेत—भग०

(प्रति क) प्रथम खण्ड, द्वितीय खण्ड—प्रकाशक—जिनागम प्रकाशक सभा, बम्बई। तृतीय खण्ड—प्रकाशक—गुजरात विद्यापीठ, अहमदावाद, चतुर्थ खण्ड—प्रकाशक जैन साहित्य प्रकाशन ट्रस्ट, अहमदाबाद। (प्रति ख) साभयदेवसूरि कृत वृत्ति तीन खण्ड—प्रकाशक—ऋषभदेव केशरीमल जैन श्वेताम्बर संस्था; रतनपुर। (प्रति ग) सुत्तागमे प्रथम भाग—पृ० ३८४ से ६३६।

७—नायाधम्मकहाओ—संकेत—नाया०

(प्रति क) साभयदेवसूरिकृत वृत्ति भाग २—प्रकाशक—सिद्धचक्र साहित्य प्रचारक समिति, बम्बई। (प्रति ख) प्रकाशक—श्री एन० वी० वैद्य, पूना। (प्रति ग) सुत्तागमे प्रथम भाग—पृ० ९४१ से ११२५।

८—उवासगदसाओ—संकेत—उवा०

(प्रति क) साभयदेवसूरिकृत वृत्ति—प्रकाशक—प० भगवानदास हर्षचन्द, अहमदाबाद। (प्रति ख) प्रकाशक—श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन संघ, कराची। (प्रति ग) सुत्तागमे प्रथम भाग पृ० ११२७ से ११६०।

९- अंतगडदसाओ—संकेत—अंत०

(प्रति क) प्रकाशक—गुर्जर ग्रन्थ रत्न कार्यालय, अहमदाबाद। (प्रति ख) प्रकाशक—श्री श्वे० स्थानकवासी शास्त्रोद्धारक समिति, राजकोट। (प्रति ग) सुत्तागमे प्रथम भाग पृ० ११६१ से ११९०।

१०—अणुत्तरोववाइयदसाओ—संकेत—अणुत्त०

(प्रति क) प्रकाशक—जैन शास्त्र माला कार्यालय, लाहौर। (प्रति ख) प्रकाशक—गुर्जर ग्रन्थ रत्न कार्यालय, अहमदाबाद। (प्रति ग) सुत्तागमे प्रथम भाग पृ० ११९१ से ११९८।

११—पण्हावागरणं—संकेत—पण्हा०

(प्रति क) ज्ञानविमलसूरिकृत वृत्ति भाग २—प्रकाशक मुक्तिविमल जैन ग्रन्थमाला, अहमदाबाद। (प्रति ख) प्रकाशक—सेठिया जैन पारमार्थिक संस्था, बीकानेर। (प्रति ग) सुत्तागमे प्रथम भाग पृ० ११९९ से १२३९।

१२—विवागसुत्तं—संकेत—विवा०

(प्रति क) साभयदेवसूरि कृत वृत्ति—प्रकाशक—गुर्जर ग्रन्थ रत्न कार्यालय, अहमदाबाद। (प्रति ख) प्रकाशक—श्वे० स्था० शास्त्रोद्धार समिति, राजकोट। (प्रति ग) सुत्तागमे प्रथम भाग पृ० १२४१ से १२८७।

१३—ओववाइयसुत्तं—संकेत—ओव०

(प्रति क) साभयदेवसूरिकृत वृत्ति—प्रकाशक—पण्डित भूरालाल कालीदास, सूरत। (प्रति ख) प्रकाशक—साधुमार्गी जैन संस्कृति रक्षक संघ, सैलाना। (प्रति ग) सुत्तागमे—द्वितीय भाग—पृ० १ से ४०।

१४—रायपसेणइयं—संकेत—राय०

(प्रति क) समलयगिरिविहितविवरणं—प्रकाशक—गुर्जर ग्रन्थ रत्न कार्यालय, अहमदाबाद। (प्रति ख) समलयगिरिविहितं विवरण—प्रकाशक—खण्डयाता बुक डीपो, अहमदाबाद। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग पृ० ४१ से १०३।

१५—जीवाजीवाभिगमे—संकेत—जीवा०

(प्रति क) समलयगिरिप्रणीत विवृत्ति—प्रकाशक—देवचन्द लालभाई पुस्तकोद्धारक फंड, सूरत। (प्रति ख) प्रकाशक—लाला सुखदेवसहाय ज्वालाप्रसाद, हैदराबाद। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग पृ० १०५ से २६४।

१६—पण्णवणा सुत्तं—संकेत—पण्ण०

(प्रति क) भाग ३—प्रकाशक—जैन सोसाइटी, अहमदाबाद। (प्रति ख) समलयगिरिकृत वृत्ति दो भाग—प्रकाशक—आगमोदय समिति, मेहसाना। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग—पृ० २६५ से ५३३।

१७—जम्बुदीवपण्णत्ति—संकेत—जम्बु०

(प्रति क) शान्तिचन्द्र विहित वृत्ति—प्रकाशक—देवचन्द्र लालभाई पुस्तकोद्धारफण्ड, सूरत। (प्रति ख) प्रकाशक—लाला सुखदेवसहाय ज्वालाप्रसाद, हैदराबाद। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग पृ० ५३५ से ६७२।

१८—चन्दपण्णत्ति—संकेत—चन्द०

(प्रति क) प्रकाशक—लाला सुखदेवसहाय ज्वालाप्रसाद, हैदराबाद।
(प्रति ख)⋯ · ·
(प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग, पृ० ६७३ से ७५१।

१९—सूरियपण्णत्ति संकेत—सूरि०

(प्रति क) समलयगिरिविहितविवरण—प्रकाशक—आगमोदय समिति; मेहसाना। (प्रति ख) प्रकाशक—लाला सुखदेव सहाय ज्वालाप्रसाद, हैदराबाद। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग पृ० ७५३-७५४।

२०—निरियावलिया—संकेत—निरि०

(प्रति क) प्रकाशक—पी० एल० वैद्य, पूना। (प्रति ख) सचन्द्रसूरिकृत वृत्ति—प्रकाशक—गुर्जर ग्रन्थ रत्न कार्यालय, अहमदाबाद। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग पृ० ७५५ से ७६६।

२१—ववहारो संकेत—वव०

(प्रति क) प्रकाशक—डा० जीवराज घेलाभाई डोसी, अहमदाबाद। (प्रति ख) सनिर्युक्ति समलयगिरि वृत्ति भाग ८—प्रकाशक केशवलाल प्रेमचन्द मोदी, अहमदाबाद, भाग ६-१० वकील त्रिकमलाल अगरचन्द, अहमदाबाद। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग पृ० ७६७ से ८२६।

२२—विहकप्पसुत्तं—संकेत—विह०

(प्रति क) सनिर्युक्ति-भाष्य-टीका—भाग ६ प्रकाशक—श्री जैन आत्मानन्द सभा, भावनगर।। (प्रति ख) प्रकाशक—डा० जीवराज घेलाभाई डोसी, अहमदाबाद। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग पृ० ८३१ से ८४८।

२३—निसीहसुत्तं—संकेत—निसी०

(प्रति क) सचूर्णी भाग ४—प्रकाशक—सन्मति ज्ञानपीठ, आगरा। (प्रति ख) प्रकाशक—लाला सुखदेवसहाय, हैदराबाद। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग पृ० ८४६ से ६१७।

२४—दसासुयक्खंधो—संकेत—दसासु०

(प्रति क) प्रकाशक—जैन शास्त्रमाला कार्यालय, लाहौर। (प्रति ख) प्रकाशक—श्वे० स्था० शास्त्रोद्धार समिति, राजकोट। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग, पृ० ६१६ से ६४६।

२५—दशवेआलिय सुत्तं—संकेत—दसवे०

(प्रति क) प्रकाशक—श्री जैन श्वे० तेरापन्थी महासभा, कलकत्ता। (प्रति ख) प्रकाशक—जैन शास्त्रमाला कार्यालय, लाहौर। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग, पृ० ६४७ से ६७६।

२६—उत्तरज्झयणसुत्तं—संकेत—उत्त०

(प्रति क) प्रकाशक—श्री एन० वी० वैद्य, पूना। (प्रति ख) प्रकाशक—पुष्पचन्द्र खेमचंद वला (वाया) अहमदाबाद। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग पृ० ६७७ से १०६०।

२७—नंदीसुत्तं—संकेत—नंदी०

(प्रति क) समलयगिरि वृत्ति—प्रकाशक—आगमोदय समिति, बम्बई। (प्रति ख) सचूर्णि सहारिभद्रीय वृत्ति—प्रकाशक—जुहारमल मिश्रीलाल पालेचा, इन्दौर। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग पृ० १०६१ से १०८३।

२८—अणुओगदारसुत्तं—संकेत—अणुओ०

(प्रति क) सवृत्ति—प्रकाशक—आगमोदय समिति, मेहसाना। (प्रति ख) सचूर्णि सवृत्ति—प्रकाशक—ऋषभदेव केसरीमल, रतलाम। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग पृ० १०८५ से ११६३।

२६—आवस्सयसुत्त—संकेत—आव०

(प्रति क) समलयगिरि वृत्ति—भाग १-२ प्रकाशक—आगमोदय समिति, मेहसाना। भाग ३—प्रकाशक—देवचंद लालभाई पुस्तकोद्धारक फण्ड। (प्रति ख) प्रकाशक श्वे० स्थानकवासी शास्त्रोद्धार समिति, राजकोट। (प्रति ग) सुत्तागमे द्वितीय भाग पृ० ११६५ से ११७२।

३०—कप्पसुत्तं—संकेत—कप्पसु०
प्रकाशक—साराभाई मणिलाल, अहमदाबाद।

३१—सभाष्यतत्त्वार्थ सूत्र—संकेत—तत्त्व०
प्रकाशक - परमश्रुत प्रभावक मंडल, खाराकुवा, बम्बई २।

३२—तत्त्वार्थ सर्वार्थसिद्धि—संकेत—तत्त्वसर्व०
प्रकाशक—भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी।

३३—तत्त्वार्थवार्तिक (राजवार्तिक)—संकेत—तत्त्वराज०
प्रकाशक—भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी। भाग २।

३४—तत्त्वार्थश्लोकवार्तिकालंकार—संकेत—तत्त्वश्लो०
प्रकाशक—रामचन्द्र नाथारंग, बम्बई।

३५—तत्त्वार्थसिद्धसेन टीका—संकेत—तत्त्वसिद्ध०
भाग २—प्रकाशक—जीवनचन्द साकेरचंद जवेरी, बम्बई।

३६—कर्मग्रंथ—संकेत—कर्म०
भाग ६—प्रकाशक—श्री जैन आत्मानन्द सभा, भावनगर।

३७—गोम्मटसार (जीवकांड)—संकेत—गोजी०
प्रकाशक—परमश्रुत प्रभावक मंडल, बम्बई।

३८—गोम्मटसार (कर्मकाड)—संकेत—गोक०
प्रकाशक—परमश्रुत प्रभावक मडल, बम्बई।

३९—अभिधान राजेन्द्र कोश—संकेत—अभिधा०
प्रकाशक—श्री सौधर्म बृहत्तपागच्छीय—जैन श्वेताम्बर समस्त संघ, रतलाम।

४०—पाइअसद्दमहण्णवो—संकेत—पाइअ०
प्रकाशक—हरगोविन्दलाल त्री० सेठ, कलकत्ता।

४१—महाभारत—संकेत—महा०
प्रकाशक—गीताप्रेस, गोरखपुर। नीलकण्ठी टीका, वेंकटेश्वर, बम्बई।

४२—पातञ्जल योग दर्शन—संकेत—पायो०

४३—अंगुत्तरनिकाय—संकेत—अंगु०
प्रकाशक—विहार राज्य पालि प्रकाशन मडल, नालदा, पटना।

मूल पाठों का शुद्धिपत्र

पृष्ठ।पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२।२५	कम्सलेम्मा	कम्मलेम्मा
३।४	जीव	जीव
३।६	सस्वी	सरुवी
४।१२	लेस्मागइ	लेम्सागई
४।१३	लेम्साणुवाय-गइ	लेस्माणु-वायगई
४।१६	सिओमिण-तेऊलेस्स	सीयोमिण-तेयलेस्स
४।१७	सियलीय-तेऊलेस्स	मीयलीय-तेयलेस्स
४।२७	वजलेम्स	वजलेस्म
४।२८	वइरलेस्स	वइरलेस्स
५।८	लेस्साअणुवद्ध	लेस्माणुवद्ध
५।११	अविशुद्ध-लेस्सतरागा	अविसुद्ध-लेस्सतरागा
५।१२	चक्खुलोयण-लेस्स	चक्खुलोयण-लेस्म
५।२८	कईसु	कइसु
५।२६	कालेएण	कालएणं
६।१	साहिज्जई	माहिज्जइ
६।२	लोहियेण	लाहिएण
६।२	पह्मलेस्मा	पम्हलेस्मा
६।६	पन्नते	पन्नत्ते
६।७	अट्टफासे	अटफासे
६।१०	अवट्टिए	अवट्ठिए
७।६,७	गुरू	गुरु
७।२१	वुच्चट	वुच्चइ
८।३	संकित	से किं त
८।४	उरालिय	उरालिय
८।६	परिणामए	परिणामिए
८।११	कइविहे	कइविहे पन्नत्ते
८।२५	केणठ्ठेण	कणट्ठेण
६।२	१	१ जीवोदय-निप्फन्ने
६।२	पन्नते	पन्नत्ते
६।१६	मुग्गइ	सुगइ
१०।२५	तिविधात्र्य	त्रिधात्र्य
११।१	दर्शना	दर्शन
११।८	योगान्तगर्त	योगान्तर्गत
१४।३	जात्रफदण	जीवफदण
१४।७	भवन्तीत्य-न्येतन्न	भवन्तीत्ये-तन्न
१५।२०	छणपि	छण्हपि
१६।७	मनुणुन्नाओ	मणुन्नाओ
१७।३	असकिलि-ठ्ठाओ	असकिलि-ट्ठाओ
१८।१६	नोआगतो	नोआगमतो
१६।७	अज्झयेण	अज्झयणं
१६।८	नोआगता	नोआगमतो
१६।६	पोत्थगदसु	पोत्थगाइसु
२०।८	गागमा	गोयमा
२०।६	व	वा
२०।१२	वीरण वा	वीरण इ वा
२०।१३	अकुतग्गिया	अनन्तग्गिया
२१।१	वणराइ	मामा इ वा वणराइं
२३।२५	चन्दे।	चंद
२४।७	मुक्खिलगण।	मुक्खिलगणा
२५।२८	धामाइटफले	[illegible]
२६।१६	ग्गो	व ग्गो
२७।२६	[illegible]	[illegible]
२८।१५	[illegible]	[illegible]
२८।१७	[illegible]	[illegible]
२८।२०	[illegible]	[illegible]

पृष्ठ।पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६।७	व	य
२६।१८	सीयललु-क्खाओ	सीयलु-क्खाओ
२६।२५	निद्धण्हाओ	निद्धुण्हाओ
३०।१४	समुग्धादे	समुग्घादे
३१।२,३	गुरू	गुरु
३१।६,१३	लेस्सागइ	लेस्सागई
३१।१६	तावणताए	तावण्णत्ताए
३२।११	केणठ्ठेणं	केणट्ठेण
३४।६	नीललेस्सं	नीललेस्सं काऊलेस्सं
३४।१८	तावन्नत्ताए,	तावन्नत्ताए, णो तागंधत्ताए,
३६।३१	मिच्चादंसण	मिच्छादंसण
३७।२०	अस्संखिज्जा	असंखिज्जा
३८।१८	तेत्तीसं	तेत्तीसा
४१।३	सम्मणे	समणे
४१।३,६	संखित	संखित्त

४१ } पाठ '२५'२ मे तेउ, तेऊ की
४२ } जगह तेय पढ़ें।

पृष्ठ।पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४३।४	मालवागाण	मालवगाण
४३।१६	वीइ-	वीई-
४३।२२	छम्मामास	छम्मास
४४।१	अणुत्तरो-वयाइयाण	अणुत्तरो-ववाइयाण
४४।२४	सुग्गइ	सुगइ
४५।१	सुग्गइ	सुगइ
४६।५	तल्लेसेस	तल्लेसेसु
४७।११	सव्वोत्थोवा	सव्वत्थोवा
४८।३	एएमट्ठयाए	पएसट्ठयाए
४८।३	पएसठ्ठयाए	पएमट्ठयाए
४८।६	दव्वठ्ठयाए	दव्वट्ठयाए
४८।१८	दव्वट्ठयाए	दव्वट्ठयाए
४८।२५	पम्हलेस्माणा	पम्हलेस्सठाणा
४८।२६	दव्वठ्ठ	दव्वट्ठ-
४८।२८	दव्वट्ठयाए	दव्वट्ठयाए
४८।२६	सुक्लेस्स	सुक्कलेस्स
४६।१	पएसट्ठाए	पएसट्ठयाए
४६।३	पएसठ्ठयाए	पएसट्ठयाए
५०।१५	पोग्गल	पोग्गला
५१।१	सुरिए	सूरिए
५१।६	तेणठ्ठेण	तेणट्ठेण
५१।१६	आदिट्ठावि	अदिट्ठावि
५२।४	वीइवयइ	वीईवयइ
५२।२५	परिणाम	परिणामे
५३।२१,२२	गरु, अगरु,	गुरु, अगुरु
५४।५	अस्संखिज्जा	असंखिज्जा
५४।५	समया वा	समया
५५।२५	१	१ जीवोदय-निप्फन्ने
५५।२६	सेतं	सेत्तं
५८।२०	अट्टरुद्दाणि	अट्टरुद्दाणि
५६।१४	नवरं	नवरं लेस्सा-परिणामेण
५६।१७	जहा	सेसं जहा
६०।१६,२५	सव्वजीव	सव्वजीवा
६१।१	सइंदिकाए	सइंदियकाए
६१।२१	जाइ	जइ
६४।२५	नावत्तं	नाणत्तं
६६।१८	वायर	वायर
६६।२२	उपलेन्न	उप्पले ण
६६।२२	एकपत्तए	एगपत्तए
७२।२६	लेस्साओ पन्नत्ता	लेस्साओ
७३।२७	एरीण-	एरीणं XXX
८१।१४	पंचिंदिय	पंचिंदिय
८८।१६	मणकुमारे	सणंकुमारे
६२।२७	लेमाए	(लेसाए)
६३।१६	केवल	केवलं
६३।२१	ओ	ओ (उ)
६४।६	होइम	होइ

पृष्ठ।पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९६।८,२६	विशुद्ध	विसुद्ध
९६।८,२६	अविशुद्ध	अविसुद्ध
९६।२१	पचेंदिय	पचेंदिय
९६।२८	पूव्वोववन्नगा	पुव्वोववन्नगा
९७।२	तेणठ्ठेण	तेणट्ठेण
९७।५	पूव्वोववण्णा	पुव्वोववण्णा
९८।१२	दव्वाइ	दव्वाइ
९९।४	(परिस्सउ)	(परिस्सओ)
९९।६	उवज्जिताण	उवसपज्जित्ताण
९९।७	वीइक्क्कते	वीइक्कते
१०१।१४	ठ्ठिई	ट्ठिई
१०३।१	जीवा	जीवा०
१०३।६,१७	कालठ्ठिईएसु	कालट्ठिईएसु
१०४।८	कालठ्ठिईय	कालट्ठिईय
१०४।२२	उवन्नो	उववन्नो
१०६।६	मकरप्पभाए	सक्करप्पभाए
१०६।६	उवज्जित्तए	उववज्जित्तए
१११।१३	एमो'त्ति	एसो'त्ति
११२।३	जन्नकाल-ठ्ठिईओ	जहन्नकाल-ट्ठिईओ
११२।५	उक्कोमकाल-ठिओ	उक्कोमकाल-ट्ठिईओ
११६।२२	पुढविक्का-इएसु	पुढविक्काइ-एसु० २
११७।७	× × ×	२
११७।१४	आउक्काइया	आउक्काइया
१२०।२४	वत्तव्या	वत्तव्वया
१२३।११	ट्ठिईएम	ट्ठिईएसु
१२३।१२	ठ्ठिईएसु	ट्ठिईएसु
१२३।१२	सो चेव	सो चेव अप्पणा
१२३।१३	कालट्ठिईयो	कालट्ठिईओ

पृष्ठ।पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२४।११	गमयएसु	गमएसु वत्तव्वया भणिया एस चेव एयस्स वि मज्झिमेसु तिसु गमएसु
१२४।१३,१४	ठ्ठिइएसु	ट्ठिइएसु
१२५।१२	पुढविक्काइ-उद्देसए	पुढविकाइय-उद्देसए
१२८।२६	आउक्कायाण	आउक्काइयाण
१२८।२६	वणस्सइका-याण	वणस्सइ-काइयाण
१३३।६	गमगा०	गमगा,
१३३।२२	देवे	देव
१४२।६	सहस्त्रारेसु	सहस्सारेसु
१४४।२०	जो	णो
१४४।२१	वधति	ववति ×××
१५०।१८	दोण्णि	दोण्णि
१५२।२५	असेले (सी)	अलेसे (सी)
१५४।१६	उव्वट्टइ	उववट्टइ
१५८।६	तदान्याऽपि	तदान्य-थाऽपि
१५८।८	युगपत्तान-लेश्या	युगपत्तान-ल्लेश्या
१५८।२२	उवज्जति	उववज्जति
१५८।२२	केणट्ठेण	तेणट्ठेण
१५९।१८	परणमइत्ता	परिणमइत्ता
१६०।१७	वित्थटेसु	वित्थंटेसु वि
१६७।६	मेढ़िम्म	मेढिम्म
१६७।२७	केवलीम्म	केवलिम्म
१६८।७	विणट्ठे	निट्ठ
१६८।११	अनिरुद्धलेण	अप्पाणा अनिरुद्धलेण
१६८।१५	भंते	भंते !
१६९।१३	अप्पाणा	अप्पाणं

पृष्ठ।पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१७०।३०	अप्पणो	अप्पणो
१७१।१२	खेत्तं णो दूरं खेत्तं	खेत्तं
१७१।१३	जाणई	जाणइ
१७२।३	केणट्ठेण	केणट्ठेण
१७२।८	तेणट्ठेण	तेणट्ठेण
१७४।१६	आयारभा	आयारंभा
१७४।१७	तदुभयारंभा	तदुभयारंभा वि
१७४।२७	जेते	जे ते
१८०।१	मायीवउत्तो	मायीवउत्ते
१८१।१६	बधइ	बंधइ
१८२।२६	पाप-	पाव-
१८४।१६	काइयाणं वि	काइयाण वि
१८४।१७	वेइंदिय	वेइंदिय तेइंदिय
१८६।३०	दण्डग	दडग
१८८।२५	वीससु	वीससु (पदेसु)
१८६।४	भन्ते।	भंते।
१८६।४	वंधी०	वंधी०
१८६।७	नेरइया वि	नेरइयाणं
१८६।१२	पंचिंदिय	पंचिंदिय
१६०।२१	वंधिसए	जच्चेव वंधिसए
१६०।२२	जच्चेव उद्देस्सगा	उद्देसगा
१६१।६	देवेसु	देवेसु य
१६१।८	नेरइसु	नेरइएसु
१६२।१०	वंधिसए	वधिमए
१६२।३०	जेयंते	जे ते
१६३।१०	अट्ठसु	अट्ठसु
१६३।११	नव दण्डग	नव दडग
१६४।१४	जरस	जस्स
१६४।१६	वन्धिसए	वधिसए
१६४।१६	परिवाडी	परिवाडी
१६५।११	वन्धन्ति	वंधंति
१६५।११	वेदेन्ति	वेदेंति
१६५।२०	वणस्सइ- काइया त्ति	वणस्सइ- काइय त्ति
१६५।२६	एवं कण्ह- लेस्सेहिं	जहा कण्ह- लेस्सेहिं
१६५।२७	काउलेस्सेहिं	काउलेस्सेहि
१६७।७	कम्मप्प-	कइ कम्मप्प-
१६७।१३	काउलेस्स	काऊलेस्स
१६८।१०	हंता ?	? हंता !
१६८।११	तेणट्ठेण	तेणट्ठेण
१६८।१२	नवर	नवरं
१६६।१६	भते।	भंते।
१६६।२७	महड्ढिया	महिड्ढिया
१६६।२८	सव्वमहड्ढिया	सव्वमहिड्ढिया
२०१।२५	भन्नंति	भण्णइ
२०२।२२	किरियावाइ	किरियावाई
२०३।२	तिरिक्ख- जोणयाउयं	तिरिक्ख- जोणियाउयं
२०३।६	अभाणिया- वाई	अन्नाणिय- वाई
२०४।१५	तिरक्ख- जोणिया	तिरिक्ख- जोणिया
२०७।२१	अजोगी व	अजोगी न
२१२।२५	खुड्ढाग	खुड्डाग
२१४।५	चतारि	चत्तारि
२१४।५	अठ्ठ	अट्ठ
२१४।१४	भाणिया	भणिया
२२०।१६	कण्हलेस्सा	कण्हलेस्सा वा
२२०।१६	सुक्कलेस्सा	सुक्कलेस्सा वा
२२०।२२	कण्हलेस्सा	तहेव कण्हलेस्सा
२२१।७	कण्हलेस्सा वा	कण्हलेस्सा वा जाव
२२१।१२	वेथो	वेओ
२२१।१२	वंधन	वधग
२२१।२२	जहन्नेण	जहन्नेण

पृष्ठ।पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२२२।२	अंतोमुहुत्त- भब्भहियाट	अंतोमुहुत्त- मब्भहियाइ
२२४।३	समट्ठे	समट्ठे
२३०।२	वमाणिया जाव	वमाणिया जाव जइ सकिरिया तेणेव भव-ग्गहणेण सिज्झंति, जाव
२३३।२६	एएसिं	एएसि
२३८।१६	सुक्कलसाओ	सुक्कलेसाओ
२३६।१७	गब्भतिरि या	गब्भतिरिया
२४०।७	भन्ते।	भंते।
२४०।२३	देवीणं	देवीण
२४१।१३	कयरेहिंतों	कयरेहिंतो
२४२।४	असखेज्जकुणा	असखेज्जगुणा
२४२।४	नीललेस्मा	नीललेस्सा
२४४।१	वेमा-	वेमा-
२४४।२४	तउलेसाण	तेउलेसाण
२४५।८	देवणी	देवीण
२४६।३	कइविह	कइविहे
२४६।२६	निर्वृति	निर्वृत्ति
२४६।२६	जीवं	जीव
२४७।८	वट्टिय	वट्टिय
२५०।७	उपस्थिता	अवस्थिता
२५०।१३	यदुक्त	यदुत
२५०।२०	पण्डितमरणे	पण्डितमरण
२५०।२३	व्यावृन्नितो	व्यावृत्तितो
२५२।२	एए च्चिय	एएच्चिय
२५२।६	विच्चित ति	विच्चितत्ति
२५२।१०	माहुवमाहु	साहुवसाहु
२५३।११	घणती	घणती
२५७।२८	मुणी	मुणि
२५८।११	इड्ढिए	इड्ढीए
२६०।१२	पामायण	पासायाण
२६३।२६	ते	जे
२६३।२७	भुजमाणा	भुंजमाणा जाव
२६६।१६	वट्टमाणम	वट्टमाणस
२६७।१६	विउ०वित्ता ण	विउव्वित्ताण
२६८।६	अरूवस्स	अरूविस्स
२६८।२०	सुक्किला	सुक्किल्ला
२६६।१	तारणच्युत	तारणाच्युत
२७१।५	एव	वन्नेण पन्नत्ता एव
२७२।१	समजोइ०भूया	समजोइब्भूया
२७२।१२	एवकरणया- एणति	एव करणयाए ण त्ति
२७३।४	भवनपतिना	भवनपतीना
२७६।१६	भते	भंते
२८०।२	कण्हलेस्स	कण्हलेस्सा नीललेस्सा
२८१।१०	परिहार- विशुद्धि	परिहार- विशुद्धि

पृष्ठ।पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१७०।३०	अप्पण्णो	अप्पणो
१७१।१२	खेत्तं णो दूर खेत्तं	खेत्तं
१७१।१३	जाणई	जाणइ
१७२।३	केणट्ठेणं	केणट्ठेण
१७२।८	तेणट्ठेण	तेणट्ठेण
१७४।१६	आयारभा	आयारंभा
१७४।१७	तदुभयारंभा	तदुभयारंभा वि
१७४।२७	जेते	जे ते
१८०।१	मायोवउत्तो	मायोवउत्ते
१८१।१६	वधइ	वंधइ
१८२।२६	पाप-	पाव-
१८४।१६	काइयाण वि	काइयाण वि
१८४।१७	वेइंदिय	वेइंदिय तेइंदिय
१८६।३०	दण्डग	दडग
१८८।२५	वीमसु	वीससु (पदेसु)
१८६।४	भन्ते।	भंते।
१८६।४	वंधी०	वंधी०
१८६।७	नेरइया वि	नेरइयाण
१८६।१२	पंचिदिय	पंचिंदिय
१६०।२१	वंधिसए	जच्चेव बंधिसए
१६०।२२	जच्चेव उद्देस्सगा	उद्देसगा
१६१।६	देवेसु	देवेसु य
१६१।८	नेरइसु	नेरइएसु
१६२।१०	वधिसए	बंधिसए
१६२।३०	जेयंते	जे ते
१६३।१०	अठ्ठसु	अट्ठसु
१६३।११	नव दण्डग	नव दडग
१६४।१४	जस्स	जस्स
१६४।१६	वन्धिसए	वंधिसए
१६४।१६	परिवाडी	परिवाडी
१६५।११	वन्धन्ति	वधंति
१६५।११	वेदेन्ति	वेदेंति

पृष्ठ।पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१६५।२०	वणस्सइ- काइया त्ति	वणस्सइ- काइय त्ति
१६५।२६	एवं कण्ह- लेस्सेहिं	जहा कण्ह- लेस्सेहिं
१६५।२७	काउलेस्सेहिं	काउलेस्सेहि
१६७।७	कम्मप्प-	कइ कम्मप्प-
१६७।१३	काउलेस्स	काऊलेस्स
१६८।१०	हंता ?	? हंता।
१६८।११	तेणट्ठेण	तेणट्ठेणं
१६८।१२	नवर	नवरं
१६६।१६	भते।	भंते।
१६६।२७	महड्ढिया	महिड्ढिया
१६६।२८	सव्वमहड्ढिया	सव्वमहिड्ढिया
२०१।२५	भन्नंति	भण्णइ
२०२।२२	किरियावाइ	किरियावाई
२०३।२	तिरिक्ख- जोणयाउयं	तिरिक्ख- जोणियाउयं
२०३।६	अन्नाणिया- वाई	अन्नाणिय- वाई
२०४।१५	तिरक्ख- जोणिया	तिरिक्ख- जोणिया
२०७।२१	अजोगी व	अजोगी न
२१३।२५	खुड्डाग	खुड्डाग
२१४।५	चतारि	चत्तारि
२१४।५	अठ्ठ	अट्ठ
२१४।१४	भाणिया	भणिया
२२०।१६	कण्हलेस्सा	कण्हलेस्सा वा
२२०।१६	सुक्कलेस्सा	सुक्कलेस्सा वा
२२०।२२	कण्हलेस्सा	तहेव कण्हलेस्सा
२२१।७	कण्हलेस्सा वा	कण्हलेस्सा वा जाव
२२१।१२	वेथो	वेओ
२२१।१२	वधन	वधग
२२१।२२	जहन्ने ण	जहन्नेणं

पृष्ठ।पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२२२।२	अतोमुहुत्त- मब्भहियाइ	अतोमुहुत्त- मब्भहियाइं
२२४।३	समट्ठे	समट्ठे
२३०।२	वेमाणिया	वेमाणिया
	जाव	जाव जइ सकिरिया तेणेव भव- ग्गहणेण सिज्झति, जाव
२३३।२६	एएसिं	एएसि
२३८।१६	सुकलसाओ	सुक्लेसाओ
२३६।१७	गब्भतिरि या	गब्भतिरिया
२४०।७	भन्ते ।	भते ।
२४०।२३	देवीण	देवीण
२४१।१३	कयरेहिंतो	कयरेहिंतो
२४२।४	असखेज्जकुणा	असंखेज्जगुणा
२४२।४	नीललेस्सा	नीललेस्मा
२४४।१	वेमा-	वेमा-
२४४।२४	तउलेसाण	तेउलेसाण
२४५।८	देवणी	देवीण
२४६।३	कइविह	कइविहे
२४६।२६	निवृंति	निवृंत्ति
२४६।२६	जीर्व	जींव
२४७।८	वढिय	वट्टिय
२५०।७	उपस्थिता	अवस्थिता
२५०।१३	यदुक्त	यदुत
२५०।२०	पण्डितमरणे	पण्डितमरण
२५०।२३	व्यावृत्तितो	व्यावृत्तितो
२५२।२	एए चिय	एएच्चिय
२५२।६	विचित ति	विचितति
२५२।१०	साहुवसाहु	साहुवसाहु
२५३।११	घणती	धणती
२५७।२८	मुणी	मुणि
२५८।११	इड्ढिए	इड्ढीए
२६०।१२	पामायण	पामायाण
२६३।२६	ते	जे
२६३।२७	भुजमाणा	भुजमाणा जाव
२६६।१६	वट्टमाणम	वट्टमाणम
२६७।१६	विउ०वित्ता ण	विउव्वित्ताण
२६८।६	अरूवस्स	अरूविस्स
२६८।२०	सुक्लिा	सुक्लिला
२६६।१	तारणच्युत	तारणाच्युत
२७१।५	एव	वन्नेण पन्नत्ता एव
२७२।१	समजोइ०भूया	समजोइब्भूया
२७२।१२	एवकरणया- एणति	एव करणयाए णं त्ति
२७३।४	भवनपतिना	भवनपतीना
२७६।१६	भते	मते
२८०।१	कण्हलेम्म	कण्हलेम्मा नीललेम्म
२८१।१०	परिहार- विशुद्धि	परिहार- विशुद्धि

संदर्भों का शुद्धिपत्र

पृष्ठ।पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५।६	पृ० ७८०	पृ० ७००
५।१७	पृ० ३२०	पृ० २२०
८।१४	पृ० ४०६	पृ० ४०८
८।१८	पृ७ ६६४	पृ० ६६४
८।२७	पृ० ४४१	पृ० ४११
१५।७	पृ० ३२०	पृ० ३६३
१५।१०	सू. १५	सू. १२
१६।१३	पृ० ६४६	पृ० ४४६
२४।६	गा ८	गा ६
२४।२८	पृ० १०४२	पृ० १०४६
४४।२५	सू. २२	सू. २२२
६०।२४	सर्व जी	सर्व जीव
६१।६	सर्व जी	सर्व जीव
६६।२६	सू. १३	प्र १३
६६।२६	पृ० २२३	पृ० ६२३
७१।५	प्र १	प्र १,५
७१।५	पृ० ८११	पृ० ८१०-८११
७२।४	व ३	व २
७४।२२	व २	व ३
७५।६	पृ० ८१२	पृ० ८१३
८०।१८,२३, २८	सू. ३८	सू. ३७, ३६
८१।३	सू. ३८	सू. ३७, ४०
८१।१०	सू. १	सू. ५६
८१।२०,२५	सू. १८१	सू. १३२
८२।७	प्र १	प्रति १
८२।१४,१६, २६	सू. १	सू. ५६
८३।४	सू. १	सू. ५६
८३।१०, १७, २२, २६, ३१	प्र १	सू. ५६
८४।७	प्र १	सू. ५६
८४।११	पृ० ४५८	पृ० ४३८
८४।१६	प्र १	प्रति १
८४।२७	सू. ३६५	सू. ३१६
८५।४	सू. १८१	सू. १३२
८५।१४	उ ११।	उ ११। प्र २।
८६।१३	सू. ३६५	सू. ३१६
८६।२१	सू. १८१	सू. १३२
८६।२१	पृ० २०१	पृ० २०५
८७।११	सू. १८१	सू. १३२
८६।१०	प्र ५१	प्र ४६
६१।३०	पृ० ५७६	पृ० ५७८
६४।१३	पृ० १०४८	पृ० १०४७-८
६५।१५	सू. ६७	सू. ५७
६७।३	पृ० ४३५	पृ० ४३५-६
६७।१६	३१	उ १
१०८।४	प्र ७।८	प्र० ७८
१०६।२६	पृ० ८२५।२७	पृ० ८२५-२७
११२।१७	पृ० ६२६	पृ० ८२६
११७।१०	प्र ५५	प्र ५६
१२०।२७	प्र १०-१२	प्र १०-११
१३७।८	प्र ३-४	प्र २-३
१३७।१५	प्र ३-७	प्र २-७
१५१।३	पृ० २५६	पृ० २५८
१५८।११	प २७	प १७
१६५।२०	प्र ६६-६७	प्र ६५-६७
१७३।१३	श १६	श १८
२०१।१३	पृ० १०६	पृ० १०६०
२३३।१२	सू. २३५	सू. २४५
२४५।२०	पण्प	पण्ण
२५६।२०	६ महावग्गो	छक्कनिपातो। ६ महावग्गो
२५७।८	६ महावग्गो	छक्कनिपातो। ६ महावग्गो
२६१।१२	पृष्ठ ४५१	पृ० ४५०-४५१
२८१।२३	गा १२	गा २३

हिन्दी का शुद्धिपत्र

पृष्ठ।पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१।३	लेश्या	लेस्सा
१।१६	व्युत्यन्न	व्युत्पन्न
२।३,१०	सस्कृति	सस्कृत
३।१८	दिप्ति	दीप्ति
१२।१५	स्वोपस्य	स्वोपज्ञ
१७।६	सक्लिष्ठ	सक्लिष्ट
१७।८	दुर्गतिगमी	दुर्गतिगामी
१७।२२	अपक्षाओं	अपेक्षाओं
१७।२३,२५	उत्तराज्झयण	उत्तरज्झयण
१८।१३	सक्लिष्ठत्व	सक्लिष्टत्व
२०।२३	के अकतकर	अकंतकर
२१।१२	के शिकर	केशिकर
२१।१४	अकतर	अकतकर
२४।१०	मयुर	मयूर
२४।१२	केनर	कनेर
२४।१२	मुचकन्द	मुचकुन्द
२५।३	लेश्याओं	लेश्याओं
२७।५	तिंदक	तिंदुक
२८।४	श्रेष्टवारुणी	श्रेष्ठवारुणी
२८।६	श्रेष्ट	श्रेष्ठ
२८।२४	शिद्धार्थिका	सिद्धार्थिका
३१।६	सथा	तथा
३४।१४	लेश्याओं	द्रव्यलेश्याओं
३७।११	पुरूपाकार	पुरुपाकार
३७।२३	कृष्णलेष्या	कृष्णलेश्या
३८।३	में परिणमन	परिणमन
३९।५	असख्यामवें	असख्यातवें
४०।४	लेश्या	द्रव्यलेश्या
४०।१३	मुहुर्त	अन्तर्मुहूर्त
४१।८	अपान-केन	अपानकेन
४१।१३	अचित्	अचित्त
४२।२५	प्राप्त	प्राप्ति
४३।१२	उद्देश	उद्देशक
४४।१०	इशानवामी	ईशानवामी
४६।१०	लेश्या के	लेश्या की
४६।१३	द्रव्यो ग्रहण	द्रव्यों को ग्रहण
४६।११	द्रव्यार्थिक	द्रव्यार्थिक नी
५२।८	सूर्य	सूर्य
५३।१५	लेश्वा	लेश्या
५४।१	लेश्या-स्थान	भावलेश्या-स्थान
५६।५	यावत् शक्ल लेश्या	यावत् शुक्ल-लेश्या
५६।२०	गोम्भरमार	गोम्मटसार
५६।२६	शास्वत	शाश्वत
५८।२६	चित्त्शान्त	चित्त शान्त
५९।२६	स्तनित् कुमार	स्तनितकुमार
६०।५	तिर्यचपचेन्द्रिय	तिर्यच पचेन्द्रिय
६१।१६	लेश्या	लेशी
६२।२०	पक्षी	पक्ष
६४।२१	नारकी	नरक
६६।१५,	प्रत्येक	प्रत्येक शरीर
६६।१७	प्रत्येक	प्रत्येक शरीर
७०।४	पूर्वाक्त	पूर्वोक्त
७२।५	कलत्थी	कुलत्थी
७२।१३	कुसम्भ	कुसुम्भ
७३।७	तवखीर	अवखीर
७३।८	सुकलितृण	सुकलितृण
७३।१५	अभ्ररूह	अभ्ररुह
७४।२५	छत्रोध	छत्रोघ
७४।२५	कस्तुम्भरी	कुस्तुम्भरी
७४।२५	शिरिप	शिरीप
७५।७	रुपी	रुपी,
७५।८	कस्तुभरी	कुस्तुभरी
७५।९	कस्तुवरि	कस्तुवरि
७५।९	निगुडी	निर्गुडी
७५।११	भालग	माल्लग
७५।११	गजभारिणी	गजमारिणी
७५।१२	वल्कोल्ल	अकोल्ल
७५।१०	सिन्दुवार	सिंदुवार,
८६।१	रुपात	रूपान
८८।२३	नाहिन्द्र	माहेन्द्र

पृष्ठ।पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८८।२३	लातंक	लातक
८८।२५	मनुप्य	मनुष्य
८९।११	गुणस्थान	गुणस्थान के
८९।१७	जीव में	जीवों में
८९।२६	जीवों मे	जीव
९०।२६	एक लेश्या	एक शुक्ललेश्या
९१।१	दोनो	दोनो
९४।१८	जधन्य	जघन्य
९७।१२	वाणव्यतर	वानव्यंतर
९८।२१	वैमाणिक	वैमानिक
१००।२३	जघन्यस्थिति	जघन्यकालस्थिति
१००।२५	जीवनस्थान	जीवस्थान
१०७।१७	योग्य जो जीवों	योग्य जीवो
१०७।२४	तमप्रभापृथ्वी	तमप्रभापृथ्वी के
१११।३०	देवो मे होने	देवों मे
११३।२९	जीवों से	जीवों में
११४।२७	चेंन्द्रिय	पचेंद्रिय
१३९।२८	उत्पन्न योग्य	उत्पन्न होने योग्य
१३९।३१	प्रथम के XXX	प्रथम के तीन
१४०।१९	योग्य	होने योग्य
१४२।१५	होने योग्य योग्य	होने योग्य
१४६।१	यावत	यावत्
१५३।२६	जीव	एकेन्द्रिय जीव
१५६।२९	संवध से	सम्वध मे
१६३।२७	सख्यात लाख	असख्यात लाख
१६८।२३,	देवी व	देवी वा
१६८।२४	देवी व	देवी वा
१८७।२४	परपराहरक	परंपराहारक
१९०।१२	वक्तव्यता	वक्तव्यता
१९१।२५	,अलेशी शुक्ललेशी,	शुक्ललेशी, अलेशी
१९३।२०	क्योंकि जीव	जीव
१९८।२१	लेश्या में	लेश्या से
२००।२८	कोई आचार्य	कई आचार्य
२०२।१५	तधा	तथा
२०।३०	मनुप्यायु	मनुष्यायु
२०९।८	तीर्यंच	तिर्यंच
२०९।१९	कृष्णलेश्या	कृष्णादि लेश्या
२०९।१९	अपेक्षा	अपेक्षा से
२१२।८	मेंए क	में एक
२१५।८	कृययुग्म	कृतयुग्म
२१५।२१	उपयुक्त	उपर्युक्त
२२३।२४	उत्तर में हैं	उत्तर मे
२२३।२४	नही हैं	नही है
२२४।१७	सज्ञी	सज्ञी
२२४।२१	भाग देने	भाग देने पर
२२४।२४	समान हैं	समान है
२२५।१	निरन्त	निरन्तर
२२८।२	राशीयुग्म	राशियुग्म
२३२।९,१०	परपरोपन्न	परपरोपपन्न
२३८।४,२८	किया हैं	किया है
२४७।१२	निवृत्त	निर्वृत्त
२४९।९	इनके	इसके
२४९।२१	शैलेशत्व	शैलेशीत्व
२६४।२०	उद्योतित	उद्द्योतित
२६८।१५	कर्कश	कर्कशत्व
२७०।३,१६	वर्ण	वर्ण
२७७।२८	ग्रैवेक	ग्रैवेयक
२७८।१	अनुत्तरौ पपातिक	अनुत्तरो-पपातिक
२७८।१२	वकुस	वकुश
२८०।१७	ओर	और
सर्वत्र	सख्यात्	सख्यात
सर्वत्र	असंख्यात्	असख्यात
सर्वत्र		मुहूर्त
सर्वत्र		अन्तर्मुहूर्त
सर्वत्र	समूर्छिम	समूर्च्छिम
सर्वत्र	वाणव्यंतर	वानव्यंतर
सर्वत्र	निग्रन्थ	निर्ग्रन्थ
सर्वत्र	मनुप्य	मनुष्य